श्रीमद्गोपालभट्टविरचितः

रसेन्द्रसारसंग्रहः

'रसायनी' भाषाटीकयाऽऽटीकितः।

पण्डित-पुस्तकालय, काशी।

श्रीहरिः ।

श्रीमद्गोपालकृष्णभट्टविरचितः

रसेन्द्रसारसंग्रहः

आयुर्वेदाचार्य-पं० नीलकण्ठमिश्र-व्याकरणाचार्य-कृतया

'रसायनी' समाख्यया भाषाटीकया विभूषितः ।

साहित्य-शास्त्रि

पं० रामतेजपाण्डेयेन संशोधितः ।

प्रकाशक

पण्डित-पुस्तकालय, काशी ।

मूल्यं रूप्यकत्रयम्

पण्डित-पुस्तकालय काशीके शुद्ध सुन्दर और सस्ते संस्कृत-महाग्रन्थ—

श्रीमद्भागवत भा० टी० पत्राकार ३२)
श्रीमद्भागवत श्रीधरी संस्कृत टीका २४)
श्रीमद्भागवत भा० टी० (सजिल्द) १५)
श्रीमद्भागवत दशमस्कन्ध भा० टी० ८)
श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण भा० टी० २४)
श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण सुन्दर-काण्ड भा० टी० ३)
भाषा भागवत अर्थात् सरल सुखसागर ६)
श्रीगरुड़पुराण भा० टी० १॥)
बृहत्स्तोत्ररत्नाकर बड़ा (स्तोत्रसंख्या—४००) ३)
श्रीदुर्गासप्तशती मूल बड़ी २)
श्रीदुर्गासप्तशती 'हैमवती' भा० टी० १)
श्रीदुर्गासप्तशती गुटका सजिल्द ॥।=)
श्रीशुक्लयजुर्वेदसंहिता (बहुत बड़े अक्षरोंमें) ५)
श्रीशुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टाध्यायी (रुद्री) ।=)
वाशिष्ठी हवनपद्धति ।)
उपनयनमार्तण्ड भा० टी० ॥।)

श्रीशुक्लयजुर्वेदीय मंत्रसंहिता
भैषज्यरत्नावली (सचूर्णिका) ४)
रसेन्द्रसारसंग्रह भा० टी० ३)
माधवनिदान भा० टी० २॥)
शार्ङ्गधरसंहिता भा० टी ४)
नाड़ीज्ञानदर्पण भा० टी० ॥)
मनुस्मृति भा टी० ३)
हितोपदेश भा० टी० १॥)
पञ्चतन्त्र भा० टी० (सम्पूर्ण) ४)
रघुवंश महाकाव्य सटीक (सम्पूर्ण) ३)
मेघदूत भा० टी० और संस्कृत टीका ॥।)
अमरकोष संक्षिप्त भा० टी० १)
श्रीरामचरित मानस (रामायण) ४)
रामायण मध्यम कागज २)
दृष्टान्तदीपक (दृष्टान्तसंख्या ४३२) २)
हिन्दी दस्तवेज (नियम और नमूने) ३)
राजसी कुंडली (जन्मपत्रफार्म) ५)
श्रीशुभविवाहलग्नपत्रिका (लग्नपत्रफार्म) सचित्र और रंगीन १०) सै०

यत्किञ्चित्

एक समय था, जब सारा संसार भारतवर्षके आयुर्वेद-विज्ञानका भक्त था। सभी इसके अनुयायी थे और सबकी इसमें अटूट श्रद्धा थी। लेकिन समयने पलटा खाया। हमारा अवरोह होने लगा और हमारे साथ हमारी रीति-नीति और शिक्षा-दीक्षा भी गिरने लगी। विदेशियोंसे पदाक्रान्त होकर तो हम दिनोंदिन गिरते ही गये और आज उस कगारपर पहुँच गये हैं कि जहाँसे गिरकर पता नहीं कि कहाँ जायँगे। लेकिन आसरा इतना ही है कि हमारे पूर्वजोंने अपने लहू-मांसका गारा लगाकर हमारी संस्कृतिकी नीव इतनी मजबूत बनायी थी कि यद्यपि विदेशी हजारों वर्षसे अहर्निशि इसे ढहानेमें दत्तचित्त थे, फिर भी उनसे इसका एक कोना भी नहीं ढह पाया है। इस धरतीके ४० करोड़ विशाल जनसमुदायमें कुछ ही ऐसे लोग निकलेंगे, जो पूर्णरूपसे विदेशी चमक-दमककी चकाचौंधमें पड़कर आत्मविक्रय किये हुए हों। बाकी लोगोंकी दशा वही है, जो सैकड़ों वर्ष पहले थी। यह जरूर है कि इतने दिनोंसे सम्हाल न होनेके कारण इस शुभ्र संस्कृतिपर गर्द बैठ गयी है। तथापि यदि कुछ भी त्यागी और चतुर महापुरुष आगे बढ़ेंगे तो कुछ ही समयमें यह कुन्दन फिर पहलेकी नाईं चमकने लगेगा।

सन्तोषका विषय है कि अब ऐसे महापुरुष इस देशमें दुर्लभ नहीं रहे। ईश्वरने चाहा तो शीघ्र ही फिर हमारे दिन फिरेंगे और हमारा मुमूर्षु आयुर्वेदविज्ञान फिर धरातलपर सिंहनाद करता दिखायी देगा। फिर एक बार भगवान धन्वन्तरि अवतरित होंगे और इस शुष्कप्राय पौधे-को अपने अमृतकमण्डलुसे सींचकर हरा-भरा कर देंगे, जिससे फिर एक

बार संसारसे रोग, शोक, बुढ़ापा गरीबी और मृत्यु भागती दिखायी देंगी।

क्या आप इसे शुभ लक्षण माननेमें सकुचायेंगे कि जहाँ पन्द्रह-बीस वर्ष पहले आयुर्वेदके पठन-पाठनमें मुट्ठी भर विद्यार्थी भी दृष्टि-गोचर नहीं होते थे, वहाँ आज शहर-शहर, कस्बा-कस्बा और गाँव-गाँवमें हजारों विद्यार्थी और आयुर्वेदिक पाठशालायें दिखायी दे रही हैं।

प्रस्तुत पुस्तक ऐसे-ऐसे सभी वैद्यों और आयुर्वेदके शिक्षार्थी विद्यार्थियोंका आजीवन साथी है। आदिसे अन्ततक उन्हें इसकी आवश्यकता रहती है। यह कई यूनिवर्सिटियोंके कोर्समें भी है। यह तो मैं नहीं कह सकता कि यह पुस्तक सर्वोत्तम तैयार हुई है, पर यह कहनेका मुझमें सगर्व साहस है कि जहाँतक पैसा, परिश्रम और मस्तिष्क काम दे सका है, वहाँ तक मैंने रत्ती भर भी कृपणता नहीं की है। फिर भी यदि कुछ न्यूनता रह गयी हो तो अपनी सहज दयालुतावश आप मुझे क्षमा कर दीजिएगा।

किमधिकं विज्ञेषु।

मार्गशीर्ष पञ्चमी
(रामविवाह)
२०१०

वशंवद—
पाण्डेय रामतेज शास्त्री

॥ श्रीहरिः ॥

रसेन्द्रसारसंग्रहस्थविषयानुक्रमणिका ।

विषोपविषादशोधनविधिः ।

द्वितीयोऽध्यायः ।

विरेकाधिकारः ।

१ वालुकायन्त्र अथवा लवणयन्त्र ।

१—वालुकायन्त्रविधि—एक आतशी शीशीपर एक-एक करके सात वार कपड़मिट्टी करके धूपमें सुखा ले । इस शीशीमें पाच्य पदार्थ भरके मुख बन्द कर दे । अब लोहेकी एक ऐसी नाँद ले, जिसमें पूरी शीशी समा जाय और मुँह भर बाहर निकला रहे । उस नाँदमें ४ अंगुल बालू बिछाकर शीशी रखे । फिर नाँदके गले तक बालू भरके भट्ठीपर चढ़ाकर नीचेसे आँच दे । यह हुआ वालुकायन्त्र । जब इसमें बालूकी जगह नमक भरके पाक किया जाता है तो यही लवणयन्त्र हो जाता है ।

२ दोला (स्वेदन) यन्त्र ।

२—दोला (स्वेदन) यन्त्रविधि—एक मझोली हाँड़ी लेकर गलेके दोनों ओर दो अंगुल नीचे अंगुल भर लम्बा-चौड़ा छेद करे । अब इस हाँड़ीमें आधी दूर तक वह द्रवपदार्थ भरे, जिसमें कि पारेका स्वेदन करना हो । फिर पारेको एक भोजपत्रके दोनेमें रखे और दोनेके ऊपरसे तीन तह कपड़ा लपेटकर पोटली बनावे । तब उक्त हाँड़ीके छेदमें (लगभग ढायी मुट्ठी लम्बी और सवा अंगुल गोल) एक लकड़ी डाले । फिर उपर्युक्त पोटलीको इस लकड़ीमें ऐसे ढंगसे बाँधकर लटकावे कि पोटली द्रव पदार्थमें डूबी रहे, लेकिन पेंदी न छुए । अब हँड़िया भट्ठीपर चढ़ाकर नीचेसे आँच दे । यह दोला (स्वेदन) यन्त्र कहलाता है ।
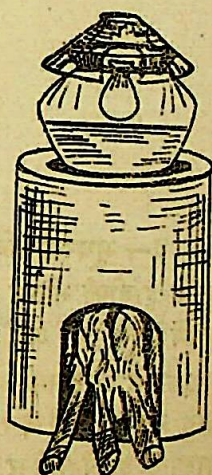
३ भूधरयन्त्र ।
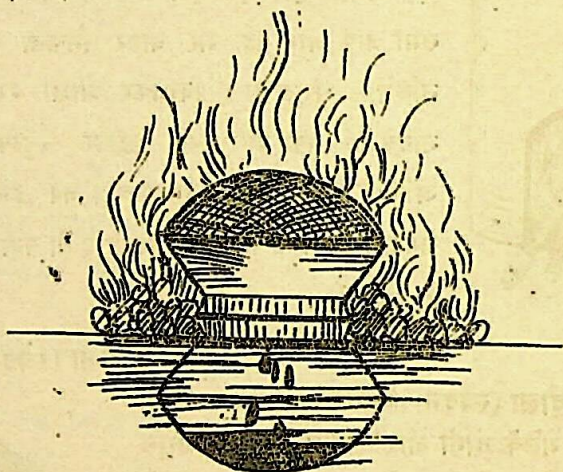
३—भूधरयन्त्रविधि—बराबर मुँहकी दो हाँड़ियें लेकर एकमें जल भर दे। दूसरी हाँड़ीकी भीतरी पेंदीमें औषधियोंके साथ पिसे हुए पारेकी पीठी लीपकर धूपमें सुखा ले। अब इसे औंधी करके पहलेवाली हाँड़ीके मुखपर रखकर (डमरूके आकारकी बन जाने पर) सात कपड़मिट्टी करके सुखा ले। इसके बाद नीचेवाली हँड़िया गड़ जाने भरका गड़हा खोदकर गाड़ दे और ऊपर-वाली हाँड़ीकी पेंदीपर उपले जमाकर फूँक दे। ऐसा करनेसे ऊपरवाली हाँड़ी-का पारा उड़कर नीचेवाली हाँड़ीके पानीमें जा गिरेगा। यही भूधरयन्त्र है।

४ ऊर्ध्वपातनयन्त्र ।
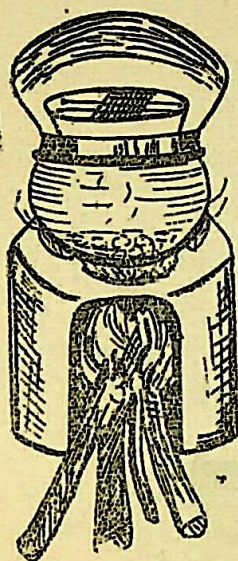
४—ऊर्ध्वपातनयन्त्रविधि—एक चाड़े मुखवाली हाँड़ीकी पीठपर (पानी भरने योग्य) थाला बनावे । फिर उससे कुछ कम चौड़े मुखकी हाँड़ीमें पारे आदिकी पीठी रखकर थालेवाली हाँड़ीको औंधी करके इस पर रख तथा दोनोंका मुख एकमें मिलाकर संधि वन्द कर दे । अब इसे भट्ठीपर चढ़ाकर नीचेकी हाँड़ीमें आँच दे । ऊपरवाली हाँड़ीके थालेमें जल भर दे । जब-जब पानी ज्यादा गरम हो, तब-तब उसे निकाल-निकाल कर ठंढा पानी भरता रहे । ऐसा करनेसे नीचेवाली हाँड़ीका पारा उड़कर ऊपरवाली हाँड़ीकी पेंदीमें जा चिपकेगा । यही ऊर्ध्वपातनयन्त्र है ।

५ कन्दुकस्वेदनयन्त्र ।

५—कन्दुकस्वेदनयन्त्रविधि—एक हाँड़ीमें जल अथवा निर्दिष्ट द्रव्य भरे । उसके मुखपर कपड़ा बाँधकर इसी कपड़ेपर स्वेद्य पदार्थ रखे । तदनन्तर इससे कुछ बड़े मुखकी हाँड़ी ले और उसे औंधी करके रखे और कपड़ मिट्टीसे संन्धि वन्द कर दे । फिर भट्ठीपर चढ़ाकर नीचेसे आँच देता हुआ स्वेदन करे ।
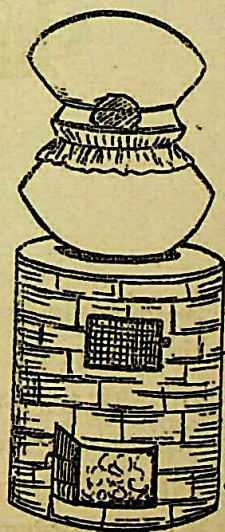
६ तिर्य्यक्पातनयन्त्र ।
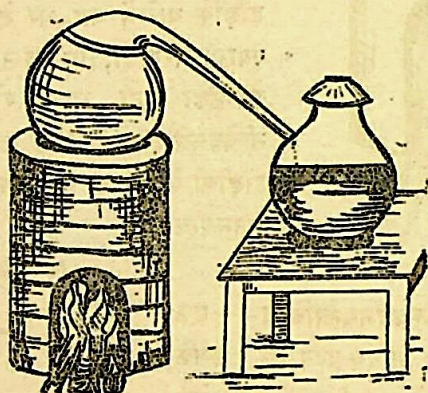
६—तिर्य्यक्पातनयन्त्रविधि—मिट्टीके एक घड़ेमें पारा डालकर गलेके थोड़ा नीचे एक छेद करे । अब कोई ढकन अथवा कसोरा रखकर कपड़-मिट्टी द्वारा उसका मुख बन्द कर दे। फिर एक दूसरा घड़ा ले और उसके भी गलेके नीचें छेद करके आधी दूर तक जल भर दे । तब बाँसकी एक नली लेकर दोनों घड़ोंके छिद्रोंसे सम्बद्ध करके पारेवाला घड़ा भट्ठीपर चढ़ाकर नीचेसे आँच दे । ऐसा करनेसे पारा उड़कर पानीवाले घड़ेमें आ जायगा ।
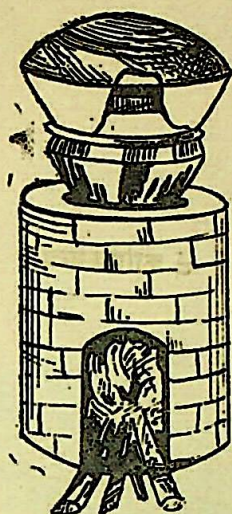
विद्याधरयन्त्र ।

७—विद्याधरयन्त्रविधि—एक हाँड़ीमें पातन करने योग्य पारा आदि पदार्थ रखे और एक दूसरी हाँड़ी लेकर उसकी पेंदीपर ऐसा थाला बनावे कि जिसमें जल भरा जा सके । इस हाँड़ीका मुख पहलेवाली हाँड़ीके मुखसे मिलाकर कपड़मिट्टीसे संधि बन्द कर दे। अब इसे भट्टीपर चढ़ाकर नीचेसे आँच दे । ऐसा करनेसे पारा उड़कर ऊपरवाली हाँड़ीकी पेंदीमें जा चिपकेगा ।

८ तप्तखल्लयन्त्र

८—तप्तखल्लयन्त्रविधि—खरलके नापका एक गढ़ा खोदकर अथवा जमीनमें ही बकरीकी लेंड़ी और भूसी डालकर फूँक दे । फिर यदि जमीनमें अग्नि हो तो चौघड़ियापर और गढ़ेमें हो तो आगपर ही खरल रखे और गरम हो जानेपर जो वस्तु घोटना हो घोंटे । यही तप्तखल्लयन्त्र है ।
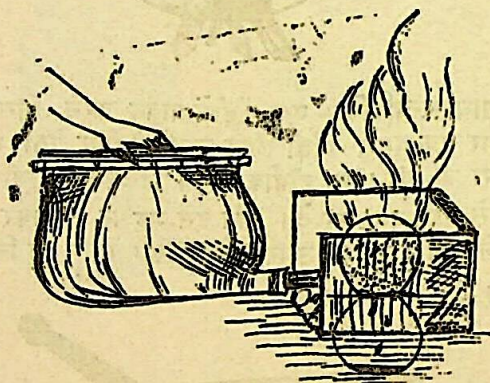
९ कोष्ठिकयन्त्र ।

९—कोष्ठिकयन्त्रविधि—सोलह अंगुल ऊँची और हाथभर लम्बी एक भट्टी बनावे । इसमें धौंकनीका मुँह जाने भरका एक छिद्र रखे और भट्टीमें कोयला भरके सत्त्वपातनार्थ मूषा अथवा डमरूके आकारके बने दो घड़े रख-कर आँच दे । आँचको तीव्र करनेके लिए धौंकनीसे बराबर हवा देता रहे । यही कोष्ठिकयन्त्र है ।

१० अधःपातनयन्त्र ।
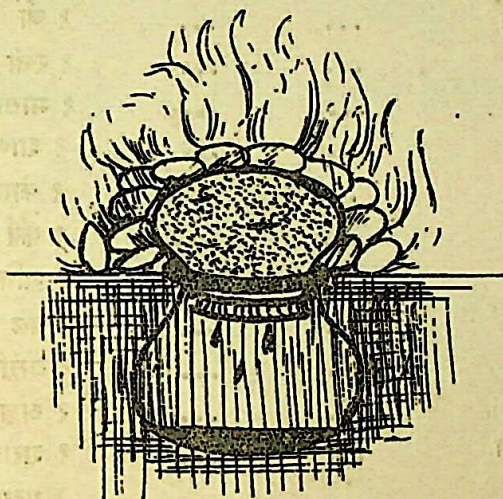
१०—अधःपातनयन्त्रविधि—एक हाँड़ीकी भीतरी पेंदीमें पारेकी पीठी लीप दे । फिर एक दूसरी चिपटी हाँड़ी ले और इसपर पहलेवाली हाँड़ी औंधी करके रखे और कपड़मिट्टीसे भली-भाँति सन्धि बन्द कर दे । तदनन्तर एक गड्ढा खोदकर नीचेवाली चिपटी हाँड़ी गाड़ दे । खाली जगहोंको गीली मिट्टीसे भर दे । अब ऊपरवाली हाँड़ीकी पेंदीपर बनैले उपले जमाकर फूँक दे । ऐसा करनेसे ऊपरवाली हाँड़ीका पारा नीचेवाली हाँड़ीमें आ जायगा । इस यन्त्र द्वारा पारा ऊपरसे नीचे लाया जाता है । इसीसे यह अधःपातन यन्त्र कहलाता है ।

मानपरिभाषा

३० परमाणुका	...	...	१ त्रसरेणु (वंशी)
६ त्रसरेणुकी	...	...	१ मरीचि
६ मरीचिकी	...	...	१ सरसों
६ सरसोंका	...	...	१ जौ
३ जौकी	...	...	१ रत्ती
१० रत्तीका	...	...	१ मासा
४ मासेका	...	...	१ शाण
२ शाणका	...	...	१ कोल
२ कोलका	...	...	१ कर्ष
२ कर्षकी	...	...	१ शुक्ति
२ शुक्तिका	...	...	१ पल
२ पलकी	...	...	१ प्रसृति
२ प्रसृतिकी	...	...	१ अञ्जलि
२ अञ्जलिका	...	...	१ शराव
२ शरावका	...	...	१ प्रस्थ
४ प्रस्थका	...	...	१ आढ़क
४ आढ़कका	...	...	१ द्रोण
२ द्रोणका	...	...	१ कुम्भ
२ कुम्भकी	...	...	१ गोणी
४ गोणीकी	...	...	१ खारी
२००० पलका	...	...	१ भार
१०० पलका	...	...	१ तुला

श्रीहरिः शरणम् ।

श्रीगोपालकृष्णभट्टविरचितो—

रसेन्द्रसारसंग्रहः

'रसायनी' भाषाटीकया विराजितः ।

प्रथमोऽध्यायः

रसेन्द्रमिव निःशेषजराव्याधिविनाशनम् ।
प्रणमामि गुरुं भक्त्या शङ्करं योगसाधनम् ॥ १ ॥

रसराज पारदके समान जरा (बुढ़ापा) और सभी व्याधियोंको नष्ट करनेमें समर्थ, योगगम्य और गुरुसदृश महामान्य श्रीशंकर भगवानको मैं भक्तिपूर्वक प्रणाम करता हूँ ॥ १ ॥

नत्वा गुरुपदद्वन्द्वं दृष्ट्वा तन्त्राण्यनेकशः ।
श्रीलगोपालकृष्णेन क्रियते रससंग्रहः ॥ २ ॥

तदनन्तर अपने गुरुदेवके चरणयुगलकी वन्दनापूर्वक आयुर्वेदके अनेक शास्त्रोंका पर्यालोचन करके मैं गोपालभट्ट यह 'रसेन्द्रसारसंग्रह' रच रहा हूँ ॥ २ ॥

सिद्धयोगाश्च ये केचित्कृतिसाध्या भवन्ति हि ।
एकीकृत्य तु ते सर्वे लिख्यन्ते यत्नतो मया ॥ ३ ॥

जो सिद्ध फलदायक योग हैं और जिन्हें विद्वान् वैद्य बना सकते हैं, उनको मैं प्रयत्नके साथ लिख रहा हूँ ॥ ३ ॥

पारेका महत्त्व

अल्पमात्रोपयोगित्वादरुचेरप्रसङ्गतः ।
क्षिप्रमारोग्यदायित्वादौषधेभ्योऽधिको रसः ॥ ४ ॥

साध्येषु भेषजं सर्वमीरितं तत्त्ववेदिना।
असाध्येष्वपि दातव्यो रसोऽतः श्रेष्ठ उच्यते ॥ ५ ॥

हतो हन्ति जराव्याधिं मूर्च्छितो व्याधिघातकः।
बद्धः खेचरतां धत्ते कोऽन्यः सूतात्कृपाकरः ॥ ६ ॥

सब औषधियोंमें पारेको सर्वाधिक श्रेष्ठ माना गया है। क्योंकि यह अल्पमात्रामें दिया जाता है। इसे खानेमें रोगीको अरुचि नहीं होती और यह जल्दी आरोग्य प्रदान करता है ॥ ४ ॥ तत्त्वज्ञ वैद्य साध्य रोगोंमें औषधि देनेकी बात कहते हैं—असाध्यमें नहीं। किन्तु पारद असाध्य रोगमें भी दिया जा सकता है। इसीसे पारा सर्वश्रेष्ठ भेषज माना गया है ॥ ५ ॥ भस्मीभूत पारा जराव्याधि (बुढ़ापे) का शमन करता है, मूर्छित पारा सब व्याधि दूर करता और बद्ध पारा आकाशमें उड़नेकी सामर्थ्य देता है। इसलिए पारेसे बढ़कर कृपालु भला किसे कहा जाय ? ॥ ६ ॥

पारेके नाम

रसेन्द्रः पारदः सूतः सूतराजश्च सूतकः।
शिवतेजो रसः सप्त नामान्येवं रसस्य तु ॥ ७ ॥
शिवबीजं रसः सूतः पारदश्च रसेन्द्रकः।
एतानि रसनामानि तथाऽन्यानि यथा शिवे ॥ ८ ॥

रसेन्द्र, पारद, सूत, सूतराज, सूतक, शिवतेज और रस, ये सात नाम पारेके हैं ॥ ७ ॥ शिवबीज, रस, सूत, पारद, रसेन्द्रक और शंकरभगवानके जितने भी नाम हैं, वे सब पारेके पर्यायवाची हैं ॥ ८ ॥

पारेकी पहचान

अन्तः सुनीलो बहिरुज्ज्वलो यो मध्याह्नसूर्यप्रतिमप्रकाशः।
शस्तोऽथ धूम्रः परिपाण्डुरश्च चित्रो न योज्यो रसकर्मसिद्धौ ॥ ९ ॥

भीतरसे खूब नीला, बाहरसे खूब उजला और मध्याह्नकालीन सूर्यके सदृश चमकीला पारा उत्तम होता है। धुएँके सदृश धुँधला, श्वेत एवं चित्र (कई रंगमिश्रित) रंगवाला पारा रसनिर्माणके उपयोगमें नहीं लाना चाहिए ॥ ९ ॥

पारेके दोष

नागो वङ्गो मलो वह्निश्चाञ्चल्यञ्च विषं गिरिः।
असह्याग्निर्महादोषा निसर्गाः पारदे स्थिताः॥ १०॥
व्रणं कुष्ठं तथा जाड्यं दाहं वीर्यस्य नाशनम्।
मरणं जडतां स्फोटं कुर्वन्त्येते क्रमान्नृणाम्॥ ११॥
तस्माद्रसस्य संशुद्धिं विदध्याद्भिषजां वरः।
शुद्धोऽयममृतः साक्षाद्दोषयुक्तो रसो विषम्॥ १२॥
दोषहीनो यदा सूतस्तदा मृत्युज्वरापहः।
शुद्धोऽयममृतः साक्षाद्दोषयुक्तो रसो विषम्॥ १३॥

सीसा, राँगा, मैल, अग्नि, चपलता, विष, गिरि (पत्थर) और ताप न सह सकना, ये दोष पारेमें स्वभावतः विद्यमान रहते हैं॥ १०॥ अशुद्ध पारेका उपयोग हो जानेपर इन्हीं दोषोंके कारण शरीरमें व्रण (घाव) कुष्ठ (कोढ़), जड़ता, दाह, वीर्यनाश, मरण, जड़ता और फोड़ा-फुसी हो जाती है॥ ११॥ अतएव कुशल वैद्यको चाहिये कि वह पारेका शोधन खूब अच्छी तरह करे। क्योंकि शुद्ध पारा अमृत और दोषयुक्त पारा विष होता है॥ १२॥ जब कि पारा निर्दोष रहता है तो वह मृत्युज्वर तकको मार भगाता है। अतः शुद्ध पारा साक्षात् अमृत है और दोषयुक्त हो तो जहरका काम करता है॥ १३॥

पारदशोधनविधि

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पारदस्य विशोधनम्।
रसो ग्राह्यः सुनक्षत्रे पलानां शतमात्रकम्॥ १४॥
पञ्चाशत्पञ्चविंशद्वा दशपञ्चैकमेव वा।
पलार्द्धीनो न कर्त्तव्यो रससंस्कार उत्तमः॥ १५॥

किसी अच्छे नक्षत्रमें सौ, पचास, पचीस, दस, पाँच अथवा एक पल (आठ तोला) पारा शोधनेके लिए ले। एक पलसे कम पारेका शोधन उत्तम नहीं होता॥ १४॥ १५॥

शतं पञ्चशतं वापि पञ्चविंशद्दशैव च।
पञ्चैकं वा पलञ्चैव पलार्द्धं कर्षमेव च॥ १६॥
कर्षान्न्यूनो न कर्त्तव्यो रससंस्कार उत्तमः।
प्रयोगेषु च सर्वेषु यथालाभं प्रकल्पयेत्॥ १७॥

सौ, पचास, पचीस, दस, पाँच, एक अथवा आधा पल (४ तोला) या कर्ष (२ तोले) पारेको लेकर शोधन करे। एक कर्षसे कम पारेका शोधन उत्तम नहीं होता। जिस किसी योगमें पारा डालनेका विधान लिखा हो तो यह शुद्ध पारा ही डालना चाहिए॥ १६॥ १७॥

शुभेऽह्नि विष्णुं परिचिन्त्य कुर्यात्सम्यक्कुमारीवटुकार्चनञ्च।
सुलौहपाषाणसमुद्भवेऽस्मिन् दृढे च वेदाङ्गुलिगर्भमात्रे॥ १८॥
सुतप्तखल्ले निजमन्त्रयुक्तां विधाय रक्षां स्थिरसारबुद्धिः।
अनन्यचित्तः शिवभक्तियुक्तः समाचरेत्कर्म रसस्य तज्ज्ञः॥ १९॥

रस-निर्माण-कार्यका ज्ञाता विद्वान् किसी शुभ दिनमें विष्णु-भगवानका ध्यान करके पहले कुमारी कन्या तथा कुँवारे बालकोंका पूजन करे। तब लोहे अथवा पाषाणके बने, मजबूत एवं भीतरसे चार अंगुल गहरे और भलीभाँति तपाये हुए खरलमें पारा डाले। उसी समय अधोनिर्दिष्ट (अघोर) मन्त्रसे रक्षाविधानपूर्वक बुद्धिको स्थिर करके अनन्य भावसे शंकरभगवानकी भक्तिमें लीन होकर रसशोधन-कार्यमें लगे॥ १८॥ १९॥

अघोरमन्त्र

अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यश्च।
सर्वेभ्यः शर्व शर्वेभ्यो नमस्ते रुद्ररूपेभ्यः॥ २०॥

'अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो' इसी मंत्रके उच्चारणपूर्वक रक्षाकार्य सम्पन्न करके पारा शोधना चाहिए॥ २०॥

तप्तखल्ललक्षण

अजाशकृत्तुषाग्निञ्च भूगर्त्ते त्रितयं क्षिपेत्।
तस्योपरि स्थितं खल्लं तप्तखल्लमिति स्मृतम्॥ २१॥

जमीनमें खरलसे कुछ बड़ा एक गड्ढा खोदकर उसमें बकरीकी लेंड़ी, धानकी भूसी और आग डाल दे। सुलग जानेपर इसके ऊपर खरल रखकर गरम कर ले यह गरम खरल ही तप्तखल्ल कहलाता है॥ २१॥

रसनिगड

स्नुह्यर्कसम्भवं क्षीरं ब्रह्मबीजञ्च गुग्गुलुः।
सैन्धवं द्विगुणं मर्द्यं निगडोऽयं महोत्तमः॥ २२॥

स्नुही (सेंहुड़ अथवा थूहर) तथा मदारका दूध, पलाशका बीज, गूगुल और सेंधानमक इनके दो-दो तोलेमें ४ तोला पारा डालकर घोंटे तो बहुत उत्तम ढंगसे पारेका निगड़ हो जाता है ॥ २२ ॥

पारेकी साधारण शोधनविधि

षोडशांशैर्भिषक्चूर्णैरेकत्र मर्द्दयेद्रसम्।
प्रत्येकं प्रत्यहं दत्त्वा सप्तवा विमर्द्दयेत् ॥ २३ ॥

पारेका एक भाग और मारक द्रव्योंका षोडश भाग डालकर दोनों एक साथ खूब घोंटे। इस तरह एक-एक मारक द्रव्य डालकर सात बार भलीभाँति घोंटनेसे पारा शुद्ध हो जाता है ॥ २३ ॥

विशेष विधि

सोर्णैर्निशेष्टकाधूमजम्बीराम्बुभिरादिनम्।
मर्दितः काञ्जिकैर्धौतो नागदोषं रसस्त्यजेत् ॥ २४ ॥

ऊन, निशा (हल्दी) ईंट, रसोईघरका धुआँ और जम्बीरी नीबूका रस, इनमें सात दिन तक घोंटने और काँजीसे धो देनेपर पारा नागदोष त्याग देता है ॥ २४ ॥

विशालाङ्कोठचूर्णेन वङ्गदोषं विमुञ्चति।
राजवृक्षो म हन्ति चित्रको वह्निदूषणम् ॥ २५ ॥

विशाला (इन्द्रायन) और अंकोठके चूर्णसे घोटे तो गदोष, अमिलतासके फलके गूदेमें घोटनेसे मलदोष तथा चीतेके रसमें घोंटनेसे पारा वह्निदोष त्याग देता है ॥ २५ ॥

चाञ्चल्यं कृष्णधुस्तूरं त्रिफला विषनाशिनी।
कटुत्रयं गिरिं हन्ति असह्याग्निं त्रिकण्टकः ॥ २६ ॥

काले धतूरेके रससे घोंटे तो चपलता, त्रिफला (हर्रा, बहेड़ा और आँवला) के चूर्णमें घोटनेसे विषदोष, त्रिकटु (सोंठ, मिर्च तथा पिप्पली) के चूर्णमें घोंटनेसे गिरिदोष और गोखरूके चू में घोंटनेसे असह्य अग्निदोष त्याग देता है ॥२६॥

प्रतिदोषं कलांशेन तत्तच्चूर्णं सकन्यकम्।
उद्धृत्योष्णारनालेन मृत्पात्रे क्षालयेत्सुधीः।
एवं संशोधितः सूतः सप्तकञ्चुकवर्जितः ॥ २७ ॥

पारेके एक-एक दोषको नष्ट करनेके लिए उपर्युक्त औषधोंका कलांश (सोलहवाँ भाग) डालकर घीकुवारके रसमें यदि सात दिनतक घोंटे और मृत्तिका-के पात्रमें डाल-डालकर बराबर धोता रहे तो सातों दोषोंसे रहित (सप्तकंचुक-वर्जित) होकर पारा सिद्ध हो जाता है ॥ २७ ॥

श्रीखण्डं देवकाष्ठञ्च काकजंघाजयाद्रवैः ।
कर्कटीमूषलीकन्याद्रवं दत्त्वा विमर्दयेत् ।
दैनिकं पातयेत्पश्चात्तं शुद्धं विनियोजयेत् ॥ २८ ॥

मलयचन्दन, देवदारु, काकजंघा, भाँगका रस, ककड़ी, मुसली तथा घीकु-वार, इनके रसमें एक-एक दिन पारेको डालकर घोंटे और उसके बाद ऊर्ध्वपातन-यंत्रसे उड़ावे तो पारा शुद्ध हो जाता है। इस तरह शुद्ध किये हुए पारेको ही काममें लाना चाहिए ॥ २८ ॥

कुमार्या च निशाचूर्णैर्दिनं सूतं विमर्दयेत् ।
पातयेत्पातनायन्त्रे सम्यक्शुद्धो भवेद्रसः ॥ २९ ॥

घीकुवारके रस और हल्दीके चूर्णमें दिनभर पारेको घोंटे। तत्पश्चात् ऊर्ध्व-पातनयंत्रसे उड़ा ले तो पारा सर्वथा शुद्ध हो जाता है ॥ २९ ॥

रसस्य द्वादशांशेन गन्धं दत्त्वा विमर्दयेत् ।
जम्बीरोत्थैर्द्रवैर्यामं पाच्यं पातनयन्त्रके ।
पुनर्मर्द्य पुनः पाच्यं सप्तवारं विशुद्धये ॥ ३० ॥

जितना पारा हो, उसका बारहवाँ भाग गंधक डालकर जम्बीरी नीबूके रसमें घोंटे और एक पहरकी आँच देकर ऊर्ध्वपातन कर ले। फिर पारेको निकालकर उसमें बारहवाँ भाग गन्धक डाले और जम्बीरी नीबूके रसमें घोंटकर ऊर्ध्वपातन कर ले। इस रीतिसे सात बार द्वादशांश गंधक डाल-डालकर घोंटने तथा पहर-पहरकी आँच दे-देकर ऊर्ध्वपातन करनेसे पारा शुद्ध हो जाता है ॥ ३० ॥

जयन्त्या वर्द्धमानस्य चार्द्रकस्य रसेन च ।
वायस्याश्चानुपूर्व्येवं मर्दनं रसशोधनम् ॥ ३१ ॥

एक-एक करके जयन्ती, वर्धमान (एरण्ड), अदरख और वायसी (मकोय) के रसमें घोंटे तो पारा शुद्ध हो जाता है ॥ ३१ ॥

एषां प्रत्येकशस्तावन्मर्दयेत्स्वरसेन च ।
यावच्च शुष्कतां याति सप्तवारं विचक्षणः ॥ ३२ ॥

ऊद्धृत्योष्णारनालेन मृद्भाण्डे क्षालयेत्सुधीः ।
सर्वदोषविनिर्मुक्तः सप्तकञ्चुकवर्जितः ।
जायते शुद्धसूतोऽयं युज्यते सर्वकर्मसु ॥ ३३ ॥

उपर्युक्त प्रत्येक द्रव्योंके स्वरसमें घोंटकर पारेको सुखावे । इस प्रकार सात बार इसे घोंटे और सुखावे । फिर मृत्तिकाके पात्रमें डालकर गरम काँजीसे धो डाले तो पारा सब दोषोंसे रहित और सप्तकंचुकहीन हो जाता है । इस प्रकार संशोधित पारा सब काममें लाया जा सकता है ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

निशेष्टिकाधूमरजोऽम्लपिष्टो विकञ्चुकः स्याद्धि ततश्च सोर्णः ।
वरारनालानलकन्यकाभिः सत्र्यूषणाभिर्मर्दितस्तु सूतः ॥ ३४ ॥

हल्दी तथा ईंटका चूर्ण, पाकशालाका धुँआँ, अम्लरस, ऊन, त्रिफलाका चूर्ण, काँजी, चीता, घीकुवार एवं त्र्यूषणके चूर्णमें पारेका मर्दन करे तो वह शुद्ध हो जाता है ॥ ३४ ॥

दिनैकं मर्दयेत्सूतं कुमारीसम्भवैर्द्रवैः ।
तथा चित्रकजैः क्वाथैर्मर्दयेकवासरम् ।
काकमाचीरसैः सार्द्धं दिनमेकन्तु मर्दयेत् ॥ ३५ ॥

दिनभर घीकुवारके रसमें, एक दिन चीतेके काढ़ेमें और एक दिन मकोयके रसमें घोटनेसे पारा निर्दोष हो जाता है ॥ ३५ ॥

रसोनस्वरसैः सूतो नागवल्लीदलोत्थितैः ।
त्रिफलायास्तथा क्वाथै रसो मर्द्यः प्रयत्नतः ॥ ३६ ॥

ततस्तेभ्यः पृथक्कृत्वा सूतं प्रक्षाल्य काञ्जिकैः ।
सर्वदोषविनिर्मुक्तं योजयेद्रसकर्मसु ॥ ३७ ॥

पहले लहसुनके स्वरसमें, तब पानके स्वरसमें, उसके बाद त्रिफलाके क्वाथमें घोंटकर पारेको अलग कर ले और काँजीसे धो डाले तो पारा शुद्ध हो जाता है और सब प्रकारसे उपयोगमें लाया जा सकता है ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

ऊर्ध्वपातनविधि

भागस्त्रयो रसस्यार्कभागमेकं विमर्दयेत् ।
जम्बीरद्रवयोगेन यावदायाति पिण्डताम् ॥ ३८ ॥
तत्पिण्डं तलभाण्डस्थमूर्ध्वभाण्डे जलं क्षिपेत् ।
कृत्वाऽऽलवालकं वापि ततः सूतं समुद्धरेत् ।
ऊर्ध्वपातनमित्युक्तं भिषग्भिः सूतशोधने ॥ ३९ ॥

पारा तीन हिस्सा और संशोधित ताम्रचूर्ण एक हिस्सा इन दोनोंको एकमें पीसकर जम्बीरी नीबूके रसमें घोंटे। जब इसका गोला बन जाय, तब एक हँड़ियामें रखे और ऊपरसे एक औंधी हँड़िया रखकर दोनोंके मुखपर कपड़-मिट्टी करके बन्द कर दे। फिर उसे भट्टीपर रख दे। ऊपरवाली हँड़ियाकी पेंदीमें गीली मिट्टीका थाला बनाकर उसमें पानी भर दे। उसके बाद आँच लगावे तो पारा उड़कर ऊपरवाली हँड़ियामें चिपक जायगा। विज्ञ वैद्योंने पाराशोधनमें ऊर्ध्वपातनकी यही विधि बतलायी है॥ ३८ ॥ ३९ ॥

अधःपातनविधि

नवनीताह्वयं गन्धं घृष्ट्वा जम्भाम्भसा दिनम् ।
वानरीशिग्रुशिखिभिः सैन्धवासुरिसंयुतैः ॥ ४० ॥
नष्टपिष्टं रसं कृत्वा लेपयेदूर्ध्वभाण्डके ।
ऊर्ध्वभाण्डोदरं लिप्त्वाऽधोभाण्डं जलसंयुतम् ॥ ४१ ॥
सन्धिलेपं द्वयोः कृत्वा तद्यन्त्रं भुवि पूरयेत् ।
उपरिष्टात्पुटे दत्तो जले पतति पारदः ।
अधःपातनमित्युक्तं सिद्धाद्यैः सूतकर्मणि ॥ ४२ ॥

नवनीत अर्थात् आमलासार नामकी गंधकको जम्बीरी नीबूके रससे दिनभर घोंटे। तब इस गंधकमें समभाग केंवाच, सहिंजन, चिचिड़ा, सेंधानमक और पारा इन सबको एकमें मिलाकर घोंटाई करें। जब सब एकदिल हो जायँ और इनकी पीठी-सी बन जाय तो इस पीठीको ऊपरी पात्रके अन्दर लीप दे और नीचेके पात्रमें पानी भर दे। तदनन्तर दोनों पात्रोंका मुख एकमें मिलाकर कपड़मिट्टीसे संधि बन्द करके भूमिमें गड्ढा खोदकर रख दे और ऊपरसे आग लगा दे। इस

प्रकार पुट देनेसे ऊपरका पारा निकलकर जलमें आ गिरेगा। सिद्ध वैद्योंने इस विधिको अधःपातनविधि कहा है ॥ ४०-४२ ॥

तिर्य्यक्पातनम्

घटे रसं विनिक्षिप्य सजलं घटमन्यकम्।
तिर्य्यङ् मुखं द्वयोः कृत्वा तन्मुखं रोधयेत्सुधीः ॥ ४३ ॥
रसाधो ज्वालयेदग्निं यावत्सूतो जलं विशेत्।
तिर्य्यक्पातनमित्युक्तं सिद्धैर्नागार्जुनादिभिः ॥ ४४ ॥

एक घड़ेमें पारा रखे और दूसरेमें जल भर दे। इन दोनों घड़ोंका मुँह तिरछा करके बाँध दे और पारेवाले घड़ेके नीचे आँच दें। ऐसा करनेपर जब पारा उड़कर जलवाले घड़ेमें चला जाय, तब उसे निकाल ले। नागार्जुन प्रभृति सिद्ध वैद्योंने इसे तिर्यक्पातनयंत्र कहा है ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

बोधनविधि

एवं कदर्थितः सूतः षण्ढत्वमधिगच्छति।
तन्मुक्तयेऽस्य क्रियते बोधनं कथ्यते हि तत् ॥ ४५ ॥
विश्वामित्रकपाले वा काचकूप्यामथापि वा।
सूते जलं विनिक्षिप्य तत्र तन्मज्जनावधि ॥ ४६ ॥
पूरयेत्त्रिदिनं भूम्यां गजहस्तप्रमाणतः।
अनेन सूतराजोऽयं षण्ढभावं विमुञ्चति ॥ ४७ ॥

उपर्युक्त विधियोंसे उड़ानेपर पारा वीर्यहीन-सा हो जाता है। उसके इस दूषणको दूर करनेके लिए बोधनविधि बतायी जा रही है। नारियलकी खोपड़ी अथवा काँचकी शीशीमें वह पारा डाल दे और उसमें केवल उतना पानी डाले कि जितनेसे पारा डूब जाय। तब शीशी अथवा नारियल की खोपड़ीको हाथीकी सूँड़ बराबर (अर्थात् ३० अंगुल) गहरे गड्ढेमें गाड़कर तीन दिन पड़ा रहने दे। ऐसा करनेसे पारा अपनी वीर्यहीनता त्याग देता है ॥ ४५-४७ ॥

सिंगरिफका पारा

अथवा हिंगुलात्सूतं ग्राहयेत्तन्निगद्यते।
जम्बीरनिम्बुनीरेण मर्दितो हिंगुलो दिनम् ॥ ४८ ॥

ऊर्ध्वपातनयन्त्रेण ग्राह्यः स्यान्निर्मलो रसः।
कञ्चुकैर्नागवङ्गाद्यैर्निर्मुक्तो रसकर्म्मणि।
विना कर्माष्टकेनैव सूतोऽयं सर्वकर्म्मकृत् ॥ ४९ ॥

हिंगुल (सिंगरिफ) से भी पारा निकाला जाता है। उसकी विधि यह है कि सिंगरिफको जंभीरी नीबूके रसमें दिन भर घोंटे। तब ऊपर बतलाये ऊर्ध्वपातन-यंत्र द्वारा उसमेंसे मलहीन पारा निकाल ले। यह पारा नाग-वङ्ग आदि दोषों तथा कंचुकोंसे रहित होता है। बिना अष्टकर्म किये भी यह सर्वत्र काम देता है ॥ ४८ ॥ ४६ ॥

अष्टकर्म

स्वेदनं मर्दनञ्चैव मूर्च्छनोत्थापने तथा।
पातनं बोधनं चैव नियामनमतः परम्।
दीपनञ्चेति संस्काराः सूतस्याष्टौ प्रकीर्त्तिताः। ५० ॥

स्वेदन, मर्दन, मूर्च्छन, उत्थापन, पातन, बोधन, नियामन और दीपन, ये ही पारेके अष्टकर्म कहे गये हैं ॥ ५० ॥

दरदं तण्डुलस्थूलं कृत्वा मृत्पात्रके त्रिदिनम्।
भाव्यं जम्बीररसैश्चाङ्गेर्य्या वा रसैर्बहुधा ॥ ५१ ॥
ततश्च जम्बीरवारिणा चाङ्गेर्य्याश्च रसेन परिप्लुतम्।
कृत्वा स्थालीमध्ये निधाय तदुपरि कठिनीघृष्टम् ॥५२॥
उत्तानं चारुशरावं तत्र त्रिंशद्वारं जलं देयम्।
उष्णं हेयं तथैव तदूर्ध्वपातनेन निर्म्मलः शिवजः ॥५३॥

सिंगरिफको कूटकर चावलोंके समान महीन करके मट्टीके बर्तनमें रखे और पूरे तीन दिन तक जँभीरी नीबूके रस अथवा चांगेरीके रसमें अच्छी तरह घोंटे। तदनन्तर बटलोईके समान एक चौड़े पात्रमें जँभीरी नीबूका रस एवं चांगेरीका रस डालकर वह घुँटी सिंगरिफ भी उसीमें डाल दे और पात्रके मुखपर पेंदीमें खड़िया मिट्टी लपेटी हुई (ऊपर मुखकी) परई रख दे। परईकी पेंदी और पात्रके मुखकी संधि बन्द करनेके लिए कपड़मिट्टी कर दे। अब पात्रके नीचे आँच दे। ऊपरकी परईमें पानी भर दे। जब पानी गरम हो जाय तो उसे निकाल-कर ठण्ढा जल भर दे। इस तरह तीस बार पानी बदले। इस प्रकार उड़ानेसे शुद्ध

पारा परईकी पेंदीवाली खड़ियामें आ जायगा। अब उस खड़ियाको वस्त्रसे छान और बार-बार काँजीसे धोकर पारा अलग कर ले ॥ ५१–५३ ॥

मूर्छनविधि

पारिभद्ररसैः पेष्यं हिङ्गुलं याममात्रकम् ।
जम्बीराणां रसैर्वाऽथ पचेत्पातनयन्त्रके ॥ ५४ ॥
तं सूतं योजयेद्योगे सप्तकञ्चुकवर्जितम् ।
संशुद्धिमन्तरेणापि शुद्धोऽयं रसकर्म्मणि ॥ ५५ ॥

सिगरिफको नीमकी पत्तीके रस या जँभीरी नीबूके रसमें पहर भर घोंटे और उर्ध्वपातनयन्त्रमें पकाकर पारेको उड़ा ले। ऐसा करनेसे ऊपरवाले पात्रमें शुद्ध पारा आजायगा। यह पारा सप्तकंचुकविहीन होता है और अन्य किसी तरह शुद्धि हुए बिना भी सब योगोंमें देने योग्य शुद्ध पारद माना जाता है ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

गन्धकेन रसं प्राज्ञः सुदृढं मर्दयेद्भिषक् ।
कज्जलाभो यदा सूतो विहाय घनचापलम् ॥ ५६ ॥
दृश्यतेऽसौ तदा ज्ञेयो मूर्च्छितो रसकोविदैः ।
असौ रोगचयं हन्यादनुपानस्य योगतः ॥ ५७ ॥

संशोधित पारदको शुद्ध गंधकके साथ भलीभाँति घोंटे। ऐसा करनेसे जब पारा अपनी चंचलता त्यागकर काजलकी तरह काला हो जाय, तब समझे कि पारेका मूर्छन हो गया। मूर्छित पारा अनुपानभेदसे विविध रोगोंको मार भगाता है ॥ ५६ ॥ ५७ ॥

मारणविधि

द्विपलं शुद्धसूतस्य सूतार्धं गन्धकं तथा ।
कन्यानीरेण सम्मर्द्य दिनमेकं निरन्तरम् ।
रुद्ध्वा तद्भूधरे यन्त्रे दिनैकं मारयेत्पुटे ॥ ५८ ॥

दो पल (१६ तोला) शुद्ध पारा और एक पल (८ तोला) शुद्ध गन्धक इन दोनोंको उपर्युक्त विधिसे मूर्छित करके घीकुवारके रसमें दिनभर घोंटे। तदनन्तर उसे भलीभाँति सम्पुटित करके भूधरयंत्रमें रखकर दिनभर आँच दे तो पारा सर्वथा निर्जीव हो जाता है ॥ ५८ ॥

भुजङ्गवल्लीनीरेण मर्दयेत्पारदं दृढम् ।
कर्कटीकन्दमूषायां सम्पुटस्थं पुटेद्गजे ।
भस्म तद्योगवाहि स्यात्सर्वकर्मसु योजयेत् ॥ ५६ ॥

पानके रससे संशोधित पारेको खूब घोंटे । तब कँकड़ीकी जड़ (जो जिमी-कन्दके आकारकी हो) की मूषा (घरिया) बनाकर उसमें इसे भर दे । फिर शराव-सम्पुटमें वह मूषा रखकर गजपुटके क्रमसे फूँके तो पारा मरकर भस्मके रूपमें परिणत हो जाता है । यह पारद सब योगमें काम आता है ॥ ५६ ॥

श्वेताङ्कोठजटानीरैर्मर्द्यः सूतो दिनत्रयम् ।
पुटेत्तं चान्धमूषायां सूतो भस्मत्वमाप्नुयात् ॥ ६० ॥
देवदाली हंसपदी यमचिञ्चा पुनर्नवा ।
एभिः सूतो विघृष्टव्यो पुटनान्म्रियते ध्रुवम् ॥ ६१ ॥

श्वेत अंकोठ (अकोहर) के रसमें संशोधित पारेको तीन दिन घोंटे । उसे अन्धमूषामें भरकर आँच दे तो पारा भस्म बन जाता है । बंदालडोंडा, हंसपदी, खट्टी इमली तथा पुनर्नवाके रसमें सशोधित पारेको घोंट और अन्धमूषामें रखकर आँच दी जाय तो पारा अवश्य मर जाता है ॥ ६० ॥ ६१ ॥

रससिन्दूर

भागो रसस्य त्रय एव भागा गन्धस्य माषः पवनाशनस्य ।
सम्मर्द्य गाढं सकलं सुभाण्डे तां कज्जलीं काचघटे निदध्यात् ॥६२॥
संरुध्य मृत्कर्पटकैर्घटीं तां मुखे सुचूर्णां खटिकाञ्च दत्त्वा ।
क्रमाग्निना त्रीणि दिनानि पक्त्वा तां वालुकायन्त्रगतां ततः स्यात्॥६३॥
बन्धूकपुष्पारुणमीशजस्य भस्म प्रयोज्यं सकलामयेषु ।
निजानुपानैर्मरणं जराञ्च हन्त्यस्य वल्लः क्रमसेवनेन ॥ ६४ ॥

पारा १भाग, गन्धक पारेकी तिगुनी,शुद्ध सीसा एक भाग इनको एकमें मिलाकर खूब घोंटे । घुँटनेपर जब वह काजल जैसा काला हो जाय तो उसे काँचकी कुप्पीमें रखे । इस कुप्पीकें मुँहपर कपड़मिट्टी करके ऊपरसे खड़िया मिट्टी पीसकर लीप दे । अब कुप्पीको वालुकायंत्रमें रखे और नीचेसे पहले मन्द, फिर मध्यम और उसके बाद तीक्ष्ण आँच देता हुआ पूरे तीन दिन पकावे । शीतल होनेपर शीशीमेंसे भस्म निकाल ले । यह भस्म दोपहरियाके फूलकी भाँति एकदम लाल

रंगकी होगी । सब प्रकारके रोगोंमें इसका उपयोग किया जा सकता है । अनुपान-भेदसे यह मरण और बुढ़ापा दोनों नष्ट करता है ॥ ६२-६४ ॥

अथवा

पलमात्रं रसं शुद्धं तावन्मात्रन्तु गन्धकम् ।
विधिवत्कज्जलीं कृत्वा न्यग्रोधाङ्कुरवारिभिः ॥ ६५ ॥
भावनात्रितयं दत्त्वा स्थालीमध्ये निधापयेत् ।
विरच्य कवचीयन्त्रं बालुकाभिः प्रपूरयेत् ॥ ६६ ॥
दद्यात्तदनु मन्दाग्निं भिषग्यामचतुष्टयम् ।
जायते रससिन्दूरं तरुणादित्यसन्निभम् ।
अनुपानविशेषेण करोति विविधान्गुणान् ॥ ६७ ॥

एक पल शुद्ध पारा और एक ही पल शुद्ध गंधक, इन दोनोंको खूब घोंटकर कज्जली कर ले । तब बरगदकी जटाके अंकुरोंके स्वरसमें तीन बार भावना दे । इसके बाद इसे काँचकी कुप्पीमें रखे और एक बड़ेसे पात्रमें रखकर कुप्पीके चौतरफा बालू भर दे । कुप्पीके मुँहपर कपड़मिट्टी करके खड़ियाका लेप कर दे । यह कवचीयंत्र कहलाता है । तब वैद्य चार पहर तक इसके नीचे मन्द-मन्द आँच दे । ऐसा करनेसे प्रातः-कालीन सूर्यके समान पारेकी लाल भस्म तैयार हो जायगी । यही रससिन्दूर है । अनुपानभेदसे देनेपर यह अनेक प्रकारके गुण दिखाता है ॥ ६५-६७ ॥

अथवा

पृथक् समं समं कृत्वा पारदं गन्धकं तथा ।
नरसारं धूमसारं स्फटिकं याममात्रकम् ॥ ६८ ॥
निम्बूरसेन सम्मर्द्य काचकूप्यां निवेशयेत् ।
मुखे पाषाणखटिकां दत्वा मुद्रां प्रलेपयेत् ॥ ६९ ॥
सप्तभिर्मृत्तिकावस्त्रैः पृथक् संशोष्य वेष्टयेत् ।
सच्छिद्रायां मृदःस्थाल्यां कुपिकां तां निवेशयेत् ॥ ७० ॥
पूरयेत्सिकतापूरैरागलं मतिमान् भिषक् ।
निवेश्य चुल्ल्यां दहनं मन्द मध्यं खरं क्रमात् ॥ ७१ ॥
प्रज्वाल्य द्वादशं यामं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।

स्फोटयित्वा तु मुक्ताभमूर्ध्वलग्नं वह्निं त्यजेत्।
अधःस्थं रससिन्दूरं सर्वरोगेषु योजयेत्॥ ७२॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, नौसादर, रसोईघरकी धुँआँ तथा फिटकिरी, यह सब समान भाग ले। पहले पारे तथा गंधकको घोंटकर कज्जली कर ले। तब बाकी चीजें मिलाकर खूब घोंटे। फिर नीबूके रसमें पहरभर घोंटकर इसे काँचकी शीशीमें भर दे। शीशीके मुखपर खड़ियाका लेप करके मुँह बन्द कर दे। तदनन्तर इस शीशी-पर क्रमशः सात कपड़मिट्टी करके सुखा ले। अब शीशीको एक बड़ीसी ऐसी हाँड़ीमें रखे कि जिसके मध्यमें छिद्र हो। उस हँड़ियामें इतनी बालू भरे कि कंठतक आ जाय। इसके अनन्तर हँड़िया चूल्हेपर रखे और क्रमशः मन्द, मध्यम और तीव्र आँच दे। इस तरह बारह पहरकी आँच दे। जब वह स्वाङ्गशीतल हो जाय, तब शीशी निकाले और फोड़कर मुखपर मोतीके समान लगी हुई गंधक अलग करके नीचेका रससिन्दूर निकाल लें। सभी रोगोंपर इसका उपयोग कर सकते हैं॥ ६८--७२॥

रसकर्पूर

टङ्कणं मधु लाक्षा च ऊर्णागुञ्जायुतो रसः।
मर्दितो भृङ्गजद्रावैर्दिनैकं चालयेत् पुनः।
ध्मातो भस्मत्वमाप्नोति शुद्धकर्पूरसन्निभम्॥ ७३॥

सोहागा, शहद, लाख, ऊन, गुंजा (रत्ती) और शुद्ध पारा, इनका समान भाग लेकर भँगरैयाके रसमें खूब घोंटे। जब सब एकदिल हो जायँ तो सम्पुटमें रखकर पूरे दिन भर आँच दे। ऐसा करनेसे पारा भस्म होकर शुद्ध कपूरके समान श्वेत हो जाता है। यही रसकपूरके नामसे विख्यात है॥ ७३॥

अथवा

पिष्टं पांशुपटुप्रगाढममलं वज्र्यम्बुना नैकशः
सूतं धातुगतं खटीकवलितं तं सम्पुटे रोधयेत्।
अन्तःस्थं लवणस्य तस्य च तले प्रज्वाल्य वह्निं दृढ
यत्नं ग्राह्यमथेन्दुकुन्दधवलं भस्मोपरिस्थं शनैः॥ ७४॥

तद्वल्लद्वितयं लवङ्गसहितं प्रातः प्रभुक्तं नृणा-
मूर्ध्वंरेचयति द्वियाममसकृत्पेयं जलं शीतलम्।
एतद्धन्ति च वत्सराधिकविष षाण्मासिकं मासिकं
शैलोत्थं गरलं मृगेन्द्रकुटिलोद्भूतञ्च तात्कालिकम्॥ ७५॥

पहले शुद्ध पारेको शुद्ध कसीसमें मिलाकर पीसे। फिर उसमें सेंहुड़का दूध मिलाकर बार-बार घोंटे। इस पारेको एक लोहेके कटोरेके सम्पुटमें रख तथा कपड़मिट्टी द्वारा संधि बन्द कर दे। इस सम्पुटके चारों ओर नमक भर दे। तत्पश्चात् हँड़िया चूल्हेपर रखकर सम्पुटको एक हाँड़ीमें रखे और नीचेसे दिनभर कड़ी आँच दे। स्वांगशीतल हो जानेके बाद सम्पुट खोलनेपर उसमेंसे चन्द्रमा तथा कुन्दपुष्पके समान श्वेत भस्म निकलेगी। यही रसकपूर है। यदि प्रातःकाल दो बल्व (३ रत्ती) रसकपूरको लौंगके चूर्णके साथ खाया जाय तो दोपहर बाद दस्त आयेंगे। इसे खानेके बाद कई बार ठंढा जल पीना चाहिए। इसका सेवन करनेसे सालभरसे भी पुराना, छ महीनेका और महीने भरका पुराना विष शान्त हो जाता है। पाषाणजनित विष, सिंहके बालका विष तथा तत्काल खाया विष तुरन्त नष्ट हो जाता है॥ ७४ ॥ ७५॥

सर्वाङ्गसुन्दर रस

मर्दयेद्रसगन्धौ च हस्तिशुण्डीद्रवैर्दृढम्।
भूधात्रिकारसैर्वापि पर्य्यन्तं दिनसप्ततः॥ ७६॥
विघृष्य वालुकायन्त्रे मूषायां सन्निवेशयेत्।
दिनमेकं दहेदग्नौ मन्दं मन्दं निशावधि॥ ७७॥
एवं निष्पाद्यते पीतः शीतः सूतस्तु गृह्यते।
पूर्णखण्डेन तद्गुञ्जां भक्षयेत्सततं हिताम्॥ ७८॥
क्षुद्बोधं कुरुते पूर्व्वमुदराणि विनाशयेत्।
जराणां नाशनः श्रेष्ठस्तद्वच्छ्रीसुखकारकः॥ ७९॥
हृदयोत्साहजननः सुरूपतनयप्रदः।
बलप्रदः सदा देहे जरानाशनतत्परः॥ ८०॥
अङ्गभङ्गादिकं दोषं सर्वं नाशयति क्षणात्।
एतस्मान्नापरः सूतो रसात्सर्वाङ्गसुन्दरात्॥ ८१॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक इन दोनोंको बराबर ले और इनकी कज्जली करके पहले हाथीसुंडीके रसमें सात दिनोंतक और इसके बाद भूम्यामलकीके रसमें सात दिन तक घोटें। तब इसे मूषामें रखे तथा बालुकायन्त्रमें रखकर चार पहर तक मन्द-मन्द आँच देता हुआ पकावे। स्वांगशीतल होने एवं खोलनेपर इसमेंसे पीतवर्णकी भस्म निकलेगी। यदि इसको १ रत्तीकी मात्रा पानमें रखकर खाय तो बड़ा लाभ होता है। इसके सेवनसे भूख बढ़ती है। सभी उदररोग शान्त हो जाता हैं। बुढ़ापा दूर भागती है। सुन्दरता बढ़ती है। रतिसुख सुलभ होता है। हृदयमें उत्साहका संचार होता है। सुन्दर सन्तति उत्पन्न होती है। बल बढ़ता है और बुढ़ापा पास नहीं आती। यह अंगभंगादि दोषोंको क्षणभरमें मार भगाती है। इससे बढ़कर पारेकी और कोई भी भस्म नहीं होती ॥ ७६—८१ ॥

कृष्णभस्म

धान्याभ्रकं रसं तुल्यं मारयेन्मारकद्रवैः।
दिनैकं तेन कल्केन वस्त्रं लिप्त्वा तु वर्त्तिकाम् ॥ ८२ ॥

विलिप्य तैलैर्वर्तिं तामेरण्डोत्थैः पुनः पुनः।
तदाज्यभाण्डे प्रज्वाल्य गृह्णीयात्पतितञ्च यत् ॥ ८३ ॥

कृष्णभस्म भवेत्तच्च पुनर्मर्द्यं नियामकैः।
दिनैकं पातयेद्यन्त्रे कंदुकाख्ये न संशयः।
मृतः सूतो भवेत्तच्च तत्तद्रोगेषु योजयेत् ॥ ८४ ॥

श्वेतं पीतं रक्तं कृष्णञ्चेति चतुर्विधम्।
लक्षणं भस्मसूतानां श्रेष्ठं स्यादुत्तरोत्तरम् ॥ ८५ ॥

शोधित धान्याभ्रमक और शुद्ध पारा इनको समभाग लेकर घोंटे और मारक वस्तुओंसे मारे। पुनः घुटे कल्कको एक कपड़ेपर पोत दे और उस कपड़ेकी बत्ती बना ले। बत्तीपर बार-बार रेड़ीके तेलका लेप करे। उस बत्तीको घीभरे कसोरे-में रखकर जलावे। जलती हुई बत्तीमेंसे जो बूँदें टपकें, उन्हें एकत्रित कर ले। यही कृष्ण भस्म है। फिर नियामकवर्गमें कही औषधियोंमें इसे घोंटकर कन्दुकयन्त्रसे पातन करे। ऐसा करनेसे अवध्य पारा मरकर भस्मरूपमें परिणत हो जायगा। यह भस्म विभिन्न रोगोंमें दी जा सकती है। श्वेत, पीत, लाल एवं कृष्ण चार प्रकारकी

पारदभस्म होती है। इनमें उत्तरोत्तर एक दूसरेसे श्रेष्ठ मानी जाती है। अर्थात् सफेदसे पीली, पीलीसे लाल और लालसे कृष्ण भस्म उत्कृष्ट होती है ॥८२-८५॥

वज्रमूषाविधान

द्वौ भागौ तुषदग्धस्य चैका बल्मीकमृत्तिका ।
लौहकिट्टस्य भागैकं श्वेतपाषाणभागिकम् ॥ ८६ ॥
नरकेशसमं किञ्चिच्छागीक्षीरेण पेषयेत् ।
याममात्रं दृढं मर्द्यं तेन मूषां प्रकल्पयेत् ॥ ८७ ॥
शोषयित्वा रसं क्षिप्त्वा तत्कल्कैः सन्निरोधयेत् ।
वज्रमूषेयमाख्याता सम्यक्पारदसाधिका ॥ ८८ ॥

बिमौटेकी मिट्टी १ भाग, भूसीकी राख २ भाग, लोहेकी कीट १ भाग, सफेद पत्थर (खड़िया मिट्टी) १ भाग और मनुष्यका बाल १ भाग, इन सबको बकरीके दूधमें पहर भर पीसकर मूषा (घरिया) बना ले। जब वह सूख जाय तो उसमें पारा भर दे और उसी मूषाके अवशिष्ट कल्कसे भली भाँति संधियें बन्द कर दे। इसीका नाम 'वज्रमूषा' है। इसमें पारा बड़ी आसानीसे भस्म हो जाता है। ॥ ८६-८८ ॥

नियामकगण

सर्पाक्षी वन्यकर्कोटी कञ्चुकी यमचिञ्चिका ।
शतावरी शङ्खपुष्पी शरपुङ्खा पुनर्नवा ॥ ८९ ॥
मण्डूकपर्णी मत्स्याक्षी ब्रह्मदण्डी शिखण्डिनी ।
अनन्ता काकजङ्घा च काकमाची च पोतिका ॥ ९० ॥
विष्णुक्रान्ता सहचरा सहदेवी महाबला ।
बला नागबला मूर्वा चक्रमर्दकरञ्जकौ ।
पाठा तामलकी नीली जालिनी पद्मचारिणी ॥९१॥
घण्टा विघण्टा गोजिह्वा कोकिलाक्षो घनध्वनिः ।
आखुकर्णी क्षीरिणी च त्रिपुटी मेषशृङ्गिका ॥ ९२ ॥
कृष्णवर्णा च तुलसी सिंही च गिरिकर्णिका ।
एता नियामकौषध्यः पुष्पमूलदलान्विताः ॥ ९३ ॥

सर्पाक्षी (गन्धनाकुली), बनैला ककोड़ा, कंचुकी (शाकविशेष), खट्टी इमली, सतावर, शंखपुष्पी, शरपुंखा, पुनर्नवा (गदहपुर्ना), मण्डूकपर्णी, मत्स्याक्षी, ब्रह्मदण्डी, शिखण्डिनी (रत्ती), अनन्तमूल, काकजंघा, काकमाची, (मकोय), पोय, विष्णुक्रान्ता, झिण्टी, सहदेई, महाबला, बला, नागबला, मूर्वा, चकवन, कंजा, पाठा, भुँइआमला, नोली, जालिनी (कडुई तरोई), भँगरैया, अतिबला, गौजवाँ, तालमखाना, मोथा, मूषकपर्णी, खिन्नी, रेंड़, मेषशृंगी, काली तुलसी, कंटकारी और गिरिकर्णी, फूल-पत्ते तथा सोर (जड़) समेत ये औषधियाँ पारदकी नियामक मानी जाती हैं ॥ ८६–९३ ॥

मारकवर्ग

घनवचाचित्रकगोक्षुराः कटुतुम्बी दन्तिका जाती।
सर्पाक्षी शरपुङ्खा कन्या चाण्डालिनीकन्दम् ॥ ९४ ॥

नागरमोथा, वच, चीता, गोखरू, कडुई लौंकी, दन्ती, जाति (चमेली), गंधनाकुली, शरपुंखा, घीगुवार, चाण्डालिनीकन्द, विषमुष्टि (कुचला) थूहर ये मारक वर्गकी औषधियाँ हैं ॥ ९४ ॥

विषमुष्टिवज्रवल्ल्यौ लज्जा लाक्षा च देवदाली च।
सहदेवी नीपकणा निर्गुण्डी चक्रलाङ्गलिके च ॥ ९५ ॥
माणार्कचन्द्ररेखा रविभक्ता काकमाचिका चार्कः।
विष्णुक्रान्ता वायसतुण्डी वज्री बला च शुण्डी च ॥९६॥
कोषातकी जयन्ती वाराही हस्तिशुण्डिका रम्भा।
मत्स्याक्षी यमचिञ्चा हरिद्रे द्वे पुनर्नवाद्वितयम् ॥ ९७ ॥
धुस्तूरकाकजंघे शतावरी कञ्चुकी च वन्ध्या च।
तिलभेकपर्णिदूर्वा मूर्वा च हरीतकी तुलसी ॥ ९८ ॥
गोकण्टकाखुपर्ण्यौ कर्कटीकन्दवर्गलता च।
मुषली हिङ्गुगुडूची शिग्रुगिरिकर्णिका महाराष्ट्री ॥ ९९ ॥
मार्कवसैन्धवसरणीसोमलताः श्वेतसर्षपोऽसनकः
हंसपदी व्याघ्रपदी किंशुकभल्लातकेन्द्रवारुणिकाः ॥१००॥
सर्वेक्षार्द्धांशं वा अष्टादशाधिकं वाऽपि द्रव्यम्।
रसमारणमूर्च्छादौ युक्तिज्ञैर्विधिवदुपयोज्यम् ॥ १०१ ॥

(सेंहुड़) लजावन्ती (लजाधुर), लाह, बाँदा, सहदेई, कदम, पिप्पली, संभालू, तगर, कलिहारी, मानकन्द, सफेद फूलका मदार, सोमराजी, आदित्यभक्ता, मकोय, लाल फूलका मदार, विष्णुक्रान्ता, कौआठोंठी, वज्री (हड़जोड़ी), बला, सोंठ, कड़ुई तरोई, जयन्ती, वाराहीकन्द, हाथीशुंडी, केला, मत्स्याची, खट्टी इमली, हल्दी, दारुहल्दी, श्वेत तथा रक्त पुनर्नवा, धतूरा, काकजंघा, शतावर, कंचुकी शाक, बन्ध्याककोंटी, तिल, भेकपर्णी, दूब, मूर्वा, हरैं, तुलसी, गोखरू, मूषाकर्णी, ककड़ीका कन्द और ककड़ीवर्गोक्त लतायें, मूषली, हींग, गुरुच, सहिंजन, गिरिकर्णी, महाराष्ट्री (जलपिप्पली), भँगरैया, सधानमक, गन्धप्रसारिणी, सोमलता, सफेद सरसों, असन, हंसपदी, व्याघ्रपदी, पलास, भेलावा एवं इन्द्रवारुणी, इन सभी द्रव्योंसे, इनके आधे अथवा इनमेंसे केवल १८ औषधियोंका उपयोग करनेसे भी पारेका मारण और मूर्छन हो जाता है। अतएव विज्ञ वैद्योंका कर्तव्य है कि वे इनको काममें लावें ॥ ९४-१०१ ॥

अम्लगण

अम्लवेतसजम्बीरलुङ्गाम्लचणकाम्लकाः।
नागरङ्गं तिन्तिडी च चिञ्चापत्रञ्च निम्बुकम् ॥ १०२ ॥
चाङ्गेरी दाडिमञ्चैव करमर्दं तथैव च।
एष चाम्लगणः प्रोक्तो वेतसाम्लसमायुतः ॥ १०३ ॥

अमलवेत, जँभीरी नीबू, मातुलुंगा, चणकाम्ल, नारंगी, इमलीकी पत्ती और फल, नीबू, चांगेरी, दाडिम (खट्टा अनार), कमरख एवं अमलवेत, ये अम्लगण कहलाते है ॥ १०२ ॥ १०३ ॥

लवणवर्ग

लवणानि च कथ्यन्ते सामुद्रं सैन्धवं विडम्।
सौवर्च्चलं रोमकञ्च चुल्लिकालवणं तथा ॥१०४॥

समुद्री नमक, सेंधा, विड, सौंचल (कालानमक), रोमक एवं चुल्लिका इनकी लवणवर्ग संज्ञा है ॥ १०४ ॥

मूत्रवर्ग

मूत्राणि हस्तिकरभमहिषीखरवाजिनाम्।
गोऽजावीनां स्त्रियाः पुंसां मूत्रवर्ग उदाहृतः ॥१०५॥

हाथी, ऊँट, भैंस, गदहा तथा घोड़ा इनके मूत्रोपयोगका जहाँ विधान हो, वहाँ नरजातिका मूत्र ले। गौ बकरी एवं भेंड़ीके मूत्र लेनेको जहाँ कहा गया हो, वहाँ स्त्रीजातिका ही मूत्र उपयोगमें लाना चाहिये। यही मूत्रवर्ग है॥ १०५॥

द्रावकवर्ग

गुञ्जाटङ्कणमध्वाज्यगुडा द्रावकपञ्चकाः॥१०६॥

रत्ती, सोहागा, शहद, घी और गुड़ ये पाँच द्रावक पदार्थ माने जाते हैं॥ १०६॥

पित्तवर्ग

पित्तं पञ्चविधं मत्स्यगवाश्वरुरुबर्हिजम्॥१०७॥

मछली, गौ, घोड़ा, रुरु (मृगविशेष) और मोर इन पाँचोंके पित्त पित्तवर्ग माने गये हैं॥ १०७॥

क्षारवर्ग

स्वर्जिका टङ्कणञ्चैव यवक्षार उदाहृतः॥१०८॥

सज्जी, सोहागा और जवाखार ये क्षारवर्ग कहलाते हैं॥ १०८॥

रससेवनका क्रम और उसका फल

प्रातरेव पुरतो विरेचनं तद्दिनोपवसनं विधाय च।
तत्परेऽहनि पथ्यसेवनं तत्परेऽहनि रसेन्द्रसेवनम्॥१०९॥
बुद्धिस्मृतिप्रभाकान्तिबलञ्चैव रसस्तथा।
वर्द्धन्ते सर्व एवैते रससेवाविधौ नृणाम्॥११०॥

जब पारदभस्म सेवन करना हो, उससे दो दिन पहले प्रातःकाल जुलाब ले और सारे दिन उपवास करे। दूसरे दिन पथ्य ले और तीसरे दिन पारदका सेवन करे। पारदका सेवन करनेसे मनुष्यकी बुद्धि, स्मरणशक्ति, तेज, शोभा, बल और शरीरके रसात्मक धातुओंकी वृद्धि होती है॥ १०९॥११०॥

पथ्य

हितं मुद्गाम्बु दुग्धाज्यं शाल्यन्नञ्च विशेषतः।
शाकं पौनर्नवं वास्तु मेघनादञ्च यूथिकाम्॥१११॥
लवणं मागधीं मुस्तं पद्ममूलानि भक्षयेत्।
अनुपानं तु दातव्यं ज्ञात्वा रोगादिकं भिषक्॥११२॥

पारदसेवीके लिए मूँगका जूस, दूध, घी, शाली चावलका भात, पुनर्नवाका शाक, बथुआ, चौराई, जूहीका शाक, सेंधानमक, पिप्पली, मोथा और कमलकी जड़ पथ्य है। वैद्यका कर्तव्य है कि वह रोगका विचार करके ही अनुपान दे ॥ १११॥११२ ॥

अपथ्य

कूष्माण्डं कर्कटञ्चैव कलिङ्गं कारवेल्लकम् ।
कुसुम्भिका च कर्कोटी कलम्बी काकमाचिका ।
ककाराष्टकमेतद्धि वर्जयेद्रसभक्षकः ॥११३॥

सफेद कुम्हड़ा, ककड़ी, इन्द्रजौ, कुसुम्भ, ककोड़ा, कलम्ब शाक और मकोय, इन आठ वस्तुओंको पारदसेवी रोगी कदापि न खाय ॥ ११३ ॥

उपरसके भेद

गन्धको वज्रवैक्रान्तं वज्राभ्रतालकं शिला ।
खर्परं शिखितुण्डञ्च विमलं हेममाक्षिकम् ॥११४॥
काशीशं कान्तपाषाणं वराटाञ्जनहिङ्गुलम् ।
गैरिकं शङ्खभूनागं टङ्कणञ्च शिलाजतु ।
एते चोपरसाः प्रोक्ताः शोध्या मार्य्या विधानतः ॥ ११५ ॥

गन्धक, हीरा, वैक्रान्त, वज्राभ्रक, हरताल, मैनसिल, खपरिया, नीलामोथा, रौप्यमाक्षिक, स्वर्णमाक्षिक, कसीस, कान्तपाषाण, कौड़ी, अञ्जन (सुरमा), सिंगरिफ, गेरू, शंख, केचुएका सत्त्व, सोहागा और शिलाजीत ये उपरस कहलाते हैं। इनका विधिवत् मारण और शोधन करना चाहिए ॥ ११४ ॥ ११५ ॥

गन्धककी उत्पत्ति

श्वेतद्वीपे पुरा देव्याः क्रीडन्त्याः प्रस्रुतं रजः ।
क्षीरार्णवे तु स्नाताया दुकूलं रजसाऽन्वितम् ।
धौतं तत्सलिले तस्मिन्गन्धको गन्धवत्स्मृतः ॥ ११६ ॥

पूर्वकालमें एक समय भगवती पार्वती श्वेतद्वीपमें विहार कर रही थीं। एकाएक उसी समय उनका रजस्राव हो गया। रजमें सने हुए वस्त्रों समेत भगवतीने जाकर क्षीरसागरमें स्नान किया। जिससे वह गन्धयुक्त रज वहां ही धुल गया और तभीसे उसकी गंधक संज्ञा हो गयी ॥ ११६ ॥

गन्धकके भेद

चतुर्धा गन्धकः प्रोक्तो रक्तः पीतः सितोऽसितः ।
रक्तो हेमक्रियासूक्तः पीतश्वेतौ रसायने ।
व्रणादिलेपने श्वेतः कृष्णः श्रेष्ठः सुदुर्लभः ॥ ११७ ॥

गंधकके चार प्रकार होते हैं। जैसे—लाल, पीला, सफेद और काला। लाल गंधक सोना बनानेके काममें आता है। पीला और सफेद गन्धक रसायनके उपयुक्त होता है। श्वेत गंधक घाव आदिपर लेपके काममें आता है। काला गन्धक है तो उत्तम, किन्तु बहुत हो दुर्लभ है ॥ ११७ ॥

अशुद्ध गंधकके दोष

अशुद्धगन्धः कुरुते तु तापं कुष्ठं भ्रमं पित्तरुजां करोति ।
रूपं बलं वीर्य्यसुखं निहन्ति तस्मात्सुशुद्धो विनियोजनीयः ॥ ११८ ॥

यदि अशुद्ध गन्धक खा लिया जाय तो ताप, कुष्ठ, भ्रम तथा पित्तजनित रोग उत्पन्न होते हैं और रूप, बल एवं वीर्यका नाश होता है। अतएव भलीभाँति शोधित गन्धक ही उपयोगमें लाना चाहिये ॥ ११८ ॥

गन्धकके नाम

गन्धको गन्धपाषाणः शुकपुच्छः सुगन्धकः ।
सौगन्धिकः शुल्वरिपुः पामारिर्नवनीतकः ॥ ११९ ॥

गन्धक, गन्धपाषाण, शुकपुच्छ, सुगन्धक, सौगन्धिक, शुल्वरिपु, पामारि और नवनीतक ये गन्धकके नाम हैं ॥ ११९ ॥

गन्धकशोधनविधि

साज्यं भाण्डे पयः क्षिप्त्वा मुखं वस्त्रेण बन्धयेत् ।
तत्पृष्ठे गन्धकं क्षिप्त्वा शरावेण पिधापयेत् ॥ १२० ॥
भाण्डं निक्षिप्य भूम्यन्तरूर्ध्वे देयं पुटं लघु ।
ततः क्षीरे द्रुतं गन्धं शुद्धं योगेषु योजयेत् ॥ १२१ ॥

एक बर्तनमें घी-दूध डाले। उस पात्रका मुख कपड़ेसे बाँध दे। कपड़ेपर गन्धकका चूर्ण रखे और उसे एक परईसे ढाँककर सन्धि बन्द कर दे। अब इस पात्रको भूमिमें गड्ढा खोदकर गाड़ दे और ऊपरसे हल्की आँच दे। ऐसा करनेपर

गन्धक कपड़ेसे दूधवाले बर्तनमें उतर जायगा। बस, गन्धक शुद्ध हो जायगी। इसे सभी योगोंमें उपयोगी समझे ॥ १२० ॥ १२१ ॥

लौहपात्रे विनिक्षिप्य घृतमग्नौ प्रतापयेत्।
तप्ते घृते तत्समानं क्षिपेद्गन्जकजं रजः॥ १२२ ॥
विद्रुतं गन्धकं दृष्ट्वा दुग्धमध्ये विनिक्षिपेत्।
एवं गंधकशुद्धिः स्यात् सर्वरोगेषु योजयेत्॥ १२३ ॥

एक लौहपात्रमें घी डालकर आगपर चढ़ा दे। घीके गरम हो जानेपर घीके ही बराबर गन्धकका चूर्ण डाल दे। जब गन्धक गल जाय तो उसे दूधमें डाल दे। इस रीतिसे भी गन्धक शुद्ध हो जाती है। इसे सब कामोंमें लाया जा सकता है॥ १२२ ॥ १२३ ॥

शुद्ध गन्धकके गुण

शुद्धगन्धो हरेद्रोगान् कुष्ठमृत्युज्वरादिकान्।
अग्निकारी महानुष्णो वीर्य्यवृद्धिं करोति च॥ १२४ ॥

शुद्ध गन्धक कुष्ठ और मृत्युज्वर सरीखे महारोगोंका शमन और उदर्य अग्नि प्रज्वलित करती है। यह गरम होती है और वीर्य बढ़ाती है॥ १२४ ॥

गंधश्चातिरसायनः सुमधुरः पाके कटूष्णान्वितः
कण्डूकुष्ठविसर्पदर्पदलनो दीप्तानलः पाचनः।
आमोन्मन्थनशोधनो विषहरः सूताच्च वीर्यप्रदः
गौरीपुष्पभवस्तथा क्रिमिहरः स्वर्णाधिकं वीर्य्यकृत्॥ १२५ ॥

शुद्ध गन्धक अतिरसायन, मधुर, पाकमें कटु एवं उष्ण होती है। यह खुजली, कुष्ठ तथा विसर्परोगका शमन करती और अग्निदीपक, पाचक, आमरस-वर्द्धिनी तथा मलशोधिनी है। यह विष हरती है। यह पारेसे अधिक वीर्यवर्द्धक, कृमिनाशक और स्वर्णसे भी अधिक वीर्यप्रद है॥ १२५ ॥

अशुद्ध हीरकके दूषण

पार्श्वपीडां पांडुरोगं हृल्लासं दाहसंततिम्।
रोगानीकं गुरुत्वञ्च धत्ते वज्रमशोधितम्॥ १२६ ॥

अशुद्ध वज्र (हीरा) का सेवन करनेपर पसलियोंमें दर्द, पाण्डुरोग, जी मिचलाना, दाह और तबीयतका भारीपन आदि अनेक रोगोंके समूह उत्पन्न हो जाते हैं ॥ १२६ ॥

हीरकशोधनविधि

व्याघ्रीकंदगतं वज्रं दोलायन्त्रे विपाचितम् ।
सप्ताहं कोद्रवक्काथे कौलत्थे विमलं भवेत् ॥ १२७ ॥

कण्टकारीके कन्दमें हीराको रखकर कोदो अथवा कुलथीके क्काथसे दोलायंत्र-में अलग-अलग सात दिनोंतक स्वेदन करे तो हीरा शुद्ध हो जाता है ॥ १२७ ॥

व्याघ्रीकंदगतं वज्रं दोलायन्त्रे विपाचयेत् ।
अहोरात्रात्समुद्धृत्य हयमूत्रेण सेचयेत् ।
वज्रीक्षीरेण वा सिञ्चेत्कुलिशं विमलं भवेत् ॥ १२८ ॥

कण्टकारीके कन्दमें हीरा रख और बन्द करके दोलायंत्रमें पकावे । इस तरह चौबीस घण्टे पकाकर निकाल ले । फिर उसे घोड़ेके मूत्र अथवा सेंहुड़के दूधसे सींचे तो हीरा शुद्ध हो जाता है ॥ १२८ ॥

हीरकमारणविधि

त्रिवर्षारूढकार्पासमूलमादाय पेषयेत् ।
त्रिवर्गनागवल्ल्यास्तु निजद्रावैः प्रपेषयेत् ॥ १२९ ॥
तद्गोलके क्षिपेद्वज्रं रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ।
एवं सप्तपुटेनैव म्रियते कुलिशं ध्रुवम् ॥ १३० ॥

तीन वर्षकी पुरानी कपासकी जड़को तीन ही वर्षकी पुरानी पानकी लताके रससे पीसे । जब उसका गोला बन जाय तो हीरेको उसीके अन्दर रखकर संधि बन्द कर दे और गजपुटविधिसे पकावे । इस प्रकार सात पुट देनेसे हीरा मर जाता है ॥ १२९ ॥ १३० ॥

कांस्यपात्रे तु भेकस्य मूत्रे वज्रन्तु निक्षिपेत् ।
त्रिःसप्तकृत्वः संन्तप्तं वज्रमेवं मृतं भवेत् ॥ १३१ ॥

एक कांस्यपात्रमें मेढकका मूत्र एकत्रित करे और हीरेको आगपर तपा-तपाकर इक्कीस वार उसी मूत्रमें बुझावे तो हीरा अवश्य मर जाता है ॥ १३१ ॥

त्रिःसप्तकृत्वः सन्तप्तं खरमूत्रेण सेचयेत्।
मुद्गरैस्तालकं पिष्ट्वा तद्गोले कुलिशं क्षिपेत् ॥ १३२ ॥
प्रध्मातं वाजिमूत्रेण सिक्तं पूर्वक्रमेण तु।
भस्मीभवति तद्वज्रं वज्रवत्कुरुते तनुम् ॥ १३३ ॥

इक्कीस बार हीरेको आगपर तपा-तपाकर गदहेके मूत्रमें बुझावे। फिर हड़तालको पीसकर उसका गोला बना ले और उसी गोलेमें हीरा रखे तथा गोलेको आगपर रखकर खूब पकावे। पूर्वोक्त रीतिसे इसे तपा-तपाकर २१ बार घोड़ेके मूत्रमें बुझावे तो हीरा भस्मके रूपमें परिणत हो जाता है। इसका सेवन करनेसे शरीर वज्रके सदृश पुष्ट होता है ॥ १३२ ॥ १३३ ॥

शुद्ध हीराके गुण

आयुष्यं सौख्यजननं बलरूपप्रदं तथा।
रोगघ्नं मृत्युहरणं वज्रभस्म भवत्यलम् ॥ १३४ ॥

शुद्ध हीराकी भस्म आयुवर्द्धक, सौख्यदायक, बल एवं रूपप्रद, रोगनाशक तथा अकाल मृत्युनाशक होती है ॥ १३४ ॥

वैक्रांतशोधनविधि

वैक्रान्तं वज्रवच्छोध्यं ध्मातं तद्धयमूत्रके।
हिमं तद्भस्म संयोज्यं वज्रस्थाने विचक्षणैः ॥ १३५ ॥

वैक्रान्त (दग्ध हीरा) की शोधनविधि हीरेके समान ही होती है। इसे भी गंधकके गोलेमें पका-पकाकर २१ बार घोड़ेके मूत्रमें बुझाया जाता है। वैक्रान्तकी बनी भस्म शीतल होती है। वैद्योंको चाहिये कि वे हीरकभस्मके स्थानपर इसीको काममें लावें ॥ १३५ ॥

वैक्रान्तं वज्रवच्छोध्यं मारणञ्चैव तस्य तत्।
हयमूत्रेण तत्सेच्यं तप्तं तप्तं त्रिसप्तधा ॥ १३६ ॥
ततश्चोत्तरवारुण्याः पञ्चाङ्गं गोलके क्षिपेत्।
रुद्ध्वा मूषापुटे पाच्यं रुद्धृत्य गोलके पुनः ॥ १३७ ॥
क्षिप्त्वा रुद्ध्वा पचेदेवं यावत्तद्भस्मतां व्रजेत्।
भस्मीभूतं च वैक्रान्तं वज्रस्थाने नियोजयेत् ॥ १३८ ॥

वैक्रान्तका भी मारण और शोधन हीरकके समान ही करे। इसे भी तपा-तपाकर २१ बार घोड़ेके मूत्रमें बुझावे। इसके बाद इन्द्रायणका पञ्चांग पीस तथा गोला बनाकर उसीमें यह शुद्ध वैक्रान्त रख और मूषामें बन्द करके भली भाँति पकावे। इसी तरह तब तक इन्द्रायणके गोले बना-बना और उसमें वैक्रान्त रख-कर पकाता रहे, जब तक वह भस्म न हो जाय। इसे हीरकभस्मके स्थानपर काममें लाना चाहिये ॥ १३६–१३८ ॥

अभ्रकके पर्यायवाची शब्द

अभ्रकं गिरिजाबीजममलं गगनाह्वयम् ॥ १३९ ॥

अभ्रक, गिरिजाबीज, अमल और गगन ये गंधकके नाम हैं ॥ १३९ ॥

अभ्रकके भेद

तत्र कृष्णाभ्रके वज्रं पीतात्मनि तु ग्राहिकम्।
सितात्मके तारके स्याद्भीरुकं रक्तके वरम् ॥ १४० ॥
सुप्रशस्तं कठोराङ्गं गुरु कज्जलसन्निभम्।
यन्न शब्दायते वह्नौ नैवोच्छूनं भवदेपि।
सदाकरसमुद्भूतं वज्रेति प्रथितं घनम् ॥ १४१ ॥
पिनाकं दर्दुरं नागं वज्रञ्चेति चतुर्विधम्।
ध्मातमभ्रं दलचयं पिनाकं विसृजत्यलम् ॥ १४२ ॥
फूत्कारं भुजगः कुर्य्याद्दर्दुरं भेकशब्दवत्।
चतुर्थं च वरं ज्ञेयं न वह्नौ विकृतिं व्रजेत् ॥ १४३ ॥

अभ्रक चार प्रकारके होते हैं। काला, पीला, सफेद और लाल। काले अभ्रकमें वज्रजाति अभ्रक, पीलेमें ग्राहिक जातिका, श्वेतमें तारक जातिका और लाल अभ्रकमें भीरुक जातिका अभ्रक उत्तम होता है। जो अभ्रक सुन्दर, कड़ा, भारी (वजनी) और काजलकी तरह काला हो और आगमें डालनेपर न कुछ शब्द करे और न फूले, जो किसी अच्छी खानसे निकला हो, उसे वज्र अभ्रक कहते हैं। इस वज्र अभ्रकके भी चार भेद होते हैं—पिनाक, दर्दुर, नाग और वज्र। पिनाक आँच पाकर अपने दल अलग-अलग कर देता है। दर्दुर अभ्रक आँच पाकर मेढककी तरह शब्द करता है। नाग अभ्रक आँच पाकर फुफकार मारता और वज्र अभ्रक

आँच पाकर भी किसी तरह विकृत नहीं होता। इसीसे यह सर्वोत्तम माना गया है ॥ १४०–१४३ ॥

कुष्ठप्रदं पिनाकं स्याद्दर्दुरं मरणप्रदम्।
नागं देहगतं नित्यं व्याधिं कुर्य्याद्भगन्दरम् ॥ १४४ ॥
रसे रसायने चैव योज्यं वज्राभ्रकं प्रिये।
तस्माद्वज्राभ्रकं ग्राह्यं व्याधिवार्द्धक्यमृत्युजित् ॥ १४५ ॥
अशुद्धाभ्रं निहन्त्यायुर्वर्द्धयेन्मारुतं कफम्।
अहतं छेदयेद्गात्रं मंदाग्निक्रिमिवर्द्धनम् ॥ १४६ ॥

पिनाक अभ्रक कोढ़ उत्पन्न करता, दर्दुर प्राण ले लेता और नाग अभ्रक सेवन करनेसे देहमें जाकर भगन्दर रोग उत्पन्न कर देता है। इस लिए सभी रसों और रसायनोंमें वज्राभ्रकका ही उपयोग करना चाहिये। क्योंकि वज्राभ्रक सभी व्याधियों, बुढ़ापे और मृत्यु तकको पराजित कर देता है। अशुद्ध अभ्रक आयु क्षीण करता और कफ तथा वायु बढ़ाता है। बिना मारा हुआ अभ्रक शरीर छेद डालता और मन्दाग्नि एवं कृमि बढ़ाता है ॥ १४४–१४६ ॥

धान्याभ्रक

पादांशं शालिसंयुक्तमभ्रकं कम्बलोदरे।
त्रिरात्रं स्थापयेन्नीरे तत्क्लिन्नं मर्दयेद्दृढम् ॥ १४७ ॥
कम्बलाद्गलितं श्लक्ष्णं बालुकारहितं च यत्।
तद्धान्याभ्रमिति प्रोक्तमभ्रमारणसिद्धये ॥ १४८ ॥

बज्राभ्रक चौथाई भाग और शालि धान १ भाग, इन दोनोंको कम्बलमें लपेट और पानीसे तर करके तीन दिनों तक पड़ा रहने दे। जब वह खूब भींग जाय तो पात्रमें रखकर कम्बल सहित उसे खूब मर्दन करे। ऐसा करनेसे अभ्रकके चिकने और छोटे-छोटे कण निकलकर पात्रमें आ जाते हैं। यही धान्याभ्रक कहलाता और मारणके काममें आता है ॥ १४७ ॥ १४८ ॥

त्रिफलाक्वाथगोमूत्रक्षीरकाञ्जिकसेचितम्।
भस्त्राग्नौ सप्तधा व्योम तप्तं तप्तं विशुद्ध्यति ॥ १४९ ॥

अभ्रक बार–बार आगमें तपाकर त्रिफलाके काढ़े, गोमूत्र, दूध तथा काँजीमें बुझानेसे भी शुद्ध हो जाता है ॥ १४९ ॥

अथवा बदरीकाथे ध्मातमभ्रं विनिक्षिपेत् ।
मर्द्दितं पाणिना शुष्कं धान्याभ्रादतिरिच्यते ॥ १५० ॥

अभ्रकको आगमें तपा-तपाकर बेरके काढ़ेमें बुझाने और हाथसे मसलनेपर अभ्रक धान्याभ्रकसे भी उत्तम हो जाता है ॥ १५० ॥

अगस्त्यपुष्पतोयेन पिष्टं शूरणकन्दगम् ।
गोष्ठभूमिगतं मासं जायते रससन्निभम् ॥ १५१ ॥

अगस्त्यके फूलके रसमें अभ्रकको घोंटे । फिर उस कल्कको जिमीकन्दके भीतर रखकर गोशालामें गाड़ दे । इस तरह एक महीना पड़े रहनेसे अभ्रक शुद्ध होकर पारेके सदृश गुणदायक हो जाता है ॥ १५१ ॥

वज्राभ्रकमारणविधि

वज्राभ्रकं समादाय निक्षिप्य स्थालिकोदरे ।
रम्भादिक्षारतोयेन पचेद्गोमयवह्निना ॥ १५२ ॥

यावत्सिन्दूरसङ्काशं न भवेत्स्थालिकावहिः ।
सेचनीयं ततः क्षीरैस्ततः सूक्ष्मं विचूर्णयेत् ॥ १५३ ॥

संशोधित वज्राभ्रकको लेंकर एक हाँड़ीमें रखे और केला आदि क्षारवर्गोक्त द्रव्योंका खारा जल डाले और उपलोंकी आँच देकर पकावे । जब तक हाँड़ीका बाहरी भाग सेंदुरकी तरह लाल न हो जाय, तब तक बराबर आँच देता रहे । तदनन्तर उसे उतार ले । फिर दूध डालकर सींचे और महीन चूर्ण बनाकर रख ले ॥ १५२ ॥ १५३ ॥

धान्याभ्रकं समादाय मुस्ताक्काथैः पुटत्रयम् ।
तद्वत्पुनर्नवानीरैः कासमर्दरसैस्तथा ॥ १५४ ॥
नागवल्लीरसैः सर्य्यक्षीरैर्देयं पृथक् पृथक् ।
दिनं दिनं मर्दयित्वा क्काथैर्वटजटोद्भवैः ॥ १५५ ॥
दत्त्वा पुटत्रयं पश्चात्त्रिः पुटेन्मुषलीजलैः ।
त्रिगोक्षुरकषायेण त्रिः पुटेद्वानरीरसैः ॥ १५६ ॥
मोचकन्दरसैः पाच्यं त्रिरात्रं कोकिलाक्षकैः ।
रसैः पुटेल्लोध्रकैस्तु क्षीरार्दकं पुटेत्पुनः ॥ १५७ ॥

दध्ना घृतेन मधुना स्वच्छया सितया तथा।
एकमेकं पुटं दद्यादभ्रस्यैवं मृतिर्भवेत्॥ १५८॥
सर्वरोगहर व्योम जायते योगवाहिकम्।
कामिनीमददर्पघ्नं शस्तं पुंस्त्वोपघातिनाम्।
वृष्यमायुष्करं शुक्रवृद्धिसन्तानकारकम्॥ १५६॥

धान्याभ्रकको नागरमोथाके क्वाथमें घोटकर तीन बार पुट दे। उसके बाद पुनर्नवाके रससे, फिर कासमर्दके रससे, फिर पानके रससे, फिर मदारके दूधसे क्रमशः एक-एक दिन घोंटकर बरगदकी जटाके रसमें घोटे और क्रमशः तीन पुट देवे। तदनन्तर मुसलीके रसमें घोंटकर तीन पुट दे। तत्पश्चात् गोखरूके काढ़े, केलेके कन्दके रस, तालमखानेके रस और लोधके काढ़े, इनमेंसे हर एकमें घोंट-घोंटकर तीन-तीन पुट देता जाय। फिर गौके दूध, गौके दही, शहद तथा साफ मिश्री इन तीनोंमेंसे हर एकमें घोंट-घोंटकर एक-एक पुट दे। ऐसा करनेसे अभ्रक मर जाता है। अभ्रकभस्म सब रोग नष्ट करती है। यह योगवाही, स्त्रियोंका मद मदन करनेवाला, नपुंसकोंमें भी पुंस्त्व संचार करनेवाला, कामोद्दीपक, आयुवर्द्धक, वीर्यवर्द्धक और सन्ततिदायक होता है॥ १५४–१५६॥

मारकगण

तण्डुलीयकबृहतीनागवल्लीतगरपुनर्नवाश्च।
हिलमोचिका च मण्डूकपर्णी तिक्ताखुकर्णिका।
मदनार्कावपि लक्ष्सुतमातृकाभिः सुधाभिरुदितम्॥ १६०॥

चौराई, भटकटैया, पान, तगर, पुनर्नवा, हिलमोचिका, मण्डूकपर्णी, कुटकी, मूषाकर्णी, मदन, मदार और शतावर, इनमेंसे अलग-अलग अथवा इन सबको मिलाकर पुट देनेसे अभ्रक मर जाता है॥ १६०॥

रम्भादिनाभ्रं लवणेन पिष्ट्वा चक्रीकृतं तद्दलमध्यवर्त्ति।
दग्धेन्धनेषु व्यजनानिलेन स्नुह्यर्कमूलाम्बुपुटेन सिद्धम्॥ १६१॥

उपर्युक्त रम्भा आदि एवं सेंधा नमकके साथ अभ्रकको घोंट तथा टिकिया बनाकर केले आदिके पत्तोंमें रखे। फिर उसे कोयलेकी आँचपर रख और पंखेकी हवा दे-देकर पकावे। पक जानेपर सेंहुड़के दूध एवं मदारकी जड़के रसमें घोंटकर तपानेसे अभ्रकभस्म तैयार हो जाती है॥ १६१॥

धान्याभ्रकस्य भागैकं भागौ द्वौ टङ्कणस्य च ।
पिष्ट्वा तदन्धमूषायां रुद्ध्वा तीव्राग्निना पचेत् ।
स्वभावशीतलं चूर्णं सर्वयोगेषु योजयेत् ॥ १६२ ॥

धान्याभ्रक १ भाग और सोहागा २ भाग, इनको एकमें घोंट तथा अन्धमूषामें बन्द करके तीव्र आँचपर रखकर पकानेसे अभ्रकभस्म सिद्ध हो जाती है। स्वाङ्गशीतल हो जानेपर यह भस्म सब रोगोंमें काम देती है ॥ १६२ ॥

धान्याभ्रकं दृढं मर्द्यमर्कक्षीरैर्दिनावधि ।
वेष्टयेदर्कपत्रेण चक्राकारन्तु कारयेत् ॥ १६३ ॥
कुंजराख्ये पुटे दग्ध्वा सप्तवारान्पुनः पुनः ।
ततो वटजटाक्वाथैस्तद्वद्देयं पुटत्रयम् ।
म्रियते नात्र सन्देहः सर्वयोगेषु योजयेत् ॥ १६४ ॥

धान्याभ्रकको मदारके दूधमें दिनभर खूब घोंटे। फिर उस कल्ककी टिकिया बनाकर मदारके पत्तोंमें लपेट दे। तब गजपुटकी विधिसे इसे फूँके। इस तरह बार-बार मदारके दूधमें घोंट-घोंटकर ७ पुट दे। तदनन्तर बड़की जटाके काढ़ेमें घोंट-घोंटकर तीन पुट देवे। ऐसा करनेसे अभ्रक अवश्य मर जाता है और उसको भस्म बन जाती है। यह भस्म सब रोगोमें दी जाती है ॥ १६३ ॥ १६४ ॥

दुग्धत्रयं कुमार्यम्बु गङ्गापत्र नृमूत्रकम् ।
वटशुङ्गमजारक्तमेभिरभ्रं विमर्दयेत् ॥ १६५ ॥
शतधा पुटितं भस्म जायते पद्मरागवत् ।
निश्चन्द्रकं भवेद्व्योम शुद्धदेहे रसायनम् ॥ १६६ ॥

दुग्धत्रय (गाय, बकरी तथा भेड़ इन तीनोंका दूध) घीकुवारका रस, गंगापत्र (मोथा), मनुष्यका मूत्र वरगदको जटाका अंकुर और बकरीका खून इनको मिलाकर अभ्रकको घोंटे। इस प्रकार घोंट-घोंटकर सौ बार पुट देनेसे पद्मराग मणिके समान लाल रंगकी निश्चन्द्र अभ्रक भस्म तैयार हो जाती है। वमन-विरेचन आदि क्रियाओंसे देह शुद्ध करके खानेसे यह भस्म रसायनका काम करती है ॥ १६५॥१६६ ॥

निश्चन्द्रमारितं व्योम रूपं वीर्य्यं दृढं तनुम् ।
कुरुते नाशयेन्मृत्युं जरारोगकदम्बकम् ॥ १६७ ॥

इस प्रकार मारित निश्चन्द्र अभ्रककी भस्म सेवन करनेसे रूप, वीर्य तथा शारीरिक दृढ़ता बढ़ती और मृत्यु, बुढ़ापा तथा रोगोंका समूह नष्ट हो जाता है ॥ १६७ ॥

हरतालके नाम और भेद

हरितालं तालमालं मालं शैलूषभूषणम्।
पिंजकं रोमहरणं तालकं पीतमित्यपि।
तालकं पटलं पिण्डं द्विधा तत्राद्यमुत्तमम् ॥ १६८ ॥
अशुद्धतालमायुघ्नं कफमारुतमेहकृत्।
तापस्फोटाङ्गसङ्कोचान्कुरुते तेन शोधयेत् ॥ १६९ ॥

हरिताल, ताल, आल, माल, शैलूषभूषण, पिञ्जक, रोमहरण, तालक और पीत ये हरतालके नाम हैं। इसके दो भेद हैं—पिण्ड और पटल। इनमें पिण्ड हरताल उत्तम होती है। अशुद्ध हड़तालका सेवन करनेसे आयु छीजती है। कफ, वायु एवं प्रमेह बढ़ता है। इससे ताप बढ़ता, फोड़े हो जाते और अंग संकुचित हो जाता है। इसलिए हड़तालका शोधन आवश्यक है ॥१६८॥१६९॥

हरतालकी शोधनविधि

शुद्धं स्यात्तालकं स्विन्नं कूष्माण्डसलिले ततः।
चूर्णोदके पृथक्तैले तस्मिन्पूते न दोषकृत् ॥ १७० ॥

पहले सफेद कुम्हड़ेके रसमें, फिर चूनेके पानीमें और उसके बाद तेलमें स्वेदन करनेसे हड़ताल शुद्ध हो जाती है, तब कोई विकार नहीं करती ॥१७०॥

तालकं कणशः कृत्वा दशांशेन च टङ्कणम्।
जम्बीरोत्थैर्द्रवैः क्षाल्यं कांजिकैः चालयेत्पुनः ॥ १७१ ॥
वस्त्रे चतुर्गुणे बद्ध्वा दोलायंत्रे दिनं पचेत्।
संचूर्ण्य आरनालेन दिनं कूष्माण्डजै रसैः।
स्वेद्यं वा शाल्मलीतोयैस्तालकं शुद्धिमाप्नुयात् ॥ १७२ ॥

हड़तालका चूर्ण दस भाग और सोहागा एक भाग लेकर दोनोंको एक साथ पहले जँभीरी नीबूके रसमें तदनन्तर काँजीमें धोवे। फिर उन्हें चौपरते कपड़ेमें बाँधकर दोलायंत्रमें दिनभर पकावे। तब उसका चूर्ण करके दिनभर काँजीमें, फिर

दिनभर सफेद कुम्हड़ेके रस अथवा सेमलकी जड़के रसमें घोंटे। ऐसा करनेसे हड़ताल शुद्ध हो जाती है ॥ १७१ ॥ १७२ ॥

तालकं पोट्टलीं बद्ध्वा सचूर्णे कांजिके पचेत्।
दोलायन्त्रेण यामैकं ततः कूष्माण्डजे रसे ॥ १७३ ॥
तिलतैले पचेद्यामं यामं तत्त्रैफले जले।
दोलायन्त्रे चतुर्यामं पाच्यं शुद्ध्यति तालकम् ॥ १७४ ॥

हड़तालको एक पोटलीमें बाँधकर चूनामिश्रित काँजीमें दोलायंत्रकी विधिसे पहरभर पकावे। फिर सफेद कुम्हड़ेके रसमें पहरभर पकावे। फिर उसे पहरभर तिलके तेलमें और उसके बाद त्रिफलाके काढ़ेमें पहरभर पकावे। इस तरह दोलायंत्रमें चार पहर तक पकानेसे हड़ताल शुद्ध हो जाती है ॥ १७३॥१७४ ॥

हरतालकी मारणविधि

तालकं कणशः कृत्वा सुशुद्धं हण्डिकान्तरे।
चूर्णोदकेन संपिष्टमपामार्गजटोद्भवैः ॥ १७५ ॥
क्षारोदकैश्च संपिष्टमूर्ध्वाधो यावशूकजम्।
चूर्णं दत्त्वा निरुध्याथ कूष्माण्डैश्च प्रपूरयेत् ॥ १७६ ॥
पुनर्मुखं निरुध्याथ चतुर्यामं क्रमाग्निना।
पचेदेवं हि तच्चूर्णं कुष्ठादौ परियोजयेत् ॥१७७॥
हरितालं कटु स्निग्धं कषायञ्च विसर्पनुत्।
तालकं हरते रोगान्कुष्ठमृत्युज्वरादिकान्।
संशुद्धं कान्तिवीर्य्यौजः कुरुते मृत्युनाशनम् ॥१७८॥

इस शुद्ध हड़तालको चूर्ण करके हाँड़ीमें रखे और चूनेका पानी भरके उसका स्वेदन करे। तब अपामार्ग (चिचिड़ा) की जड़से निर्मित क्षारके जलसे घोंटकर उसकी टिकरी बना ले। इस टिकरीको एक कसोरेमें रखे। टिकरीके नीचे और ऊपर जवाखारका चूर्ण रखकर दूसरे कसोरेसे ढाँक दे और चारों ओरसे सन्धि बन्द कर दे। इस शरावसम्पुटको एक हाँड़ीमें रखकर ऊपरसे सफेद कुम्हड़ेका रस भर दे और हाँडीका मुख बन्द कर दे। अब हँड़िया भट्ठीपर रखकर नीचेसे चार पहर तक मन्द, मध्यम तथा तीव्र आँच दे। जब वह स्वांगशीतल हो जाय, तब

उतारे और हँड़िया खोलकर शरावमें लगी हुई भस्म निकाल ले। कुष्ठ आदि-पर इसका प्रयोग करना चाहिए। हड़तालभस्म कटु, स्निग्ध और कसैली होती और विसर्परोगको मार भगाती है। यह कुष्ठ, अकाल मृत्यु एवं ज्वर आदि रोग दूर करती तथा कान्ति, वीर्य और ओजकी वृद्धि करती है॥ १७५–१७८॥

तथैव निम्बुनीरेण ततश्चूर्णोदकेन च॥ १७९॥
प्रक्षाल्य शाल्मलीक्षारैर्द्विगुणैः खातमध्यगम्।
विधाय कचचीयन्त्रं वालुकाभिः प्रपूरयेत्॥ १८०॥
द्वादशप्रहरं पक्त्वा स्वाङ्गशीतं च चूर्णयेत्।
खादयेद्रक्तिकामेकां कुष्ठश्लीपदशान्तये॥ १८१॥

अम्ललोणी (चांगेरी) के रसमें हड़ताल डालकर बारह पहरकी भावना दे। तदनन्तर चूनेके जलमें बारह पहरकी भावना दे। अब हड़तालको धो डाले और एक कसोरेमें हड़तालसे दूना सेमरका क्षार भरकर उसमें हड़ताल रखे। उस कसोरेको वालूभरी हुई हँड़ियामें रखे। इस तरह कचचीयंत्र बनाकर बारह पहरकी आँच देता हुआ पकावे। जब वह स्वांगशीतल हो जाय, तब निकालकर रख ले। इसकी एक रत्तीकी मात्राका सेवन करनेसे कुष्ठ और श्लीपदरोग शान्त हो जाता है॥ १७९–१८१॥

रसमाणिक्य

तालकं वंशपत्राख्यं कूष्माण्डसलिले क्षिपेत्।
सप्तधा वा त्रिधा वाऽपि दध्ना चाम्लेन वा पुनः॥ १८२॥
शोधयित्वा पुनः शुष्कं चूर्णयेत्तण्डुलाकृति।
ततः शरावकं पात्रे स्थापयेत्कुशलो भिषक्॥ १८३॥
बदरीपल्लवोत्थेन कल्केन लेपयेद्भिषक्।
अरुणाभमधः पात्रं तावज्ज्वाला प्रदीयते॥ १८४॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य माणिक्याभं भवेद् ध्रुवम्।
तद्रक्तिद्वितयं खादेद्घृतभ्रामरसंहितम्॥ १८५॥
सम्पूज्य देवदेवेशं कुष्टरोगाद्विमुच्यते।
स्फुटितं गलितं यच्च वातरक्तं भगन्दरम्॥ १८६॥

नाडीव्रणं व्रणं दुष्टमुपदंशं विचर्चिकाम्।
नासाऽऽस्यसम्भवान् रोगान्क्षतान् हन्ति सुदारुणान्।
पुण्डरीकञ्च चर्माख्यं विस्फोटं मण्डलं तथा ॥ १८७ ॥

वंशपत्र नामक शुद्ध हड़तालको सफेद कुम्हड़ेके रसमें रखकर सात अथवा तीन बार भावना दे। फिर खट्टी दहीमें सात अथवा तीन बार भावना देवे। इस प्रकार शुद्ध करके उसे कूट डाले और चावल जैसा महीन कर ले। फिर कुशल वैद्य उसे एक कसोरेमें रखे और ऊपर एक दूसरा औंधा कसोरा रखकर ढाँक दे। इसकी संधियोंको वेरकी पत्तीके कल्कसे भली-भाँति बन्द कर दे। अब उसके नीचे तब तक आँच देता रहे, जब तक संपुटका निचला भाग एकदम लाल न हो जाय। स्वांगशीतल होनेपर माणिक्यके सदृश दमकती हुई हड़तालको संपुटसे निकालकर रख ले। यही रसमाणिक्य कहलाता है। इसकी मात्रा दो रत्तीकी होती है और अनुपान घी तथा शहद है। यदि देवदेव शकरभगवानका पूजन करके इसे खाय तो प्राणी कुष्ठरोगसे मुक्त हो जाता है। इसका सेवन करनेसे स्फुटित और गलित वातरक्त, भगन्दर, नाडीव्रण, सब प्रकारका व्रण (घाव), दूषित उपदंश (गर्मी), विचर्चिका, नासिका तथा मुखके सब रोग, भयानक क्षतरोग, पुण्डरीक कुष्ठ, चर्मदल, विस्फोट एवं मण्डलकुष्ठ आदि रोग नष्ट हो जाते हैं ॥ १८२–१८७ ॥

मैनसिलके नाम और अशुद्ध मैनसिलके दोष

मनःशिला च नैपाली शिलाह्वा नागजिह्विका।
मनोह्वा कुनटी गोणी करञ्जी करवीरिका।
मनोह्वा त्वोण्ड्रपुष्पाभा शस्यते सर्वकर्मसु ॥१८८॥
मनःशिला मन्दबलञ्च नूनं करोति जन्तोः शुभपाकहीना।
मलन्तु बद्धं कुरुते च नूनं सशर्करं कृच्छ्रगदं करोति ॥१८९॥

मनःशिला, नैपाली, शिलाह्वा, नागजिह्विका, मनोह्वा, कुनटी, गोणी, करञ्जी और करवीरिका, ये नाम मैनसिलके हैं। जो मैनसिल अड़ौलके पुष्पकी तरह लाल हो, वह उत्तम और सब प्रकारसे उपयुक्त होती है। यदि कोई अशुद्ध मैनसिलका सेवन करता है तो उसका बल मन्द पड़ जाता, मल बँध जाता और शर्करासहित मूत्रकृच्छ्ररोग उत्पन्न हो जाता है ॥ १८८ ॥ १८९ ॥

अश्मरीमूत्रहृद्रोगमशुद्धा कुरुते शिला ।
मन्दाग्निं मलदुष्टिञ्च शुद्धा सर्वरुजापहा ॥१९०॥

अशुद्ध मैनसिल अश्मरी (पथरी), मूत्ररोग, हृदयरोग, मन्दाग्नि और मलदुष्टि-रोग उत्पन्न कर देता है, किन्तु शुद्ध मैनसिल सब रोगोंको मार भगाता है ॥१९०॥

शोधनविधि

जयन्तीभृङ्गराजोत्थै रक्तागस्त्यरसैः शिला ।
दोलायन्त्रे दिनं पाच्या यामं छागस्य मूत्रके ।
क्षालयेदारनालेन सर्वरोगेषु योजयेत् ॥१९१॥

जयन्ती, भाँगरा एवं लाल फूलवाले अगस्त्यके रसमें क्रमशः एक-एक दिन मैनसिलको दोलायन्त्र द्वारा पकावे। फिर इसी विधिसे एक पहर तक बकरीके दूध-में पकावे। इसके बाद काँजीसे धो डाले और सब रोगोंपर उसका उपयोग करे ॥ १९१ ॥

मातुलुङ्गरसैः पिष्टा जयानीरैर्मनःशिला ।
शृङ्गवेररसैर्वापि विशुद्ध्यति मनःशिला ॥१९२॥
कटुः स्निग्धा शिला तिक्ता कफघ्नी लेखनी सरा ।
भूतावेशभयं हन्ति कासश्वासहरा शुभा ॥१९३॥

पहले मातुलुंग (बिजौरा नीबू) के रसमें, फिर जयन्तीके रसमें अथवा अद-रखके रसमें मैनसिलको घोंटे तो वह शुद्ध हो जाता है। यह कटु, स्निग्ध, तिक्त, कफनाशक, लेखक और सारक पदार्थ है। मैनसिल भूतावेशके भय, कास एवं श्वासका हरण करता है॥ १९२ ॥ १९३ ॥

खर्परशोधनविधि

पुष्पाणां रक्तपीतानां रसैः पिष्ट्वा च भावयेत् ।
नरमूत्रैश्च गोमूत्रैर्यवाम्लैश्च ससैन्धवैः ।
सप्ताहं त्रिदिनं वाऽपि पश्चाच्छुद्ध्यति खर्परः ॥१९४॥

पहले शोधकगणमें कहे हुए लाल और पीले फूलोंके रसमें खपरियाको घोंटे। फिर मनुष्यके मूत्र, गोमूत्र एवं जौकी बनी काँजीमें सात या तीन दिनकी भावना देनेसे यह शुद्ध हो जाती है ॥ १९४ ॥

खर्परः परिसन्तप्तः सप्तवाराग्निमज्जितः।
निम्बुबीजरसे चान्तर्निर्मलत्वमवाप्नुयात् ॥१९५॥

खपरियाको आगपर तपा-तपाकर सात बार नीबूके बीजके रसमें बुझानेसे वह अन्दरसे भी नि ल हो जाती है ॥ १९५ ॥

मारणविधि

खर्परं पारदेनैव वालुकायन्त्रगं पचेत्।
चूर्णयित्वा दिनं यावच्छोभनं भस्म जायते।
नेत्ररोगहरः क्लेदी क्षयहा खर्परो गुरुः ॥१९६॥

इस प्रकार शुद्ध की हुई खपरियाको पीसकर शुद्ध पारेमें मिला ले और दिन भर बालुकायंत्रमें पकावे। ऐसा करनेसे उसकी उत्तम भस्म तैयार हो जाती है। यह नेत्ररोगहारी, क्लेदकारी, क्षयरोगनाशक एवं गुरु पदार्थ है ॥ १९६ ॥

तूतियाके नाम और उसकी मारण-शोधनविधि।

तुत्थके तु शिखिग्रीवं हेमसारं मयूरकम्।
विष्ठया मर्दयेत्तुत्थं मार्जारककपोतयोः ॥१९७॥
दशांशं टङ्कणं दत्त्वा पाच्यं मृदुपुटे ततः।
पुटं दद्यात्पटुक्षौद्रैः किल तुत्थविशुद्धये ॥१९८॥

तुत्थक, शिखिग्रीव, हेमसार और मयूर ये इसके नाम हैं। पहले तूतियाको बिल्लीकी विष्ठा अथवा कबूतरकी विष्ठामें खूब घोंटे। फिर इसका दशांश सोहागा डाल और मृदु पुट देकर पकावे। तदनन्तर सैंधव लवण तथा शहदमें मिलाकर पुट दे तो तूतिया शुद्ध और निर्जीव हो जाता है ॥ १९७ ॥ १९८ ॥

ओतोविष्ठासमं तुत्थं सक्षौद्रं टङ्कणांघ्रियुक्।
त्रिधा सुपुटितं शुद्धं वान्तिभ्रान्तिविवर्जितम् ॥१९९॥

तूतिया और उसका समभाग बिल्लीकी विष्ठा तथा शहद ले। उसमें तूतियाका चतुर्थांश सोहागा डालकर तीन बार पुट दे तो तूतिया शुद्ध होकर अपना वान्ति तथा भ्रान्तिदोष त्याग देता है ॥ १९९ ॥

गन्धकेन समं तुत्थं तुत्थार्द्धेनार्द्धयामकम्।
वान्तिभ्रान्ती यदा न स्तस्तदा सिद्धिं विनिर्दिशेत् ॥२००॥

तूतिया २ भाग और शुद्ध गंधक १ भाग, इन दोनोंको एकमें मिलाकर आधे पहर तक आँच दे। ऐसा करनेपर जब उसका वान्ति-भ्रान्ति दोष नष्ट हो जाय, तब समझे कि वह शुद्ध हो गया ॥ २०० ॥

तूतियाके गुण

तुत्थं सकटुकक्षारं कषायं विशदं लघु।
लेखनं भेदि चक्षुष्यं कण्डूक्रिमिविषापहम् ॥२०१॥

तूतिया कटु, क्षार, कषाय, विशद, लघु, लेखन, भेदी, नेत्रोंको लाभदायक, खजुली, कृमि एवं विषोंका नाशक होता है ॥ २०१ ॥

रौप्य एवं स्वर्णमाक्षिक-शोधनविधि

मूत्रारनालतैलेषु गोदुग्धे कदलीरसे।
कौलत्थे कोद्रवक्काथे माक्षिकं विमलं तथा ॥२०२॥
मुहुः शूरणकन्दस्थं स्वेदयेद्दूरवह्निना।
क्षाराम्ललवणैश्चैव तैलसर्पिःसमन्वितम्।
पुटत्रयं प्रदातव्यं ततस्तु शोधितं भवेत् ॥२०३॥

रौप्यमाक्षिक तथा स्वर्णमाक्षिकको सूरन (जिमीकन्द) में रखकर क्रमशः गोमूत्र, काँजी, गायके दूध, केलेके रस, कुलथीके क्वाथ तथा कोदौके काढ़ेमें दोलायंत्र द्वारा अच्छी आँच देकर पकावे। तदनन्तर जवाखार, अम्ल, सेंघानमक, घी एवं तेलमें मिलाकर तीन पुट दिया जाय तो रौप्य एवं स्वर्णमाक्षिक शुद्ध हो जाते हैं ॥ २०२ ॥ २०३ ॥

जम्बीरस्य रसैः स्विन्नो मेषश्रृङ्गीरसैस्तथा।
रम्भातोयेन वा पाच्यं घस्रं विमलशुद्धये ॥२०४॥

इन दोनों माक्षिकोंको एक दिन जम्भीरी नीबूके रसमें, एक दिन मेढासिंगीके रसमें और एक दिन केलेके रसमें स्वेदन करे तो ये शुद्ध हो जायँगे ॥ २०४ ॥

माक्षिकके नाम

माक्षिकं धातुमाक्षिकं तप्तं तापीसमुद्भवम्।
गरुडो माक्षिकः पक्षी बृहद्वर्णं इति स्मृतः ॥२०५॥

माक्षिक, धातुमाक्षिक, तप्त, तापीसमुद्भव, गरुड, माक्षिक, पक्षी और बृहद्वर्ण ये स्वर्णमाक्षिकके नाम हैं ॥ २०५ ॥

स्वर्णमाक्षिकके लक्षण

भंगे सुवर्णसङ्काशो मनाक्कृष्णच्छविर्बहिः ।
बृहद्वर्ण इति ख्यातो माक्षिकः श्रेष्ठ उच्यते ॥२०६॥

जो तोड़नेपर सुवर्णसदृश चमकीला हो और बाहरसे कुछ कालापन दीखे, वह बृहद्वर्ण स्वर्णमाक्षिक कहलाता और वही उत्तम भी होता है ॥ २०६ ॥

अशुद्ध माक्षिकके दोष

मन्दाग्निं बलहानिञ्च व्रणं विष्टम्भगात्ररुक् ।
कुरुते माक्षिको मृत्युमशुद्धो नात्र संशयः ॥२०७॥

अशुद्ध माक्षिकका सेवन करनेसे उदर्य अग्नि मन्द पड़ जाती, बल नष्ट हो जाता, शरीरमें घाव हो जाते, शरीर अकड़ जाता और देहमें पीड़ा उत्पन्न हो जाती है ॥ २०७ ॥

माक्षिकशोधनविधि

स्वर्णमाक्षिकचूर्णन्तु वस्त्रे बद्ध्वा विपाचयेत् ।
कालमारिषशालिञ्चकाथे दोलाविधानतः ।
तदधः पतित शस्तमेवं शुद्ध्यति माक्षिकम् ॥२०८॥

पहले स्वर्णमाक्षिक (सोनामाखी) को कूटकर चूर्ण कर ले । फिर उसे कपड़ेमें पोटली बाँधकर काला मरसा और शालिञ्च शाकके काढ़ेमें दोलायंत्र द्वारा स्वेदन करे । पोटलीके अन्दरसे जो चूर्ण निकलकर नीचे आ जाय, वही उत्तम स्वर्णमाक्षिक होता है ॥ २०८ ॥

अथवा

माक्षिकस्य त्रयो भागा भागैकं सैन्धवस्य च ।
मातुलुङ्गद्रवैर्वाऽथ जम्बीरोत्थद्रवैः पचेत् ॥२०९॥
लौहपात्रे पचेत्तावल्लौहदर्व्या च चालयेत् ।
भासवर्णमयो यावत्तावच्छुद्ध्यति माक्षिकम् ॥२१०॥

तीन भाग स्वर्णमाक्षिक एवं एक भाग सेंधानमक, इन दोनोंको खट्टे नीबू या जँभीरी नीबूके रसमें डालकर लोहेकी कलछुलसे चलाता हुआ लोहेकी कड़ाहीमें पकावे । जब पककर लाल रंग हो जाय, तब समझे कि स्वर्णमाक्षिक शुद्ध हो गया ॥ २०९ ॥ २१० ॥

अथवा

माक्षिकस्य चतुर्थांशं गन्धं दत्त्वा विमर्दयेत् ।
उरुबूकस्य तैलेन ततः कुर्य्याच्च चक्रिकाम् ॥२११॥
शरावसम्पुटे कृत्वा पुटेद्गजपुटेन तु ।
सिन्दूराभं भवेद्भस्म माक्षिकस्य न संशयः ॥२१२॥
माक्षिकं तिक्तमधुरं मेहार्शःक्रिमिकुष्ठनुत् ।
कफपित्तहरं बल्यं योगवाहि रसायनम् ॥२१३॥

एक भाग स्वर्णमाक्षिकमें चौथाई भाग शुद्ध गंधक मिलाकर घोंटे । फिर उसमें रेंड़ीका तेल डालकर घोंटे और कल्कका टिकरो बना ले । तब इसको शरावसम्पुट-में रखकर गजपुटकी विधिसे फूँक दे । ऐसा करनेसे सिन्दूर सदृश लाल रंगकी माक्षिक भस्म तैयार हो जायगी । माक्षिकभस्म तिक्त तथा मधुर होती और प्रमेह, अर्श और कृमि-कुष्ठनाशक होती है । यह बलवर्द्धक, योगवाही एवं रसायन कही गयी है ॥ २११–२१३ ॥

कसीसके नाम और शोधन-विधि

काशीशं धातुकाशीशं खेचरं दन्तरञ्जनम् ।
सकृद्भृङ्गाम्बुना स्विन्नं काशीशं निर्मलं भवेत् ॥२१४॥
काशीशं निर्मलं स्निग्धं श्वित्रनेत्ररुजापहम् ।
पित्तापस्मारशमनं रसवद्गुणकारकम् ॥२१५॥

काशीश, धातुकाशीश, खेचर और दन्तरञ्जन, ये कसीसके नाम हैं । केवल एक बार भाँगरेके रसमें इसका स्वेदन कर देनेमें यह शुद्ध हो जाती है । इस प्रकार शोधित कसीस स्निग्ध, शिवत्र (श्वेतकुष्ठ) नेत्ररोग और पित्तजनित अपस्मार (मिरगी) का नाशक है । यह पारदके समान गुणकारी होता है ॥ २१४ ॥ ॥ २१५ ॥

चुम्बक पत्थरके नाम

राजपट्टं महापट्टं शिखिग्रीवं विराटकम् ॥२१६॥

राजपट्ट, महापट्ट, शिखिग्रीव और विराटक ये चुम्बकके नाम हैं ॥ २१६ ॥

चुम्बककी शोधनविधि

चूर्णितं कान्तपाषाणं महिषीक्षीरसंयुतम् ।
विपचेदायसे पात्रे गोघृतेन समाहितम् ॥२१७॥
लवणं च तथा क्षारे शोभाञ्जनरसे क्षिपेत् ।
अम्लवर्गस्य तोयेन दिनं घर्मे विभावयेत् ॥२१८॥
तथैव दोलिकायन्त्रे द्विवारं पाचयेत्सुधीः ।
कान्तपाषाणशुद्धौ तु रसकर्म्म समाचरेत् ॥२१९॥

भैंसके दूधमें कान्तापाषाण (चुम्बक पत्थर) के चूर्ण मिला और घी डालकर लोहेकी कड़ाहीमें पकावे । फिर उसे निकालकर सेंधा नमक, फिर क्षार और सहिंजनके रस और उसके बाद अम्लवर्गके रसमें भावना दे तथा दिनभर घाममें रखकर सुखावे । तब दो बार दोलायंत्रमें उसे पकावे तो चुम्बक पत्थर शुद्ध हो जानेपर लौहकी भाँति आँच दे-देकर भस्म करे । इसके बाद रसोंके काममें लावे ॥ २१७–२१९ ॥

कौड़ीके लक्षण

पीताभा ग्रन्थिला पृष्ठे दीर्घवृन्ता वराटिका ।
सार्द्धनिष्कभरा श्रेष्ठा निष्कभारा च मध्यमा ॥२२०॥
पादोननिष्कभारा च कनिष्ठा परिकीर्त्तिता ।
रसवैद्यैर्विनिर्दिष्टा सा वराटकसंज्ञिका ॥२२१॥

जो वराटिका (कौड़ी) कुछ पीले रंगकी हो, पीठपर गाँठ पड़ी हो, उसके वृन्त बड़े-बड़े हों, वजनमें डेढ़ निष्ककी हो, वह कौड़ी श्रेष्ठ होती है । निष्कभर वजनकी कौड़ी मध्यम और पौन निष्ककी कौड़ी कनिष्ठ श्रेणीकी होती है ॥ २२० ॥ २२१ ॥

शोधनविधि तथा वराटिकाभस्मके गुण

वराटी काञ्जिके स्विन्ना यावच्छुद्धिमवाप्नुयात् ।
परिणामादिशूलघ्नी क्षयहा ग्रहणीहरा ।
कटूष्णा दीपनी वृष्या तिक्ता वातकफापहा ॥२२२॥

कांजीमें डालकर दोलायंत्र द्वारा स्वेदन करनेसे कौड़ी शुद्ध हो जाती है । यह भस्म परिणाम आदि विविध शूलरोगोंका शमन करती और क्षय तथा ग्रहणी

रोगको दूर कर देती है। यह कटु, उष्ण, दीपनी, वृष्या, तिक्ता एवं वात तथा कफका शमन करती है॥ २२२॥

भूगर्त्ते च समे शुद्धे पत्तनं स्थापयेत्सुधीः।
तुषेण पूरयेत्तस्याः किञ्चिन्मध्यं भिषग्वरः॥२२३॥
वराटपूरितां मूषां तन्मध्ये विनिवेशयेत्।
करीषाग्निं ततो दद्यात्पालिकायन्त्रमुत्तमम्।
अनेन म्रियते नूनं वराटं सर्वरोगजित्॥२२४॥

जमीनमें एक समतल और चौरस गढ़ा खोदकर उसमें धानकी भूसी भरे, उसपर कौड़ीसे भरी मूषा रखकर ऊपरसे उपले डालकर आग लगा दे। यह पालिका यन्त्र कहलाता है। ऐसा करनेसे कौड़ीकी भस्म तैयार हो जाती है। यह सभी रोगोंपर विजय पाती है॥ २२३॥ २२४॥

अञ्जन (सुरमा) शोधनविधि

नीलाञ्जनं चूर्णयित्वा जम्बीरद्रवभावितम्।
दिनैकमातपे शुद्धं ततः कार्य्येषु योजयेत्॥२२५॥

नीले रंगके सुरमेकी डलीको पीसकर जम्भीरी नीबूके रसमें भावना दे और उसमेंसे निकालकर दिनभर धूपमें सुखा लेवे तो अञ्जन शुद्ध हो जाता और सब प्रकारके काममें लाया जाता है॥ २२५॥

हिंगुल (सिंगरिफ) के नाम

हिङ्गुलो हिङ्गुलुर्याति दरदः शुकतुण्डकः।
रसगन्धकसम्भूतो हिङ्गुलो दैत्यरक्तकः॥२२६॥

हिंगुल, हिंगुलु, याति, दरद, शुकतुण्डक, रसगन्धकसम्भूत और दैत्यरक्त, ये हिंगुलके नाम हैं॥ २२६॥

शोधनविधि

अम्लवर्गद्रवैः पिष्ट्वा दरदो माहिषेण च।
दुग्धेन सप्तधा पिष्टः शुष्कीभूतो विशुद्ध्यति॥२२७॥

पहले अम्लवर्गके रसमें सिंगरिफको घोंटे। फिर भैंसके दूधमें सात बार इसका मर्दन करके सुखा ले तो इसकी शुद्धि हो जाती है॥ २२७॥

मेषीदुग्धेन दरदमम्लवर्गैर्विभावितम् ।
सप्तवारं प्रयत्नेन शुद्धिमायाति निश्चितम् ॥२२८॥

पहले भेंड़ीके दूधमें फिर अम्लवर्गके रसमें सात बार भावना देनेसे सिंगरिफ शुद्ध हो जाती है ॥ २२८ ॥

दरदं दोलिकान्त्रे पक्वं जम्बीरजैर्द्रवैः ।
सप्तवारमजामूत्रैर्भावितं शुद्धिमेति हि ॥२२९॥

जम्भीरी नीबूके रसमें दोलायंत्र द्वारा इसे पकावे । फिर सात बार बकरीके मूत्रमें भावना दे तो भी हिंगुलकी शुद्धि हो जाती है ॥ २२९ ॥

अथवा

आर्द्रकैर्लकुचद्रावैः सप्तधा भावितो यदि ।
हिंगुलः शुद्धतां याति निर्दोषो जायते खलु ॥२३०॥

अदरख अथवा लकुच (बड़हल) के रसमें सात बार भावना देनेसे हिंगुल शुद्ध होकर सर्वथा निर्दोष हो जाता है ॥ २३० ॥

शुद्ध हिंगुलके लक्षण और गुण

बिम्ब्याभं हिंगुलं दिव्यं रसगन्धकसम्भवम् ।
मेहकुष्ठहरं रुच्यं वल्यं मेधाग्निवर्द्धनम् ॥२३१॥

जो हिंगुल पारा तथा गंधकसे निकला हो और देखनेमें बिम्बीफलके समान एकदम चमकता हुआ रक्तवर्ण हो, वह उत्तम होता है । हिंगुल मेह तथा कुष्ठका नाशक, रुचिवर्धक, बलदायक, बुद्धिवर्द्धक एवं औदर्य अग्निका उद्दीपक माना जाता है ॥ २३१ ॥

शिलाजीतके नाम

शिलाजतुनि शैलेयमद्र्यं गिरिजमश्मजम् ।
धातुजमश्मजतुकं शैलजं चाश्मसम्भवम् ॥२३२॥

शिलाजतु, शैलेय, अद्रय, गिरिज, अश्मज, धातुज, अश्मजतुक, शैलज और अश्मसंभव ये शिलाजीतके नाम हैं ॥ २३२ ॥

शोधनविधि

गोदुग्धत्रिफलाभृंगद्रवैः पिष्टं शिलाजतु ।
दिनैकं लौहजे पात्रे शुद्धिमायात्यसंशयम् ॥२३३॥

गायके दूध, त्रिफलाके काढ़े तथा भाँगरेके रसमें घोंटकर लोहेके पात्रमें रखनेसे शीलाजीतकी शुद्धि हो जाती है ॥ २३३ ॥

शुद्ध शिलाजीतके गुण

शिलाजतु भवेत्तिक्तं कटुकञ्च रसायनम्।
क्षयशोथोदराशांसि हन्ति बस्तिरुजां जयेत् ॥२३४॥

शुद्ध शिलाजीत तिक्त, कटु एवं रसायन है। यह क्षय, शोथ, उदररोग, अर्श (बवासीर) तथा बस्ति (पेंडू) की पीड़ाका शमन करती है ॥ २३४ ॥

सौवीरादिशोधन

सौवीरं टङ्कणं शंखं कंकुष्ठं गैरिकं तथा।
एते वराटवच्छोध्या भवेयुर्दोषवर्जिताः ॥२३५॥

सौवीर (सफेद सुरमा), टङ्कण (सोहागा), शंख, कंकुष्ठ और गेरू इन सबकी शुद्धि उपर्युक्त वराटिकाशोधनके समान जानना चाहिए ॥ २३५ ॥

कंकुष्ठादिशोधन

कंकुष्ठं गैरिकं शंखं काशीशं टङ्कणं तथा।
नीलाञ्जनं शुक्तिभेदाः शुल्वकाः सवराटकाः ॥२३६॥
जम्बीरवारिणा स्विन्नाः क्षालिताः कोष्णवारिणा।
शुद्धिमायान्त्यमी योज्या भिषग्भिर्योगसिद्धये ॥२३७॥

कंकुष्ठ, गेरू, शंख, काशीश, सोहागा, नीलाञ्जन (काला सुरमा) और अनेक प्रकारकी सीपियाँ, घोंघे और कौड़ियाँ, इनको जँभीरी नीबूके रसमें स्वेदन करके गरम जल द्वारा धो देनेमात्रसे ये शुद्ध हो जाते हैं। इनको शुद्ध करके ही उपयोगमें लाना चाहिए ॥ २३६ ॥ २३७ ॥

टङ्कण (सोहागे) के नाम

टङ्कणं क्रामणष्टंगः सम्यक्क्षारश्च पाचनः।
सुभगो मालतीजातो द्रावी लौहविशुद्धिदः ॥२३८॥

टङ्कण, क्रामण, टङ्क, सम्यक्क्षार, पाचन, सुभग, मालतीजात, द्रावी और लौहविशुद्धिद ये सोहागेके नाम हैं ॥ २३८ ॥

सोहागेकी शोधनविधि

आदौ टङ्कणमादाय काञ्जिकाम्ले विनिक्षिपेत् ।
एकरात्रात्समुद्धृत्य रौद्रयन्त्रे विभावयेत् ॥२३९॥
नरमूत्रगतं टंगं गवां मूत्रगत तथा ।
दिनान्ते तत्समुद्धृत्य जम्बीराम्बुगतं ततः ॥२४०॥
जम्बीराम्लात्समुद्धृत्य नारिकेलस्य पात्रके ।
मरीचचूर्णसंयुक्तं क्षालयेच्छीतलाम्बुना ।
एवं टङ्कं समादाय सर्वरोगेषु योजयेत् ॥२४१॥

सोहागेको लेकर काँजीमें डाल दे और रातभर उसमें पड़ा रहने दे । फिर उसे निकालकर घाममें सुखावे । तदनन्तर पहले मनुष्यके मूत्रमें फिर गोमूत्रमें क्रमशः एक-एक रात भावना दे । उसमेंसे निकालकर जँभीरी नीबूके रसमें डाल दे । इसमेंसे निकालकर काली मिर्चका चूर्ण मिलावे और नारियलके पात्रमें रखकर शीतल जलसे धो डाले । ऐसा करनेसे सोहागा शुद्ध हो जाता है । इस प्रकार शोधित सोहागा ही सब योगोंमें देना चाहिए ॥ २३९-२४१ ॥

सोहागेके गुण

टंकणोऽग्निकरो रुक्षः कफघ्नो रेचनो लघुः ॥२४२॥

शुद्ध सोहागा, अग्निवर्धक, रूक्ष, कफनाशक, रेचक और लघु होता है ॥ २४२ ॥

शङ्खमारणविधि

अन्धमूषागतं शङ्खं पलमेकं विचक्षणः ।
माषार्द्धटङ्कणैर्मिश्रं दण्डयन्त्रेण मारयेत् ॥२४३॥

पूर्वोक्त विधिसे शोधित शंख एक पल ले और आधा मासा शुद्ध सोहागेके साथ उसे अन्धमूषामें रखकर दण्डयंत्र द्वारा आँच दे तो वह मर जाता है ॥ २४३ ॥

शुद्ध शंखके गुण

शङ्खः सर्वरुजो हन्ति विशेषादुदरामयम् ।
शूलाम्लपित्तविष्टम्भमेहहृद्वह्निदीपनः ॥२४४॥

शोधित शंख सब प्रकारकी पीड़ाओं और विशेष करके उदररोगोंको नष्ट करता है। यह शूल, विष्टम्भ, प्रमेहका नाशक एवं वह्निदीपक होता है ॥ २४४ ॥

स्वर्णादिकी शोधनविधि

हेमादिलौहकिट्टान्तं शोधनं मारणं शृणु ।
तैले तक्रे गवां मूत्रे काञ्जिकेऽथ कुलत्थजे ॥ २४५॥
तप्ततप्तानि सिंचेत तत्तद्द्रावे च सप्तधा ।
एवं स्वर्णादिलौहानि शुद्धिमायान्त्यसंशयम् ॥२४६॥
सौख्यं वीर्य्यं बलं हन्ति नानारोगं करोति च ।
अशुद्धममृतं स्वर्णं तस्माच्छुद्धन्तु मारयेत् ॥२४७॥
मृत्तिकामातुलुंगाम्लैर्भावितं पञ्चवासरम् ।
मृद्भस्मलवणार्द्धम शोधयेत्पुटयेत्ततः ॥२४८॥

सुवर्णसे लेकर लौहकीट तक सभी धातुओंके शोधन-मारणकी विधि इस प्रकरणमें बतायी जायगी। सो—सुनिए। इन सब धातुओंको बार-बार तपाकर क्रमशः तिलतैल, मट्ठा, गोमूत्र, काँजी एवं कुलथीके क्वाथमें बुझानेसे ये शुद्ध हो जाते हैं। अशुद्ध और अमारित स्वर्ण सुख, वीर्य और बलको हरता तथा विविध भाँतिके रोग उत्पन्न कर देता है। इसलिए इसे शोध और मारकर ही काममें लावे। स्वर्णशोधन करते समय मृत्तिका (मिट्टी), खट्टे नीबूका रस, मिट्टीकी राखी तथा नमक इन्हें एकमें घोंटे। फिर इन्हीं पदार्थोंमें पाँच दिन तक भावना दे। इसके बाद इन्हींको सुवर्णपर लेप करके आँच देनेसे सुवर्ण शुद्ध हो जाता है ॥ २४५–२४८ ॥

वल्मीकमृत्तिका धूमं गैरिकं चेष्टका पटु ।
इत्येता मृत्तिकाः पञ्च जम्बीरैरारनालकैः ॥२४९॥
पिष्ट्वा लेप्यं स्वर्णपत्रं पुटेन तु विशुद्ध्यति ।
धारयेत्स्वर्णपत्रीभिस्त्रिदिनं पञ्च मृत्तिकाः ॥२५०॥

सुवर्णपत्रपर बाँबीकी मिट्टी, रसोईघरका धुँआ, गेरू, ईंटका चूरा और नमक इन पंचमृत्तिकाओंको जँभीरी नीबूके रस तथा काँजीमें पीसकर लेप कर दे और तब आँच देव तो सुवर्ण शुद्ध हो जाता है। पुट देकर स्वांगशीतल हो जानेपर भी इन पंचमृत्तिकाओंको तीन दिन तक स्वर्णपत्र लगी रहने देना चाहिये ॥२४९॥२५०॥

स्वर्णमारणविधि

माक्षिकं नागचूर्णञ्च पिष्टमर्करसेन च।
हेमपत्रं पुटेनैव म्रियते क्षणमात्रतः ॥२५१॥

शुद्ध सोनामाखी और शुद्ध सीसेके चूर्णको मदारके रसमें घोंटकर पत्रपर पोत दे। फिर केवल एक पुट दे तो क्षणमात्रमें सुवर्ण भस्म हो जाता है ॥२५१॥

सुशुद्धं पारदं दत्त्वा कुर्य्याद्यत्नेन पीठिकाम्।
दत्त्वोर्ध्वाधो नागचूर्णं पुटेन म्रियते ध्रुवम् ॥२५२॥

भली भाँति संशोधित पारा और पारेका आधा सुवर्ण लेकर दोनोंको एकमें घोटे और इनको टिकिया बना ले। फिर इस टिकियाको एक कसोरेमें रख और टिकियाके नीचे-ऊपर शुद्ध सीसेका चूर्ण रखकर दूसरे कसोरेसे ढाँक दे। इसकी संधि बन्द करके इस सम्पुटमें यदि केवल एक आँच दे तो सुवर्ण भस्मके रूपमें परिणत हो जाता है ॥ २५२ ॥

गलितस्य सुवर्णस्य षोडशांशेन सीसकम्।
योजयित्वा समुद्धृत्य निम्बुनीरेण मर्दयेत् ॥२५३॥
गोलं कृत्वा गन्धचूर्णं समं दद्यात्तदोपरि।
शरावसम्पुटे कृत्वा पुटेत्त्रिंशद्वनोपलैः।
एवं मुनिपुटैर्हेम नोत्थानं लभते पुनः ॥२५४॥

पहले सुवर्णको गला लें। फिर स्वर्णका सोलहवाँ भाग शुद्ध सीसा मिलाकर घोंटे। फिर उसमें नीबूका रस देकर भली-भाँति खरल करके गोला बना ले और उसे एक परईमें रखे। गोलेके नीचे-ऊपर समभाग शुद्ध गंधकका चूर्ण रखकर एक परईसे ढाँककर सम्पुटित कर दे। इस सम्पुटको तीस बनैले उपलोंके बीचमें रखकर फूँक दे। इस प्रकार १२ पुट देनेसे सोना निर्जीव हो जाता है—यह फिर कभी भी जीवित नहीं होने आता ॥ २५३॥२५४॥

शुद्धसूतसमं स्वर्णं खल्वे कृत्वा तु गोलकम्।
ऊर्ध्वाधो गन्धकं दत्त्वा सर्वतुल्यं निरुध्य च ॥२५५॥
त्रिंशद्वनोपलैर्दद्यात् पुटान्येवं चतुर्दश।
निरुत्थं जायते भस्म गन्धो देयः पुनः पुनः ॥ २५६ ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध सुवर्ण इन दोनोंका समभाग लेकर घोंटे और गोला बना ले। इस गोलेको कसोरेमें रखकर उसके नीचे-ऊपर गोलेके बराबर मात्रामें शुद्ध गन्धकका चूर्ण दे और दूसरे कसोरेसे ढाँककर सम्पुटित कर दे। फिर इसे तीस बनैले उपलोंके बीचमें रखकर फूँक दे। इस प्रकार १४ पुट देनेसे निरुत्थ (कभी भी जीवित न हो सकनेवाली) स्वर्णभस्म सिद्ध हो जाती है। हाँ, प्रत्येक पुठ देनेके समय शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक देते जाना चाहिये ॥ २५५॥२५६ ॥

सुवर्णभस्मके गुण

कषायतिक्तमधुरं सुवर्णं गुरु लेखनम्।
हृद्यं रसायनं बल्यं चक्षुष्यं कान्तिदं शुचि ।। २५७ ॥
आयुर्मेधावयःस्थैर्य्यवाग्विशुद्धिस्मृतिप्रदम् ।
क्षयोन्मादगणानाञ्च कुष्ठानां नाशनं परम् ॥ २५८ ॥

सुवर्णभस्म कसैला, तीता, मधुर, गुरु, लेखन, हृद्य, रसायन, बलदायी, नेत्रोंके लिए हितकर, कांतिदायक और पुनीत होती है। यह आयु, बुद्धि, अवस्थाकी स्थिरता, वाक्यशुद्धि तथा स्मरणशक्ति प्रदान करती और क्षय, उन्माद, विष तथा कुष्ठरोगका शमन करती है ॥ २५७॥२५८ ॥

रजत (चाँदी) के लक्षण

दग्धोत्तीर्णं सुशीतं यन्निर्मलं कुन्दसन्निभम्।
गुरु स्निग्धं कुमारं च तारमुत्तममिष्यते ॥ १५९ ॥

जो तपकर ठंढी हो जानेपर भी कुन्दपुष्पके समान श्वेत भारी, चिकनी और कोमल हो, वही चाँदी उत्तम होती है ॥ २५९ ॥

अशुद्ध चाँदीके अवगुण

आयुः शुक्रं बलं हन्ति रोगसंघं करोति च।
अशुद्धं च मृत तारं शुद्धं मार्य्यमतो बुधैः ॥ २६० ॥

अशुद्ध और अमारित चाँदी आयु, वीर्य एवं बलका ह्रास करती तथा विविध रोगोंको जन्म देती है। अतएव पहले चाँदीको शुद्ध कर ले, तब मारे ॥२६०॥

रजतशोधनविधि

नागेन क्षारराजेन द्रावितं शुद्धिमृच्छति।
रजतं दोषनिर्मुक्तं किंवा क्षाराम्लपाचितम् ॥ २६१ ॥

यदि सोहागा तथा सीसेके साथ पिघला ली जाय तो चाँदी शुद्ध हो जाती है। अथवा क्षार और अम्लमें पकानेसे भी यह शुद्ध हो जाती है॥२६१॥

मारणविधि

माक्षिकं गन्धकं चैवमर्कक्षीरेण मर्दयेत्।
तेन लिप्तं रूप्यपत्रं पुटेन म्रियते ध्रुवम्॥ २६२॥

शुद्ध स्वर्णमाक्षिकका चूर्ण और शुद्ध गंधकका चूर्ण इन दोनोंको मदारके दूधसे घोंटकर चाँदीके पत्रपर लेप कर दे। फिर शरावसम्पुटमें रखकर आँच देनेसे चाँदी निर्जीव हो जाती है॥२६२॥

कण्टवेध्ये तारपत्रे दत्त्वा द्विगुणहिंगुलम्।
पातयन्त्रे रसो ग्राह्यो रजतं मृतमुच्यते॥ २६३॥

चाँदीको पीटकर इतना महीन पत्तर कर ले कि उसमें काँटा चुभनेपर धँस जाय। फिर उसमें चाँदीका दूना शुद्ध सिंगरिफ मिलाकर ऊर्ध्वपातनयंत्र द्वारा उड़ा ले। ऐसा कई बार करनेसे रजतभस्म तैयार हो जायगी॥२६३॥

तालं गन्धं रौप्यपत्रं मर्दयेन्निम्बुकद्रवैः।
त्रिपुटैश्च भवेद्भस्म योज्यमेतद्रसादिषु॥२६४॥

चाँदीके पत्र, शुद्ध हड़ताल और शुद्ध गंधक इन तीनोंको ले और नीबूके रसमें घोंटकर तीन पुट दे तो चाँदीकी भस्म तैयार हो जाती है। यह सब प्रकारके रसादि कार्योंमें बरती जा सकती है॥ २६४॥

अथवा

तारपत्रं चतुर्भागं भागैकं शुद्धतालकम्।
मर्द्यं जम्बीरजैर्द्रावैस्तारपत्राणि लेपयेत्॥२६५॥
रुद्ध्वा त्रिभिः पुटैः पाच्यं पञ्चविंशद्वनोपलैः।
म्रियते नात्र सन्देहो गन्धो देयः पुनः पुनः॥२६६॥

चाँदीके पत्र चार भाग और शुद्ध हड़ताल एक भाग इन दोनोंको जँभीरी नीबूके रसमें घोंटकर चाँदीके पत्रपर लेप कर दे। फिर इसे शरावसम्पुटमें रख और संधि बन्द करके पचीस बनैले उपलोंके बीच रखकर फूँक दे। इस तरह तीन पुट देनेसे चाँदी भस्म हो जाती है। हाँ, प्रत्येक पुटपर गंधक नयी-नयी देता जाय॥ २६५॥ २६६॥

रजतके गुण

शीतं कषायं मधुरमम्लं वातप्रकोपजित् ।
दीपनं बलकृत्स्निग्धं गुल्माजीर्णविनाशनम् ।
आयुष्यं दीर्घरोगघ्नं रजतं लेखनं स्मृतम् ॥२६७॥

रजतभस्म शीतल, कसैली, मधुर, अम्ल एवं वायुके कोपको पराजित करनेकी समर्थ्य रखती है । यह उद्दीपक, बलदायक, स्निग्ध, गुल्मनाशक, अजीर्णशामक, आयुवर्धक, दीर्घकालीन (पुराने) रोगोंकी विनाशक और लेखन होती है ॥ २६७ ॥

अशोधित ताम्रके दोष

न विषं विषमित्याहुस्ताम्रञ्च विषमुच्यते ।
एको दोषो विषे त्वष्टौ दोषास्ताम्रे प्रकीर्त्तिताः ॥२६८॥
भ्रमो मूर्च्छा विदाहश्च उत्क्लेदशोषवान्तयः ।
अरुचिश्चित्तसन्ताप एते दोषा विषोपमाः ।
तस्माद्विशुद्धं ताम्रं हि ग्राह्यं रोगोपशान्तये ॥२६९॥

विषको विष नहीं कहते, बल्कि अशुद्ध ताम्र विष कहलाता है । क्योंकि विषमें केवल एक दोष होता है । किन्तु ताम्रमें ये आठ अवगुण रहते हैं—भ्रम, मूर्च्छा, विदाह, उत्क्लेद, शोष, वान्ति (वमन) अरुचि और मनस्ताप । ये आठों दोष विषके ही तुल्य हैं । इसलिए रोगशान्तिके निमित्त विशुद्ध ताम्रका ही उपयोग करना चाहिए ॥ २६८ ॥ २६९ ॥

ताम्रशोधनविधि

पटुना रविदुग्धेन ताम्रपत्राणि लेपयेत् ।
अग्नौ सन्ताप्य निर्गुण्डीरसे सिञ्चेत्पुनः पुनः ॥२७०॥

सैंधव लवण तथा मदारका दूध इन दोनोंको एकदिल करके ताम्रपत्रपर लेप कर दे । फिर ताम्रपत्रको आगपर बार-बार तपाकर निर्गुण्डीके रसमें बुझानेसे वह शुद्ध हो जाता है ॥ २७० ॥

अथवा

गोमूत्रेण पचेद्यामं ताम्रपत्रं दृढाग्निना ।
शुद्ध्यते नात्र सन्देहो मारणञ्चात्र कथ्यते ॥२७१॥

ताम्रपत्रको गोमूत्रके साथ खूब कड़ी आँचमें पहर भर पकावे तो यह अवश्य शुद्ध हो जायगा। अब मारणकी विधि बतलाते हैं॥ २७१॥

मारणविधि

सूतमेकं द्विधा गन्धं यामं मर्द्यन्तु कन्यया।
द्वयोस्तुल्यं ताम्रपत्रं लिप्त्वा स्थाल्यां निधापयेत्॥२७२॥

सम्यक्शूरणजैः सार्द्धं पार्श्वे भस्म निधापयेत्।
चतुर्यामं पचेच्चुल्ल्यां पात्रपृष्ठे सगोमये॥२७३॥

जलं पुनः पुनर्देयं स्वाङ्गशीतं विमर्दयेत्।
म्रियते नात्र सन्देहः सर्वरोगेषु योजयेत्॥२७४॥

शोधित पारा एक भाग और शुद्ध गंधक दो भाग इन दोनोंको घीकुवारके रसमें पहर भर घोंटे। तदनन्तर उन दोनोंके समान भाग (४ भाग) ताम्रपत्रपर उसका लेप कर दे। अब ताम्रपत्रको शरावसम्पुटमें रखकर एक हाँड़ीमें रखे। सम्पुटके ऊपर और अगल-बगल जिमीकन्दकी भस्म भर दे और उसे चूल्हेपर चढ़ाकर चार पहर तक आँच देता हुआ पकावे। पकाते समय भस्मपर बराबर पानीका छींटा देता जाय। चार पहर बाद वह शीतल हो जाय तो ताम्रपत्र निकाल और खरल करके रख ले। ऐसा करनेसे ताम्र अवश्य निर्जीव हो जाता है। सब रोगोंपर इसका प्रयोग किया जाता है॥ २७२–२७४॥

अथवा

जम्भाम्भसा सैन्धवसंयुतेन सगन्धकं स्थापय शुल्वपत्रम्।
पचायमानं पुटयेत्सुयुक्त्वा वान्त्यादिकं यावदुपैति शान्तिम्॥२७५॥

सेंधानमक और शुद्ध गंधक इनका समान भाग लेकर जँभीरी नीबूके रसमें घोंटे और इन दोनोंके समान भाग ताम्रपत्रपर इनका लेप कर दे। अब ताम्रपत्रको एक हाड़ीमें रखे और उसे एक परईसे ढाँककर कपड़मिट्टी द्वारा संधि बन्द कर दे। उसके नीचेसे भली भांति आँच देकर पकावे। आँच तबतक देता जाय, जब तक उसके वान्त्यादिक दोष दूर न हो जायँ। ऐसा करनेसे ताम्रभस्म तैयार हो जाती है॥ २७५॥

शुद्धं ताम्रदलं विमर्द्य पटुना क्षारेण जम्बीरजै-
र्नीरैर्घस्रमिदं स्नुगर्कपयसा लिप्तं धमेत्सप्तधा।
निर्गुण्ड्यम्बु हिमं रसेन्द्रकलितं दुग्धाज्यगन्धेन
तत्तुल्येनाथ मृतं भवेत्सुपुटितं पञ्चामृतेन त्रिधा ॥२७६॥

शुद्ध ताम्रके चूर्णोंको दिनभर सेंधानमक तथा क्षारके साथ जँभीरी नीबूके रसमें घोंटे। फिर सेंहुड़ तथा मदारके दूधमें घोंटे और सात बार आँचपर तपा-तपाकर संभालूके रसमें बुझावे। इस तरह बुझाते समय ताम्रके जो टुकड़े रसमें गिरकर नीचे बैठ जायँ, उन्हें निकाल ले। जितनी मात्रामें ताम्र निकले, उतना ही शुद्ध गंधक और शुद्ध पारा मिलाकर इन तीनोंको खरलमें खूब घोंटे। फिर इन तीनोंके बराबर दूध और घी मिलाकर भली भाँति आँच दे। तदनन्तर तीन पुट पञ्चामृतकी देनेसे ताम्र भस्म हो जाता है ॥ २७६ ॥

ताम्रभस्मके गुण

वान्तिभ्रान्तिविवर्जितं जयरुजा कुष्ठानि पाण्ड्वामयं
शूलं मेहगुदाङ्कुरानिलगदानुक्तानुपानैर्जयेत्।
गुञ्जामात्रमिदं ततो द्विगुणितं तच्छुद्धकायेन चे-
द्भुक्तं स्थौल्यजराऽपमृत्युशमनं पथ्याशिना वत्सरात् ॥२७७॥

ताम्रमुष्णं गरहरं यकृत्प्लीहोदरापहम्।
क्रिमिशूलामवातघ्नं ग्रहण्यर्शोऽम्लपित्तजित् ॥२७८॥

वान्ति-भ्रान्तिविहीन ताम्रभस्मको शास्त्रोक्त अनुपानके साथ सेवन करनेसे क्षय, विविध प्रकारकी पीड़ा, कुष्ठरोग, पाण्डु, शूल, प्रमेह, अर्शजनित गुदाके अंकुर (मस्से) और वायुजनित रोग दूर हो जाते हैं। विरेचन आदिके द्वारा शरीरशुद्धि करके पहले ताम्रभस्म १ रत्तीकी मात्रा ले। फिर बढ़ाकर २ रत्तीकी मात्राका सालभर सेवन करे और पथ्यसे रहे तो शरीरकी अधिक मोटाई, बुढ़ापा और अकाल मृत्यु दूर भाग जाती है। ताम्रभस्म गरम, विषनाशक, यकृत्-प्लीहा-उदररोगशामक और कृमि-शूल तथा आमवातहारी है। यह ग्रहणी, बवासीर तथा अम्लपित्त रोग भी दूर कर देती है ॥ २७७॥२७८॥

पीतल और काँसेका शोधन और मारण ताम्रकी भाँति ही करना चाहिए। यह ताम्रके समान ही गुणकारी भी होते हैं ॥२७९॥

नागवङ्गशोधनविधि

नागवङ्गे च गलिते रविदुग्धेन सेचिते।
त्रिवारान्शुद्धिमायातः सच्छिद्रे हण्डिकान्तरे ॥२८०॥

नाग (सीसा) और बङ्ग (राँगा) इनको आँचपर रखकर गला ले। फिर मदारके दूधमें बुझावे। इस तरह तीन बार पिघला-पिघलाकर दूधमें बुझानेसे ये शुद्ध हो जाते हैं। हाँ, गले हुए सीसे या राँगेको मदारके दूधम डालते समय दुग्धपात्रके ऊपर एक ऐसी औंधी हाँड़ी रक्खे कि जिसमें छेद किया हुआ हो। नहीं तो ठंढे दूधमें पड़ते ही ये ऊपर उछलेंगे और शरीर जला देंगे ॥२८०॥

अथवा

वङ्गं चूर्णोदके स्विन्नं यामार्द्धेन विशुद्धयति ॥२८१॥

वंग (राँगे) को चूनेके जलमें आधे पहर तक स्वेदन करे तो यह शुद्ध हो जाता है। (टिप्पणी—कुछ वैद्योंका यह मत है कि पहले राँगेको गलाकर सात बार चूनेके जलमें बुझाले, तब फिरसे चूनेके जलमें स्वेदन करे तो उत्तम है) ॥

सीसकमारणविधि।

भुजङ्गममगस्त्यञ्च पिष्ट्वा पत्रं प्रलेपयेत्।
तत्र संविद्रुते नागे वासापामार्गसम्भवम् ॥२८२॥
क्षारं विमिश्रयेत्तत्र चतुर्थांशं गुरूक्तितः।
प्रहरं पाचयेच्चुल्ल्यां वासादर्व्या च चालयेत् ॥२८३॥
तत उद्धृत्य तच्चूर्णं वासानीरेण मर्दयेत्।
एवं सप्तपुटैर्नागं सिन्दूरं जायते ध्रुवम् ॥२८४॥

उपर्युक्त विधिसे शोधित सीसा और अगस्त्यपुष्प दोनो समान भाग लेकर घोंटे। फिर उसे सीसकपत्रपर पोत दे। इस पत्रको हाड़ीमें रखकर नीचेसे आँच दे। जब सीसा गल जाय तो वासा तथा चिचिड़ाका क्षार इन दोनोंका समभाग लेकर चौथाई भाग क्षार चुटकियोंसे उस पिघले हुए सीसेपर डालता जाय। नीचे आँच देता रहे और वासेकी ही कलछुलसे सीसेको चलाता हुआ चुटकी-चुटकी

त्तार डालता रहे । जब सीसा मर जाय तो उतार ले और उस चूर्णको वासाके रसमें घोटकर सात पुट दे । ऐसा करनेसे सिन्दूरकी भाँति लाल रंगकी सीसकभस्म तैयार हो जायगी ।। २८२–२८४ ।।

अथवा

त्रिभिः कुम्भीपुटैर्नागो वासारसविमर्दितः ।
सशिलो भस्मतामेति तद्रजः सर्वमेहजित् ॥२८५॥
दशनागबलं धत्ते वीर्य्यायुःकान्तिवर्द्धनम् ।
मेहान्हन्ति हतं नागं सेव्यं वङ्गञ्च तद्गुणम् ॥२८६॥

शुद्ध मैनसिल तथा शुद्ध सीसा दोनोंको समान भाग लेकर वासाके रसमें घोटे । तदनन्तर गजपुटकी विधिसे तीन पुट दे तो सीसा भस्म हो जाता है । यह भस्म सब प्रकारके प्रमेहोंको परास्त करती है । सीसकभस्ममें दस हाथियोंका बल विद्यमान रहता है । यह वीर्य, आयु और कान्ति बढ़ाती तथा सब प्रमेहोंको नष्ट कर देती है । वंगभस्मका सेवन करनेसे भी ये ही लाभ होते हैं ।। २८५॥२८६ ।।

शुद्ध सीसेके गुण

तारस्य रञ्जनो नागो वातपित्तकफापहः ।
ग्रहणीकुष्ठगुल्मार्शःशोषव्रणविषापहः ॥२८७॥

शुद्ध सीसा चाँदीको रँग देता है और वात, पित्त तथा कफका शमन करता है । यह संग्रहणी, कुष्ठ, गुल्म, अर्श, शोष, व्रण एवं सभी विषोंका विकार दूर करता है ।। २८७ ।।

वंग (राँगा) मरणविधि ।

वङ्गं सतालमर्कस्य पिष्ट्वा दुग्धेन सम्पुटेत् ।
शुष्काश्वत्थभवैर्वल्कैः सप्तधा भस्मतां नयेत् ॥२८८॥

शुद्ध राँगा और शुद्ध हड़ताल दोनों समभाग लेकर मदारके दूधमें खूब घोंटे । फिर कल्कका गोला बनाकर उसपर सात परत पीपल वृक्षकी सूखी छाल लपेटे । ऐसा करके पुट देनेसे राँगा भस्म हो जाता है ।। २८८ ।।

अथवा

विशुद्धवङ्गपत्राणि द्रावयेद्धण्डिकान्तरे ।
अपामार्गोद्भवं चूर्णं तत्तुल्यं तत्र मेलयेत् ॥२८९॥

स्थूलाग्रया लौहदर्व्या शनैस्तदभिमर्दयेत् ।
यावद्भस्मत्वमाप्नोति तावन्मर्द्यन्तु पूर्ववत् ॥ २९०॥
ततस्त्वेकीकृतं चूर्णं कृत्वा चाङ्गारवर्जितम् ।
नूतनेन शरावेण रोधयेच्च भिषग्वरः ।
पश्चात्तीव्राग्निना पक्वं वङ्गभस्म भवेद्ध्रुवम् ॥२९१॥

शुद्ध बंगपत्रको एक हँड़ियामें रखकर आँचपर चढ़ा दे। बंगपत्रका ही समान भाग अपामार्गका चूर्ण पहलेसे रख ले। आँचपर रखा हुआ राँगा पिघल जाय, तब चुटकीसे अपामार्गका चूर्ण डालता हुआ लोहेकी—जिसका अग्रभाग मोटा हो—ऐसी कलछीसे राँगेको धीरे-धीरे घोंटता रहे। जब सब बंगकी भस्म बन जाय, तब निकाल ले और एक हँड़ियामें रखकर परईसे ढाँक दे और कपड़मिट्टी द्वारा भलीभाँति संधि बन्द करके तीव्र आंचमें पुट दे तो बंगभस्म तैयार हो जाती है ॥ २८९–२९१ ॥

अथवा

वङ्गं खर्परके कृत्वा चुल्ल्यां संस्थापयेत्सुधीः ।
द्रवीभूते पुनस्तस्मिन् चूर्णान्येतानि दापयेत् ॥२९२॥
प्रथमे रजनीचूर्णं द्वितीये च यमानिकाम् ।
तृतीये जीरकञ्चैव ततश्चिञ्चात्वगुद्भवम् ॥२९३॥
अश्वत्थवल्कलोत्थञ्च चूर्णं तत्र विनिक्षिपेत् ।
एवं विधानतो वङ्गं म्रियते नात्र संशयः ॥२९४॥

संशोधित वंगको एक खपरी (चौड़े मुँहकी हाँड़ी) में रखकर आगपर चढ़ा दे। जब बंग गल जाय, तब वंगके ही बराबर मात्रामें क्रमशः हल्दीका चूर्ण, अजवा-यनका चूर्ण, सफेद जीरेका चूर्ण, इमलीके छालका चूर्ण और सबके पीछे पीपलकी छालका चूर्ण डालता हुआ किसी लकड़ीसे चलाता जाय। ऐसा करनेसे अवश्य वंग मरकर भस्मके रूपमें परिणत हो जाता है ॥२९२-२९४॥

बंगभस्मके गुण

वङ्गं तिक्ताम्लकं रुक्षं किञ्चिद्वातप्रकोपनम् ।
मेदःश्लेष्मामयघ्नञ्च क्रिमिघ्नं मेहनाशनम् ॥२९५॥

कान्तभस्म तीती, आमिल, रूक्ष और कुछ-कुछ वायुको प्रकुपित करनेवाली होती है। यह मेद एवं श्लेष्माजनित रोगों तथा कृमि और प्रमेहका शमन करती है ॥२६५॥

लौहशोधनविधि

तप्तानि सर्वलौहानि कदलीमूलवारिणि।
सप्तधा त्वभिषिक्तानि शुद्धिमायान्त्यनुत्तमाम् ॥२६६॥
त्रिफलाऽष्टगुणे तोये त्रिफला षोडशं पलम्।
तत्क्वाथे पादशेषे तु लौहस्य पलपञ्चकम् ॥२६७॥
कृत्वा च तप्तपत्राणि सप्तवारं निषेचयेत्।
एवं प्रलीयते दोषो गिरिजे लौहसम्भवः ॥२६८॥

सभी प्रकारके लौह आँचमें तपा-तपाकर केलेकी जड़के पानीमें बुझानेसे भलीभाँति शुद्ध हो जाया करते हैं। शंकर भगवान भगवती पार्वतीसे कहते हैं—हे गिरिजे ! सोलह पल त्रिफलामें उसका अठगुना (१२८ पल) जल डालकर पकावे। जब केवल चौथाई (३२ पल) जल शेष रह जाय, तब उतार ले। यह हुआ त्रिफलाक्काथ। इसमें पाँच पल लौहपत्र सात बार आगपर तपा-तपाकर बुझानेसे लौहके सब दोष दूर हो जाते हैं और वह सर्वथा निर्मल हो जाता है ॥२६६–२६८॥

लौहमारणविधि

भानुपाकात्तथा स्थालीपाकाच्च पुटपाकतः।
निरुत्थो जायते लौहो यथोक्तफलदो भवेत् ॥२६९॥

भानुपाक, स्थालीपाक एवं पुटपाकसे लौहकी निरुत्थ भस्म तैयार हो जाती है ॥२६९॥

भानुपाकविधि

लौहे दृषदि लौहञ्च मुद्गरेण हतं मुहुः।
कृत्वाम्बुगलितं शुद्धं जलेन त्रैफलेन वा ॥३००॥
क्षालयेद्बहुशः पश्चात्कृत्वा द्रव्यान्तरं पृथक्।
शोषितं भानुभिर्भानोर्भानुपाके प्रयोजयेत् ॥३०१॥

क्षालने भानुपाके तु लौहतुल्यं फलत्रिकम् ।
जलं द्विगुणितं दत्त्वा चतुर्भागावशेषितम् ॥३०२॥
एवमुक्तं फलक्वाथजलं दत्त्वा पुनः पुनः ।
शोषयेत्सूर्यतेजोभिर्निरन्तरमहस्त्रयम् ॥३०३॥
अथवा तत्र तत्क्वाथं दत्त्वा दत्त्वा भिषग्वरः ।
सप्तसप्तविधैरेव सप्तवारान्विशोधयेत् ॥३०४॥

पूर्वोक्त रीतिसे संशोधित लौहचूर्णको लेकर लोहेके खरलमें लोहेके ही मूसलसे भलीभाँति कूटकर स्वच्छ जल अथवा त्रिफलाके क्वाथमें कई बार धोवे। उसमें कोयला आदि यदि कोई चीज पड़ी हुई हो तो निकालकर फेंक दे। फिर इसे सूर्यकी किरणों-से सुखा ले। यही भानुपाक क्रिया है ॥३००॥३०१॥ उपर्युक्त विधिसे लौहके धोने और भानुपाक करनेपर जितना लौह बचे, उतना ही त्रिफला ले। यह हुआ त्रिफलाक्वाथ। इसी क्वाथको लौहमें डालकर निरन्तर तीन दिनों तक धूपमें सुखावे अथवा इस काढ़ेको लौहमें डाल-डालकर सात बार सूर्यकिरणोंमें सुखावे। यही भानुपाकविधि है ॥३०२-३०४॥

स्थालीपाकविधि

इत्थमादित्यपाकान्ते स्थाल्यां पाकमुपाचरेत् ।
स्थालीपाके फलं ग्राह्यमयसस्त्रिगुणीकृतम् ॥३०५॥
तस्य षोडशिकं तोयमष्टभागावशेषितम् ।
मृदुमध्यकठोराणामन्येषामयसा समम् ॥३०६॥
क्वथनीयं समादाय चतुरष्टौ च षोडश ।
गुणानां स्थाप्यते तोयं शेषयेदयसा समम् ॥३०७॥
स्वरसस्यापि लौहेन स्थालीपाके समानता ।
स्थाल्यां क्वाथादिकं दत्त्वा यथाविधि विनिर्मितम् ।
पाकेन क्षीयते यस्मात्स्थालीपाक इति स्मृतः ॥३०८॥
हस्तिकर्णपलाशस्य मूलञ्च शतमूलिका ।
भृङ्गराजाख्यराजानामेषां निजरसैः सह ॥३०९॥
मिलित्वा वा विधातव्यं स्थालीपाके फलादनु ।
यथादोषौषधेनापि स्थालीपाको विधीयते ॥३१०॥

इस प्रकार भानुपाक करनेके बाद स्थालीपाक करे। इसमें लौहका तिगुना त्रिफला और सोलहगुना पानी डालकर पकावे। जब आधा जल अवशिष्ट रह जाय तब उतार ले। आगे बतायी जानेवाली जो मृदु, मध्यम एवं कठोर औषधियें हों, उनको लौहका समान भाग लेकर क्रमशः मृदु औषधिमें औषधिसे चौगुना, मध्यममें अठगुना और कठोर औषधिमें सोलहगुना जल डालकर पकावे। पानी जलकर जब लौहके बराबर रह जाय, तब उतार ले। लौहका समान भाग स्वरस एवं क्वाथ भी लिया जाता है तथा लोहेकी हाँड़ीमें ही इसका पाक होता है। इसीलिए इसकी स्थालीपाक संज्ञा है। इस पाकमें सर्वप्रथम त्रिफलाके क्वाथसे लौहको पकावे। तदनन्तर हस्तिकर्ण पलाशकी जड़के रस, फिर शतावरीके रस और तब भाँगरेके रसमें पकावे। त्रिफलाक्वाथमें पकानेके बाद उपर्युक्त रसोंमेंसे चाहे तो एक-एक रसमें पकावे या कि सब रसोंको लौहका समान भाग लेकर एक साथ पका ले। ऐसे ही लौहके जिस-जिस दोषको दूर करनेके लिए जिस औषधिके रसमें पाक करनेका विधान हो, उनसे भी स्थालीपाक किया जाता है ॥३०५-३१०॥

पुटपाकविधि

स्थालीपाके सुसम्पक्वं प्रक्षाल्य स्वच्छवारिणा।
शुष्कं सञ्चूर्ण्य यत्नेन पुटपाके प्रयोजयेत् ॥३११॥
पुटाद्दोषविनाशः स्यात्पुटादेव गुणोदयः।
म्रियते च पुटाल्लौहस्तस्मात्पुटं समाचरेत् ॥३१२॥
यथा यथा प्रदीयन्ते पुटाः सुबहुशो यदि।
तथा तथा प्रकुर्वन्ति गुणानेव सहस्रशः ॥३१३॥
पुटपाकेन पक्वन्तु शस्यते रसकर्म्मसु।
दशादिशतपर्य्यन्तो गदे पुटविधिर्मतः ॥३१४॥
शतादिस्तु सहस्रान्तः पुटो देयो रसायने।
वाजिकर्मणि विज्ञेयो दशादिशतपञ्चकः ॥३१५॥
तावदेव पुटेल्लोहं यावच्चूर्णीकृतं जले।
निस्तरङ्गे लघुत्वेन समुत्तरति हंसवत् ॥३१६॥
पुटपाकौषधस्यापि क्वाथो वा स्वरसोऽपि वा।
वक्ष्यमाणप्रमाणेन कर्त्तव्यो भिषजां वरैः ॥३१७॥

रसाभावे तु सर्वेषां क्वाथो ग्राह्यो मनीषिभिः।
अभावे स्वरसस्यापि क्वाथ एव फलत्रिकात् ॥३१८॥

लौह जब स्थालीपाकमें पक जाय, तब उसे साफ पानीसे भली भाँति धोकर सुखा ले। फिर उसे अच्छी तरह कूटकर पुट दे। पुट देनेसे ही लौहके दोष नष्ट होते, पुट पाकर ही लौहके गुणोंका उदय होता और लौह पुटसे ही मरता है। इसलिए इसे पुट देना आवश्यक कार्य है। लौहपर जैसे-जैसे अनेकानेक पुट दिये जाते हैं, वैसे ही वैसे उसमें गुण आते हैं और अन्तमें उसमें हजारों गुणोंका समावेश हो जाता है। पुटपाकमें पका हुआ लौह ही रसकर्मके लिए उपयोगी होता है। रोगनिवृत्तिके लिए तैयार किये जानेवाले लौहमें दससे लेकर सौ पुटतक दिये जाते हैं। रसायनके लिए तैयार किये जानेवाले लौहमें सौसे लेकर हजार पुटतक और वाजीकर्मके लिए उपयुक्त लौहमें दससे लेकर एक सौ पांच पुटतक दिये जाते हैं। लौहमें तबतक पुट देते रहना चाहिये, जबतक उसका चूर्ण स्थिर जलमें डाल देनेपर लघुताके कारण हंसकी तरह न तैरने लगे। माननीय वैद्य आगे कहे जानेवाले परिमाणमें पुटपाककी औषधियोंके क्वाथ अथवा स्वरस लें। उनका यह भी कर्तव्य है कि जिस किसी औषधिका स्वरस अप्राप्य हो, उसके क्वाथसे ही काम चलायें। जहाँतक हो त्रिफलाका भी स्वरस ही लें। इसके अभावमें काढ़ा बनाकर उपयोगमें लावें ॥ ३११–३१८ ॥

त्रिफलादिगण

त्रिफला त्रिवृता दन्ती कटुकी तालमूलिका।
वृद्धदारश्च वृश्चीरवृषपत्रकचित्रकाः ॥३१९॥

शृङ्गवेरविडङ्गौ च भृङ्गभल्लातकौषधम्।
दाडिमस्य च पत्राणि शतपत्री पुनर्नवा ॥३२०॥

कुठारच्छामकौ कन्दः तन्त्री भेकस्य पर्णिका।
हस्तिकर्णपलाशश्च कुलिशः केशराजकः ॥३२१॥

माणः खण्डितकर्णश्च गोजिह्वा लोहमारकः।
गिरिशान्तनकः प्रोक्तस्त्रिफलादिरयं गणः।
सामान्यपुटपाकार्थमेतानिच्छन्ति सूरयः ॥३२२॥

त्रिफला (हर्रा, बहेरा और आँवला) त्रिवृता, दन्तीमूल, कटुकी, तालमूली (मूसली), विधारा, श्वेत पुनर्नवा, बाँसकी पत्ती, चीता, अदरख, वायविडंग, भाँगरा, भेलावाँ, सोंठ, अनारके पत्ते, शतावर, लाल पुनर्नवा, कुठार, सुपारीकी जड़, सूरनकन्द, गुरुच, मण्डूकपर्णी, हस्तिकर्ण पलाश, कुलिश (हड़जोड़ी), केशराज, मानकन्द, शकरकन्द, गोजिह्वा और शालिश्च शाक, ये सब त्रिफलादिगणमें कथित हैं। ये सभी औषधियाँ लौहमारक हैं। सामान्य पुटपाकमें विद्वान् वैद्य इन्हींको उपयोगमें लाते हैं ॥ ३१६-३२२ ॥

एरण्डादिगण

विशेषपुटपाकाय गणानन्यान् शृणूदितान् ।
एरण्डः शारिवा द्राक्षा शिरीषश्च प्रसारिणी ॥३२३॥
माषमुद्गाख्यपर्ण्यौ विदारीकन्दकेतकी ।
एरण्डादिगणो ह्येष सर्ववातविकारनुत् ॥३२४॥

अब विशेष पुटपाकके लिए अन्य गण कहते हैं। उन्हें सुनो—एरण्ड, सरिवन, द्राक्षा, शिरीष, प्रसारिणी, माषपर्णी, मुद्गपर्णी, विदारीकन्द और केतकी, ये सब एरण्डादिगणमें कहे गये पदार्थ हैं। एरण्डादिगण वातजनित सब विकारोंका शमन करते हैं। इनमें पुट देनेपर लौह वातविकारनाशक हो जाता है ॥३२३॥३२४॥

किरातादिगण

किरातममृतानिम्बकुस्तुम्बुरुशातावरी ।
पटोलं चन्दनं पद्मं शाल्मल्युडुम्बरी जटा ।
पैत्तिकामयहन्ताऽयं किरातादिगणो मतः ॥३२५॥

किरात (चिरायता), गुरुच, नीम, धनियाँ, शतावर, परवलकी पत्ती, चन्दन, कमल, सेमरकी छाल, गूलर और जटामासी, ये किरातादिगणकी औषधियाँ हैं। इनसे पित्तरोगका शमन होता है ॥ ३२५ ॥

शृङ्गवेरादि गण

शृङ्गवेरस्य मूलानि निर्गुण्डी कौटजं फलम् ।
करञ्जद्वितयं मूर्वा शोभाञ्जनशिरीषकौ ॥३२६॥
वरुणश्चार्कपर्णश्च पटोलं कण्टकारिका ।
शृङ्गवेरादिको ह्येष गणः श्लेष्मगदापहः ॥३२७॥

शृङ्गवेर (अदरख), निर्गुण्डी, कुटजफल, दोनों प्रकारके कंजे, मूर्वा, सहिंजन, शिरीष, वरुण, मदारके पत्ते, परवलके पत्ते और कण्टकारी। ये शृङ्गवेरादिगणमें कहे गये पदार्थ श्लेष्माजनित रोगोंके विनाशक हैं ॥ ३२६ ॥ ३२७ ॥

गोक्षुरादिगण

गोक्षुरक्षुरकौ व्याघ्री सिंहपुच्छीद्वयं स्थिरा।
गोक्षुरादिरिति प्रोक्तो वातश्लेष्महरो गणः ॥३२८॥

गोखरू, तालमखाना, छोटी कटेरी, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, गुरुच, मुद्गपर्णी तथा माषपर्णी ये गोक्षुरादिगणमें कथित पदार्थ हैं। इनसे वायु तथा कफके सब विकार शान्त हो जाते हैं ॥ ३२८ ॥

पटोलादिगण

पटोलपत्रकोशीरं कासमर्दापराजिताः।
लोध्रेन्दीवरकह्लारवाराही कान्तया सह।
पटोलादिरिति ज्ञेयः पित्तश्लेष्मगदापहः ॥३२९॥

पटोलपत्र (परवलके पत्ते), उशीर (खस), कासमर्द (कसौंदी), अपराजिता, लोध, इन्दीवर (कृष्ण कमल) कह्लार (श्वेतकमल) वाराहीकन्द और प्रियंगु, ये पटोलादिगणके पदार्थ हैं। इनसे पित्तकफजनित विकारका शमन होता है ॥३२९॥

किंशुकादिगण

किंशुकः काश्मरी विश्वमग्निमन्थस्त्रिकण्टकः।
श्योनाकः शालपर्णी च सिंहपुच्छीद्वयं स्थिरा ॥३३०॥
पाटला कण्टकारी च बृहती बिल्व एव च।
किंशुकादिगणो ह्येष दोषत्रयहरो मतः ॥३३१॥
शतावरी बला धात्री गुडूचीवृद्धदारकैः।
वानरीभृङ्गराजाख्यविदारीगोक्षुरक्षुरैः।
वाजिगन्धाकणायुक्तैर्वाजीकर्मसु शस्यते ॥३३२॥

किंशुक (पलाशका फूल), गंभारी, सोंठ, अरणी, त्रिकण्टक (गोखरू) श्योनाक, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, माषपर्णी, मुद्गपर्णी, पाटला, कण्टकारी, बड़ी कटेरी

और बेल, ये किंशुकादिगणमें कह गये पदार्थ हैं। इनसे त्रिदोषजनित विकारका शमन होता है ॥ ३३०–३३२ ॥

शतावर्यादिगण

विदारीकन्दपिण्डालुभृङ्गराजशतावरी।
(क्षीरकञ्चुकभल्लातामृतकांश्चित्रकैस्तथा।
करिकर्णपलाशैश्च मुषलीमधुकैरपि ॥१॥)
मुण्डिरीकेशराजैश्च पुटो देयो रसायने ॥३३३॥
सामान्ये च विशेषे च पुटे यद्यत्प्रकीर्त्तितम्।
मिलितैरेकशो वा तैर्यथेष्टं पुटयेत्ततः।
पुटपाके फलादीनामयसा ग्रहणं समम् ॥३३४॥

शतावरी, बेला, आँवला, गुरुच, विधारा, कौंच, भाँगरा, विदारीकन्द, गोखरू, तालमखाना, अश्वगन्धा और पिप्पली, ये शतावर्यादिगणमें कथित पदार्थ हैं और वाजीकरणकर्ममें श्रेष्ठ माने जाते हैं। विदारीकन्द, पिण्डालु, भृङ्गराज (भाँगरा) शतावर, खिन्नी, भेलावाँ, गुरुच, चीता, हस्तिकर्ण, पलाश, मुसली, मुलेठी, मुण्डी और केशराज, रसायनके निमित्त तैयार किये जानेवाले लौहमें इन्हींका पुट देना चाहिये। सामान्य और विशेष पुटके लिए ऊपर जो औषधियाँ गिनायी गयी हैं, उनमेंसे एक-एक औषधिमें या सबको एकमें मिलाकर जितना पुट चाहे, उतना देवे। इस पुटपाकके कार्यमें लौहके बराबर ही त्रिफला आदिका क्वाथ अथवा स्वरस लेना चाहिए ॥ ३३३–३३४ ॥

पुटपाकप्रकरण

हस्तमात्रमिते गर्ते करीषेणार्द्धपूरिते।
अथवा तुषकाष्ठाभ्यां पूरितेऽर्द्धे निधापयेत्।
लौहमग्निं ततो दत्त्वा तथैवोर्ध्वं प्रपूरयेत् ॥३३५॥
दिवा वा यदि वा रात्रौ विधिनानेन पाचयेत्।
चतुर्भिः प्रहरैरेव पुटपाकेन मारयेत् ॥३३६॥
पुटपाके क्षणादूर्ध्वं स्थितो भवति भस्मसात्।
अधस्तादपकृष्टस्तु मन्दो भवति वीर्य्यतः ॥३३७॥

कुण्डस्थो भस्मनाच्छन्न आकृष्टव्यः सुशीतलः।
समाकृष्टस्य तप्तस्य गुणहानिः प्रजायते ॥३३८॥

जमीनमें हाथभर गहरा, हाथभर लम्बा और हाथ ही भर चौड़ा एक गड्ढा खोदे। आधी गहराई तक उपले, धानकी भूसी अथवा लकड़ियें भरे। बीचमें शराव-सम्पुट रखकर ऊपरसे फिर उपले भर दे। दिन या रात किसी भी समय इसी विधिसे पुट देकर पकावे। इस तरह चार पहरका पुट देकर मारण करना चाहिए। पुटपाक करते समय शराव-सम्पुट यदि गड़हेकी गहराईमें आधेसे ऊपर रहेगा तो उपले जल्द जल जायँगे और पचनीय पदार्थका भलीभाँति परिपाक नहीं हो सकेगा। यदि आधेसे नीचे रखा गया तो पचनीय पदार्थ हीनवीर्य हो जाता है। गड़हेमें पड़ा और राखसे ढका हुआ सम्पुट तभी बाहर निकाले, जब वह अच्छी तरह ठंढा हो जाय। क्योंकि गर्म रहनेकी दशामें निकालनेसे लौहका बहुत-सा गुण नष्ट हो जाता है ॥ ३३५–३३८ ॥

लौहमारणकी दूसरी विधि

शुद्धस्य सूतराजस्य भागो भागद्वयं बलेः।
द्वयोः समं लौहचूर्णं मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ॥३३९॥
यामद्वयं ततो गोलं स्थापयेत्ताम्रभाजने।
आच्छाद्यैरण्डजैः पत्रैरुष्णो यामद्वयाद्भवेत् ॥३४०॥
त्रिरात्रं धान्यराशिस्थं तत्ततो मर्दयेद् दृढम्।
रजस्तद्वस्त्रगलितं नीरे तरति हंसवत् ॥
तीक्ष्णं मुण्डं कान्तलौहं निरुत्थं जायते मृतम् ॥३४१॥

शुद्ध पारा एक भाग, शुद्ध गंधक दो भाग और शुद्ध लौहचूर्ण तीन भाग लेकर सबको एक साथ घीगुवारके रसमें घोंटे। अब उसे इस तरह दोपहरतक मर्दन करके गोला बना ले और गोलेको एक ताम्रपात्रमें रखे। रेंड़के पत्तोंसे भली भाँति ढाँक दे। दो पहर इस तरह रखा रहनेपर यह अपने आप गरम हो जायगा। तदनन्तर इस गोलेको धानके ढेरमें रखकर तीन अहोरात्र (रात-दिन) उसीमें पड़ा रहने दे। इसके बाद उसे निकाले और कूटकर कपड़ेसे छान ले। कपड़ेसे छनकर नीचे आयी हुई लौहभस्म जलपर हंसकी तरह तैरती दीखेगी। इस

विधिसे तीक्ष्णलौह, मुण्डलौह और कान्तलौहकी निरुत्थ (कभी भी सजीव न होनेवाली) भस्म तैयार हो जाती है ॥ ३३६–३४१ ॥

अथवा

क्षिपेद्वा द्वादशांशेन दरदं तीक्ष्णचूर्णतः।
कन्यानीरेण सम्मर्द्य यामयुग्मञ्च सम्पुटेत्।
एवं सप्तपुटे मृत्युं लौहचूर्णमवाप्नुयात् ॥३४२॥

शुद्ध लौहचूर्ण बारह भाग और शुद्ध हिंगुल (सिंगरिफ) एक भाग, इन दोनोंको घीकुआरके रसमें दोपहर तक घोंटकर गजपुटकी विधिसे फूँक दे। इस तरह सात बार सिंगरिफमें घोंट-घोंटकर फूँकनेसे लौह भस्म हो जाता है ॥ ३४२ ॥

लौहनिरुत्थीकरणविधि

सर्वमेतन्मृतं लौहं पक्तव्यं मित्रपञ्चकैः।
यद्येवं स्यान्निरुत्थञ्च सेव्यं रक्तिचतुष्टयम् ॥३४३॥

उपर्युक्त लौहभस्म लेकर मित्रपंचकमें पकावे। ऐसा करनेपर जब लौह एकदम निर्जीव हो जाय, तब उसे निरुत्थ लौहभस्म समझे। इस भस्मकी मात्रा १ रत्ती होती है ॥ ३४३ ॥

मित्रपञ्चक

मधुसर्पिस्तथा गुञ्जा टङ्कणं गुग्गुलुस्तथा।
मित्रपञ्चकमेतत्तु गणितं धातुमेलने ॥३४४॥

मधु, घी, गुञ्जा (रत्ती), सोहागा और गूगुल, ये धातुओंके मिलानेवाले मित्रपञ्चक माने जाते हैं ॥ ३४४ ॥

लौहनिरुत्थीकरणकी दूसरी विधि

गोघृतं गन्धकं लौहं तप्तखल्ले विमर्दयेत्।
दिनैकं कन्यकाद्रावै रुद्ध्वा गजपुटे पचेत्।
इत्येवं सर्वलौहानां कर्त्तव्यं स्यान्निरुत्थितम् ॥३४५॥

गायका घी, शुद्ध गंधक और लौहभस्म, इन तीनोंको तप्त खरलमें डालकर खूब घोंटे। उसके बाद दिनभर घीकुआरके रसमें घोंट और संपुटित करके गजपुटमें फूँकनेसे सब लोहोंकी भस्म निरुत्थित हो जाती है ॥ ३४५ ॥

रसायनार्थ प्रस्तुत लौहभस्मकी परीक्षा

मर्दयेच्च लौहभस्म गुञ्जामध्वाज्यटङ्कणैः।
धमेद्वह्नौ पुनर्लौहं तदा योज्यं रसायने ॥३४६॥

रत्ती, मधु, घी तथा सोहागा मिलाकर लौहभस्मको आगपर तपावे। इस तरह तपानेपर भी भस्म यदि लोहा न बने, तभी उसे रसायनके काममें लावे ॥ ३४६ ॥

लौहभस्मके गुण

कृष्णायः शोथशूलार्शःक्रिमिपाण्डुत्वशोषनुत्।
वयस्यं गुरु चक्षुष्यं सर्वमेदोऽनिलापहम् ॥३४७॥
आयुःप्रदाता बलवीर्य्यकर्त्ता रोगापहर्त्ता मदनस्य कर्त्ता।
अयःसमानं नहि किञ्चिदस्ति रसायनं श्रेष्ठतमं नराणाम् ॥३४८॥

लौहभस्म शोथ, शूल, अर्श, कृमि, पाण्डु तथा शोषरोगका शमन करती है। यह आयुवर्द्धक, भारी, नेत्रोंके लिए लाभदायक है और सब प्रकारके मेद-जनित एवं वातजनित रोगोंको नष्ट करती है। यह आयु, बल एवं वीर्यवर्धक, रोगनाशक तथा कामोद्दीपक भी है। मनुष्यमात्रके लिए लौहभस्मसे उत्तम और कोई रसायन नहीं है ॥ ३४७ ॥ ३४८ ॥

लौहसेवीके लिए परहेज

कूष्माण्डं तिलतैलञ्च रसोनं राजिकां तथा।
मद्यमम्लरसञ्चैव त्यजेल्लौहस्य सेवकः ॥३४९॥

कोंहड़ा, तिलका तेल, लहसुन, राई, मदिरा और खटाई इनको लौहसेवी पुरुष त्याग दे ॥ ३४९ ॥

विभिन्न लौहोंके गुणोंका तारतम्य

सामान्याद्द्विगुणं क्रौञ्चं कालिङ्गोऽष्टगुणस्ततः।
कलेः शतगुणं भद्रं भद्राद्वज्रं सहस्रधा ॥३५०॥
वज्राच्छतगुणं पाण्डिर्निरङ्गं दशभिर्गुणैः।
ततः कोटिसहस्रैर्वा कान्तलौहं महागुणम् ॥३५१॥

साधारण लौहसे दुगुनी क्रौञ्च लौह, क्रौञ्चसे अठगुना कालिंग, कालिंग-से सौगुना भद्र, भद्रलौहसे हजारगुना वज्र, वज्रलौहसे सौगुना पाण्डि, पाण्डि-

लौहसे दसगुना निरङ्ग लोह, निरङ्गसे भी हजारों क्या करोड़ोंगुना अधिक गुणदायक कान्तलौह होता है ॥ ३५० ॥ ३५१ ॥

मण्डूरशोधनविधि

ये गुणा मारिते मुण्डे ते गुणा मुण्डकिट्टके।
तस्मात्सर्वत्र मण्डूरं रोगशान्त्यै प्रयोजयेत् ॥३५२॥

मारित मुण्डलौहमें जितने गुण होते हैं, उतने ही गुण मुण्डलौहकी कीट (मण्डूर) में रहते हैं। अतएव रोगशान्तिके निमित्त सर्वत्र मण्डूरका ही उपयोग करे ॥ ३५२ ॥

शतोर्ध्वमुत्तमं किट्टं मध्यञ्चाशीतिवार्षिकम्।
अधमं षष्टिवर्षीयं ततो हीनं विषोपमम् ॥३५३॥

सौ वर्षसे पुरानी कीट उत्तम, अस्सी वर्षकी मध्यम, साठ वर्षकी अधम और उससे भी कम पुरानी कीट विषसदृश होती है ॥ ३५३ ॥

दग्ध्वाक्षकाष्ठैर्मलमायसन्तु गोमूत्रनिर्वापितमष्टवारान्।
विचूर्ण्य लीढं मधुनाचिरेण कुम्भाह्वयं पाण्डुगदं निहन्ति ॥३५४॥

इस लौहकीटको बहेड़ेके काठकी आगपर तपा-तपाकर आठ बार गोमूत्रमें बुझावे। फिर उसे घोंटकर यदि मधुके साथ चाटे तो कुम्भकामला तथा पाण्डुरोग शीघ्र नष्ट हो जाते हैं ॥ ३५४ ॥

किट्टाद्दशगुणं मुण्डं मुण्डात्तीक्ष्णं शताधिकम्।
तीक्ष्णाल्लक्षगुणं कान्तं भक्षणात्कुरुते गुणम् ॥३५५॥

लौहभस्मके सेवनमें लौहकीटकी अपेक्षा दसगुना अधिक गुणवान् मुण्डलौह-भस्म, इससे सौगुना तीक्ष्णलौह (फौलाद) भस्म और तीक्ष्णलौहभस्मसे भी लाखगुना अधिक गुणवान् कान्तलौहकी भस्म होती है ॥ ३५५ ॥

सर्वधातुमारणविधि

नागैः सुवर्णं रजतञ्च ताप्यैर्गन्धेन ताम्रं शिलया च नागम्।
तालेन वङ्गं विविधञ्च लौहं नारीपयो हन्ति च हिङ्गुलेन ॥३५६॥

सीसेसे सुवर्ण, स्वर्णमाक्षिकसे रजत (चाँदी), गन्धकसे ताम्र, मैनसिलसे नाग (सीसा), हड़तालसे वंग (राँगा) और सिंगरिफ तथा स्त्रीके दूधसे उपर्युक्त तीनों प्रकारके लौहोंका मारण किया जाता है ॥ ३५६ ॥

५

मणिमुक्तादिशोधनविधि

स्वेदयेद्दोलिकायन्त्रे जयन्त्याः स्वरसेन च ।
मणिमुक्ताप्रवालानि यामैकेन च शोधयेत् ॥३५७॥
मुक्ताफलानि शुद्धानि खल्ले पिष्ट्वा पुटेल्लघु ।
एवं भस्मत्वमाप्नोति वज्रकं काञ्जियोगतः ॥ ३५८ ॥

मणि, मोती और मूँगा आदि जयन्तीके स्वरसमें दोलायन्त्रकी विधिसे एक पहरतक स्वेदन करे । सब रत्नोंकी यही शोधनविधि है । उपर्युक्त विधिसे शोधित मोतीको खरलमें घोंटकर लघुपुटमें फूँक दे तो मोती भस्म हो जाता है । हीरा कांजीमें घोंटकर पुट द्वारा फूँकनेसे भस्म होता है ॥ ३५७ ॥ ३५८ ॥

कुमार्य्या तण्डुलीयेन तुल्येन च निषेचयेत् ।
प्रत्येकं सप्तवारांश्च तप्ततप्तानि कृत्स्नशः ॥३५९॥
मौक्तिकानि प्रवालानि तथा रत्नान्यशेषतः ।
क्षणाद्विविधवर्णानि म्रियन्ते नात्र संशयः ॥३६०॥

उपर्युक्त मणि, मुक्ता और प्रवालको सात बार आगमें तपा-तपाकर घीगुवार तथा चौराईके समभाग रसमें बुझावे । ऐसा करनेसे मणि-मुक्ता-प्रवाल आदि विविध वर्णके रत्न क्षणभरमें शुद्ध होकर मर जाते हैं ॥ ३५९ ॥ ३६० ॥

प्रवाल मारणशोधनविधि

स्त्रीदुग्धेन प्रवालञ्च भावयित्वा तु हण्डिके ।
मध्येऽपि तक्रसहितं स्थापयेत्तां निरोधयेत् ।
चुल्ल्यामग्निप्रतापेन म्रियते प्रहरद्वये ॥३६१॥

एक हाँड़ीमें स्त्रीका दूध भर तथा प्रवाल डालकर भावना दे । तब उसे निकालकर एक दूसरी हाँड़ीमें रखे और उसमें मट्ठा भरके आगपर चढ़ाकर पकावे । इस तरह दो पहर आँच देनेसे प्रवाल (मूँगा) भस्म हो जाता है ॥ ३६१ ॥

कुलत्थस्य पलशतं वारिद्रोणेन पाचयेत् ।
तस्मिन्पादावशेषे च क्वाथेऽष्टौ मणयः शिलाः ॥३६२॥
आतपे त्रिदिनं शोध्याः क्वाथसिक्ताः पुनः पुनः ।
शुद्ध्यन्ते सर्वरत्नानि मणयश्च न संशयः ॥३६३॥

कुलथी सौ पल (आठ तोला) लेकर एक द्रोण (३२ सेर) जलमें डालकर पकावे। जब एक चौथाई जल अवशिष्ट रहे तब उतार ले। इसी कुलत्थक्काथमें उपर्युक्त आठों मणि डालकर तीन दिन धूपमें रखे और उसपर प्रतिदिन थोड़ी-थोड़ी देरमें इसी क्वाथका छींटा देता रहे। ऐसा करनेसे निःसदेह सभी रत्न शुद्ध हो जाते हैं॥

विषशोधनविधि

कृत्वा चणकसंस्थानं गोमूत्रैर्भावयेत्त्र्यहम्।
समटङ्कणसम्पिष्टं मृतमित्युच्यते विषम्॥३६४॥
अथवा त्रैफले क्वाथे विषं शुध्यति पाचितम्।
दोलायां त्रिफलाक्वाथे छागीक्षीरे च पाचितम्॥३६५॥
गोमूत्रपूर्णपात्रे च दोलायन्त्रे विषं पचेत्।
दशतोलकमानेन चादौ वैद्यो दिवानिशम्॥३६६॥

जिस किसी विषका शोधन करना हो तो उसे काट या कूटकर चनेके बराबर टुकड़े कर ले और गोमूत्रमें डालकर तीन दिनकी भावना दे। तब उसे निकाल-कर समान भाग सुहागा डाले और खरल कर ले तो विष शुद्ध हो जाता है। अथवा पहले विषको त्रिफलाके काढ़ेमें दोलायंत्र द्वारा पकावे, फिर बकरीके दूधमें पकावे तो विष शुद्ध हो जाता है। अथवा एक पात्रमें गोमूत्र भरकर उसमें दस तोला विष डाल दे और दोलायन्त्रकी विधिसे पकावे तो विषकी शुद्धि हो जाती है॥

विषभागांश्चणकवत्स्थूलान्कृत्वा तु भाजने।
तत्र गोमूत्रकं दत्त्वा प्रत्यहं नित्यनूतनम्॥३६७॥
शोषयेत्त्रिदिनादूर्ध्वं धृत्वा तीव्रातपे ततः।
प्रयोगेषु प्रयुञ्जीत भागमानेन तद्विषम्॥३६८॥

विषको काट या कूटकर चनेके बराबर टुकड़े करके गोमूत्रमें डाल दे। तब प्रति-दिन गोमूत्र बदलता हुआ तीन दिन वैसे ही पड़ा रहने दे। फिर उसे उठाकर तीन दिन तीव्र धूपमें रखकर विषको सुखा ले। इस विधिसे संशोधित विषका उचित मात्रामें उपयोग करना चाहिए। (विष आठ प्रकारके होते हैं—दार्विक, सैकत, वत्सनाभ, सक्तुक्त, मुस्तक, सार्षप, कौर्म और शृङ्गी।) ॥ ३६७ ॥ ३६८ ॥

उपविष

अर्कसेहुण्डधुस्तूरलाङ्गलीकरवीरकाः ।
गुञ्जाऽहिफेनावित्येताः सप्तोपविषजातयः ॥३६९॥

अर्क (मदार), सेंहुड़, धतूरा, लांगली (करियारी), करवीर (कनेर), रत्ती और अफीम, ये और इनकी विभिन्न जातियाँ उपविष कहलाती हैं ॥ ३६९ ॥

उपविषशोधनविधि

धुस्तूरस्य च यद्वीजमन्यच्चोपविषं च यत् ।
तच्छोद्धव्यं दोलिकायन्त्रे क्षीरपूर्णेऽथ पात्रके ॥३७०॥

धतूरेके बीज तथा अन्य उपविषोंको एक दुग्धभर पात्रमें दोलायंत्र द्वारा पकाया जाय तो वे शुद्ध हो जाते हैं ॥ ३७० ॥

जैपाल (जमालगोटे) की शोधनविधि

निस्तुषं जयपालञ्च द्विधा कृत्वा विचक्षणः ।
एतद्वीजस्य मध्यन्तु पत्रवत्परिवर्जयेत् ॥३७१॥
अष्टमांशेन चूर्णेन टङ्कणस्य च मेलयेत् ।
केशयन्त्रे च तद्भाव्यं पाच्यं दुग्धेन सम्प्लुतम् ।
त्रिरात्रं शुद्धिमायाति जैपालममृतोपमम् ॥३७२॥

पहले जमालगोटेके बीजोंको लेकर उनका छिलका उतार दे। तब उनके दो-दो फाल करके भीतरकी पत्ती निकाल डाले। फिर जितने बीज हों, उनका अष्टमांश सोहागा डालकर दुग्धभर पात्रमें केशयंत्रकी विधिसे पकावे। तीन रात्रितक इस प्रकार पाचन करनेसे जमालगोटा शुद्ध होकर अमृतके तुल्य गुणयुक्त हो जाता है ॥

स्नुही (सेंहुड़) के दूधकी शुद्धि

चिञ्चापत्ररसे कर्षे वस्त्रपूते पलद्वयम् ।
स्नुहीक्षीरं रौद्रयन्त्रे भावयेद्यत्नतः सुधीः ।
द्रवे शुष्के समुत्तार्य सर्वयोगेषु योजयेत् ॥३७३॥

दो पल (सोलह तोला) सेंहुड़का दूध लेकर उसमें वस्त्रसे छना हुआ इमलीकी पत्तीका रस एक कर्ष (२ तोला) डाल दे। तब इसे धूपमें रखकर यत्नपूर्वक

सुखावे । जब वह सूखकर कड़ा हो जाय, तब घोंटकर रख ले और सब योगोंमें इसका उपयोग करे ॥ ३७३ ॥

जलौका (जोंक) की शोधनविधि

चिरन्तनीं जलौकान्तु ताम्रपात्रेषु रक्षयेत् ।
चतुर्माषं निशाचूर्णं जलाष्टकपले क्षिपेत् ॥३७४॥
तस्मिन्क्षिपेत् जलौकां तां स्वयं लालां परित्यजेत् ।
त्यक्तलाला जलौका च सा योज्या रक्तमोक्षणे ॥३७५॥
रोमपृष्ठा च कपिला रक्तरेखा च दुर्बला ।
वर्जनीया विशेषेणं भिषजा कीर्त्तिमिच्छता ॥३७६॥

एक ताम्रपात्रमें चार मासा हल्दीका चूर्ण और आठ पल जल डाले । फिर उसमें खूब पुरानी जोंक डाल दे । जब कि जोंक अपने मनसे अपनी लार छोड़ दे, तब समझ ले कि वह शुद्ध हो गयी । शरीरके व्रण आदि किसी स्थानसे यदि रुधिर निकलवाना हो तो यही जोंक लगवानी चाहिए । जिस जोंककी पीठपर लाल धारियें निकली हों और दुर्बल हो, वैद्य ऐसी जोंकको कभी भी उपयोगमें न लावे ॥

विधाराके बीजका शोधन

बीजसादौ समादाय रौद्रयन्त्रे विशोषयेत् ।
ईषत्सैन्धवयुक्तेन द्रवेण यत्नतः सुधीः ।
अपामार्गस्य वा तोयैर्वार्द्धक्यबीजशोधनम् ॥३७७॥

विधाराके बीज लेकर धूपमें भलीभाँति सुखावे । फिर एक पात्रमें थोड़ा सेंधा-नमक तथा जल या कि अपमार्गका रस डाले । तब विधाराके बीज उसीमें डालकर धूपमें सुखानेसे इनकी शुद्धि हो जाती है ॥३७७॥

वृद्धादारकबीजन्तु पलं दोलाकृतं पचेत् ।
दुग्धपूर्णेषु पात्रेषु ततः शुद्ध्यति निश्चितम् ॥३७८॥

विधारेके पके बीज लेकर दूधभरे पात्रमें दोलायंत्र द्वारा पकावे तो अवश्य शुद्ध हो जाते हैं ॥३७८॥

विविध बीजोंकी शोधनविधि

अपामार्गकषायेण निम्बुबीजं विशोधयेत् ।
मूलकाथैः कुमार्य्याश्च जैपालबीजशोधनम् ॥३७९॥

इन्द्रवारुणिकक्काथै राजवृक्षस्य वीजकम् ।
समूलोत्तरवारुण्या धुस्तूरबीजशोधनम् ॥३८०॥

अपामार्गके क्राथसे नीबूके बीज, घीगुवारकी जड़के काथसे जमालगोटेके बीज, इन्द्रायणके क्राथसे अमलतासके बीज और इन्द्रायणकी ही जड़के काढ़ेसे धतूरेके बीज शुद्ध हो जाते हैं ॥३७९॥३८०॥

शिग्रुकार्पासबीजानि अपामार्गस्य बीजकम् ।
घर्मेण शोधनं तेषां न दद्यात्सैन्धवं ततः ॥३८१॥

सहिंजन, कपास और अपामार्गके बीज धूपमें सुखा देने से ही शुद्ध हो जाते हैं । इनमें सेंधानमक नहीं पड़ता ॥३८१॥

तिक्ता कोपातकी दन्ती पटोली चेन्द्रवारुणी ।
कटुतुम्बी देवदाली काकतुण्डी च शुद्धयति ॥३८२॥
धात्रीफलरसेनैव महाकालस्य शोधनम् ॥३८३॥

कड़ुई तरोई, दन्ती, परवल, इन्द्रायण, कटुतुम्बी, देवदाली, काकतुण्डी (कौआठोंठी) और लाल इन्द्रायणके बीज आँवलेके रससे भावित करनेपर शुद्ध हो जाते हैं ॥३८२॥३८३॥

करञ्जयुग्मयोर्बीजं भृङ्गराजेन शोधयेत् ।
गुञ्जादिसर्वबीजानां नरमूत्रैः पटुं विना ॥३८४॥
नारिकेलाम्बुना शोध्यं फलं भल्लातकोद्भवम् ॥३८५॥

दोनों प्रकारके कंजेके बीज भाँगरेके रसमें शुद्ध करे । रत्ती आदि बीजोंको मनुष्यके मूत्रमें शोधे । इसमें नमक न मिलावे । भेलावाके फलको नारियलके जलसे शोधे ॥३८४॥३८५॥

गुडूचीत्रिफलाकाथे क्षीरे चैव विशेषतः ।
पक्त्वा च खण्डशः शुद्धं गृह्णीयान्मृदु गुग्गुलम् ॥३८६॥

इति श्री गोपालभट्टविरचिते रसेन्द्रसारसंग्रहे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

गूगुल शोधना हो तो उसके छोटे-छोटे टुकड़े करके गुरुच तथा त्रिफलाके क्राथ अथवा दूधमें पका-पकाकर शुद्ध करे ॥३८६॥

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे 'रसायनी' भाषाटीकायां प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अथ द्वितीयोऽध्यायः ।

विरेकाधिकारः

क्षीराब्धेरुत्थितं देवं पीतवस्त्रं चतुर्भुजम् ।
वन्दे धन्वन्तरिं भक्त्या नानागदनिषूदनम् ॥ १ ॥

क्षीरसागरसे जायमान, चतुर्भुजी, पीतवसनधारी और विविध रोगोंके नाशक श्रीधन्वन्तरिभगवानको मैं सभक्ति प्रणाम करता हूँ ॥ १ ॥

प्रायशो वपुषः शुद्धिं कृत्वा देयं तदौषधम् ।
अतः पूर्वं चिकित्सायां रेचकौषधमुच्यते ॥ २ ॥

प्रायः शरीरकी शुद्धि करके ही औषधि देनेका विधान है । इसलिए चिकित्सा-प्रकरण लिखते हुए सर्वप्रथम विरेचक (दस्तावर) औषधियें बतायी जा रही हैं ॥२॥

इच्छाभेदी रस

तुल्यं टङ्कणपारदं समरिचं तुल्यांशकं गन्धकं
विश्वा च द्विगुणा ततो नवगुणं जैपालचूर्णं क्षिपेत् ।
गुञ्जैकप्रमितो रसो हिमजलैः संसेवितो रेचयेत्
यावन्नोष्णजलं पिबेदपि वरं पथ्यञ्च दध्योदनम् ॥ ३ ॥

शुद्ध सोहागा, शुद्ध पारा, काली मिर्चका चूर्ण और शुद्ध गन्धक ये सब समान भाग, सोंठका चूर्ण दो भाग और शुद्ध जैपाल (जमालगोटे) के बीजका चूर्ण नौ भाग, इन सबका ले और एकमें घोंटकर एक-एक रत्तीकी गोली बना ले । यही इच्छाभेदी रस है । यदि इसकी एक गोली शीतल जलके साथ खायी जाय तो कुछ देर बाद दस्त आयेंगे । दस्त तब तक आते ही रहेंगे, जब तक रोगी ठंढा पानी पीता रहेगा । गरम जल पीनेसे तत्काल दस्त बन्द हो जायँगे । इच्छानुसार दस्त हो जानेके बाद दही-भातका पथ्य देना चाहिए ॥ ३ ॥

अथवा

जैपालाष्टौ द्विको गन्धस्त्रिशुण्ठी मरिचं द्विकम् ।
एकः सूतः टंगणैको गुञ्जामात्रा वटी कृता ॥ ४ ॥

शूलव्याधिप्रभृतयः कुष्टैकादश पित्तजाः ।
भगन्दरादिहृद्रोगाः सर्वे नश्यन्ति भक्षणात् ॥ ५ ॥

जयपाल (शुद्ध जमालगोटा) आठ भाग, शुद्ध गंधक दो भाग, सोंठका चूर्ण ३ भाग, काली मिर्चका चूर्ण २ भाग, शुद्ध पारा १ भाग और शुद्ध सोहागा १ भाग इन सब चीजोंको एकत्रित करके पहले पारा और गंधककी कज्जली करे। तदनन्तर उपर्युक्त सब वस्तुयें जलके साथ पीसकर एक-एक रत्तीकी गोलियें बना ले। इनका सेवन करनेसे भी दस्त आते और शूल आदि उदरविकार, ग्यारह प्रकारके कुष्ट, सभी पित्तज रोग, भगन्दर आदि रोग तथा हृद्रोग मिट जाते हैं ॥४॥५॥

गदमुरारि रस

रसवलिगगनार्कं शुद्धतालं विषञ्च त्रिकटुत्रिफलमेतट्टङ्कणं भृंगमेभिः ।
सममिह जयपालोद्भूतचूर्णं विमर्द्य द्विनिशमनिशमेतद्भृङ्गराजोत्थवारि ॥६॥
भवति गदमुरारिः स्वेच्छया भेदकोऽयं हरति सकलरोगान्सन्निपातानशेषान् ।
इह हि भवतिपथ्यंमत्स्यमांसादिसर्वंघृतविलुलितमस्मिन्भोजनंभूरि देयम् ॥७॥

संशोधित पारा, गंधक, अभ्रक, ताम्र, हड़ताल, शुद्ध वत्सनाभ विष, त्रिकटु (सोंठ, मिर्च तथा पीपरि) का चूर्ण, त्रिफला (आँवला, हर्रा, बहेरा) का चूर्ण, शुद्ध सोहागा और दालचीनीका चूर्ण, इन सबको समान भाग लेकर शुद्ध जमालगोटेका चूर्ण इनसे चौदहगुना अधिक ले। सर्वप्रथम पारा और गंधककी कज्जली करके उपर्युक्त सभी चीजें एकमें मिलाकर भँगरैयाके स्वरसमें निरन्तर दो दिन तक घोंटे। तब इसकी रत्ती-रत्ती भरकी गोलियाँ बनाकर रख ले। यही गदमुरारि रस है। इसका सेवन करके स्वेच्छानुसार दस्त लाये जा सकते हैं। इससे सभी रोग और सब प्रकारके सन्निपात शान्त हो जाते हैं। इसके द्वारा दस्त लानेके बाद मछली-मांस आदि सब प्रकारका पथ्य दिया जा सकता है, किन्तु इसमें घृतमिश्रित भोजन अधिक दिया जाय तो अच्छा है ॥ ६ ॥ ७ ॥

रुक्मिश रस

अभयाचूर्णमादाय नूतनैर्जयपालकैः ।
पञ्चमांशेन मिलितैः स्नुहीदुग्धेन मर्दिताः ॥ ८ ॥

गुटिकास्तस्य कर्तव्या वर्तुलाश्चणकप्रभाः ।
रुक्मिशो न च दाहः स्यान्नच मूर्च्छा भ्रमः क्लमः ।
वेगतः सारयेदेषा विशेषादामनाशिनी ॥ ९ ॥
निरूहेण तथा नैव तथा विन्दुघृतेन च ।
त्रिवृता न तथा रेच्या यथा स्याद्गुटिकोत्तमा ॥ १० ॥

हर्रेका चूर्ण ५ भाग और नये जमालगोटेका चूर्ण १ भाग, इन दोनोंको मिलाकर सेंहुड़के दूधमें खूब घोटे। एकदिल हो जानेपर चने जैसी वर्तुल (गावदुम) गोलियें बना ले। इसका सेवन करनेसे दाह, मूर्च्छा, भ्रम एवं क्लम दूर होता है। यह बड़े जोरोसे दस्त लाता और आंव नष्ट करता है। इससे जितना अच्छा विरेचन होता है, उतना निरूहण, बिन्दुघृत तथा त्रिवृताके प्रयोगसे भी नहीं होता ॥

अतिशुद्धं भवेद्देहमतिप्रबलमुत्तमम् ।
अतिरूपमतिप्रौढमत्यायुष्करमुत्तमम् ॥ ११ ॥

इसका सेवन करनेसे देह अति शुद्ध, अति प्रबल, अति उत्तम, अति सुन्दर, अति पुष्ट और अधिक आयुकी हो जाती है ॥ ११ ॥

विष्टम्भे गुटिका देया चोदरे दारुणामये ।
अधोदेशेषु सर्वेषु गुदेषु च महौषधिः ॥ १२॥
दीयते क्षीयते सामः कामकायविवर्द्धनः ॥ १३ ॥

विष्टम्भ (कब्ज), दारुण उदररोग एवं शरीरके अधोदेश और विशेष करके गुदारोगके लिये यह बहुत बड़ी औषधि है। इससे आमजनित सब रोग नष्ट हो जाते, कामका वेग बढ़ता तथा शरीर तगड़ा हो जाता है ॥१२॥१३॥

इच्छाभेदिनी गुटिका

पारदं गन्धकं कुर्यात्सौभाग्यं पिप्पलीसमम् ।
समानि जयपालानि क्रियन्ते रेचनाय च ॥ १४ ॥
शीतेन रेचयेत्सम्यगुष्णेनैव प्रशाम्यति ॥ १५ ॥

संशोधित पारा, गंधक, सोहागा और पिप्पलीका चूर्ण, इनका समभाग लेकर पहले पारा तथा गंधककी कज्जली कर ले। तब सबको एकमें घोंटे और फिर इन सबको मिलाकर जो परिणाम हो, उतना शुद्ध जयपाल (जमालगोटा) का चूर्ण मिलाकर खरल करे और सबके एकदिल हो जानेपर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें

बनाले। शीतल जलके साथ इसका सेवन करनेसे विरेचन भली भाँति होता और गरम जल पी लेनेसे दस्त बन्द हो जाता है ॥१४॥१५॥

इच्छाभेदी रस

शुण्ठीमरिचसंयुक्तं रसगन्धकटंगणम्।
जैपालास्त्रिगुणाः प्रोक्ता सर्वमेकत्र चूर्णयेत्॥ १६॥
इच्छाभेदी द्विगुञ्जः स्यात्सितया सह दापयेत्।
यावन्तश्चुल्लुकाः पीतास्तावद्वारान् विरेचयेत्॥ १७॥
तक्रौदनं खादितव्यमिच्छाभेदी यथेच्छया॥ १८॥

सोंठ तथा कालीमिर्चके चूर्ण, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक और शुद्ध सोहागा इनका समान भाग लेकर शुद्ध जमालगोटेका चूर्ण तिगुनी मात्रामें मिलावे। पहले पारे-गन्धककी कज्जली कर ले। फिर भलीभाँति घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। इसकी मात्रा दो रत्तीको होती है और मिश्रीके साथ दी जाती है। इसे खाकर रोगी जितने चुल्लू पानी पियेगा, उतने दस्त आयेंगे। पथ्यमें मट्ठा और भात देना चाहिए। इस रसका नाम 'इच्छाभेदी' इसी कारण है कि इसे सेवन करके जितने दस्त चाहें, उतने लाये जा सकते हैं ॥१६–१८॥

पुष्परेचनी गुटिका

देवदाली स्वर्णपुष्प गुडेन गुटिका कृता।
गुदमध्ये प्रदेयैषा पातयेच्च महागदम्॥ १९॥
अधश्च साममायाति पुनः सा दीयते गुदे।
प्रक्षाल्य वारिणा चैषा वारं वारं प्रयच्छति॥ २०॥
अनेन क्रमयोगेन मलमामविरेचनम्।
जायते सकलं देहं शुद्धवर्णं निरामयम्॥ २१॥

देवदाली (घघरबेल) और अमलतास दोनों समभाग लेकर इससे दुगुना गुड़ मिलावे और सबको एकमें कूटकर गोली बना ले। यदि यह गोली गुदामें रख ली जाय तो दस्त कराके रोगीके बड़े-बड़े रोगोंको मार भगाती है। कभी-कभी इसे गुदामें रख लेना चाहिए। ऐसा करनेसे पेटका मल तथा आँव बाहर निकल जाता है, जिससे देह शुद्ध वर्ण तथा नीरोग हो जाती है ॥१९–२१॥

सर्वाङ्गसुन्दर रस

शुद्धसूतञ्च गन्धञ्च विषञ्च जयपालकम् ।
कटुत्रयञ्च त्रिफला टंगणञ्च समांशकम् ॥ २२ ॥
अस्य मात्रा प्रयोक्तव्या गुञ्जात्रयसमा ततः ।
सर्वेषु ज्वररोगेषु सामवाते विशेषतः ॥ २३ ॥
नाशयेच्छ्वासकासञ्च अग्निमान्द्यं विशेषतः ।
ब्रह्मणा निर्मितः पूर्वं रसः सर्वाङ्गसुन्दरः ॥ २४ ॥

शुद्ध पारा, गन्धक, विष, जमालगोटा, सोंठ, काली मिर्च, पीपली, हर्रा, बहेड़ा और आँवलाका चूर्ण तथा सोहागा, इनको बराबर-बराबर ले। पहले गंधक-पारेकी कज्जली करे। फिर इन सब चीजोंको एकमें घोंटकर तीन-तीन रत्तीकी गोलियें बना ले। इसकी एक-एक गोली खानेसे सब ज्वर और विशेष करके आमवात नष्ट हो जाता है। यह श्वास-कास और विशेष करके अग्निमांद्यको दूर कर देती है। सर्वप्रथम ब्रह्माजीने इसे बनाया था। यह 'सर्वाङ्गसुन्दर रस' है ॥२२–२४॥

वर्जित रेचक

बालवृद्धकृशक्षीणपीनसार्तभयार्दितः ।
रूक्षशोषतृषायुक्ता गर्भिणी च नवज्वरी ॥ २५ ॥
अधो गच्छति यस्यासृक्सूतिकाऽऽतङ्कपीडिता ।
नैते विरेकयोग्याः स्युरन्येषाञ्च बलाबलम् ॥ २६ ॥
नवज्वरे च ये योगा भेदकाः परिकीर्त्तिताः ।
ते तथैव प्रयोक्तव्या वीक्ष्य देहबलादिकम् ॥ २७ ॥

बालक, वृद्ध, कृश, क्षीण, पीनसका रोगी, भयभीत, रूक्षप्रकृति, सुखंडी रोगका रोगी, प्यास, गर्भिणी स्त्री, नवज्वरी, जिसकी गुदा, योनि अथवा लिंगसे रुधिर जाता हो और जिस स्त्रीको प्रसूतज्वर हो, ये रोगी विरेचक औषधिके अधिकारी नहीं होते। नवज्वरमें जो दस्तावर योग कहे गये हैं, उन्हें भी रोगीका बलाबल देखकर ही उपयोगमें लाना चाहिए ॥ २५–२७ ॥

इति विरेकाधिकारः ।

अथ ज्वरचिकित्सा ।

नवज्वरांकुश

क्रमेण वृद्धान्सगन्धहिंगुलान्नैकुम्भवीजान्यथ दन्तिवारिणा ।
पिष्ट्वाऽस्य गुञ्जाऽभिनवज्वरापहा जलेन चार्द्रासितया प्रयोजिता ॥ १ ॥

पारा १ भाग, गंधक २ भाग, हिङ्गल (सिंगरिफ) ३ भाग और लघुदन्तीके बीज ४ भाग ले। पहले पारद और गंधककी कज्जली करके दन्तीके रसमें भलीभाँति घोंटकर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बना ले। अदरखके रस अथवा मिश्रीके साथ इसका सेवन करनेसे नवीन ज्वर छूट जाता है। (कुछ टीकाकारोंने 'नैकुम्भबीजानि' का अर्थ 'बड़ी दन्तीके बीज' लिखा है, वह अशास्त्रीय है। क्योंकि 'निकुम्भ' नाम लघुदन्तीका ही है। भावप्रकाशकारने लघुदन्तीके पर्यायमें—'···वाराहाङ्गी च कथिता निकुम्भश्च मुकूलकः।' ऐसा लिखा है) ॥ १ ॥

हिंगुलेश्वर रस

तुल्यांशं मर्दयेत्खल्ले पिप्पलीं हिंगुलं विषम् ।
द्विगुंजा मधुना देया वातज्वरनिवृत्तये ॥ २ ॥

पिप्पली, शुद्ध सिंगरिफ और शुद्ध विष इन तीनोंको समान भाग ले और जलमें भलीभाँति घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। वातजनित ज्वरको निवृत्त करनेके लिए मधुके साथ इसकी आधी या चौथाई गोली देनी चाहिए। (अवस्था और दोषके अनुसार इसकी मात्रा घट-बढ़ भी सकती है) हिंगुलेश्वरके लिए अनुपान प्रातःकाल आदीका रस और सायंकाल तुलसीपत्रका रस तथा मधु है। हिंगुलेश्वरमें यदि आधी रत्ती मकरध्वज मिलाकर दिया जाय तो सब प्रकारके ज्वर शान्त हो जाते हैं। नवज्वरमें यदि फुफ्फुसविकार दीखे तो हिंगुलेश्वरमें वंशलोचन मिलाकर दे। यदि स्वल्प ज्वरके साथ खाँसी आती हो तो कपूर और मधुके अनुपानमें हिंगुलेश्वर देना चाहिए ॥२॥

ज्वरधूमकेतु रस

भवेत्समं सूतसमुद्रफेनहिंगूलगन्धं परिमर्द्य यत्नात् ।
नवज्वरे वल्लमितं त्रिघस्रमार्द्राम्बुनाऽयं ज्वरधूमकेतुः ॥ ३ ॥

पारा, समुद्रफेन, सिंगरिफ और गंधक, इनको समान भाग ले । सर्वप्रथम गंधक तथा पारेकी कज्जली करके सब द्रव्योंको अदरखके रसमें तीन दिनों तक भली भाँति घोटकर एक-एक रत्तीकी गोलियें बना ले । यह ज्वरधूमकेतु रस कहलाता है । अनुपानभेदसे सब ज्वरोंमें इसका उपयोग होता है ।।३।।

मृत्युञ्जय रस

अव्यक्तः सिद्धिदः शुद्धो रोगघ्नः कीर्त्तिवर्द्धनः ।
यशःप्रदः शिवः साक्षान्मृत्युञ्जयरसः स्मृतः ॥ ४ ॥
विषस्यैकस्तथा भागो मारिच पिप्पलीकणः ।
गन्धकस्य तथा भागो भागः स्याट्टङ्कणस्य च ॥ ५ ॥
सर्वत्र समभागः स्याद्धिंगुलन्तु द्विभागिकम् ।
चूर्णयेत्खल्लमध्ये तु मुद्गमानां वटीं चरेत् ॥ ६ ॥
जम्बीरस्य रसेनात्र कार्य्यं हिंगुलशोधनम् ।
रसश्चेत्समभागः स्याद्धिंगुलं नेष्यते तदा ॥ ७ ॥
गोमूत्रशोधितश्चात्र विष सौरविशोधितम् ।
मृत्युरूपं ज्वरं हन्ति मृत्युञ्जयरसः स्मृतः ॥ ८ ॥
मृत्युर्विनिर्जितो यस्मात्तेन मृत्युञ्जयो रसः ।
मधुना लेहनं प्रोक्त सर्वज्वरनिवृत्तये ॥ ९ ॥

यह मृत्युञ्जय रस सिद्धिदायक, शुद्ध, रोगनाशक, कीर्तिवर्धक और साक्षात् शंकर भगवान्के समान मंगलकारी है । शुद्ध विष, काली मिर्च, पिप्पली, शुद्ध गंधक और शुद्ध सोहागा इन सबको सम भाग लेकर दो भाग शुद्ध सिंगरिफ मिलाकर खरल करे । भलीभाँति घुँट जानेपर मूँगके दाने जैसी गोलियें बना ले । इसमें डाली जानेवाली सिंगरिफ जँभीरी नीबूके रसमें शोधित होनी चाहिए । यदि इसमें शुद्ध पारा डालना हो तो वह भी उपर्युक्त द्रव्योंका समभाग ही (अर्थात् एक भाग) डालना चाहिए (सिंगरिफकी तरह दो भाग नहीं) । इसमें पड़नेवाला विष (वत्सनाभ=बछनाग) गोमूत्रमें शोधकर धूपमें सुखाया हुआ होना चाहिए । यह रस मृत्युरूपी ज्वरको हर लेता है । इसीसे यह मृत्युञ्जय रस कहलाता है । यह अकाल मृत्युञ्जय रस भी कहा जाता है । मधुके साथ इसे चाटनेसे सभी प्रकारके ज्वर निवृत्त हो जाते हैं ।।४–९।।

दध्युदकानुपानेन वातज्वरनिबर्हणः।
आर्द्रकस्य रसैः पानं दारुणे सान्निपातिके॥ १० ॥
जम्बीरद्रवयोगेन अजीर्णज्वरनाशनः।
अजाजीगुडसंयुक्तो विषमज्वरनाशनः॥ ११ ॥

यदि दहीके पानी (तोड़) के अनुपानमें यह दिया जाय तो वातज्वर दूर करता है। दारुण सन्निपात ज्वरमें अदरखके रसमें इसका सेवन करना चाहिए। जँभीरी नीबूके रसमें देनेसे यह अजीर्णज्वर शान्त करता है। जीरा तथा पुराने गुड़के साथ सेवन करनेसे विषमज्वर मिटता है ॥१०॥११॥

तीव्रज्वरे महाघोरे पुरुषे यौवनान्विते।
पूर्णमात्रा प्रदातव्या पूर्णं वटीचतुष्टयम्॥ १२ ॥

यदि पूर्ण युवा पुरुषको महाभयानक एवं तीव्रज्वर हो तो उसे पूरी मात्रा देनी चाहिए। चार गोलियोंकी पूर्ण मात्रा होती है ॥१२॥

स्त्रीबालवृद्धक्षीणेषु चार्द्धमात्रा प्रकीर्त्तिता।
अतिवृद्धे च क्षीणे च शिशौ चाल्पवयस्यपि॥ १३ ॥
तुर्य्यमात्रा प्रदातव्या व्यवस्थासारनिश्चिता।
नवज्वरे महाघोरे यामैकान्नाशयेद्ध्रुवम्॥ १४ ॥
मध्यज्वरे तथा जीर्णे त्रिरात्रान्नाशयेद्ध्रुवम्।
सप्ताहात्सन्निपातोत्थं ज्वराजीर्णकसंज्ञकम्॥ १५ ॥

स्त्री, बालक, वृद्ध तथा क्षीणकाय पुरुषको दो गोलीकी आधी मात्रा देनी चाहिए। यदि महाभयानक भी नवज्वर हो तो यह रस एक पहरमें अवश्य उतार देता है। सन्निपातजनित और अजीर्णज्वर इस रसका सेवन करनेसे एक सप्ताहमें उतर जाता है ॥१३–१५॥

जया वटी

विषं त्रिकटुकं मुस्तं हरिद्रा निम्बपत्रकम्।
विडङ्गमष्टमं चूर्णं छागमूत्रैः समं समम्।
चणकाभा वटी कार्य्या स्याज्जया योगवाहिका॥ १६ ॥

शुद्ध वत्सनाभविष, त्रिकटु (सोंठ, काली मिर्च और पिप्पली) का चूर्ण, नागरमोथा, हल्दी, नीमकी पत्ती तथा बायविडंगका चूर्ण इनका एक-एक भाग और

जयन्ती (जाही) का चूर्ण सबका अठगुना ले। तब इन सबको बकरेके मूत्रमें घोंटकर चनेके बराबर गोलियें बना ले। यह जया वटी योगवाही (विभिन्न अनुपानोंके साथ देनेमें विभिन्न गुण करनेवाली) है ॥१६॥

जयन्ती वटी

विषं पाठाऽश्वगन्धा च वचा तालीशपत्रकम्।
मरिचं पिप्पली निम्बमजामूत्रेण तुल्यकम्।
वटिका पूर्ववत्कार्य्या जयन्ती योगवाहिका ॥ १७ ॥

शुद्ध वत्सनाभ विष, पाठा (पाढ़), वच, तालीशपत्र, कालीमिर्च, पीपली और नीमकी पत्ती, इन सबको बराबर-बराबर और जयन्ती (जाही) का चूर्ण इनका अठगुना ले और बकरीके मूत्रमें घोटकर चने जैसी गोलियें बना ले। यह जयन्ती वटी भी योगवाही है अर्थात् विभिन्न अनुपानोंके साथ सेवन करनेसे विभिन्न रोगोंका शमन करती है ॥१७॥

जया वटीकी प्रयोगविधि

जयन्ती वा जया वाऽथ क्षीरैः पित्तज्वरापहा।
मुद्गामलकयूषेण पथ्यं देयं घृतं विना ॥ १८ ॥

उपर्युक्त जया अथवा जयन्ती ये दोनों वटिकायें यदि दूधके साथ दी जायँ तो पित्तज्वर नष्ट करती हैं। ज्वर निवृत्त होनेपर मूँग और आँवलेका यूष पथ्य देना चाहिए, किन्तु उसमें घी न डाले ॥१८॥

जयन्ती वा जया वाऽथ सक्षौद्रमरिचान्विता।
सन्निपातज्वरं हन्ति रसश्चानन्दभैरवः ॥ १९ ॥

यदि जया अथवा जयन्ती वटीको शहद और कालो मिर्चके चूर्णमें मिलाकर दे तो सन्निपातज्वर मिट जाता है। वक्ष्यमाण आनन्दभैरव रसमें भी यही विशेषता है ॥१९॥

जयन्ती वा जया वाऽथ विषमज्वरनुद् घृतैः।
सर्वज्वरं मधुव्योषैर्गवां मूत्रेण शीतकम्।
चन्दनस्य कषायेण रक्तपित्तज्वरापहा ॥ २० ॥

यदि जया और जयन्ती वटीको घीमें दे तो विषमज्वर, सोंठ-कालीमिर्च-पिप्पलीके चूर्ण एवं शहदके साथ दे तो सब प्रकारके ज्वर, गोमूत्रमें दें तो शीतज्वर और लालचन्दनके काढ़ेमें दें तो रक्तपित्तज्वर नष्ट होता है ॥२०॥

जयन्ती वा जया वाऽथ माक्षिकेण च कासजित् ॥ २१ ॥
जयन्ती वा जया क्षीरैः पाण्डुशोथविनाशिनी ॥ २२ ॥
जयन्ती वा जया वाऽथ तण्डुलोदकपानतः ।
अश्मरीं हन्ति नो चित्रं मूत्रकृच्छ्रन्तु दारुणम् ॥ २३ ॥

जया अथवा जयन्ती वटी यदि शहदमें दे तो खाँसी, दूधमें दे तो शोथ एवं पाण्डुरोग, चावलके धोवनके जलमें दें तो अश्मरी (पथरी) तथा भयानक मूत्रकृच्छ्र रोगका शमन करती है ॥२१॥२२॥२३॥

जयन्ती वा जया वाऽथ गोमूत्रेण युतां पिबेत् ।
हन्त्याशु काकणं कुष्ठं सुलेपेन च तद्द्रुतम् ।
द्विनिष्कं केतकामूलं पिष्ट्वा तोयेन पाययेत् ॥ २४ ॥

यदि इसे गोमूत्रके साथ दें तो कांकण कुष्ठ और यदि जया या जयन्तीके पत्तोंका लेप दिया जाय तो कुष्ठरोग जल्द दूर हो जाता है। यदि दो निष्क केतकीकी जड़ पीसकर उसके जलमें जया-जयन्ती वटी दी जाय तो सुरामेहको दूर करती है ॥२४॥

जयन्ती वा जया वाऽथ मेहं हन्ति सुराह्वयम् ।
जयन्ती वा जया वाऽथ मधुना मेहजिद्भवेत् ॥ २५ ॥
लोध्रमुस्ताऽभयातुल्यं कट्फलञ्च जलैः सह ।
क्वाथयित्वा पिबेच्चानु मधुना सर्वमेहजित् ॥ २६ ॥

यदि इसे मधुके साथ दें तो प्रमेहको मार भगाती है। यदि यह वटी खानेके बाद लोध, नागरमोथा, कायफल एवं हर्रे इनको बराबर-बराबर ले और काढ़ा बनाकर शहदके साथ पिये तो सब प्रकारके प्रमेह नष्ट हो जाते हैं ॥२५॥२६॥

जयन्तीं वा जयां वाऽथ गुडैः कोष्णजलैः पिबेत् ।
त्रिदोषोत्थं हरेद्गुल्मं रसश्चानन्दभैरवः ॥ २७ ॥

यदि जया-जयन्ती वटीको गुड़के साथ सेवन करे तो त्रिदोषजनित गुल्मरोग शान्त हो जाता है। आनन्दभैरव रस भी यही काम करता है ॥२७॥

जयन्ती वा जया हन्ति शुण्ठ्या सर्वं भगंदरम्।
जयन्ती वा जया वाऽथ तक्रेण ग्रहणीप्रणुत्॥ २८॥
जयन्ती वा जया वाऽथ रसश्चानन्दभैरवः।
रक्तपित्ते त्रिदोषोत्थे शीततोयेन पाययेत्॥ २६॥
जयन्ती वा जया वाऽथ घृष्ट्वा स्तन्येन चाञ्जयेत्।
स्रावणं सर्वदोषोत्थं मांसवृद्धिञ्च नाशयेत्॥ ३०॥

यदि सोंठके साथ इसका सेवन करे तो सब प्रकारके भगन्दर और मट्ठेके साथ सेवन करनेसे ग्रहणी रोग शान्त होता है। आनन्दभैरव भी इसपर काम करता है। यदि जया और जयन्ती वटीको ठंढे जलके साथ दें तो त्रिदोषजनित रक्तपित्त रोग, भाँगरेके रसमें दें तो रतौंधो और यदि इसे स्त्रीके दूधमें घिसकर आँखमें आँजे तो किसी भी तरह बहता हुआ आँखका पानी बन्द हो जाता है और शारीरिक मांसवृद्धि रुक जाती है ॥२८-३०॥

भस्मेश्वर योग

भस्म षोडशनिष्कं स्यादारण्योपलकोद्भवम्।
निष्कत्रयञ्च मरिचं विषनिष्कञ्च चूर्णयेत्॥ ३१॥
अयं भस्मेश्वरो नाम सन्निपातनिकृन्तनः।
पञ्चगुञ्जामितं खादेदार्द्रकस्य रसेन तु॥ ३२॥

वनैले उपलोंकी राख १६ निष्क, काली मिर्चका चूर्ण ३ निष्क और शुद्ध वत्सनाभ विष १ निष्क, इनको जलमें घोटकर पाँच-पाँच रत्तीकी गोली बना ले। यही भस्मेश्वर रस है। यदि आदीके रसमें इसका सेवन किया जाय तो सन्निपातज्वरको शान्त कर देता है। मात्रा—पाँच रत्ती ॥३१॥३२॥

स्वच्छन्दभैरव रस

ताम्रभस्म विषं हेम्नः शतधा भावितं रसैः।
गुञ्जार्द्धं सन्निपातादि दवज्वरहरं परम्॥ ३३॥
आर्द्राम्बुशर्करासिन्धुयुतः स्वच्छंदभैरवः।
इक्षुद्राक्षासिताश्चापि दधि पथ्यं रुचौ ददेत्॥ ३४॥

शुद्ध ताम्रभस्म और शुद्ध वत्सनाभ विष इन दोनोंको धतूरेके रसमें सौ बार भावना देकर भलीभाँति घोंटे। घुँट जानेपर आधी-आधी रत्तीकी गोलियें बना ले।

यदि इसकी एक गोलीका सेवन किया जाय तो सन्निपात आदि ज्वर और नवज्वर दूर हो जाते हैं। इसका अनुपान आदीका रस, मिश्री तथा सेंधानमक है। आराम होने पर यदि रोगीको पसन्द हो तो गन्नेका रस, किसमिस, मुनक्का, मिश्री और दहीका पथ्य दे सकते हैं ॥३३॥३४॥

ज्वरमुरारि रस

हिङ्गुलञ्च विषं व्योषं टङ्कणं नागरामये।
जयपालसमायुक्तं सद्यो ज्वरविनाशनः॥३५॥

संशोधित सिंगरिफ, शुद्ध वत्सनाभ विष, सोंठ तथा हरेंका चूर्ण और शुद्ध जमालगोटा, इनको बराबर-बराबर लेकर जलका छींटा देता हुआ घोंटे। घुँट जानेपर गोलियें बना ले। इसका सेवन करनेसे तत्काल ज्वर उतर जाता है। इस योगमें सोंठ दो बार कही गयी है। इसलिए सोंठ दुगुनी लेनी चाहिए ॥३५॥

नवज्वरेभाङ्कुश

सगन्धटङ्क रसतालकञ्च विमर्दितं भावय मीनपित्तैः।
दिनत्रयं वल्लमितं प्रदद्याद्भृन्ताकतक्रौदनमेव पथ्यम्।
नवज्वरेङ्कुशनामधेयः क्षणेन घर्मोद्गममातनोति॥ ३६॥

शोधित गंधक, शोधित पारा, शुद्ध सोहागा तथा शुद्ध हड़ताल, ये चीजें समान भाग लेकर भलीभाँति घोंटे। फिर तीन दिन तक मछलीके पित्तमें भावना दे। तदनन्तर पुनः खरल करके एक-एक रत्तीकी गोलियें बना ले। इसकी एक गोलीका सेवन करनेसे नवज्वर नष्ट हो जाता और तत्काल पसीना हो आता है। इसीसे यह 'नवज्वरेभांकुश' कहाता है ॥३६॥

त्रैलोक्यडुम्बर रस

सूतार्कगंधचपलाजयपालतिक्ता पथ्या त्रिवृच्च विषतिन्दुकजं समांशम्।
सम्मर्द्य वज्रिपयसा मधुना द्विगुञ्जः त्रैलोक्यडुम्बररसोऽभिनवज्वरघ्नः॥३७॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, ताम्रभस्म, पिप्पली, शुद्ध जयपाल (जमालगोटा), कुटकी, हरें, त्रिवी और शोधित कुचलेका चूर्ण, ये द्रव्य समभाग ले और इन सबको थूहरके दूधमें घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोली बना ले। इस रसका सेवन करनेसे नवज्वर नष्ट होता है। इसका नाम है—त्रैलोक्यडुम्बर रस ॥३७॥

प्रतापमार्तण्ड रस

विषहिङ्गुलजैपालटङ्कणं क्रमवर्द्धितम्।
रसः प्रतापमार्तण्डः सद्योज्वरविनाशनः ॥ ३८ ॥

शुद्ध वत्सनाभ विष १ भाग, शुद्ध सिंगरिफ २ भाग, शुद्ध जमालगोटा ३ भाग, शुद्ध सोहागा ४ भाग, इन सबको घोंटकर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बनाकर रख ले। इसका सेवन करनेसे ज्वर तुरन्त उतर जाता है ॥३८॥

तरुणज्वरारि रस

जैपालगन्धं विषपारदञ्च तुल्यं कुमारीस्वरसेन पिष्टम्।
अस्य द्विगुञ्जा हि सितोदकेन ख्यातो रसोऽयं तरुणज्वरारिः ॥ ३९ ॥
दातव्य एषोऽहनि पञ्चमे वा षष्ठेऽथवा सप्तम एव वाऽपि।
जाते विरेके विजितो ज्वरः स्यात्पटोलमुद्गाम्बुनिषेवणेन ॥ ४० ॥

शुद्ध जमालगोटा, शुद्ध वत्सनाभ विष, शुद्ध गंधक और शुद्ध पारा, इनको लेकर पहले पारद तथा गंधककी कज्जली कर ले। फिर सबको घीगुवारके रसमें घोटकर दो-दो रत्तीकी गोली बना ले। मिश्रीके शर्बतके साथ इसका सेवन करनेसे ज्वर दूर हो जाता है। ज्वर चढ़नेके पाँचवें, छटें अथवा सातवें दिन यह रस देना चाहिए। इसके सेवनसे दस्त आते हैं और उनके साथ ही ज्वर भी उतर जाता है। इस औषधका सेवन करनेवालेको परवलकी पत्तीका शाक तथा मूँगका यूष पथ्यमें देना चाहिए ॥३९॥४०॥

गदमुरारि रस

रसबलिशिललौहव्योषताम्राणि तुल्यान्यथ सदरदनागाभ्याञ्च भागः प्रदिष्टः।
भवति गदमुरारिश्चास्य गुञ्जाद्वयं वै क्षपयति दिवसेनप्रौढमामज्वराख्यम्॥४१॥

संशोधित पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध मैनसिल, लौहभस्म, सोंठ-मिर्च-पिप्पलीका चूर्ण, सिंगरिफ और सीसाकी भस्म, इन द्रव्योंको समभाग ले। पहले पारा और गंधककी कज्जली करके सब द्रव्योंको एक साथ पानीमें घोटकर दो-दो रत्तीकी गोली बना ले। यही गदमुरारि रस है। इसे सेवन करनेसे दिन ही भरमें भयानक आमज्वर छूट जाता है ॥४१॥

विद्याधर रस

रसो गन्धस्ताम्रं त्रिकटुकटुकीटङ्कणवरा
त्रिवृद्दन्ती हेम द्युमणिविषमेतत्सममिदम् ।
समस्तैस्तुल्यं स्याद्विमलजयपालोद्भवरजः
ततः स्नुक्क्षीरेण प्रचुरमृदितं दन्तिसलिलैः ॥ ४२ ॥
द्विगुञ्जाऽस्य प्रौढं जयति वटिका साममतुलं
ज्वरं पाण्डुं गुल्मं ग्रहणिगदकीलोद्भवरुजः ।
मरुच्छूलाजीर्णं प्रवलमथ सामं क्रिमिगदं
विवद्धं प्लीहानं प्रवलमपि विद्याधररसः ॥ ४३ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, ताम्रभस्म, सोंठ-पिप्ली-मिर्चका चूर्ण, कुटकीका चूर्ण, शुद्ध सोहागा, हर्रा-बहेड़ा-आँवलाका चूर्ण, त्रिवी और दन्तीमूलका चूर्ण, शुद्ध धतूरेके बीज, मदारकी जड़का चूर्ण एवं शुद्ध वत्सनाभ विष, इनको बराबर मात्रामें ले । फिर सबको एकमें मिलाकर जितनी वजन हो, उतना ही शुद्ध जमालगोटेका चूर्ण डाले । तदनन्तर सेंहुड़के दूधमें खूब अच्छी तरह घोंटे । इसके बाद दन्तीके काढ़े अथवा उसके रसमें घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले । इसकी एक गोलीका सेवन करनेसे प्रबल आमज्वर, पांडुरोग, वायुगोला, ग्रहणी, बवासीरके मस्सोंकी पीड़ा, वातजनित शूल, अजीर्ण, तीव्र आँव, क्रिमिरोग, अफरा तथा पिलही रोग शान्त हो जाता है ॥४२॥४३॥

अमृतमञ्जरी

हिङ्गुलं मारिचं टङ्कं पिप्पली विषमेव च ।
जातीकोषं समं सर्वं जम्बीराद्भिर्विमर्दितम् ॥ ४४ ॥
गुञ्जाद्वयं त्रयं वापि देयञ्च सान्निपातिके ।
कासश्वासौ जयत्याशु सर्वज्वरविनाशनः ॥ ४५ ॥

शुद्ध सिंगरिफ, काली मिर्च, शुद्ध वत्सनाभ विष और जावित्रीका चूर्ण सब द्रव्य समान भाग ले और जंभीरी नीबूके रसमें घोंटकर दो या तीन रत्तीकी गोलियें बना ले । सन्निपातज्वरमें यदि इसकी दो या तीन रत्तीकी मात्रा दी जाय तो तुरन्त फायदा होता है । इससे श्वास और खाँसी भी शान्त हो जाती है और सभी प्रकारके ज्वर नष्ट हो जाते हैं ॥४४॥४५॥

महाज्वरांकुश

सूतं गन्धं विषं तुल्यं धूर्तवीजं त्रिभिः समम्।
चतुर्णां द्विगुणं व्योषचूर्णं गुञ्जाद्वयं हितम् ॥४६॥
जम्बीरस्य च मज्जाभिरार्द्रकस्य रसैर्युतम्।
महाज्वराङ्कुशो नाम ज्वराष्टकनिषूदनः ॥४७॥
एकाहिकं द्व्याहिकं वा त्र्याहिकञ्च चतुर्थकम्।
विषमञ्च त्रिदोषोत्थं हन्ति सर्वं न संशयः ॥४८॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध वत्सनाभ विष ये तीनों एक-एक तोला, शुद्ध धतूरेके बीज तीन तोला, सोंठ-मिर्च-पिप्पलीका चूर्ण चार तोले, इन द्रव्योंको एकत्रित करे और घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोली बना ले। इसकी एक गोली जँभीरी नीबू तथा आदीके रसमें देनेसे आठ प्रकारके ज्वर नष्ट हो जाते हैं। यह ऐकाहिक, द्व्याहिक (अँतरिया) त्र्याहिक (तिजरा) चातुर्थक (चौथिया), विषमज्वर एवं सन्निपातज्वर अवश्य छूट जाता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥४६-४८॥

ज्वरकेशरिका

शुद्धसूतं विषं व्योषं गन्धं त्रैफलमेव च।
जयपालं समं कुर्य्याद्भृङ्गतोयेन मर्दयेत् ॥४९॥
वटिकां गुञ्जमात्रान्तु कृत्वा वैद्यः प्रयत्नतः।
प्रमाणं सर्षपाकारं बालानाञ्च प्रशस्यते ॥५०॥
नारिकेलाम्बुना वाऽपि सर्वज्वरविनाशिनी।
नरिकेलजलं शस्तं कर्पत्रयं पिबेदनु ॥५१॥
सितया च समं पीत्वा पित्तज्वरविनाशिनी।
मरिचेन च पीता सा सन्निपातज्वरञ्जयेत् ॥५२॥
पिप्पलीजीरकाभ्यान्तु दाहज्वरविनाशिनी।
विषमज्वरभूतोत्थं ज्वरं प्लीहानमेव च ॥५३॥
अग्निमान्द्यमजीर्णञ्च श्वयथुञ्च सुदारुणम्।
शूलाजीर्णं तथा गुल्मं कुष्ठाष्टादश पित्तजान्।
ज्वरकेशरिका ख्याता तरुणज्वरनाशिनी ॥५४॥

शुद्ध पारा, शुद्ध वत्सनाभ विष, शुद्ध गंधक, सोंठ-मिर्च-पिप्पली, हर्रा-बहेड़ा-आँवला और शुद्ध जयपाल (जमालगोटे) का चूर्ण, इन सबको समान भाग ले और सबको एक साथ भँगरैयाके रसमें घोंटे। घुँट जानेपर एक-एक रत्तीकी गोलियाँ बना ले। यद्यपि इसकी मात्रा एक रत्तीकी होती है, किन्तु बच्चोंको सरसों भरकी मात्रा देनी चाहिए। यदि डाभ (हरे नारियल) के पानीमें यह दी जाय तो सभी ज्वरोंको मार भगाती है। इसे खानेके बाद भी यदि तीन कर्ष (छ तोला) हरे नारियलका जल पी लिया जाय तो बड़ा अच्छा हो। यदि इसे मिश्रीके शर्बतमें पिये तो पित्तज्वर, मिर्चके साथ पिये तो सन्निपातज्वर, पिप्पली तथा जीराके चूर्णमें सेवन करे तो दाहज्वर, विषमज्वर, भूतज्वर, पिलही, अग्निमांद्य, अजीर्ण, भयानक शोथ, शूल, अजीर्ण, गुल्म, अठारह प्रकारके कुष्ठ और पित्तसे उत्पन्न होनेवाले सब रोग नष्ट हो जाते हैं। इसका नाम है—ज्वरकेशरिका। तरुणज्वरको नष्ट करनेकी अद्भुत सामर्थ्य इसमें है ॥४६–५४॥

नवज्वरेभसिंह

शुद्धसूतं तथा गन्धं लौहं ताम्रञ्च सीसकम्।
मरिचं पिप्पलीं विश्वं समभागं विचूर्णयेत् ॥५५॥
अर्द्धभागं विषं दद्यान्मर्दयेद्वासरद्वयम्।
शृंगवेरानुपानेन दद्याद्गुञ्जाद्वयं भिषक् ॥५६॥
नवज्वरे महाघोरे वातसंग्रहणीगदे।
नवज्वरेभसिंहोऽयं सर्वरोगे प्रयोजयेत् ॥५७॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौहभस्म, ताम्रभस्म, सीसाभस्म, मिर्च-पिप्पली और सोंठका चूर्ण इनका एक-एक भाग और शुद्ध विष आधा भाग ले। पहले गंधक-पारेकी कज्जली कर ले, तब सब चीजोंको एक साथ घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। यदि इसकी एक गोली अदरखके रसमें दे तो महाभयानक नवज्वर, वातज रोग तथा संग्रहणीका शमन हो जाता है। सभी रोगोंपर नवज्वरेभसिंहका उपयोग किया जा सकता है ॥ ५५–५७ ॥

निरामज्वरके लिये उदकमंजरी रस

सूतो गन्धष्टङ्कणः सोषणः स्यादेतैस्तुल्या शर्करा मत्स्यपित्तैः।
भूयो भूयो भावयेत् त्रिरात्रं वल्लो देयः शृंगवेरस्य वारि ॥५८॥

सम्यक्तापे वारिभक्तं सतक्रं वृन्ताकाख्यं पथ्यमेतत्प्रदिष्टम्।
आङ्गं रोगं हन्ति सामं प्रभावात्पित्ताधिक्ये मूर्ध्नि वारिप्रयोगः ॥५९॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध सोहागा और काली मिर्चका चूर्ण, ये सब चीजें बराबर ले और सब चीजोंकी जितनी वजन हो, उतनी चीनी मिलाकर मछली-के पित्तमें तीन अहोरात्रकी भावना दे। उसके बाद घोंटकर एक-एक रत्तीकी गोली बना ले। अदरखके रसमें इसकी एक गोली देनेसे ताप मन्द पड़ जाता है। तापकी कमीपर यदि रोगी चाहे तो उसे मट्ठासहित चावल और भंटेका शाक पथ्यमें दिया जा सकता है। यह अपने प्रभावसे आमसहित ज्वर तथा शरीरके विविध रोगोंका निवारण करता है। इसके सेवनसे यदि पित्त बढ़ जाय और गर्मी मालूम दे तो सिरपर जलधारा देनी चाहिये ॥ ५८ ॥ ५९ ॥

चन्द्रशेखर रस

विहाय शर्करां यदा प्रदीयते मनःशिला।
तदा निरामकज्वरारिरेष चन्द्रशेखरः ॥६०॥

उपर्युक्त उदकमंजरी रसमें यदि चीनी न मिलाकर उतना ही शुद्ध मैनसिल डाल दे तो निरामज्वरका शत्रु चन्द्रशेखर रस बन जाता है ॥ ६० ॥

पञ्चवक्त्र रस

रसो गन्धकष्टङ्कणः सोषणोऽयं फणी पिप्पलीत्येष धुत्तूरपिष्टः।
जयेत्सन्निपातं द्विगुञ्जाऽनुपानं भवेदर्कमूलाम्बु सव्योषचूर्णम् ॥६१॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध सोहागा, काली मिर्च, नागभस्म और पिप्पली, इन सबको समान भाग ले और सबको एक साथ धतूराके रसमें घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोली बना ले। मदारकी जड़के रसमें सोंठ, मिर्च, पिप्पलीके चूर्ण सहित इसकी मात्रा दी जाय तो सन्निपात ज्वर भी भाग जाता है ॥६१॥

पर्पटरस

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं मर्द्यं भृङ्गरसेन च।
मृतं ताम्रं लौहभस्म पादांशेन तयोः क्षिपेत् ॥६२॥
लौहपात्रे च विपचेच्चालयेल्लौहचाटुना।
तत्क्षिपेत्कदलीपत्रे गोमयोपरि संस्थिते ॥६३॥

पश्चात्सञ्चूर्णयेत्खल्ले निर्गुण्ड्या भावयेद्दिनम् ।
जयन्तीत्रिफलाकन्यावासाभार्गीकटुत्रिकैः ॥६४॥

भृङ्गाग्निमूलमुण्डीभिर्भावयेद्दिनसप्तकम् ।
अङ्गारैः स्वेदयेत्किञ्चित्पर्पटाख्यो महारसः ॥६५॥

चतुर्गुञ्जामितो भक्ष्यः सम्यक्श्लेष्मज्वरं हरेत् ।
पथ्या शुण्ठ्यमृताक्वाथमनुपानं प्रयोजयेत् ॥६६॥

शुद्ध पारा १ भाग और शुद्ध गंधक दो भाग, इनकी कज्जली करके भाँगरे-के रसमें घोंटे । फिर इसमें चौथाई भाग ताम्रभस्म और चौथाई ही भाग लौहभस्म डालकर घोंटे । इन सब द्रव्योंको एक लोहेकी कड़ाहीमें रखकर मन्द आँचकी आग-पर चढ़ा दे और लोहेकी कलछुलसे चलाता जाय । तदनन्तर पासकी जमीनको गोबरसे लीपकर उसपर केलेका पत्ता बिछावे और उसीपर इसको उँड़ेल दे । फिर उसके ऊपरसे केलेका पत्ता फैलाकर किसी चपटे पात्रसे दबा दे । जब यह समझ ले कि पर्पटी तैयार हो चुकी, तब इसको खरलमें डालकर घोंटे और दिनभर निर्गुण्डीके रसमें भावना दे । तत्पश्चात् जयन्ती (जाही), त्रिफला, घीगुवार, बासा (अडूसा) भार्ङ्गी, सोंठ, मिर्च तथा पिप्पलीका चूर्ण, भाँगरा, चीतेकी जड़ और मुण्डी, इनके काढ़ेमें अलग-अलग सात दिनतक भावना दे । इसके बाद इसे अंगारेपर रखकर कुछ स्वेदन करे । यही पर्पटनामका महारस है । यदि यह रस चार रत्ती खाकर हर्र, सोंठ तथा गुरुचका काढ़ा पी ले तो श्लेष्म (कफ) ज्वर नष्ट हो जाता है ॥६२–६६॥

वातपित्तान्तक रस

मृतसूताभ्रमुस्तार्कतीक्ष्णमाक्षिकतालकम् ।
गन्धकं मर्दयेत्तुल्यं यष्टिद्राक्षाऽमृतारसैः ॥६७॥

धात्रीशतावरीद्रावैर्द्रवैः क्षीरविदारिजैः ।
दिनं दिनं विभाव्याथ सिताक्षौद्रयुता वटी ॥६८॥

माषमात्रं निहन्त्याशु वातपित्तज्वरं क्षयम् ।
दाहं तृषां भ्रमं शोषं वातपित्तान्तको रसः ।
सिताक्षीरं पिबेच्चानु यष्टिक्वाथं सितायुतम् ॥६९॥

पारदभस्म (रससिन्दूर), अभ्रकभस्म, नागरमोथा, ताम्रभस्म, स्वर्णमाक्षिक-भस्म, शुद्ध हड़ताल और शुद्ध गंधक इन सबको बराबर लेकर मुलेठी, किसमिस तथा गुरुचके रसमें पृथक्-पृथक् भावना दे। तत्पश्चात् आँवला तथा शतावर और इसके बाद क्षीरविदारीके रसमें भावना दे। उपर्युक्त प्रत्येक औषधियोंमें एक-एक दिन भावना देनी चाहिए। तदनन्तर इनको भलीभाँति खरल करके एक-एक मासेकी गोली बना ले। इसका सेवन करनेसे वातपित्तज्वर शान्त हो जाता है। यह दाह, तृषा, भ्रम (चक्कर), शोष (सुखंडी), वात एवं पित्तका नाशक रस है। इसको खाकर ऊपरसे मिश्री, दूध अथवा मुलेठीके काढ़ेमें मिश्री डालकर पीना चाहिए ॥६७–६६॥

विश्वेश्वर रस

मृतसूतार्कतीक्ष्णञ्च तालं गन्धं च कट्फलम्।
मेषशृङ्गी वचा शुण्ठी भार्गी पथ्या च वालकम् ॥७०॥
धन्याकं मर्दयेत्तुल्यं पर्पटोत्थद्रवैर्दिनम्।
मर्द्यं माषं लिहेत्क्षौद्रैः कफपित्तमदात्यये ॥७१॥
रसो विश्वेश्वरो नाम प्रोक्तो नागार्जुनेन च।
काकमाचीरसं चानु सैन्धवेन युतं पिबेत् ॥७२॥

रससिन्दूर, ताम्रभस्म, लौहभस्म, शुद्ध हड़ताल तथा गंधक, कायफल, मेढ़ाशृङ्गी, वच, सोंठ, भार्ङ्गी, हर्र, सुगन्धबाला और धनियाँका चूर्ण, इन सबका समान भाग लेकर पित्तपापड़ाके रसमें दिन भर घोंटे। फिर एक-एक मासेकी गोलियें बना ले। मधुमें मिलाकर चाटनेसे यह कफपित्तज्वर तथा मदात्यय रोग दूर करता है। यह नागार्जुनका बताया हुआ विश्वेश्वर रस है। इसे चाटनेके बाद सेंधानमक मिला मकोयका रस पीना चाहिए ॥७०–७२॥

शीतारि रस

पारदं गन्धकं शुद्धं टङ्कणञ्च समं समम्।
पारदाद्द्विगुणं देयं जैपालं तुषवर्जितम् ॥७३॥
सैन्धवं मरिचं चिञ्चात्वग्भस्म शर्कराऽपि च।
प्रत्येकं सूतकं तुल्यं जम्बीरैर्मर्दयेद्दिनम् ॥७४॥

द्विगुञ्जस्तप्ततोयेन वातश्लेष्मज्वरापहः।
रसः शीतारिनामायं शीतज्वरहरः परः ॥७५॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक और शुद्ध सोहागा इनका समान भाग ले। जितना पारा हो, उसका दुगना शुद्ध जमालगोटा मिलावे। पारेके बराबर ही सेंधानमक, कालीमिर्च, इमलीकी छालकी राख और खाँड़ डाले। फिर जँभीरी नीबूके रसमें दिनभर घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। यदि इसकी एक गोली गरम जलके साथ खायी जाय तो वातश्लेष्मज्वर दूर हो जाता है। इसका नाम शीतारि रस है और यह शीतज्वरको शान्त करनेमें बड़ा उपयोगी है ॥७३–७५॥

चिन्तामणि रस

रसविषगन्धकटङ्कणताम्रयवक्षारकञ्च सव्योषम्।
तालकफलत्रयञ्च क्षौद्रं दत्त्वा शतं वारान् ॥७६॥
संमर्द्य रक्तिविमिता वटिका कार्य्या भिषग्वरैः प्राज्ञैः।
शुण्ठीपिष्टेन समं चैकां द्वे वाऽथवा तिस्रः ॥७७॥
सम्प्राश्य नारिकेलजलमनुपेयञ्ज विमलमतिमद्भिः।
सैन्धवजीरकसहितं तक्रं पथ्यं प्रयोक्तव्यम् ॥७८॥
प्रशमयति सन्निपातज्वरं तथा जीर्णकज्वरं विविधम्।
प्लीहानं चाध्मान कासं श्वासं वह्निमान्द्यम्।
चिन्तामणी रसोऽयं किल स्वयं भैरवेण निर्दिष्टः ॥७९॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध वत्सनाभ विष, शुद्ध सोहागा, ताम्रभस्म, जवाखार, सोंठ-मिर्च और पिप्पलीका चूर्ण, शुद्ध हड़ताल और त्रिफलाका चूर्ण इनका समभाग ले और मधु डालकर सौ बार भलीभाँति घोंटे। फिर कुशल वैद्य इसकी एक-एक रत्ती-की गोली बना ले। रोगीका बलाबल देखकर सोंठके चूर्णमें इसकी एक दो अथवा तीन गोली तक देनी चाहिए। इसे खानेके बाद डाभ अर्थात् हरे नारियलका जल पिलावे। यदि रोगी कुछ खानेको माँगे तो सेंधानमक और भुना जीरा डालकर मट्ठा पीनेको दे। उसके लिए यही पथ्य है। यह रस सन्निपातज्वर, विविध प्रकार-के जीर्णज्वर, पिलही, अफरा, खाँसी, श्वास और अग्निमांद्य रोगका शमन करता है। इसका नाम चिन्तामणि रस है और स्वयं भैरव भगवानने इसे बताया है ॥७६–७९॥

अथवा

रसं गन्धं विषं लौहं धूर्त्तबीजन्तु तत्समम् ।
द्वौ भागौ ताम्रवह्निञ्च व्योषचूर्णञ्च तत्समम् ॥८०॥
जम्बीरस्य च मज्जाभिरार्द्रकस्य रसैर्युतम् ।
अस्यानुपानेन वटी ज्वरे देया प्रयत्नतः ॥८१॥
गुञ्जाद्वयां वटीं खादेत्सद्यो ज्वरविनाशिनीम् ।
वातिकं पैत्तिकञ्चापि श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥८२॥
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च चातुर्थिकविपर्य्ययम् ।
असाध्यञ्चापि साध्यञ्च ज्वरञ्चैवातिदुस्तरम् ॥८३॥
अग्निमान्द्येऽप्यजीर्णे च आध्मानेऽनिलसम्भवे ।
अतिसारे छर्दिते च अरोचकनिपीडिते ॥८४॥
ज्वरान्सर्वान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ।
चिन्तामणिरसो नाम सर्वज्वरकुलान्तकः ॥८५॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध विष, लौहभस्म और धतूरेका बीज इनका एक-एक भाग, ताम्रभस्म, चीताकी जड़ और सोंठ, मिर्च तथा पिप्पलीका चूर्ण ये द्रव्य दो-दो भाग एकत्र करके भलीभाँति घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। ज्वरके रोगीको जँभीरी नीबू और आदीके रसमें इसका सेवन कराया जाय तो बुखार तुरन्त शान्त होता है। यह रस वातज, पित्तज, श्लेष्मज, सान्निपातिक, ऐकाहिक, द्व्याहिक, चातुर्थक, चातुर्थकविपर्यय, साध्य, असाध्य और अतिशय भयानक ज्वर तथा अग्निमान्द्य, अजीर्ण, वातज आध्मान, अतिसार, वमन एवं अरुचि रोगपर अच्छा काम करता है। यह ज्वरोंको इस तरह दूर कर देता है, जैसे भास्करभगवान अन्धकार दूर कर देते हैं। सब प्रकारके ज्वरोंको मार भगानेमें चिन्तामणि रस यमराजके सदृश भयानक है ॥८०-८५॥

सन्निपात ज्वरपर कुलवधू रस तथा नस्य

शुद्धसूतं मृतं ताम्रं मृतं नागं मनःशिला ।
तुत्थकं तस्य तुल्यांशं दिनमेकं विमर्दयेत् ॥८६॥

द्रवैश्चोत्तरवारुण्याश्चणमात्रा वटी कृता ।
सन्निपातं निहन्त्याशु नस्यमात्रेण दारुणम् ।
एषा कुलवधूर्नाम जले घृष्ट्वा प्रयोजयेत् ॥८७॥

शुद्ध पारा, ताम्रभस्म, नागभस्म, शुद्ध मैनसिल और तूतिया इनका समान भाग एकत्रित करके दिन भर उत्तरवारुणी (इन्द्रायण) के रसमें घोंटे । घुट जानेपर चनेके बराबर गोलियें बना ले । पानीमें घिसकर इसका नस्य देनेसे भयानक सन्निपात ज्वर शान्त हो जाता है । इस रसका नाम कुलवधू रस है ॥८६ ॥ ८७॥

जयमङ्गलरस तथा अंजन

भस्मसूताभ्रकं तारं मुण्डतीक्ष्णालमाक्षिकम् ।
वह्निटङ्कणकव्योषं समं सम्मर्दयेद्दिनम् ॥८८॥
पाठानिर्गुण्डिकायष्टिबिल्वमूलकषायकैः ।
ततो मूषागतं रुद्ध्वा विपचेद्भूधरे पुटे ॥८९॥
माषैकं दशमूलस्य कषायेण प्रयोजयेत् ।
अञ्जनेनाथवा नस्यात्सन्निपातं जयेद्ध्रुवम् ॥९०॥

पारदभस्म (रससिन्दूर), अभ्रकभस्म, चाँदीभस्म, मुण्डलोहभस्म, तीक्ष्णलोहभस्म, शुद्ध हड़ताल, स्वर्णमाक्षिकभस्म, चीताका चूर्ण, शुद्ध सोहागा और सोंठ-मिर्च तथा पिप्पलीका चूर्ण इनका समभाग एकत्रित करके घोंटे । तदनन्तर पाढ़, निर्गुण्डिका (संभालू), मुलेठी तथा बेलकी जड़के काढ़ेमें क्रमशः एक-एक दिन घोंट और मूषामें रखकर भूधरयन्त्रमें पुट दे । इसके बाद एक-एक मासेकी गोली बना ले । इसकी एक गोली दशमूल काढ़ेके साथ आँखोंमें आँजे या कि नाकसे नस्य ले तो यह सन्निपात ज्वरको अवश्य मार भगाता है ॥८८-९०॥

नस्यभैरव रस

मृतसूतार्कतीक्ष्णाग्निं टङ्कणं खर्परं समम् ।
सव्योषमर्कदुग्धेन दिनञ्च मर्दयेद्दृढम् ।
अर्कक्षीरयुतं नस्यं सन्निपातहरं परम् ॥९१॥

रससिन्दूर, ताम्रभस्म, तीक्ष्णलोहभस्म, चीतामूलका चूर्ण, शुद्ध सोहागा और शुद्ध खपरिया, सोंठ-मिर्च और पिप्पलीका चूर्ण इन सबको समान भागके

क्रमसे एकत्रित करके मदारके दूधमें दिनभर घोंटे। घुँट जानेपर सम्हालकर रख ले। इसे यदि मदारके दूधमें मिलाकर नस्य दिया जाय तो सन्निपात ज्वर दूर हो जाता है ॥ ९१ ॥

अञ्जनभैरव रस

सूततीक्ष्णकणागन्धमेकांशं जयपालकम्।
सर्वैस्त्रिगुणितं जम्बुवारिणा च सुपेषितम्।
नेत्राञ्जनेन हन्त्याशु सर्वोपद्रवमुद्धतम् ॥९२॥

शोधित पारा, तीक्ष्णलौहभस्म, पिप्पली और शुद्ध गंधक इनका एक-एक भाग लेकर इनमें बारह भाग शुद्ध जमालगोटा डाले। सर्वप्रथम पारा और गंधककी कज्जली करके सबको जामुनके रसमें भलीभाँति घोंटे। आँखोंमें इसका अञ्जन लगानेसे विविध उपद्रवोंयुक्त सन्निपात भी शीघ्र शान्त हो जाता है ॥९२॥

नस्यरस

गन्धेशं लशुनाम्भोभिर्मर्दयेद्याममात्रकम्।
तस्योदकेन संयुक्त नस्यं तत्प्रतिबोधकृत्।
मरिचेन समायुक्तं हन्ति तन्द्राप्रलापकान् ॥९३॥

शुद्ध गंधक तथा शुद्ध पारेकी कज्जलो करके लहसुनके रसमें पहरभर घोंटे। ताजे लहसुनके रसमें मिलाकर इसका नस्य देनेसे सन्निपातके कारण बेहोश रोगी होशमें आ जाता है। इसी रसको यदि काली मिर्चके चूर्णमें मिलाकर नस्य दिया जाय तो तन्द्रा और प्रलाप (बकना-झकना) शान्त हो जाता है ॥९३॥

अन्य अञ्जन रस

वाह्लीकं रसकं तुत्थं कर्पूरं मृतशुल्वकम्।
कासमर्दरसैर्मर्द्यं दिनार्द्धं वटकीकृतम्।
अञ्जनं ज्वरदाहघ्नं सर्वदोषनिषूदनम् ॥९४॥

वाह्लीक (हींग), रसक (शोधित खपरिया), शुद्ध तूतिया, कपूर और ताम्र-भस्म इनका समान भाग लेकर कासमर्द (कसौंदी) के स्वरसमें आधे दिन तक घोंटे। इसके बाद गोलियें बनाकर रख ले। आँखोंमें इसका अञ्जन करनेसे यह ज्वरके दाह एवं सब प्रकारके दोषोंको दूर कर देता है ॥ ९४ ॥

त्रैलोक्यसुन्दर रस

रसगन्धकयोर्माषौ प्रत्येकं कज्जलीकृतौ ।
शक्रश्च मुषली चैव धुस्तूरं केशराजकम् ॥९५॥
देवदाली जयन्ती च तथा मण्डूकपर्णिका ।
एषां पत्ररसैः शाणैः शिलायां खल्लयेत्पुनः ॥९६॥
शोषयित्वा वटी कार्य्या त्वनेका राजिकोपमा ।
त्रिदोषजं ज्वरं हन्ति तथा प्रचलकोष्ठकम् ॥९७॥
तप्ते तु नारिकेलस्य जलं देयं प्रयत्नतः ।
यदा वटी न कार्य्या तु तदा खाद्या तु रक्तिका ।
त्रैलोक्यसुन्दरो नाम सन्निपातहरो रसः ॥९८॥

शुद्ध पारा एक मासा और शुद्ध गंधक एक मासा इन दोनोंको लेकर कज्जली कर ले । बादमें कोरैया, मुसली, धतूरा, केशराज, देवदाली, जयन्ती (जाही) और मण्डूकपर्णी इनके पत्तोंके आधे-आधे तोले रसमें भली भाँति घोंटे । फिर राईके बराबर गोलयें बनाकर रख ले । इसका सेवन करनेसे त्रिदोषज्वर तथा दस्तकी बीमारी दूर हो जाती है । इसकी मात्रा देनेसे यदि गर्मी अधिक मालूम पड़े तो कच्चे नारियलका जल पिलाना चाहिये । यदि इसकी गोली न बनायी हो तो एक-एक रत्तीकी मात्रा देना उचित है । यह सन्निपातहारी त्रैलोक्यसुन्दर रस है ॥ ९५–९८ ॥

स्वच्छन्दभैरव रस

रसगंधकयोः शाणं प्रत्येकं कज्जलीकृतम् ।
सुवर्णमाक्षिकं शाणं शुद्धश्चैकत्र कारयेत् ॥९९॥
रुद्रजटा निसिन्धुश्च नागदाऽऽमलकी तथा ।
विषकण्टालिका चैषां स्वरसं शाणमात्रकम् ॥१००॥
दत्त्वा संशोध्य सम्मर्द्य कार्य्या मुद्गसमा वटी ।
आर्द्रकस्य रसैः पेया जीरकञ्चानु भक्षयेत् ॥१०१॥
स्वच्छंदभैरवाख्योऽयं, सन्निपातौघ्यहृन्मतः ।
ग्रहणीसूतिकातङ्कं नाशयेदविचारतः ॥१०२॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक दोनों एक-एक शाण (आधा-आधा तोला) लेकर कज्जली करे। तब उसमें आधा तोला (एक शाण) स्वर्णमाक्षिकभस्म डालकर घोंटे। तदनन्तर रुद्रजटा, निसिन्धु (सँभालू) हर्रा, आमला और विषकण्टालिकाका स्वरस एक-एक शाण डालकर फिर घोंटे। घुँट जानेपर मूँगके बराबर गोलियें बनाकर रख ले। अदरखके रसमें इसे खाकर जीरा चबाना चाहिए। यह भीषण सन्निपातका शमन करनेवाला स्वच्छन्द भैरव रस है। ग्रहणी और प्रसूतजनित रोगोंको भी यह मार भगाता है। इसमें कुछ संशय नहीं है ॥९९-१०२॥

शीताङ्ग सन्निपातके लक्षण

शीतं शरीरं शीताङ्गे छर्द्यतीसारकम्पनम्।
क्षुद्विघातोऽङ्गमर्दश्च हिक्का श्वासः क्लमो वमिः।
सर्वाङ्गशिथिलत्वञ्च सन्निपाते प्रजायते ॥१०३॥

जब कि शरीर ठंढा हो जाय, जी मिचलाय, दस्त हो, शरीर काँपने लगे, भूख न लगे, अंग-अंग टूटें, हिचकी आने लगे, श्वास तीव्र हो जाय, वमन हो और सभी अङ्ग शिथिल पड़ जायँ, तब समझे कि यह शीताङ्गसन्निपात है ॥१०३॥

आनन्दभैरव रस

हिंगुलञ्च विषं व्योषं मरिचं टङ्कणं कणा।
जातीकोषसमं चूर्णं जम्बीरद्रवमर्दितम्।
रक्तिमानां वटीं कुर्यात् खादेदार्द्रकसंयुताम् ॥१०४॥
वटीद्वयं त्रयं वापि सन्निपाते सुदारुणे।
ज्वरमष्टविधं हन्ति तथाऽऽतीसारनाशनः ॥१०५॥
जीर्णज्वरहरश्चैव तथा सर्वाङ्गभेदकः।
आमवातादिरोगञ्च नाशयेदविकल्पतः ॥१०६॥

शुद्ध सिंगरिफ, शुद्ध वत्सनाभ विष, सोंठ, मिर्च, पिप्पली और जावित्रीका चूर्ण सब वस्तुयें समभाग जुटाकर जँभीरी नीबूके रसमें घोंटे। घुट जानेपर एक-एक रत्तीकी गोलियें बनाकर रख ले। इसकी एक गोली आदीके रसमें सेवन करे। सन्निपातका दारुण प्रकोप होनेपर दो और तीन गोली भी दी जा सकती है। इसके सेवनसे आठों प्रकारके ज्वर, अतीसार एवं जीर्ण (पुराना) ज्वर नष्ट हो जाता

है। इससे अकड़े हुए अंग ढीले हो जाते और आमवातादि अनेक रोगोंमें आराम होता है ॥१०४–१०६॥

आनन्दभैरवी वटिका

विषं त्रिकटुकं गन्धं टङ्कणं मृतशुल्वकम्।
धुस्तूरस्य च बीजानि हिंगुलं नवमं स्मृतम् ॥१०७॥
एतानि समभागानि दिनैकं विजयाद्रवैः।
मर्दयेच्चणकाभान्तु वटीञ्चानन्दभैरवीम् ॥१०८॥
भक्षयेच्च पिबेच्चानु रविमूलकषायकम्।
सव्योषं हन्ति नो चित्रं सन्निपातं सुदारुणम्।
शीतांगे सन्निपाते वा सामान्ये वा त्रिदोषजे ॥१०९॥
धन्याकपिप्पली शुण्ठी कटुकी कण्टकारिका।
पिप्पलीसंयुतं क्वाथं चतुर्गुञ्जा च पर्पटी।
सन्निपातज्वरं हन्ति वटिकाऽऽनंदभैरवी ॥११०॥
मूलञ्च कटुरोहिण्याः समं विल्वं सजीरकम्।
दध्ना पिष्टं पिबेच्चानु वटीं चानंदभैरवीम् ॥१११॥
सन्निपातातिसारघ्नी पथ्यं शाकविवर्जितम्।
आनंदभैरवीं पीत्वा क्वाथं वरुणसम्भवम्।
पाययेदश्मरीं हन्ति सप्तरात्रान्न संशयः ॥११२॥
वागुजीसम्भवैस्तैलैर्वटीञ्चानन्दभैरवीम्।
लेहयेन्निष्कमात्रान्तु गलत्कुष्ठञ्च नाशयेत् ॥११३॥
दधिमस्तुसिताक्षौद्रैर्वटीञ्चानंदभैरवीम्।
भक्षयेन्मूत्रकृच्छ्रार्त्तो यवक्षारं सिताऽन्वितम् ॥११४॥
गोदुग्धं क्वथितञ्चानु शीतलं मधुना पिबेत्।
गुञ्जामूलं पिबेत्क्षीरैरनुपानं प्रशस्यते ॥११५॥
अनेन चानुपानेन वटिकाऽऽनंदभैरवी।
देया रुद्रजटाक्षौद्रैः सर्वमेहप्रशांतये ॥११६॥

शुद्ध विष, सोंठ, कालीमिर्च तथा सोंठका चूर्ण, शुद्ध गंधक, शुद्ध सोहागा, ताम्रभस्म, धतूरेके बीज और शुद्ध सिंगरिफ, ये द्रव्य समभाग एकत्रित करके दिन भर

विजया (भाँग) के रसमें घोंटे और घुँट जानेपर चनेके बराबर गोलियें बनाकर रख ले। इसे यदि मदारकी जड़के काढ़ेमें सोंठ-मिर्च-पिप्पलीका चूर्ण मिलाकर दिया जाय तो अति भयानक सन्निपात भी नष्ट हो जाता है। यह शीताङ्गसन्निपात, सामान्यज्वर और त्रिदोषज्वरमें भी काम करती है। धनियाँ, पिप्पली, सोंठ, कुटकी और भट-कटैयाके काढ़ेमें चार रत्ती पर्पटी अथवा आनन्दभैरवीकी एक मात्रा देनेसे सन्निपात ज्वर दूर हो जाता है। यदि आनन्दभैरवीकी मात्रा लेनेके बाद कटुकीकी जड़, बेल तथा जीराको दहीमें पीसकर खाय तो सन्निपातज्वर तथा अतिसार दोनों ही शान्त हो जाते हैं। हाँ, पथ्यमें शाक न देना चाहिए। यदि आनन्द-भैरवीका सेवन करके बादमें वरुणका क्वाथ पावे तो सात ही दिनमें पथरी अवश्य निवृत्त हो जाती है। बकुचीके तेलमें मिलाकर यदि आनन्दभैरवी रस चटाया जाय तो गलित कुष्ठरोग दूर हो जाता है। यदि दहीके तोड़ (जल) में मिश्री तथा शहद मिलाकर आनन्दभैरवी दी जाय अथवा गायका दूध उबाल और ठंढा करके उसमें जवाखार तथा मिश्री मिलाकर आनन्दभैरवी दे तो मूत्रकृच्छ्र रोग मिट जाता है। यदि रत्तीकी जड़ दूधमें डालकर आनन्दभैरवीके साथ पिये अथवा रुद्रजटा और शहदमें मिलाकर आनन्दभैरवी वटिका चाटे तो सब प्रकारके प्रमेह शान्त हो जाते हैं॥१०७-११६॥

प्राणेश्वर रस

शुद्धसूतं तथा गन्धं सूतार्द्धं विषसंयुतम्।
समं तन्मर्दयेत्तालमूलीनीरैस्त्र्यहं बुधः॥११७॥
पूरयेत्कूपिकाऽन्ते च सन्निरुध्य विशोषयेत्।
सप्तभिर्मृत्तिकावस्त्रैर्वेष्टयित्वा तु शोषयेत्॥११८॥
पुटेत्कुम्भीप्रमाणेन स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
गृहीत्वा कूपिकायाश्च मर्दयेच्च दिनं ततः॥११९॥
अजाजी जीरकं हिंगुसर्जिकाटङ्कणैर्युतम्।
गुग्गुलुः पञ्चलवणं यवक्षारो यमानिका॥१२०॥
मरिचं पिप्पली चैव प्रत्येकञ्च समांशतः।
एषां कषायेण पुनर्भावयेत्सप्तधाऽऽतपे॥१२१॥

नागवल्लीदलयुतं पञ्चगुञ्जं रसेश्वरम् ।
दद्यान्नवज्वरे तीव्रे कोष्णं वारि पिबेदनु ॥१२२॥
प्राणेश्वररसो नाम्ना सन्निपातप्रकोपजित् ।
शीतज्वरे दाहपूर्वे गुल्मे शूले त्रिदोषजे ॥१२३॥
वाञ्छितं भोजनं दद्यात्कुर्य्याच्चन्दनलेपनम् ।
तापोद्रेकप्रशमनो नानाऽतीसारनाशनः ।
भवेच्च नात्र सन्देहः स्वास्थ्यञ्च लभते नरः ॥१२४॥

शुद्ध पारा तथा शुद्ध गंधक समभाग और इनका आधा शुद्ध वत्सनाभ विष ले । पारा-गंधककी कज्जली करके तालमूली (मुसली) के रसमें तीन दिनोंतक घोंटे । घुँट जानेपर इसे एक काँचकी कुप्पीमें रखकर उसपर सात कपड़मिट्टी करके सुखा ले । तब बालुकायंत्रमें रखकर गजपुटविधानसे आँच दे । स्वांगशीतल होनेपर निकाले और दिनभर भलीभाँति घोटे । तब काला जीरा, सफेद जीरा, हींग, सज्जी, सोहागा, गूगुल, पाँचों नमक, जवाखार, अजवायन, कालीमिर्च और पिप्पली, ये वस्तुएँ समभाग ले और इनका काढ़ा बनाकर कुप्पीसे निकली हुई दवाको इस काढ़ेकी सात भावना देकर धूपमें सुखा ले । यदि पानके रसमें पाँच रत्ती यह प्राणेश्वर रस दिया जाय और बादमें रोगीको गरम जल पिलावे तो तीव्र नवज्वर-का वेग रुक जाता है । यह प्राणेश्वर रस सन्निपातका प्रकोप शान्त करता और शीतज्वर, दाहपूर्वज्वर, गुल्म तथा त्रिदोषसे जायमान शूलमें भी यह उपकार करता है । इसका सेवन करते समय रोगी स्वेच्छानुसार भोजन कर सकता है । यदि माथेमें गर्मी विशेष जान पड़े तो चन्दनका लेप करना चाहिए । यह तापकी बढ़ती-को रोकता और विविध प्रकारके अतीसारको नष्ट करता है । इसका सेवन करके मनुष्य अवश्य स्वास्थ्यलाभ करता है ॥११७–१२४॥

सन्निपातभैरव रस

ताम्रं गन्धं रसं श्वेतगुञ्जामरिचपूतनाः ।
समीनपित्तजैपालान्तुल्यानेकत्र मर्दयेत् ॥१२५॥
गुञ्जाचतुष्टयञ्चास्य नवज्वरहरं परम् ।
ज्वरांकुशः सन्निपातभैरवोऽयं प्रकाशितः ॥१२६॥

ताम्रभस्म, शुद्ध गंधक, शुद्ध पारा, सफेद रत्ती, काली मि ं और हर्रैका चूर्ण, मछलीका पित्त तथा शुद्ध जमालगोटा, ये द्रव्य समभाग ले और सबको एकमें घोंटे और गोली बनाकर रख ले । यदि चार रत्तीकी मात्रा दी जाय तो यह नये ज्वरको मार भगाता है । इसका नाम ही 'सन्निपात-भैरव' है । सभी ज्वरोंके लिए यह अंकुशस्वरूप है । (ग्रन्थकारने ४ रत्तीकी मात्रा लिखी है, किन्तु आज-कल देश, काल और अवस्थाके अनुसार मात्रा देनी चाहिए । बहुतोंका तो कहना है कि १ रत्ती मात्रा पर्याप्त है) ॥१२५॥१२६॥

शीतभंजी रस

रसो हिंगुलगन्धश्च जैपालं सम्मितन्त्रिभिः ।
दन्तीक्वाथेन संमर्द्य रसो ज्वरहरः परः ॥१२७॥

आर्द्रकस्य रसेनैव दापयेद्रत्तिकाद्वयम् ।
नवज्वरं महाघोरं नाशयेद्यामम़ात्रतः ॥१२८॥
शर्करादधिभक्तञ्च पथ्यं देयं प्रयत्नतः ।
शीततोयं पिवेच्चानु इक्षुमुद्गरसो हितः ।
शीतभञ्जी रसो नाम सर्वज्वरकुलान्तकः ॥१२९॥

शुद्ध पारा, शुद्ध सिंगरिफ और शुद्ध गंधक एक-एक भाग, शुद्ध जमालगोटा तीन भाग लेकर दन्तीमूलके क्वाथमें भलीभाँति घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले । यदि आदीके रसमें इसकी एक गोली दी जाय तो महाभयानक नव-ज्वर पहर ही भरमें शान्त हो जाता है । भूख लगनेपर रोगीको चीनी मिला हुआ दही-भात पथ्यमें देना चाहिये । इसका सेवन करनेपर यदि रोगीको कुछ गरमी मालूम दे तो ठंढा जल, ऊँखका रस अथवा मूँगका जूस देना चाहिए । सब ज्वरोंका नाशक यह शीतभंजी रस है ॥१२७–१२९॥

उन्मत्त रस

रसं गन्धञ्च तुल्यांशं धुस्तूरफलजैर्द्रवैः ।
मर्दयेद्दिनमेकन्तु तुल्यं त्रिकटुकं क्षिपेत् ॥१३०॥
उन्मत्ताख्यो रसो नाम नस्ये स्यात्सन्निपातजित् ।
सन्निपातार्णवे मग्नं योऽभ्युद्धरति रोगिणम् ।
कस्तेन न कृतो धर्म्मः काञ्च पूजां न सोऽर्हति ॥१३१॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक दोनों समभाग लेकर धतूरेके फलके रसमें दिन-भर घोंटे। फिर इसमें सोंठ-मिर्च-पिप्पलीका चूर्ण दो-दो भाग डालकर भलीभाँति घोंटे। इसका नस्य देनेसे सन्निपात ज्वर दूर हो जाता है। यह रस 'उन्मत्त रस' नामसे प्रसिद्ध है। जो कुशल वैद्य सन्निपातरूपी समुद्रमें डूबते हुए रोगीको निकाल ले, उसने कौन-सा धर्म नहीं कर डाला और वह किस पूजाको पानेका अधिकारी नहीं रह गया? ॥ १३० ॥ १३१ ॥

मृतसंजीवन रस

म्लेच्छस्य भागाश्चत्वारो जैपालस्य त्रयो मताः।
द्वौ भागौ टङ्कणस्यैव भागैकममृतस्य च ॥१३२॥
तत्सर्वं मर्दयेत् श्लक्ष्णं यामं चैव भिषग्वरः।
शृङ्गवेराम्बुना देयो व्योषचित्रकसैन्धवैः ॥१३३॥
माषद्वयसितस्तापं हरत्येष विनिश्चयः ॥१३४॥
घनसारेण सारेण चंदनेन विलेपनम्।
विदध्यात्कांस्यपात्रे च सेचयेद्रोगिणं भिषक्।
शाल्यन्नं तक्रसहितं भोजयेदिक्षुसंयुतम् ॥१३५॥
सन्निपाते महाघोरे त्रिदोषे विषमज्वरे।
आमवाते वातशूले प्लीह्नि रोगे जलोदरे ॥१३६॥
शीतपूर्वे दाहपूर्वे विषमे सततज्वरे।
अग्निमांद्ये च वाते च प्रयोज्योऽयं रसेश्वरः।
मृतसञ्जीवनो नाम विख्यातोऽयं रसायने ॥१३७॥

ताम्रभस्म ४ भाग, शुद्ध जमालगोटा ३ भाग, शुद्ध सोहागा दो भाग और शुद्ध वत्सनाभविष १ भाग, इन द्रव्योंको लेकर विज्ञ वैद्य खूब महीन करके घोंटे। यदि अदरखके रसमें दो मासा सोंठ-मिर्च-पिप्पली तथा चीताका चूर्ण डालकर एक रत्ती यह रस दिया जाय तो यह तुरन्त ज्वरके दाहको नष्ट कर देता है। इसका सेवन करनेपर यदि गरमी विशेष मालूम दे तो शरीरमें कपूर तथा चन्दनका लेप कर दे अथवा काँसेके बर्तनमें बिठाकर रोगीको नहला दे। भूख लगनेपर साठीका चावल और मट्ठा खिलावे। पीनेको ऊँखका रस दे। दारुण सन्निपात, त्रिदोष, विषमज्वर, आमवात, वातशूल, गुल्म, प्लीहा, जलोदर, शीत-

पूर्व, दाहपूर्व, विषम तथा सततज्वर, अग्निमांद्य एवं सभी वातरोगोंपर इसका प्रयोग किया जा सकता है। रसायनकामें यह मृतसंजीवन रसके नामसे विख्यात है ॥ १३२–१३७ ॥

वडवानल रस

शुद्धताम्रस्य भागैकं मरिचस्य तथैव च।
विषं तत्तुल्यकं दद्यात्तत्सर्वं श्लक्ष्णचूर्णितम् ॥१३८॥
लाङ्गलीरससंयुक्तं तत्सर्वं पुटके पचेत्।
रक्तिकाद्वितयं वाऽपि त्रितयं वा प्रकल्पयेत् ॥१३९॥
दोषे व्योपसमायुक्तः त्रिदोपशमनो भवेत्।
भक्षयेत्पवने चोग्रे वडवानलसंज्ञितम् ॥१४०॥

ताम्रभस्म, मिर्च और शुद्ध विष, ये तीनों समभाग लेकर खूब महीन घोंटे। तदनन्तर लांगली (कलिहारी) के रसमें घोंटकर गजपुटमें पकावे। यदि सोंठ-मिर्च-पिप्पलीके चूर्णमें इसकी एक, दो या तीन रत्तीकी मात्रा दी जाय तो त्रिदोषज्वर नष्ट हो जाते हैं। यदि वायु कुपित हो तो भी यह स्वल्पवडवानल रस देना चाहिए। (यद्यपि ग्रन्थकारने एकसे तीन रत्ती तककी मात्रा लिखी है, किन्तु आजकल आधी रत्ती ही पर्याप्त है) ॥१३८–१४० ॥

बृहद्वडवानल

सूतकं गन्धकञ्चैव हरितालं मनःशिला।
अभ्रकं वत्सनाभञ्च दारुजंगमजं विषम् ॥१४१॥
जैपालात्सार्द्धशतकं सर्वं सञ्चूर्ण्य मर्दयेत्।
मत्स्यमाहिषमायूरच्छागपित्तैर्विभावयेत् ॥१४२॥
वटिकां शीततोयेन कुर्य्याद्गुञ्जाप्रमाणतः।
वडवानलनामायं नारिकेलजलेन वै।
भक्षयेत्सन्निपातार्त्तो मुक्तस्तस्मात्सुखी भवेत् ॥१४३॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध मैनसिल, अभ्रकभस्म, शुद्ध वत्सनाभ विष, शुद्ध संखिया विष और शुद्ध सर्पविष, ये वस्तुयें समभाग और शुद्ध जमालगोटेके १५० बीज लेकर सर्वप्रथम गन्धक और पारेकी कज्जली करे। तदनन्तर मैनसिल आदि वस्तुयें मिला तथा एकमें घोंटकर मछली, भैंसा, मयूर तथा बकरेके पित्तमें

भावना दे और भलीभाँति घोंटकर एक-एक रत्तीकी गोली बना ले। आजकल सरसों भरकी मात्रा पर्याप्त होगी। ठण्ढे जलके साथ इसे सेवन करना चाहिए। यह बृहद्वडवानल नामक रस है। यदि नारियलके जलमें सन्निपातके रोगीको यह रस दिया जाय तो वह रोगमुक्त होकर सुखी होता है॥ १४१-१४३॥

सूचिकाभरण रस

रसगन्धकनागञ्च विषं स्थावरजंगमम्।
मात्स्यवाराहमायूरच्छागपित्तैर्विभावयेत् ॥१४४॥
सूचिकाभरणो नाम भैरवेण प्रकीर्त्तितः।
सूचिकाग्रेण दातव्यः सन्निपातनिबर्हणः॥१४५॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, नागभस्म, शुद्ध स्थावर विष और शुद्ध जंगम विष (सर्पविष) ये वस्तुएँ समभाग लेकर भलीभाँति घोंटे। फिर मछली, सुअर, मयूर और बकरेके पित्तमें भावना दे। यह साक्षात् भैरवका कहा हुआ सूचिकाभरण रस है। यदि सुईकी नोक बराबर इसकी मात्रा दी जाय तो सन्निपात दूर हो जाता है॥ १४४॥१४५॥

पञ्चानन रस

शम्भोः कण्ठविभूषणं समरिचं दैत्येन्द्ररक्ते रविः
पक्षौ सागरलोचनं शशियुगं भागोऽर्कसंख्यान्वितः।
खल्ले तत्परिमर्दितं रविजलैर्गुञ्जैकमात्रं ददेत्
सिंहोऽयं ज्वरदन्तिदर्पदलनः पंचाननाख्यो रसः॥१४६॥

शुद्धकालकूट (वत्सनाभ) विष २ तोला, कालीमिर्च ४ तोला, शुद्ध गंधक ३ तोला, शुद्ध सिंगरिफ १ तोला और ताम्रभस्म २ तोला, सब मिलाकर इन बारह तोला द्रव्योंको मदारके दूधमें भलीभाँति घोंटे। घुँट जानेपर एक-एक रत्तीकी गोली बनाकर रख ले। यदि इसकी एक गोली दी जाय तो यह ज्वररूपी गजराजका दर्प दलन करनेके लिए सिंहका कार्य करता है अर्थात् ज्वर अवश्य दूर हो जाता है॥१४६॥

त्रिदोषनीहारविनाशसूर्य रस

रसेन गन्धं द्विगुणं कृशानो रसैर्विमर्द्याष्टदिनानि घर्मे।
रसाष्टभागन्त्वमृतञ्च दद्याद्विमर्दयेद्वह्निरसेन किञ्चित्॥१४७॥

पित्तैस्तु संभावित एष देयस्त्रिदोषनीहारविनाशसूर्य्यः ॥१४८॥

शुद्ध पारा १ भाग और शुद्ध गन्धक २ भाग ले और कज्जली करके चीतेके रससे धूपमें आठ दिन तक बराबर घोंटे। फिर पारे तथा गन्धकका अष्टमांश शुद्ध विष डालकर पुनः चीतेके रसमें घोंटे। तदनन्तर मछली-मयूर आदि पाँच पित्तोंमें भावना दे तथा एक-एक रत्तीकी गोली बनाकर सन्निपातग्रस्त रोगीको दे तो शीघ्र लाभ होता है। यह त्रिदोष (सन्निपात) रूपी नीहार (हिम) को नष्ट करनेमें सूर्यके समान प्रबल रस है ॥१४७॥१४८॥

रसराजेन्द्र

पलं शुद्धस्य सूतस्य पलं ताम्रमयस्तथा।
अभ्रं नागं पलं वङ्गं पलं गन्धकतालकम् ॥१४९॥
पलं शुद्धविषं चूर्णं सर्वमेकत्र कारयेत्।
मर्दयेत्काकमाच्याश्च सार्द्रकस्य रसेन च ॥१५०॥
मात्स्यवाराहमायूरच्छागमाहिषपित्तकैः।
मर्दयेद्भिन्नभिन्नञ्च त्रिकटोरम्बुभिस्तथा।
सिद्धोऽयं रसराजेन्द्रो धन्वन्तरिसुसंस्कृतः ॥१५१॥
गुञ्जामात्रं रसं दद्यात्सुरसारससंयुतम्।
मेघवारिप्रवाहेण धारितं वारि मस्तके ॥१५२॥
अनिवारो यदा दाहस्तदा देया च शर्करा।
भोजनं दधिसंयुक्तं वारमेकन्तु दापयेत् ॥१५३॥
ईश्वरेण हतः कामः केशवेन च दानवः।
पावकेन यथा शीतमनेन च तथा ज्वरः ॥१५४॥

शुद्ध पारा १ पल, ताम्र तथा लौहभस्म एक-एक पल, अभ्रकभस्म, नागभस्म, बंगभस्म, शुद्ध गंधक, शुद्ध हड़ताल एवं शुद्ध वत्सनाभ विष इन सभी द्रव्योंको एक-एक पल लेकर पहले गंधक-पारेकी कज्जली कर ले। तब अन्य द्रव्योंको इसमें मिला-कर भलीभाँति घोंटे। तदनन्तर मकोय तथा आदीके रस और मछली, मयूर, सुअर, बकरा एवं भैंसेके पित्तमें अलग-अलग घोंटे। इसके बाद सोंठ-मिर्च-पिप्पलीके क्वाथमें घोंटकर एक-एक रत्तीकी गोलियें बना ले। यह साक्षात् धन्वतरि भगवानके द्वारा निर्मित रसराजेन्द्र है। तुलसीपत्रके रसमें इसकी एक गोली देकर माथेपर जलधारा

दे। यदि दाह बहुत अधिक हो तो खाँड़ खिलावे। भूख लगनेपर दहीयुक्त भोजन केवल एक बार खानेको दे। जैसे शंकरभगवान्ने कामदेवको तथा विष्णुने दैत्योंको नष्ट कर दिया था और जैसे अग्नि शीतका शमन करता है, उसी प्रकार रसराजेन्द्र ज्वरको नष्ट कर देता है ॥१४६–१५४॥

अन्य मृतसंजीवन रस

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं खल्ले तत्कज्जलीकृतम्।
अभ्रलौहकयोर्भस्म ताम्रभस्म समं समम् ॥१५५॥
विषतालं वराटञ्च शिलाहिंगुलचित्रकान्।
हस्तिशुण्डी चातिविषा त्र्यूषणं हेममाक्षिकम् ॥१५६॥
चूर्णं विमर्दयेद्द्रावैरार्द्रकस्य दिनत्रयम्।
निर्गुण्डीविजयाद्रावैस्त्रिदिनं मर्दयेत्पुनः ॥१५७॥
काचकूप्यां निवेश्याथ वालुकायंत्रके पचेत्।
द्वियामान्ते समुद्धृत्य मर्दयेदार्द्रकद्रवैः ॥१५८॥
मृतसंजीवनो नाम रसोऽयं शङ्करोदितः।
मृतोऽपि सन्निपातार्त्तो जीवत्येव न संशयः ॥१५६॥

शुद्ध पारा १ भाग और शुद्ध गंधक २ भाग, इनकी कज्जली करे। तब तब अभ्रक लौह तथा ताम्रभस्म, शुद्ध विष, शुद्ध हड़ताल, शुद्ध सिंगरिफ, कौड़ीकी भस्म, शुद्ध मैनसिल, चीता-हस्तिशुण्डी-अतीस-सोंठ-मिर्च-पिप्पलीका चूर्ण और स्वर्णमाक्षिकभस्म, इन सब द्रव्योंको दो-दो भागके परिमाणमें डालकर तीन दिनतक आदीके रसमें, फिर तीन दिन निर्गुण्डीके रसमें और इसके बाद तीन दिन भाँगके रसमें घोंटे। तब इसे एक काँचकी कुप्पीमें रखकर बालुकायंत्र द्वारा आँच दे। दोपहर तक पक जानेपर जब वह स्वांगशीतल हो जाय, तब आदीके रसमें घोंटकर एक-एक रत्तीकी गोलियें बना ले। यह साक्षात् शङ्करभगवान्का बताया हुआ मृतसंजीवन रस है। इसका सेवन करनेसे मृत्युके मुखमें पड़ा हुआ भी सन्निपातका रोगी अवश्य जी जाता है ॥१५५–१५६॥

गंधककी कज्जली करनेकी विधि

कण्टकारी सिन्धुवारस्तथा नाटाकरंजकम्।
प्रक्षिप्य गन्धकं तत्र ज्वालां मृद्वग्निना पचेत् ॥१६०॥

अमीषां रसमादाय कृत्वा खर्परखण्डके।
गन्धके स्नेहतापन्ने पारदं तत्समं क्षिपेत् ॥१६१॥
मिश्रीकृत्य ततो द्वाभ्यां द्रवं तमवतारयेत्।
आमर्दयेत्तथा तन्तु यथा स्यात्कज्जलप्रभम् ॥१६२॥
ततस्तु रक्तिकामस्य जीरकस्य च माषकम्।
माषैकं लवणस्यापि पर्णे कृत्वा प्रदापयेत्।
ज्वरे त्रिदोषजे घोरे जलमुष्णं पिबेदनु ॥१६३॥
छर्द्यां शर्करया दद्यात्सामे दद्यात्तथा गुडम्।
क्षये च छागदुग्धं स्यादनुपानं प्रयोजितम् ॥१६४॥
रक्तातिसारे कुटजमूलवल्कलजं रसम्।
रक्तक्षये तथा दद्यादुडुम्बरभवं रसम् ॥१६५॥
सर्वव्याधिहरश्चायं गन्धकः कज्जलीकृतः।
आयुर्वृद्धिकरश्चायं मृतञ्चापि प्रबोधयेत् ॥१६६॥
ये रसाः पित्तसंयुक्ताः प्रोक्ताः सर्वत्र शम्भुना।
जलसेकावगाहैश्च बलिनस्ते तु नान्यथा।
यथालाभेन पित्तेन रसाः सर्वे भवन्ति हि ॥१६७॥

कण्टकारी (कटेरी) संभालू और नाटा करंज, इनका रस समभाग लेकर एक मिट्टीके पात्रमें डालकर इसीमें शुद्ध गंधक डाल दे। अब इस पात्रको भट्ठी-पर चढ़ाकर मन्द-मन्द आँच दे। जब गंधक पिघल जाय, तब गंधकके बराबर शुद्ध पारा भी उसीमें डाल दे। अब उन दोनोंको एकमें मिलाकर भट्ठीपरसे उतार ले और फिर खरलमें इतना घोंटे कि वह काजलके समान काला हो जाय। यही गंधककी कज्जली है। यदि एक मासा जीराके चूर्ण अथवा एक मासा नमकमें पानके पत्तेपर यह एक रत्ती दी जाय और ऊपरसे गरम जल पिलावे तो त्रिदोष-जनित ज्वर शीघ्र छूट जाता है। यदि उक्त ज्वरमें वमन भी होता हो तो इसे खाँड़में दे। आँवके ज्वरमें गुड़के साथ, क्षयरोगमें बकरीके दूधके साथ, रक्ता-तिसारमें कुटज (कोरैया) की छालके रसमें और रक्तार्श (खूनी बवासीर) में गूलरके रसमें इसे देना चाहिये। यह कज्जलीकृत गंधक सब व्याधियें हरती, आयु बढ़ाती तथा मरे हुए मनुष्यको भी जीवित कर देती है। श्रीशंकरभगवानने जिन-

जिन रसोंको पित्तोंसे भावना देकर बनानेको कहा है, उनका सेवन करानेपर जलका छींटा देना और स्नान कराने आदिका कार्य अवश्य कराना चाहिये। ऐसा करनेपर ही ये रस अपना पूर्ण प्रभाव दिखा पाते हैं—अन्यथा नहीं। (ऐसा न करनेसे कभी-कभी लाभके बजाय हानि हो जाती है। क्योंकि पित्तभावित रस बहुत गरम होते हैं)॥ १६०–१६७॥

वेताल रस

रसं गन्धं विषञ्चैव मरिचाऽऽल समांशिकम्।
शिलायां मर्दयेद्यावत्तावज्जायेत कज्जलम् ॥१६८॥
गुञ्जामात्रं प्रयोक्तव्यं हरेद्द्वादश ज्ञकम्।
साध्यासाध्यं निहन्त्याशु सन्निपातं सुदारुणम् ॥१६९॥
दन्तपंक्तिर्दृढा यस्य लोचने भ्रान्ततारके।
चलिते चेन्द्रियग्रामे वेतालं विनियोजयेत् ॥१७०॥
म्लानेषु लिप्तदेहेषु मोहग्रस्तेषु देहिषु।
दातुमर्हति वेतालं यमदूतनिवारकम् ॥१७१॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध वत्सनाभ विष, शुद्ध हड़ताल और काली मिर्च-का चूर्ण, ये द्रव्य समभाग लेकर भली भाँति तबतक घोंटे, जबतक वह काजलकी तरह काला न हो जाय। इसकी एक रत्तीकी मात्रा देनेसे बारह प्रकारके साध्य और असाध्य सन्निपात तुरन्त दूर हो जाते हैं। उग्र सन्निपातके प्रकोपसे जिस रोगीके दाँत बैठ गये हों, आँखोंकी पुतलियें नाच रही हों और सब इन्द्रियें अपना-अपना काम छोड़ चुकी हों, ऐसे अवसरपर इस वेताल रसका प्रयोग करना चाहिए। जब रोगीकी आकृत पीली पड़ गयी हो, देहमें चिटपिटापन आ गया हो और रोगी एकदम मूर्छित हो गया हो, ऐसे समय यमदूतको भी लौटा देने-वाला यह वेताल रस उपयोगमें लाना चाहिए ॥ १६८--१७१ ॥

चन्द्रशेखर रस

शुद्धसूतं समं गन्धं मरिचं टङ्कणं तथा।
चतुस्तुल्या शिला योज्या मत्स्यपित्तेन भावयेत् ॥१७२॥
त्रिदिनं मर्दयेत्तेन रसोऽयं चन्द्रशेखरः।
द्विगुञ्जमार्द्रकद्रावैर्देयं शीतोदकं पुनः ॥१७३॥

तक्रभक्तञ्च वृन्ताकम्भिपक्तत्र प्रयोजयेत् ।
त्रिदिनचछ्लेष्मपित्तोत्थमत्युष्णं नाशयेज्ज्वरम् ॥१७४॥

सर्वशुद्ध पारा, गंधक, सोहागा और मिर्चीका चूर्ण ये द्रव्य समभाग ले । इनमें ४ भाग शुद्ध मैनसिल मिलावे । इन सबको एकमें घोंटकर मछलीके पित्तमें भावना दे । फिर उसमेंसे निकालकर तीन दिन तक खरलमें घोंटे । घुट जाने पर दो-दो रत्तीकी गोलियें बनाकर रख ले । इसकी एक गोली आदीके रसमें खाकर टंढा जल पिये । पथ्यमें मंठा, भात और भंटेका शाक देना चाहिये । तीन दिन इसका सेवन करनेसे कफ एवं पित्तजनित ज्वर नष्ट हो जाता है ॥

कस्तूरीभैरव रस

हिङ्गुलञ्च विषं टङ्को जातीकोषफलं तथा ।
मरिचं पिप्पली चैव कस्तूरी च समांशिका ।
रक्तिद्वयं ततः खादेत्सन्निपाते सुदारुणे ॥१७५॥

सर्वशुद्ध सिंगरिफ, वत्सनाभ विष, सोहागा, जावित्री-जायफल, काली मिर्च, पिप्पलीका चूर्ण और कस्तूरी ये द्रव्य समभाग लेकर जलके साथ खूब घोंटे । घुट जाने पर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले । भयावह सन्निपातमें इसका उपयोग करे ॥

बृहत्कस्तूरी भैरव रस

मृतं वङ्गं खर्परञ्च कस्तूरी स्वर्णतारके ।
एतेषां समभागेन कर्षमेकं पृथक्पृथक् ।
मृतं कान्तं पलं देयं हेमसारं द्विकार्षिकम् ॥१७६॥
रसभस्म लवङ्गञ्च जातिकाफलमेव च ।
वक्ष्यमाणौषधैर्भाव्यं प्रत्येकं दिनसप्तकम् ॥१७७॥
द्रोणपुष्परसैर्वाऽपि नागवल्ल्या रसेन च ।
दत्त्वा द्विचन्द्रत्रिकटू यत्नतो वटिकाञ्चरेत् ॥१७८॥
वातात्मके सन्निपाते महाश्लेष्मगदेषु च ।
त्रिदोषजनिते घोरे सन्निपाते सुदारुणे ॥१७९॥
नष्टगर्भे नष्टशुक्रे प्रमेहे विषमज्वरे ।
कासे श्वासे क्षये गुल्मे महाशोथे महागदे ॥१८०॥
स्त्रीणां शतं गच्छतश्च न च शुक्रक्षयो भवेत् ।

एतान्सर्वान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥१८१॥

बंगभस्म, शुद्ध खपरिया, कस्तूरी, स्वर्णभस्म और रजतभस्म, ये द्रव्य अलग-अलग एक-एक कर्ष, कान्तलौहभस्म एक पल, स्वर्णमाक्षिकभस्म, रससिन्दूर, लौंग तथा जायफलका चूर्ण दो-दो कर्ष, इन द्रव्योंको एकत्रित करके द्रोणपुष्पी और पानके रसमें सात दिनोंतक भावना दे। फिर दो-दो कर्ष कपूर और सोंठ-मिर्च-पिप्पलीका चूर्ण मिलाकर भली भाँति घोंटे। घुट जानेपर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले। वातिक सन्निपात, महान् श्लेष्मजनित रोग, त्रिदोषज रोग, दारुण सन्निपात, नष्टगर्भ, नष्टशुक्र, प्रमेह, विषमज्वर, कास, श्वास, क्षय, गुल्म, महाशोथ आदि महारोगोंमें इसका उपयोग करना चाहिए। इसका सेवन करनेवाला मनुष्य यदि सौ स्त्रियोंके साथ भोग करे तो भी वीर्य क्षय नहीं होता। उपर्युक्त रोगोंको यह ऐसे नष्ट कर देता है, जैसे सूर्य अन्धकारको दूर कर देते हैं॥

अन्य वृहत्कस्तूरीभैरव रस

मृगमदशशिसूर्या धातकी शूकशिम्बीकनकरजतमुक्ताविद्रुमो लौहपाठाः।
क्रिमिरिपुघनविश्वातोयतालाभ्रधात्री रविवलरसपिष्टः कस्तुरीभैरवोऽयम्॥

कस्तूरीभैरवः ख्यातः सर्वज्वरविनाशनः।
आर्द्रकस्य रसैः पेयो विषमज्वरनाशनः ॥१८३॥

द्वन्द्वजान्भौतिकान्वाऽपि ज्वरान्कामादिसम्भवान्।
अभिचारकृतांश्चैव तथा शुक्रकृतान्पुनः।
निहन्याद्भक्षणादेव डाकिन्यादियुतांस्तथा ॥१८४॥

कस्तूरी, कपूर, ताम्रभस्म, धायके फूल, केवाँचके बीज, स्वर्णभस्म, रजतभस्म, मोतीभस्म, मूँगाभस्म, लौहभस्म, पाढ़, वायविडंग, मोथा-सोंठ-सुगन्धबालाका चूर्ण, शुद्ध हड़ताल, अभ्रकभस्म और आँवलाका चूर्ण, ये वस्तुयें समभाग एकत्रित करके सबको एक साथ मदारके दूधमें घोंटकर रत्ती-रत्ती भरकी गोली बना ले। यही सब ज्वरोंका नाशक कस्तूरीभैरव रस है। यदि आदीके रसमें इसे दिया जाय तो विषमज्वर भी भाग जाता है। इसका सेवन करनेसे द्वन्द्वज, भौतिक, काम-क्रोधादिसे जायमान, अभिचारजनित (किसीके द्वारा यंत्र-मंत्र करके प्रेषित), शुक्रसे उत्पन्न एवं डाकिनी आदिसे उत्पन्न ज्वर तत्काल दूर हो जाते हैं ॥१८२–१८४॥

सौभाग्य वटी

सौभाग्यामृतजीरपञ्चलवणव्योषाऽभयाक्षामला
निश्चन्द्राभ्रकशुद्धगंधकरसानेकीकृतान्भावयेत् ।
निर्गुण्डीयुगभृङ्गराजकवृषाऽपामार्गपत्रोल्लस-
त्प्रत्येकस्वरसेन सिद्धगुटिका हन्ति त्रिदोषोदयम् ॥१८५॥
येषां शीतमतीव दाहमखिलं स्वेदद्रवार्द्रीकृतं
निद्रा घोरतरा समस्तकरणव्यामोहमुग्धं मनः ।
शूलश्वासबलासकाससहितं मूर्च्छाऽरुचिस्तृड्ज्वरं
तेषां वै परिहृत्य मृत्युवदनात्प्रत्यानयेज्जीवनम् ॥१८६॥

शोधित सोहागा, शुद्ध विष, पाँचों लवण, जीरा-सोंठा-मिर्च-पिप्पली-हड़-बहेड़ा और आँवलाका चूर्ण, निश्चन्द्रक अभ्रकभस्म, शुद्ध गंधक और शुद्ध पारा ये द्रव्य समभाग लेकर सबको एकमें मिलाकर घोंटे । तदनन्तर निर्गुण्डी, भाँगरा, केशराज, बासा और अपामार्गपत्रके रसमें अलग-अलग भावना दे । इस प्रकार तैयार की हुई सौभाग्यवटी सन्निपातका शमन कर देती है । जिस ज्वररोगीको जाड़ा अधिक लगता हो या ज्वरकी गर्मीसे अत्यधिक पसीना होता हो, जिसको ज्वरमें विशेष नींद आवे और सभी इन्द्रियाँ एवं मन चक्करमें पड़ गया हो, ऐसे रोगीको सौभाग्यवटी देनी चाहिये । इनके अतिरिक्त शूल, श्वास, कास, कफ, मूर्च्छा, अरुचि एवं प्याससंयुक्त ज्वरको भी परास्त करके यह वटी रोगीको मृत्युके मुखसे बचा लेती और नया जीवन प्रदान करती है ॥१८५॥१८६॥

सन्निपातहर रस

पारदं गन्धकं टङ्कं सोषणं गजपिप्पली ।
व्योषं च धुस्तूरजलैः पिष्टं गुञ्जाद्वयं द्रुतम् ।
सन्निपातं निहन्त्यर्ककषायैर्व्योषचूर्णितैः ॥१८७॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध सोहागा, काली मिर्च, गजपिप्पली-सोंठ-मिर्च और पिप्पलीका चूर्ण, इन्हें समभाग लेकर धतूरेके रसमें भली भाँति घोंटे । घुट जानेपर दो-दो रत्तीकी गोलियाँ बना ले । इसका सेवन करके यदि मदारकी छालके काढ़ेमें सोंठ-मिर्च-पिप्पलीका चूर्ण डालकर पिये तो सन्निपात दूर हो जाता है ॥

सन्निपातवडवानल रस

रसाष्टकोऽमृतं सप्त षष्ठो गन्धकतालयोः ।
दन्तीबीजानि षड्भागः पञ्चभागन्तु टङ्कणम् ॥१८८॥
चत्वारि धूर्तबीजस्य व्योषस्य त्रितयो भवेत् ।
एतानि वह्निमूलस्य क्वाथेन परिमर्दयेत् ॥१८९॥
आर्द्रकस्य रसेनाथ देयं गुञ्जाद्वयं हितम् ।
वडवानलसंज्ञोऽयं सन्निपातहरः परः ॥१९०॥

शुद्ध पारा ८ भाग, शुद्ध विष ७ भाग, शुद्ध गंधक और हड़ताल छ-छ भाग, दन्तीके बीज ६ भाग, शुद्ध सोहागा ५ भाग, धतूरेके बीज ४ भाग, सोंठ-मिर्च-पिप्पलीका चूर्ण तीन-तीन भाग इन सबको पहले साधारण तौरसे कूटकर मदारकी जड़के काढ़ेमें भली भाँति घोंटे । घुट जानेपर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले । यदि सन्निपातके रोगीको आदीके रसमें इसकी एक गोली दी जाय तो उसका बड़ा उपकार होता है । यह 'सन्निपातवडवानल रस' सन्निपातको मार भगानेवाला श्रेष्ठ रस है ॥ १८८–१९० ॥

सिंहनादरस

लौहपात्रगते गन्धे द्राविते तत्र निक्षिपेत् ।
शुद्धसूतं समं चाभ्रं भार्गीद्रावं तयोः समम् ॥१९१॥
निर्गुण्ड्याः पल्लवोत्थञ्च तुल्यं तुल्यं प्रदापयेत् ।
पचेन्मृद्वग्निना तावद्यावच्छुष्कं द्रवद्वयम् ॥१९२॥
विषपादयुतः सोऽयं सिंहनादो रसोत्तमः ।
गुञ्जामात्रः प्रदातव्यः सन्निपातज्वरान्तकः ।
अनुपानं पिबेद्व्याघ्रीक्वाथं पुष्करचूर्णितम् ॥१९३॥

एक लोहेकी कड़ाहीमें शुद्ध गंधक डालकर आँचपर चढ़ा दे । जब वह पिघल जाय, तब जितनी गंधक हो उतना ही शुद्ध पारा, अभ्रकभस्म, भँगरैया और सँभालूका रस डालकर मन्द आँचमें पकावे । जब पानी जल जाय तो उपर्युक्त द्रव्यकी एक चौथाई शुद्ध वत्सनाभ विष डालकर भली भाँति घोंटे । घुट जानेपर रत्ती-रत्ती भरकी गोली बना ले । यही सर्वोत्तम सिंहनाद रस है । इसकी

एक गोली खाकर ऊपरसे छोटी कटेरीके काढ़ेमें पुष्करमूलका चूर्ण डालकर पीनेसे सन्निपात ज्वर छूट जाता है ॥ १६१-१६३ ॥

सन्निपातसूर्य रस

रसेन गन्धं द्विगुणं विमर्द्य तत्पादभागं रवितारहेम ।
भस्मीकृतं योजय मर्दयेत्तु दिनत्रयं वह्निरसेन घर्मे ॥१६४॥
विषञ्च दत्त्वाऽत्र कलाप्रमाणं मत्स्यादिपित्तैः परिभावयेच्च ।
वल्लद्वयं चास्य ददीत वह्निकटुत्रयार्द्रद्रवसंप्रयुक्तम् ॥१६५॥
तैलेन चाभ्यञ्जनमेव कुर्य्यात्स्नानं जलेनापि च शीतलेन ।
यावद्भवेद्दुःसहशीतमस्य मूत्रं पुरीषञ्च शरीरकम्पः ॥१६६॥
पथ्ये यदीहा परिजायतेऽस्य मरीचखण्डं दधिभक्तकञ्च ।
स्वल्पं ददीतार्द्रकमत्स्यशाकं दिनान्तरं स्नानविधिञ्च कुर्य्यात् ॥१६७॥

शुद्धपारा १ भाग और शुद्ध गंधक २ भाग दोनोंको एकमें घोंटकर कज्जली कर ले। फिर उसमें चौथाई-चौथाई भाग ताम्र, चाँदी और स्वर्णभस्म मिलाकर घोंटे। तदनन्तर चीतेका रस डालकर तीन दिन तक धूपमें रखकर घोंटे। अन्तमें सब द्रव्योंका षोडशांश शुद्ध विष मिलाकर मर्दन करे। फिर मछली-बकरे आदि आदि पूर्वोक्त पित्तोंमें भावना देकर तीन-तीन रत्तीकी गोली बना ले। चीता, सोंठ-मिर्च-पिप्पली एवं अदरखके काढ़े या रसमें इसे खिलाकर शरीरमें तेलकी मालिश करके स्नान करा दे। स्नान करनेपर जब रोगी असह्य ठण्ढकका अनुभव करता हुआ काँपने लगे और उसे टट्टी-पेशाबकी शंका हो चले, तब स्नान बन्द करा दे। यदि रोगी पथ्य लेना चाहे तो काली मिर्चका चूर्ण डालकर दही-भात खानेको दे। यदि शाककी इच्छा हो तो थोड़ा-सा अदरख मिला हुआ शाक दिया सकता है। तबीयत सुधर जानेपर दो-चार दिन बाद स्नान भी कराया जा सकता है ॥ १६४-१६७ ॥

अभिन्यासज्वरपर स्वच्छन्दनायक रस

सूतगन्धकलौहानि रौप्यं संमर्दयेत्त्र्यहम् ।
सूर्य्यावर्तश्च निर्गुंडी तुलसी गिरिकर्णिका ॥१६८॥
अग्निवल्ल्यार्द्रकं वह्निर्विजयाऽथ जया सह ।
काकमाचीरसैरेषां पञ्चपित्तैश्च भावयेत् ॥१६९॥

अन्धमूषागतं पश्चाद्वालुकायन्त्रगं दिनम् ।
विपचेच्चूर्णितं खादेन्माषैकं चार्द्रकद्रवैः ॥२००॥
निर्गुण्डीदशमूलानां कषायं सोषणं पिबेत् ।
अभिन्यासं निहन्त्याशु रसः स्वच्छन्दनायकः ।
छागीदुग्धेन मुद्गं वा पथ्यमत्र प्रयोजयेत् ॥२०१॥
मायूरमात्स्यवाराहच्छागमाहिषमेव च ।
पञ्चपित्तमिदं देयं भावनासु च सर्वदा ॥२०२॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, लौहभस्म, रजतभस्म, इन द्रव्योंका समभाग लेकर तीन दिन घोंटे । फिर सूर्यमुखी, निर्गुण्डी (संभालू) तुलसी, अपराजिता, अग्निवल्ली, अदरख, चीता, भाँग, जयन्ती और मकोयके रस तथा पंच पित्त(मोर, मछली, शूकर, बकरा और भैंसाके पित्त) में भावना दे । तदनन्तर इसे अन्धमूषामें रखकर सम्पुटित कर दे और बालुकायंत्रकी विधिसे दिनभर आँच देकर पकावे । शोजल हो जानेपर निकालकर चूर्ण कर ले । यदि आदीके रसमें इसका एक मासा चूर्ण खाकर ऊपरसे काली मिचका चूर्ण मिला भया निर्गुण्डी (संभालू) और दशमूलका काढ़ा पी ले तो यह रस अभिन्यासज्वरको शीघ्र मार डालता है । इसका उपयोग करनेवाले रोगीको बकरीका दूध अथवा मूँगकी दालका जूस देना चाहिए । जहाँ कहीं भी पित्तकी भावना देनेका विधान हो, वहाँ सर्वत्र मयूर, मछली, सुअर, बकरा और भैंसेका ही पित्त -काममें लाना चाहिए ॥ १९८–२०२ ॥

सन्निपातान्तक रस

शुद्धसूतः समो गंधः दरदः शुद्धखर्परम् ।
रसस्य द्विगुणौ देयौ मृतताम्राम्लवेतसौ ॥२०३॥
भृङ्गराजद्रवैर्भाव्यं प्रत्यहं भावना पृथक् ।
दातव्यं तच्चतुर्गुञ्जमार्द्रकस्य रसैः सह ।
सन्निपातं निहन्त्याशु सन्निपातान्तको रसः ॥२०४।

सर्वंशुद्ध पारा, गन्धक, सिंगरिफ और खपरिया एक-एक भाग, ताम्रभस्म तथा अमिलवेत दो दो भाग लेकर घोंटे । फिर भाँगरेके रसमें अलग-अलग ६ दिन तक भावना देकर चूर्ण कर ले । यदि आदीके रसमें चार रत्ती (आज-कल दोया

एक रत्ती) की मात्रा दी जाय तो यह सन्निपातान्तक रस सन्निपातज्वर को नष्ट कर देता है ॥ २०३ ॥ २०४ ॥

विषमज्वरके लक्षण

यः स्यादनियतात्कालाच्छीतोष्णाभ्यां तथैव च।
वेगतश्चापि विषमः स ज्वरो विषमः स्मृतः ॥२०५॥

जो ज्वर अपने समयपर न चढ़कर कभी समयके पहले और कभी बादमें चढ़े, कभी गर्मी और कभी सर्दी देकर चढ़े, जिसका ताप एक-सा न रहकर कभी कम और कभी ज्यादा रहता हो, ऐसे ज्वरकी विषमज्वर संज्ञा है ॥ २०५ ॥

जीर्णज्वरके लक्षण

त्रिसप्ताहव्यतीतस्तु ज्वरो यस्तनुतां गतः।
प्लीहाग्निसादं कुरुते स जीर्णज्वर उच्यते ॥२०६॥

इक्कीस दिन बीत जानेपर जो ज्वर अपने आप कम हो जाय और प्लीहा (तिल्ली) को बढ़ाकर कष्ट देता हुआ उदराग्निको मन्द कर दे, वह जीर्ण ज्वर कहलाता है ॥ २०६ ॥

ज्वरांकुश रस

प्रक्षिप्य गंधकं तत्र ज्वालां मृद्वग्निना ददेत्।
रसस्य द्विगुणं गन्धं गन्धतुल्यञ्च टङ्कणम्।
रसतुल्यं विषं योज्यं मरिचं पञ्चधा विषात् ॥२०७॥
दन्तीबीजं कट्फलञ्च प्रत्येकं मरिचोन्मितम्।
ज्वराङ्कुशो रसो नाम मर्दयेद्याममात्रकम्।
माषेकेण निहन्त्याशु ज्वरं जीर्णन्त्रिदोषजम् ॥२०८॥

शुद्ध पारा एक भाग, शुद्ध गन्धक और शुद्ध सोहागा दो-दो भाग, शुद्ध विष एक भाग, काली मिर्च, दन्तीबीज और कायफल पाँच-पाँच भाग, इनको एकत्र करके पहर भर घोंटकर रख ले। यही ज्वरांकुश रस है। यदि यह रस एक मासा खाय तो जीर्ण एवं त्रिदोषसे जायमान ज्वर नष्ट हो जाता है ॥२०७॥२०८॥

ज्वरारि अभ्रक

अभ्रं ताम्रं रसं गन्धं विषञ्चैव समं समम्।
द्विगुणं धूर्त्तबीजञ्च व्योषं पञ्चगुणं मतम् ॥२०९॥

आर्द्रकस्य रसेनैव वटी कार्य्या द्विगुञ्जिका।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं यथादोषानुसारतः।
अभ्रं ज्वरारिनामेदं सर्वज्वरविनाशनम् ॥२१०॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम्।
विषमाख्यान्ज्वरान्सर्वान्धातुस्थान्विषमज्वरान् ॥२११॥
प्लीहानं यकृतं गुल्ममग्रमांसं सशोथकम्।
हिक्कां श्वासञ्च कासञ्च मन्दानलमरोचकम् ॥२१२॥

अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, शुद्ध पारा-गन्धक-विष ये एक-एक भाग, धतूरेका बीज दो भाग, सोंठ-मिर्च-पिप्पलीका चूर्ण पाँच-पाँच भाग, इन सबको एकमें आदीके रससे घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। दोषके अनुसार अनुपान बदल-बदलकर यदि इस ज्वरारि अभ्रकका सेवन कराया जाय तो सब तरहके ज्वर नष्ट हो जाते हैं। वातज, पित्तज, कफज, सान्निपातिक, विषम एवं धातुगत सब प्रकारके विषम ज्वर, तिल्ली, यकृत्, गुल्म, अग्रमांस, शोथ, हिचकी, श्वास, कास, मन्दाग्नि और अरुचिको यह ऐसे नष्ट करता है, जैसे वृक्षपर बिजली गिरकर उसे नष्ट कर डालती है ॥ २०९-२१२ ॥

ज्वराशनि रस

रसं गन्धं सैन्धवञ्च विषं ताम्रं समांशिकम्।
सर्वं चूर्णसमं लौहं तत्समं शुद्धमभ्रकम् ॥२१३॥
लौहे च लोहदण्डे च निर्गुण्डीस्वरसेन च।
मर्दयेद्यत्नतः पश्चान्मरिचं सूततुल्यकम् ॥२१४॥
नागवल्ल्या दलेनैव दातव्यो रक्तिसम्मितः।
सर्वज्वरहरः श्रेष्ठो ज्वरान्हन्ति सुदारुणान् ॥२१५॥
कासं श्वासं महाघोरं विषमाख्यं ज्वरं वमिम्।
धातुस्थं परमं दाहं ज्वरं दोषत्रयोद्भवम् ॥२१६॥

शुद्ध पारा, गन्धक, सेंधानमक, शुद्ध वत्सनाभ विष और ताम्रभस्म ये द्रव्य समभाग और जितनी वजनके ये पाँचों मिलकर हों, उतनी लोहभस्म और उतनी ही अभ्रकभस्म ले। इन सबको एक लोहेके खरलमें डाल कर लोहेकी ही मुंगरीसे

निर्गुण्डीके रसके साथ खूब घोंटे । फिर इसमें पारे जितना काली मिर्चका चूर्ण डाल दे और जलके सहारे रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले । यदि पानके रसमें इसकी गोलीका सेवन किया जाय तो यह सब प्रकारके भयानक ज्वरोंको दूर करनेमें समर्थ होता है । इनके सिवाय कास, श्वास, विषमज्वर, वमन, धातुगत अतिशय तापयुक्त एवं त्रिदोषजनित ज्वरको भी यह नष्ट कर देता है ॥ २१३-२१६ ॥

अर्धनारीश्वर रस

रसगन्धौ समौ शुद्धौ विषं ग्राह्यञ्च तत्समम् ।
जैपालं तत्समं ग्राह्यं मरिचञ्च चतुर्गुणम् ॥२१७॥
त्रिफलाया रसैर्मर्द्यं भावना पञ्चधा तथा ।
जम्बीराणां द्रवैर्नस्यमेकस्मिन्नासिकापुटे ॥२१८॥
शरीरार्द्धगतं घोरं ज्वरं हन्ति न संशयः ।
अर्द्धनारीश्वरो नाम रसः शम्भुप्रकीर्त्तितः ॥२१९॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक समान भाग, शुद्ध वत्सनाभ विष दो भाग, शुद्ध जैपाल (जमालगोटा) दो भाग, काली मिर्चका चूर्ण चार भाग, इन्हें एकत्र करके त्रिफलाके रसमें घोटे । तब पाँच बार त्रिफलाके ही रसमें भावना दे । जब सूख जाय तो चूर्ण करके रख ले । यदि जँभीरी नीबूके रसमें इसे मिलाकर रोगीकी एक नाकमें नस्य दे तो आधी देहमें रहनेवाला उग्र ज्वर अवश्य नष्ट हो जाता है । यह शंकरभगवानका बनवाया हुआ अर्धनारीश्वर रस है ॥ २१७–२१९ ॥

चन्दनादि लौह

रक्तचंदनह्रीवेरपाठोशीरकणाशिवा ।
नागरोत्पलधात्रीभिर्विडमुस्ताग्निसंयुतम् ।
लौहं निहन्ति विविधान्समस्तान्विषमज्वरान् ॥२२०॥

लालचन्दन, सुगन्धबाला, पाढ़, खस, पिप्पली, हरीतकी, सोंठ, उत्पल (नीलोफर) आँवला, बायबिडंग, नागरमोथा और चीता इनका चूर्ण समान भाग और लौहभस्म बारह भाग सबको एकमें मिलाकर घोटे और घुँट जानेपर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले । यह चन्दनादि लौह प्रायः सब प्रकारके विषम ज्वरोंका शमन कर देता है ॥ २२० ॥

ज्वरारि रस

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं विषञ्चैव कटुत्रयम् ।
नागभस्म शिला चैव प्रत्येकं कर्षमानकम् ॥२२१॥
शुद्धतालार्द्धकर्षञ्च शुल्वमेकत्र कारयेत् ।
धुस्तूरस्य च वीजानि कार्षिकाणि प्रकल्पयेत् ॥२२२॥
रोहितमत्स्यपित्तेन अर्कक्षीरार्द्रकाम्वुना ।
मर्दयेदुदयास्तञ्च चणकाभा वटी कृता ॥२२३॥
आर्द्रकस्य रसैः कर्षैर्मधुमाषसमायुतम् ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय ज्वराररिससंज्ञितम् ॥२२४॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव कफजं नाशयेद्ध्रुवम् ।
वातपित्तसमुद्भूतं वातश्लैष्मिकमेव च ॥२२५॥
भयादुत्पत्तिकं वाऽपि शोकोत्पन्नमथापि वा ।
अभिचाराभिशापोत्थं भूतोत्थञ्च ज्वरञ्जयेत् ॥२२६॥

शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध हड़ताल और ताम्रभस्म आधा-आधा कर्ष और शुद्ध धतूरेके बीज १ कर्ष ले। इन सभी द्रव्योंको एक साथ कूटकर सुबहसे शाम तक रोहू मछलीके पित्त, मदारके दूध तथा अदरखके रसमें भावना दे और इन्हीं रसोंमें घोंटकर चनेके बराबर गोलियें बनाकर रख ले। यदि प्रातःकाल एक कर्ष आदीके रसमें माशा भर मधु डालकर इस ज्वरारिरसका सेवन किया जाय तो वातिक, पैत्तिक, कफज, वात-पित्तज, वात-कफज, भय-शोक-अभिचार-शाप एवं भूत-प्रेतकी वाधासे जायमान ज्वर दूर हो जाता है॥ २२१–२२६ ॥

मेदःप्राप्तं सन्ततञ्च रसस्थे तु ज्वरे तथा ।
सन्निपातज्वरे देयो मधुव्योषसमायुतः ।
घर्मं पित्तं तथा कम्पं दाहं हन्ति न संशयः ॥२२७॥
इन्द्रवज्रो यथा वृक्षं तथा ज्वरविनाशनः ।
वर्जयेत्क्षीरमांसञ्च दधितक्रसुराघृतम् ॥२२८॥
ज्वरे मांसास्थिगे चैव रक्तस्थे तु ज्वरे नृणाम् ।
शैत्ये दाहे तथा घर्मे प्रलापे चातुराह्निके ।
महावेगे ज्वरे चैव जीर्णे चापि प्रदापयेत् ॥२२९॥

जिस रोगीका ज्वर मेद तक पहुँच गया हो, जो संततज्वरके रूपमें परिणत हो गया हो, जो रस तक पहुँच चुका हो, उनमें और सन्निपात ज्वरमें शहद और सोंठ-मिर्च तथा पिप्पली-चूर्णमिश्रित ज्वरारि रस देना चाहिए। यह पसीना, पित्त, कम्प एवं दाहको अवश्य शान्त कर देता है। इन्द्रका वज्र (बिजली) जैसे वृक्षको ढहा देता है, उसी तरह यह ज्वरको समूल नष्ट कर देता है। इसका सेवन करते समय दूध, मांस, दही, मंठा, मदिरा और घृतको त्याग देना चाहिए। मांस तथा अस्थि तक पहुँचे हुए ज्वर, रक्तगत ज्वर, जड़ैया ज्वर, अधिक दाहवाले ज्वर, पसीना लानेवाले ज्वर, चौथिया ज्वर, महावेगवाले ज्वर एवं जीर्णज्वरमें अवश्य इसका उपयोग करे ॥ २२७-२२९ ॥

सर्वज्वरहर लौह

चित्रकं त्रिफला व्योषं विडङ्गं मुस्तकं तथा।
श्रेयसी पिप्पलीमूलमुशीरं देवदारु च ॥२३०॥
किराततिक्तकं पाठा कटुकी कण्टकारिका।
शोभाञ्जनस्य बीजानि मधुकं वत्सकं समम् ॥२३१॥
लौहतुल्यं गृहीत्वा तु वटिकां कारयेद्भिषक्।
सर्वज्वरहरं लौहं सर्वरोगहरं तथा ॥२३२॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम्।
द्वन्द्वजं विषमाख्यञ्च धातुस्थञ्च ज्वरं जयेत् ॥२३३॥
शीतं कम्पं तृषां दाहं धर्मस्तुतिवमिभ्रमीन्।
रक्तपित्तमतीसारं मन्दाग्निं कासमेव च ॥२३४॥
प्लीहानं यकृतं गुल्मं सामवातं सुदारुणम्।
अर्शांसि घोरमुदरं मूर्च्छां पाण्डुं हलीमकम् ॥२३५॥
अजीर्णं ग्रहणीञ्चैव यक्ष्माणं शोथमेव च।
बल्यं वृष्यं पुष्टिकरं सर्वरोगनिषूदनम्।
सर्वज्वरं लौहं चन्द्रनाथेन भाषितम् ॥२३६॥

चीता, त्रिफला, सोंठ-मिर्च-पिप्पली, वायविडंग, नागरमोथा, गजपीपल, पिप्पलीमूल, खस, देवदारु, चिरायता, पाढ़, कुटकी, छोटी कटेरी, सहिंजनके बीज, मुलेठी, वत्सक (कुटज) इन द्रव्योंको समान भाग ले और कूटकर चूर्ण

कर ले। तब जितना वजन इन सबका हो, उतना ही लौहभस्म मिला एवं जलसे घोंटकर गोलियें बना ले। यह लौह सब प्रकारके ज्वरों तथा सब रोगोंको दूर करता है। वातज, पित्तज, श्लेष्मज, सन्निपातज, द्वन्द्वज, विषम तथा धातुगत ज्वरको भी यह मार भगाता है। यह लौह शीत, कम्प, तृषा, दाह, पसीना, वमन, चक्कर, रक्तपित्त, अतिसार, मन्दाग्नि, खाँसी, तिल्ली, यकृत्, गुल्म, दारुण आमवात, बवासीर, घोर उदररोग, मूर्छा, पाण्डु, हलीमक, अजीर्ण, ग्रहणी, यक्ष्मा और शोथ, ये रोग नष्ट करके बल-वीर्य बढ़ाता है। इस सर्वज्वहर लौहका चन्द्रनाथने आविष्कार किया है॥ २३०–२३६॥

बृहत्सर्वज्वरहर लौह

पारदं गन्धकं चैव ताम्रमभ्रञ्च माक्षिकम्।
हिरण्यं तारतालञ्च कर्षमेकं पृथक्पृथक्॥२३७॥
कान्तलौहं पलं देयं सर्वमेकीकृतं शुभम्।
वक्ष्यमाणौषधैर्भाव्यं प्रत्येकं दिनसप्तकम्॥२३८॥
कारवेल्लरसैर्वापि दशमूलरसेन च।
पर्पट्याश्च कषायेण त्रिफलाक्वाथकेन वा।
गुडूच्याः स्वरसेनैव नागवल्लीरसेन च॥२३९॥
काकमाचीरसेनैव निर्गुण्ड्याः स्वरसैस्तथा।
पुनर्नवार्द्रकाम्भोभिर्भावना परिकीर्तिता॥२४०॥
रक्तिकादिक्रमेणैव वटिकां कारयेद्भिषक्।
पिप्पलीगुडसंयुक्ता वटिका ज्वरनाशिनी॥२४१॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति जीर्णज्वरहरन्तथा।
वारिदोषोद्भवञ्चैव नानादोषोद्भवं तथा॥२४२॥
सततादिज्वरं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा।
क्षयोद्भवञ्च धातुस्थं कामशोकभवन्तथा॥२४३॥
भूतावेशभवञ्चैव त्रिदोषजनितन्तथा।
अभिघातज्वरञ्चैव तथाऽभिचारसम्भवम्॥२४४॥
अभिन्यासं महाघोरं विषमं त्र्याहिकन्तथा।
शीतपूर्वं दाहपूर्वन्त्रिदोषं विषमज्वरम्॥२४५॥

प्रलेपकज्वरं घोरमर्द्धनारीश्वरं तथा ।
प्लीहज्वरं तथा कासं चातुर्थकविपर्य्ययम् ॥२४६॥
पांडुरोगं कामलाञ्च अग्निमान्द्यं महागदम् ।
एतान्सर्वान्निहन्त्याशु पक्षार्द्धेन न संशयः ॥२४७॥
शाल्यन्नं तक्रसहितं भोजयेद्विडसंयुतम् ।
ककारपूर्वकं सर्वं वर्जनीयं न संशयः ॥२४८॥
मैथुनं वर्जयेत्तावद्यावन्न बलवान्भवेत् ।
सर्वज्वरहरं लौहं दुर्लभम्परिकीर्त्तितम् ॥२४९॥

पारा, गंधक, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, माक्षिकभस्म, स्वर्णभस्म, चाँदीभस्म और शुद्ध हड़ताल, ये वस्तुयें एक-एक कर्ष और कान्तलौहभस्म एक पल, इनको एकत्र करके करैला या दशमूलके रस, पित्तपापड़ा तथा त्रिफलाके क्वाथ, गिलोय-पान-मकोय-सँभालू पुनर्नवा तथा आदीके रस, इनमेंसे हरएक रस या क्वाथोंमें भावना देकर भलीभाँति घोंट डाले और घुँट जानेपर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बनाकर रख ले। पिप्पलीके चूर्ण और पुराने गुड़में मिलाकर देनेसे यह ज्वरको समूल नष्ट कर देता है। इससे आठों प्रकारके ज्वर और जीर्णज्वर भी छूट जाता है। जलके दोषसे उत्पन्न एवं विविध दोषोंसे जायमान ज्वर, साध्य-असाध्य, क्षयसे उत्पन्न, धातुगत, काम-शोकसे जायमान, भूतावेश, त्रिदोष तथा अभिचारसे जायमान ज्वर, अभिघात (चोट-चपेट) से उत्पन्न ज्वर, महाघोर अभिन्यासज्वर, विषमज्वर, त्र्याहिक, शीतपूर्वज्वर, दाहपूर्वज्वर, त्रिदोष, विषमज्वर, अर्धनारीश्वर ज्वर, प्लीहज्वर, खाँसी, चातुर्थकविपर्यय ज्वर, पांडुरोग, कामला और अग्निमांद्य आदि महान् रोगोंको यह एक सप्ताहमें मार भगाता है। पथ्यमें विडलवणमिश्रित मंठा और साठी चावलका भात देना चाहिए। जिन चीजोंके आदिमें ककार अक्षर आता है, उन्हें त्याग देना चाहिए। जैसे—ककड़ी-करैला आदि। इस लौहका सेवन करते समय रोगी स्त्रीसहवाससे तबतक पृथक् रहे, जब तक कि शरीर भलीभाँति बलवान् न हो जाय। यह सर्वज्वरहर लौह बड़ी दुर्लभ वस्तु है ॥२३७–२४६॥

महाराज वटी

रसगन्धकमभ्रञ्च प्रत्येकं कर्षसम्मितम् ।
वृद्धदारकबङ्गञ्च लौहं कर्षार्द्धकं क्षिपेत् ॥२५०॥

स्वर्णं ताम्रञ्च कर्पूरं प्रत्येकं कर्षपादिकम्।
शक्राशनं वरी चैव श्वेतसर्जलवङ्गकम् ॥२५१॥
कोकिलाक्षं विदारी च मुषली शूलशिम्बिकम्।
जातीफलं तथा कोषं बला नागबला तथा ॥२५२॥
माषद्वयमितं भागं तालमूल्या रसेन च।
पिष्ट्वा च वटिका कार्य्या चतुर्गुञ्जाप्रमाणतः ॥२५३॥
मधुना भक्षयेत्प्रातर्विषमज्वरशान्तये।
धातुस्थाँश्च ज्वरान्सर्वान्हन्यादेव न संशयः ॥२५४॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम्।
ज्वरं नानाविधं हन्ति कासं श्वासं क्षयं तथा ॥२५५॥
बलपुष्टिकरं नित्यं कामिनीं रमयेत्सदा।
न च शुक्रं क्षयं याति न बलं ह्रासतां व्रजेत् ॥२५६॥
ऊर्ध्वगं श्लेष्मजं हन्ति सन्निपातं सुदारुणम्।
कामलां पाण्डुरोगञ्च प्रमेहं रक्तपित्तकम्।
महाराजवटी ख्याता राजयोग्या च सर्वदा ॥२५७॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक और अभ्रकभस्म तीनों एक-एक कर्ष (दो-दो तोला) विधारा, बङ्ग और लौहभस्म आधा-आधा कर्ष (१—१ तोला), स्वर्णभस्म, ताम्रभस्म और कपूर चौथाई-चौथाई कर्ष (आधा-आधा तोला) भाँग, शतावर, सफेद राल, लौंग, कोकिलाक्ष (तालमखाना), विदारीकन्द, मुसली, शूकशिम्बी (केवाँचके बीच), जायफल, जावित्री, बला और नागबला इन सबको डालकर दो-दो रत्तीकी गोलियाँ बना लें। यदि प्रातःकाल मधुके साथ इसका सेवन किया जाय तो विषम ज्वर शान्त हो जाता है। यह वटी धातुगत सभी ज्वरोंको अवश्य दूर कर देती है वातज, पित्तज, कफज, सान्निपातिक ज्वर तथा खाँसी, श्वास, क्षय आदि रोगोंको नष्ट करनेकी सामर्थ्य भी इसमें है। इसके सेवनसे बल बढ़ता और शरीर पुष्ट होता है। इसका सेवन करनेवाला पुरुष बराबर मैथुन करता हुआ स्त्रियोंको तृप्त करता रहे, फिर भी न तो वीर्य नष्ट होता और न बल ही घटता है। यह ऊर्ध्वंग और श्लेष्मज सन्निपातका शमन करता है। इनके अतिरिक्त यह कामला, पाण्डुरोग, प्रमेह तथा रक्तपित्तको दूर करता है। यह

राजाओंके सेवन करने योग्य रस है। इसीलिए इसका नाम महाराजवटी रक्खा गया है ॥ २५०–५७ ॥

चिन्तामणि रस

हाटकं रजतं तालं मुक्ता गन्धकपारदौ।
त्रिकटुं कुनटीं चैव कस्तूरीं च पृथक्समम् ॥२५८॥
जलेन वटिका कार्य्या द्विगुञ्जाफलमानतः।
चिन्तामणिरसो ह्येष ज्वराष्टानां निकृन्तनः ॥२५९॥

स्वर्णभस्म, रजत (चाँदी) भस्म, शुद्ध हड़ताल, मोतीभस्म, शुद्ध गंधक, शुद्ध पारा, त्रिकटु (सोंठ मिर्च पिप्पली) शुद्ध मैनसिल और कस्तूरी, ये द्रव्य समभाग एकत्रित करके खरलमें जलके साथ भली भाँति घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोली बना ले। यह आठ प्रकारके ज्वरोंको दूर करनेवाला चिन्तामणि रस है ॥

त्रैलोक्यचिन्तामणि रस

भागद्वयं स्वर्णभस्म द्विभागं तारमभ्रकम्।
लौहात्पञ्च प्रवालञ्च मौक्तिकं त्रयसम्मितम् ॥२६०॥
भस्मसूतं सप्तकञ्च सर्वं मर्द्यन्तु कन्यया।
छायाशुष्का वटी कार्य्या छागीदुग्धानुपानतः ॥२६१॥
क्षयं हन्ति तथा कासं गुल्मञ्चापि प्रमेहनुत्।
जीर्णज्वरहरश्चायं उन्मादस्य निकृन्तनः।
सर्वरोगहरश्चापि वारिदोषनिवारणः ॥ २६२ ॥

स्वर्णभस्म दो भाग, चाँदी और अभ्रकभस्म दो भाग, लौहभस्म पांच भाग, प्रवाल और मोतीभस्म तीन-तीन भाग और रससिन्दूर सात भाग लेकर घीगुवारके रसमें घोंटें। इसके बाद इसे छायामें सुखाकर दो-दो रत्ती-की गोलियें बना ले। इसकी एक गोली खाकर बकरीका दूध पीना चाहिए। यह क्षय, कास, गुल्म, प्रमेह, जीर्णज्वर और उन्माद आदि सभी रोगोंका शमन करता हुआ जलके दोषोंको दूर करता है ॥ २६०–२६२ ॥

बृहच्चिन्तामणि रस

रसं गंधं विषञ्चैव त्रिकटु त्रैफलं तथा।
शिलाह्वा रौप्यकं स्वर्णं मौक्तिकन्तालकं समम् ॥ २६३ ॥

कस्तूरिकायाश्च ग्राह्यं षाण्मासिकं भिषक्।
भृङ्गराजरसेनैव तुलस्याः स्वरसेन वा ॥ २६४ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव वटीं कुर्य्याद्द्विगुञ्जिकाम्।
चिंतामणिरसो ह्येष सर्वरोगकुलान्तकः ॥२६५॥
सन्निपातज्वरहरः कफरोगं विनाशयेत्।
एकजं द्वन्द्वजञ्चैव विविधं विषमज्वरम् ॥२६६॥
अग्निमान्द्यं शिरःशूलं विद्रधिं सभगन्दरम्।
एतान्येव निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥२६७॥

शुद्ध गंधक, शुद्ध पारा, शुद्ध वत्सनाभ विष, त्रिकटु (सोंठ मिर्च-पिप्पली) त्रिफला, शुद्ध मैनसिल, चाँदीभस्म, स्वर्णभस्म, मोतीभस्म और शुद्ध हड़ताल, ये द्रव्य समभाग (एक-एक तोला) और कस्तूरी छ मासा, ये सब चीजें लेकर भाँगराके रस अथवा तुलसीके स्वरसमें भली भाँति घोंटे। घुट जानेपर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। सब रोगोंके लिए यमराजके समान भयानक यह बृह-च्चिन्तामणि रस है। यह सन्निपातज्वर, कफरोग, वात-पित्तादिमें किसी एक दोषसे उत्पन्न, दो दोषोंसे उत्पन्न एवं विषमज्वर, अग्निमन्दता, शिरःशूल, विद्रधि और भगन्दर, इन रोगोंको इसी तरह नष्ट कर देता है, जैसे सूर्यभगवान अन्धकार दूर कर देते हैं ॥ २६३–२६७ ॥

पुटपाकविषमज्वरान्तक लौह

हिंगूलसम्भवं सूतं गन्धकेन सुकज्जलम्।
रसपर्पटिवत्पाच्यं सूतांघ्रि हेमभस्मकम् ॥२६८॥
लौहं ताम्रमभ्रकञ्च रसस्य द्विगुणं क्षिपेत्।
वङ्गञ्चैव प्रवालञ्च रसार्द्धञ्च विनिक्षिपेत् ॥२६९॥
मुक्तां शङ्खं शुक्तिभस्म रसपादिकमेव च।
मुक्तागृहे च संस्थाप्य पुटपाकेन साधयेत् ॥२७०॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय द्विगुञ्जाफलमानतः।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं कणाहिङ्गु ससैन्धवम् ॥२७१॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति वातपित्तकफोद्भवम्।
प्लीहानं यकृतं गुल्मं साध्यासाध्यमथापि वा ॥२७२॥

सन्ततं सतताख्यञ्च त्र्याहिकं चतुराहिकम्।
कामलां पाण्डुरोगञ्च शोथं मेहमरोचकम् ॥२७३॥
ग्रहणीमामदोषं च कासं श्वासं च दारुणम्।
मूत्रकृच्छ्रातिसारञ्च नाशयेदविकल्पतः ॥२७४॥

सिंगरिफसे निकला हुआ पारा और शुद्ध गंधक दोनों समभाग (एक-एक तोला) लेकर भली भाँति कज्जली करे। फिर पूर्वोक्त रसपर्पटीविधिके अनुसार आँच देकर पकावे। फिर इसमें पारेका चौथाई भाग (३ मासा) स्वर्णभस्म मिला दे। तदनन्तर लौहभस्म, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म पारेका दो-दो भाग, वङ्ग भस्म और प्रवालभस्म पारेका अर्धभाग (आधा-आधा तोला), शंख तथा मोतीभस्म पारेका चौथाई भाग (तीन-तीन मासा) इन द्रव्योंको एकत्रित करके घीगुवारके रसमें घोंटकर गोला बना ले और उसे समुद्री सीपमें रखकर भली भाँति दो कसोरोंके बीचमें सम्पुटित करके जंगली उपलोंके बीच रखकर फूँक दे। स्वांगशीतल होनेपर निकाले और चूर्ण बनाकर रख ले। यदि सबेरे दो रत्ती यह पुटपाक विषमज्वरान्तक लौह सोंठ, हींग और सेंधानमकमें मिलाकर सेवन करे तो वात, पित्त तथा कफसे उत्पन्न होनेवाले आठों प्रकारके ज्वर दूर हो जाते हैं। यह तिल्ली, यकृत्, साध्य, असाध्य, सतत, सन्तत, त्र्याहिक और चतुराहिक ज्वर, कामला, पाण्डु, शोथ, प्रमेह, अरुचि, ग्रहणी, आमदोष, दारुण कास, श्वास, मूत्रकृच्छ्र तथा अतिसारको अवश्य नष्ट कर देता है ॥२६८-२७४॥

वृहद्विषमज्वरान्तक लौह

शुद्धसूतं तथा गन्धं कारयेत्कज्जलीं शुभाम्।
मृतसूतं हेमतारं लौहमभ्रं च ताम्रकम् ॥२७५॥
तालसत्त्वं वङ्गभस्म मौक्तिकं सप्रवालकम्।
सुवर्णमाक्षिकञ्चापि चूर्णयित्वा विभावयेत् ॥२७६॥
निर्गुण्डी नागवल्ली च काकमाची सपर्पटी।
त्रिफला कारवेल्लञ्च दशमूली पुनर्नवा ॥२७७॥
गुडूची वृषकञ्चापि सभृङ्गः केशराजकः।
एतेषाञ्च रसेनैव भावयेत्त्रिदिनं पृथक् ॥२७८॥

गुञ्जमानां वटीं कुर्य्याच्छास्त्रवित्कुशलो भिषक्।
पिप्पलीगुडकेनैव लिहेच्च वटिकां शुभाम् ॥२७९॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति निरामं साममेव वा।
सप्तधातुगतञ्चापि नानादोषोद्भवं तथा ॥२८०॥
सततादिज्वरं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा।
अभिघाताभिचारोत्थं ज्वरं जीर्णं विशेषतः ॥२८१॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक दोनों समभाग लेकर कज्जली करे। तदनन्तर रससिन्दूर, स्वर्णभस्म, लौहभस्म, अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, हड़तालका सत, बंगभस्म, मूँगाभस्म और स्वर्णमाक्षिकभस्म ये द्रव्य समभाग लेकर कूटे। चूर्ण हो जानेपर क्रमशः संभालू, पान, मकोय और पित्तपापड़ाके रस, त्रिफलाके क्राथ, करैलाके रस, दशमूलके क्राथ पुनर्नवा, गुरुच, वासा, भँगरा और केशराजके रसमें तीन दिन तक भावना दे। इसके बाद भलीभाँति घोंटकर शास्त्रज्ञ एवं कुशल वैद्य एक-एक रत्तीकी गोलियें बना ले। यदि पिप्पलीके चूर्ण और पुराने गुड़में इसकी एक गोली नित्य सेवन करे तो आठ प्रकारके ज्वर—जैसे आमरहित, आमसहित, सप्तधातुगत, विविध दोषोंसे जायमान, सततादि ज्वर, साध्य, असाध्य, अभिघात तथा अभिचारसे उत्पन्न एवं विशेष करके जीर्ण ज्वर नष्ट हो जाता है ॥२७५-२८१॥

शीतभंजी रसकी दूसरी विधि

तालकं दरदोद्भूतं पारदो गन्धकः शिला।
रसं गंधं विषञ्चैव त्रिकटु त्रैफलं तथा।
क्रमवृद्धया ताम्रपात्रीं द्रवैरेतैर्विलेपयेत् ॥२८२॥
अधोमुखीं दृढे भाण्डे तां निरुध्याथ पूरयेत्।
चुल्ल्यां वालुकया घस्रमग्निं प्रज्वालयेद्दृढम् ॥२८३॥
शीते सञ्चूर्ण्य माषोऽस्य नागवल्लीदले स्थितः।
भक्षितो मरिचैः सार्द्धं समस्तान्विषमज्वरान्।
शीतदाहादिकं हन्यात्पथ्यं शाल्योदनम्पयः ॥२८४॥

शुद्ध हड़ताल एक भाग, सिंगरिफसे निकला हुआ पारा २ भाग, शुद्ध गंधक ३ भाग और शुद्ध मैनसिल ४ भाग, इन्हें लेकर पारा-गन्धककी कजली करे।

फिर सबको एकमें जलसे घोंटकर एक ताम्रपात्र लीप दे। इस पात्रको एक दूसरे दृढ़ पात्रमें औंधाकर रख दे और कपड़मिट्टीसे संधिको भलीभाँति बन्द करके ऊपरसे बालू भर दे। तब इसे भट्टीपर रखकर दिन भर आँच दे। जब स्वांगशीतल हो जाय, तब चूर्ण करके रख ले। यदि एक मासा (आज कल १ रत्ती) यह रस मिर्चके चूर्णमें पानके पत्तेपर रखकर खाय तो सभी विषम-ज्वर, शीत तथा दाहादिको शान्त कर देता है। इसका पथ्य साठी चावलका भात और दूध है॥ २८२-२८४॥

चिन्तामणि रसकी दूसरी विधि

तालकं शुल्वकं चूर्णं शिखिग्रीवं समांशिकम्।
संपिष्य कारयेत्सर्वं चक्रिकासन्निभं शुभम्॥२८५॥
शरावपिहितं रात्रौ पचेद्गजपुटेन तु।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य भक्षयेन्माषमात्रकम्।
शर्करासहितं सेव्यं सर्वज्वरहरं परम्॥२८६॥

शुद्ध हताल, सीपभस्म और शुद्ध तूतिया, ये द्रव्य समभाग ले और जलसे घोंटकर गोलसी टिकिया बना ले। फिर एक कसोरेमें रख तथा दूसरेसे ढाँककर संपुटित कर दे। तब रात्रिके समय गजपुटविधानसे आँच दे। जब स्वांगशीतल हो जाय तो निकाले और चूर्ण कर रख ले। यदि चीनीके साथ मासाभर (आज-कल एक रत्ती) खाय तो सब प्रकारके ज्वर दूर हो जाते हैं॥२८५॥२८६॥

ज्वरांकुश रस

ताम्रतो द्विगुणं तालं मर्दयेत्सुपवीद्रवैः।
प्रपुटेद्भूधरे शीते वज्रीक्षारैर्विमर्दयेत्॥२८७॥
प्रपुटेद्भूधरे पश्चात्पञ्चगुञ्जामितं शुभम्।
आर्द्रकस्य रसेनैव सर्वज्वरनिकृन्तनः॥२८८॥
एकाहिकं द्व्याहिकञ्च त्र्याहिकञ्चतुराहिकम्।
विषमं चापि शीताढ्यं ज्वरं हन्ति ज्वराङ्कुशः॥२८९॥

ताम्रभस्म १ भाग और शुद्ध हताल २ भाग इन दोनोंको लेकर सुपवी (करैले) के रसमें घोंटकर भूधरयंत्रमें पुट दे। शीतल होनेपर निकाल ले और चूर्ण करके रख ले। यदि आदीके रसमें पाँच रत्ती (आजकल एक रत्ती) की

मात्रा दे तो ऐकाहिक (अँतरिया) द्वयाहिक, तृतीयक, चतुराहिक, विषम एवं शीत आदि सभी प्रकारके ज्वर दूर हो जाते हैं ॥ २८७-२८६ ॥

मेघनाद रस

आरं कांस्यं मृतं ताम्रं त्रिभिस्तुल्यञ्च गन्धकम् ।
रसेन मेघनादस्य पिष्ट्वा वद्ध्वा पुटे पचेत् ॥२९०॥
भक्षयेत्पर्णखण्डेन विषमज्वरनाशनम् ॥२९१॥
अस्य मात्रा द्विगुञ्जा स्यात्पथ्यं दुग्धौदनं हितम् ।
पञ्चामृतपलञ्चैकमनुपानम्प्रयोजयेत् ॥२९२॥

पित्तलभस्म एक भाग, ताम्रभस्म एक भाग, शुद्ध गंधक तीन भाग, इन सबको मेघनाद (लालचौराई) के रसमें घोंटकर टिकिया बना ले और सम्पुटित करके गजपुटमें फूँके। इसकी मात्रा दो रत्तीकी होती है। पथ्य दूध और अनुपान एक पल पंचामृत है ॥ २९०-२९२ ॥

शीतज्वरहर रस

सूतमाक्षिकगन्धानां भागाश्चारुष्करस्य च ।
तथाऽष्टौ तालकाच्चूर्णाद्रविदुग्धस्य षोडश ॥२९३॥
स्नुहीक्षीरस्य चैवाष्टौ सर्वं मृद्वग्निना पचेत् ।
स्वांगशीतं समुद्धृत्य ततः खल्ले विमर्दयेत् ॥२९४॥
शीतज्वरहरो नाम्ना रसोऽयं परिकीर्त्तितः ॥२९५॥

शुद्ध पारा १ भाग, स्वर्णमाक्षिक भस्म १ भाग, शुद्ध गंधक १ भाग, शुद्ध भेलावा १ भाग, शुद्ध हड़ताल ८ भाग, मदारका दूध १६ भाग, सेंहुड़का दूध ८ भाग, इन सबको घोंटकर पुटपाकविधिसे मन्द आँचमें पकावे। स्वांगशीतल होनेपर खरलमें डालकर घोंट ले। यह शीतज्वरहर रस है ॥ २९३-२९५ ॥

शीतभंजी रसकी और विधि

पारदं रसकं तालं तुत्थं टङ्कणगन्धकम् ।
सर्वमेतत्समं शुद्धं कारवेल्लरसैर्दिनम् ॥२९६॥
मर्दयेत्तेन कल्केन ताम्रपात्रोदरं लिपेत् ।
अङ्गुलार्द्धार्द्धमानेन तं पचेत्सिकताह्वये ॥२९७॥

यन्त्रे यावत्स्फुटन्त्येव व्रीहयस्तस्य पृष्ठतः।
ततः तच्छीतलं ग्राह्यं ताम्रपात्रोदराद्भिषक् ॥२६८॥
माषैकं पर्णखण्डेन भक्षयेन्मरिचैः समम्।
शीतभञ्जी रसो नाम त्रिदिनान्नाशयेज्ज्वरम् ॥२६९॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध फिटकिरी, शुद्ध हड़ताल, शुद्ध तूतिया और शुद्ध सोहागा, ये द्रव्य समभाग लेकर करैलेके रसमें दिनभर घोंटकर गोला बना ले। उसे एक ताम्रपात्रके भीतर चौथाई अंगुल मोटी तह करके लीप दे। तदनन्तर एक दूसरे पात्रमें उसे औंधाकर रखे और उसकी संधियें बन्द करके उसमें बालू भर दे। अब इसे भट्ठीपर चढ़ाकर नीचे आँच दे। आँच तबतक देता रहे, जबतक कि ऊपरवाली हाँड़ीकी पेंदीपर धानका दाना रखनेसे वह लावा बनकर फूट न जाय। स्वांगशीतल होनेपर चतुर वैद्य उस ताम्रपात्रमें से रसको निकाल ले। यदि पानके पत्तेपर एक मासा यह रस तथा काली मिर्चका चूर्ण रखकर दे तो यह तीन दिनमें ही ज्वरको मार भगाता है ॥ २९६-२९९ ॥

पंचानन रस

रसकं तालकं तुत्थं टङ्कणं रसगन्धनम्।
तुल्यांशं सुषवीतोयैर्मर्दयेद्यामयुग्मकम् ॥३००॥
कृत्वा गोलं ताम्रपात्रेणाधोवक्त्रेण रोधयेत्।
स्थालीं मृत्कर्पटे लिप्त्वा पचेच्चुल्ल्यां दिनं ततः ॥३०१॥
तच्छीतं ताम्रभस्मापि गृह्णीयात्सुरसाजलैः।
यामं मर्द्यं ततो वल्लं तुलसीमरिचैर्युतम् ॥३०२॥
हन्ति सर्वं ज्वरं घोरं विषमञ्च त्रिदोषजम्।
धात्रीकल्केन वा युक्तं दाहाख्यं विषमञ्जयेत् ॥३०३॥
पथ्यं दुग्धौदनं दद्यान्मुद्गयूषं सशर्करम्।
ज्वरे धातुगते दद्यात्पिप्पलीक्षौद्रसंयुतम् ॥३०४॥
अयं पञ्चाननो नाम विषमज्वरनाशनः ॥३०५॥

शुद्ध खपरिया, शुद्ध हड़ताल, शुद्ध तूतिया, शुद्ध सोहागा, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, ये सभी चीजें समभाग लेकर पहले पारा और गंधककी कज्जली कर ले। फिर उसमें उपर्युक्त और वस्तुयें मिलाकर करैलेके रसमें दोपहर तक घोटे।

फिर उसका गोला बनाकर एक ताम्रपात्रमें रखे और उसपर एक दूसरा बर्तन औंधा करके रख दे। कपड़मिट्टीसे दोनोंकी संधियें भली भाँति बन्द करके उसके चारों ओर कपड़मिट्टी कर दे। तदनन्तर उसे चूल्हेपर चढ़ाकर दिन भर आँच दे। स्वांगशीतल होनेपर निकाल ले। फिर उसमें तोला भर ताम्रभस्म मिलाकर तुलसीपत्रके रससे घोंटे और सुखाकर रख ले। तुलसीपत्रके रस और काली मिर्चके चूर्णमें यदि एक रत्ती यह रस दिया जाय तो सब तरहके ज्वर, विषमज्वर और त्रिदोषजनित ज्वर दूर हो जाते हैं। यदि आँवलेके कल्कमें इसकी मात्रा दी जाय तो दाहज्वर शान्त होता है। इसके लिए पथ्य दूध-भात और शर्करामिश्रित मूँगका जूस देना चाहिए। यदि ज्वर धातुतक पहुँच चुका हो तो पिप्पली और मधुमें यह रस दे। यह पंचानन रस विषम ज्वरका नाशक है ॥२९९–३०५॥

वमनयोग

कुमारीमूलकर्षैकं पिबेत्कोष्णजलेन तु।
विषमन्तु ज्वरं हन्ति वमनेन चिरन्तनम् ॥३०६॥

एक कर्ष घीगुवारकी जड़का रस लेकर गुनगुने जलके साथ पिये तो वमन होता है और उसके साथ पुराना विषम ज्वर भी निकल जाता है ॥३०६॥

विश्वेश्वर रस

दरदं गन्धकं सूतं तुल्यांशं मर्दयेद्द्रवैः।
अश्वत्थजैस्त्र्यहं पश्चाद्रसैः कोलकमूलजैः ॥३०७॥
निदिग्धिकारसैः काकमाचिकाया रसैः पुनः।
द्विगुञ्जां वा त्रिगुञ्जां वा गोक्षीरेण प्रदापयेत्।
रात्रिज्वरं निहन्त्याशु नाम्ना विश्वेश्वरो रसः ॥३०८॥

शुद्ध सिंगरिफ, शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक ये वस्तुयें समभाग लेकर पहले पीपलकी छालके काढ़ेमें तीन दिन, फिर बेतकी जड़के रसमें तीन दिन, फिर निदिग्धिका (फिटकिरी) के काढ़ेमें तीन दिन और इसके बाद मकोयके रसमें तीन दिन घोटकर दो या तीन-तीन रत्तीकी गोलियें बना लें। यदि गायके दूधमें इसकी मात्रा दी जाय तो रात्रिमें आनेवाला ज्वर नष्ट हो जाता है। इसका नाम विश्वेश्वर रस है ॥३०७॥३०८॥

त्र्याहिकारि रस

रसकेन समं शंखं शिखिग्रीवञ्च पादिकम्।
गोजिह्वया जयन्त्या च तण्डुलीयैश्च भावयेत्॥३०९॥
प्रत्येकं सप्त सप्ताथ शुष्कं गुञ्जाचतुष्टयम्।
जरणेन घृतेनाद्यात्त्र्याहिकज्वरशान्तये॥३१०॥

शोधित खपरिया और शंखभस्म समभाग तथा शुद्ध तूतिया चौथाई भाग लेकर गोजिह्वा (गोभी), जयन्ती (अरणी) तथा चौराई इनमेंसे एक-एक रसमें सात-सात दिन तक भावना दे। जब सूख जाय तो चार-चार रत्तीकी गोलियें बना ले। पुराने घीके साथ इसका सेवन करनेसे त्र्याहिक (तिजरा) ज्वर मिट जाता है॥३०९॥३१०॥

चातुर्थकारि रस

हरितालं शिलातुत्थं शङ्खचूर्णञ्च गन्धकम्।
समांशं मर्दयेत्प्राज्ञः कुमारीरसभावितम्॥३११॥
शरावसम्पुटे कृत्वा पश्चाद्गजपुटे पचेत्।
कुमारिकारसेनैव वल्लमात्रा वटी कृता॥३१२॥
दत्ता शीतज्वरं हन्ति चातुर्थके विशेषतः।
मरिचं घृतयोगेन तक्रं पीत्वा चरेद्वटीम्।
एतया वमनं भूत्वा ज्वरस्तस्माद्विनश्यति॥३१३॥

शुद्ध हड़ताल, शुद्ध गंधक ये द्रव्य समभाग लेकर भली भाँति घोंटे। फिर घीकुआरके रसमें भावना दे। तदनन्तर गोला बनाकर शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटकी आँच दे। जब शीतल हो जाय तो निकाले और घीकुआरके रसमें घोंटकर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले। इसका सेवन करनेसे शीतज्वर और विशेष करके चातुर्थक (चौथिया) ज्वर नष्ट हो जाता है। इसे खानेके पहले काली मिर्चका चूर्ण और घी मिला हुआ मंठा पी लेना चाहिए। इसके सेवन-से वमन होता है, जिसके साथ ज्वर भी निकल जाता है॥३११--३१३॥

चिन्तामणि रसकी अन्य विधि

रसं गन्धं विषं शुल्वं मृतमभ्रं फलत्रिकम्।
त्र्यूषणं दन्तिबीजञ्च समं खल्ले विमर्दयेत्॥३१४॥

द्रोणपुष्पीरसैर्भाव्यं शुष्कं तद्वस्त्रगालितम् ।
चिन्तामणिरसोऽजीर्णे ह्येष वै शस्यते सदा ॥३१५॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति सर्वशूलहरः परः ।
गुञ्जैकं वा द्विगुञ्जं वा देयमार्द्रकवारिणा ॥३१६।

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध विष, ताम्रभस्म, अभ्रकस्म, त्रिफला-सोंठ-मिर्च तथा पिप्पलीका चूर्ण, शुद्ध दन्तीबीज, ये द्रव्य समभाग ले और गूमाके रसमें भावना देकर घोंटे। घुट जानेपर कपड़ेसे छानकर रख ले। यह रस अजीर्णमें बड़ा लाभ पहुँचाता और आठों प्रकारके ज्वर तथा सब तरहके शूल-का शमन करता है। आदीके रसमें एक या दो रत्तीकी मात्रा देनी चाहिए ॥३१४--३१६॥

बृहच्चिन्तामणि रसकी अन्य विधि

रसगन्धकलौहानि ताम्रं तारं हिरण्यकम् ।
हरितालं खर्परं च कांस्यं वङ्गं च विद्रुमम् ॥३१७॥
मुक्तामाक्षिककाशीश शिला च टङ्कणं समम् ।
कर्पूरं च समं दत्त्वा भावना सप्तसप्तकम् ॥३१८॥
भार्गी वासा च निर्गुण्डी नागवल्ली जयन्तिका ।
कारवेल्लं पटोलञ्च शक्राशनपुनर्नवे ॥३१९॥
आर्द्रकञ्च ततो दद्यात्प्रत्येकं सप्तवारकम् ।
चिंतामणिरसो नाम सर्वज्वरविनशनः ॥३२०॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
द्वंद्वजं विषमाख्यञ्च धातुस्थञ्च ज्वरं जयेत् ॥३२१॥
कासं श्वासं तथा शोथं पाण्डुरोगं हलीमकम् ।
प्लीहानमग्रमांसञ्च यकृतञ्च विनाशयेत् ॥३२२॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौहभस्म, ताम्रभस्म, चाँदीभस्म, स्वर्णभस्म, शुद्ध हड़ताल, शुद्ध खपरिया, कांस्यभस्म, वंगभस्म, मूँगाभस्म, मोतीभस्म, स्वर्णमा-क्षिकभस्म, शुद्ध कसीस, शुद्ध मैनसिल, शुद्ध सोहागा ये वस्तुयें समभाग ले और एकमें पीसकर भार्गी (भारंगी), वासा (अडूसा) निर्गुण्डी (सँभालू), पान, जयन्ती (अरणी), करैला, परवल, शक्राशन (भाँग), पुनर्नवा और अदरख,

इनमेंसे हर एक औषधिके रसमें सात-सात बार भावना दे। सूखनेपर घोंटकर रख ले। सब प्रकारके ज्वरोंको नष्ट करनेवाला यह चिन्तामणि रस है। यह वातज, पित्तज, कफज, सान्निपातिक, द्वन्द्वज, विषम एवं धातुगत ज्वरों और कास, श्वास, शोथ, पाण्डुरोग, हलीमक, तिल्ली, अग्रमांस (कलेजे) के रोग एवं यकृत् रोगको नष्ट कर देता है ॥३१७-३२२॥

महाज्वराङ्कुश रस

पारदं गन्धकं ताम्रं हिंगुलं तालमेव च।
वङ्गं लौहं माक्षिकञ्च खर्परञ्च मनःशिला ॥३२३॥
मृताभ्रकं गैरिकञ्च टङ्कणं दन्तिबीजकम्।
सर्वाण्येतानि द्रव्याणि चूर्णयित्वा विभावयेत् ॥३२४॥
जम्बीरविजयाचित्रतुलसीतिन्तिडीरसैः।
एभिर्दिनद्वयं भाव्यं निर्जने रौद्रसंकुले ॥३२५॥
चणमात्रां वटीं कृत्वा छायाशुष्काञ्च कारयेत्।
मन्दाग्निदीपनो चैव सर्वज्वरविनाशिनी ॥३२६॥
द्वन्द्वजं सर्वजञ्चैव चिरकालसमुद्भवम्।
एकाहिकं द्व्याहिकञ्च ज्वरञ्च सान्निपातिकम् ॥३२७॥
चातुर्थकं तथाऽत्युग्रं जलदोषसमुद्भवम्।
सर्वान् ज्वरान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥३२८॥
महाज्वराङ्कुशो नाम रसोऽयं मुनिभाषितः ॥३२९॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, ताम्रभस्म, शुद्ध सिंगरिफ, शुद्ध हड़ताल, वंगभस्म, लौहभस्म, माक्षिकभस्म, शुद्ध खपरिया, शुद्ध मैनसिल, अभ्रकभस्म, शुद्ध गैरिक (गेरू) शुद्ध सोहागा, शुद्ध दन्तीबीज, ये सब समभाग ले और कूट-पीसकर जँभीरी नीबू, भाँग, चीता, तुलसी और इमलीकी पत्ती इनमेंसे हर एकके रसमें तीन-तीन दिन ऐसी जगह रखकर भावना दे, जहाँ धूप अच्छी तरह मिल सके। फिर छायामें सुखाकर चनेके बराबर गोलियें बनाकर रख ले। यह महाज्वरांकुश रस मन्दाग्निको उद्दीप्त करता और सब प्रकारके ज्वर नष्ट कर देता है। इससे द्वन्द्वज, त्रिदोषज, जीर्ण, एकाहिक, द्व्याहिक, सान्निपातिक, चातुर्थक

और जलके दोषसे उत्पन्न ज्वर ऐसे नष्ट हो जाते हैं, जैसे सूर्यके द्वारा अन्धकार दूर हो जाता है। मुनियोंका बताया हुआ यह महाज्वरांकुश रस है ॥३२३-३२९॥

अथवा

पारदं हिङ्गुलं ताम्रं माक्षिकं तुल्यमेव च।
वङ्गं मृतञ्च गन्धञ्च खर्परञ्च मनःशिला ॥३३०॥
तालकं घनपाषाणं गैरिकं टङ्कणं तथा।
दन्तीबीजानि सर्वाणि चूर्णयित्वा विभावयेत् ॥३३१॥
भावना पूर्ववद्देया वटीं कुर्याच्च पूर्ववत् ॥३३२॥

शुद्ध पारा, शुद्ध सिंगरिफ, ताम्रभस्म, वंगभस्म, शुद्ध गंधक, शुद्ध खपरिया, शुद्ध मैनसिल, शुद्ध हड़ताल, कान्तपाषाण भस्म, शुद्ध गैरिक, शुद्ध सोहागा, शुद्ध दन्तीबीज ये वस्तुयें समभाग लेकर गंधक-पारेकी कज्जली कर ले। तदनन्तर उपर्युक्त द्रव्य मिलाकर महाज्वरांकुश रसमें बतायी जँभीरी नीबू, भाँग, चीता आदि औषधियोंके रसमें तीन-तीन दिन भावना देकर छायामें सुखावे और चनेके बराबर गोलियें बना ले। इसका सेवन करनेसे सब प्रकारके ज्वर दूर हो जाते हैं ॥ ३३०-३३२ ॥

सर्वतोभद्र रस

विशुद्धं गगनं ग्राह्यं द्विकर्षं शुद्धगन्धकम्।
तालकं तोलकार्द्धञ्च हिङ्गुलोत्थरसन्तथा ॥३३३॥
कर्पूरं केशरं मांसीं तेजपत्रं लवङ्गकम्।
जातीकोषफलञ्चैव सूक्ष्मैला करिपिप्पला ॥३३४॥
कुष्ठं तालीशपत्रञ्च धातकीचोचमुस्तकम्।
हरीतकीं च मरिचं शृङ्गवेरविभीतकम् ॥३३५॥
पिप्पल्यामलकञ्चैव शाणभागं विचूर्णितम्।
सर्वमेकीकृतं पिष्ट्वा वटीं कुर्याद्द्विगुञ्जिकाम् ॥३३६॥
भक्षयेत्पर्णखण्डेन मधुना सितयाऽपि वा।
रोगं ज्ञात्वाऽनुपानञ्च प्रातः कुर्याद्विचक्षणः ॥३३७॥
हन्ति मन्दानलान्सर्वानामदोषं विसूचिकाम्।
पित्तश्लेष्मभवं रोगं वातश्लेष्मभवं तथा ॥३३८॥

आनाहं मूत्रकृच्छ्रञ्च संग्रहग्रहणीं वमिम्।
अम्लपित्तं शीतपित्तं रक्तपित्तं विशेषतः ॥३३९॥
चिरज्वरं पित्तभवं धातुस्थं विषमज्वरम्।
कासं पञ्चविधं हन्ति कामलां पाण्डुमेव च ॥३४०॥
सर्वलोकहितार्थाय शिवेन कथितः पुरा।
सर्वतोभद्रनामायं रसः साक्षान्महेश्वरः ॥ ३४१ ॥

अभ्रकभस्म दो कर्ष, शुद्ध गंधक एक तोला, सिंगरिफसे निकाला हुआ पारा आधा तोला, कपूर, नागकेसर, जटामांसी, तेजपत्र, लौंग, जायफल, जावित्री, छोटी इलायची, गजपिप्पली, कूठ, तालीसपत्र, धायके फूल, दालचीनी, मोथा, हड़, काली मिर्च, सोंठ, बहेड़ा, पिप्पली और आँवला, इनका चूर्ण दो-दो शाण, इन सबको एकमें घोटकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। पानके रस, मधु तथा मिश्रीके साथ प्रातःकाल रोगके अनुसार अनुपानमें इसका सेवन करनेसे यह मन्दाग्नि, आवँ, विषूचिका (हैजा) पित्त तथा कफजनित रोग, वात-कफजनित रोग, आनाह, मूत्रकृच्छ्र, संग्रहणी, वमन, अम्लपित्त, शीतपित्त, रक्तपित्त, जीर्णज्वर, धातुगत ज्वर, विषम ज्वर, पाँच प्रकारकी खाँसी, कामला तथा कुष्ठ रोग दूर करता है। लोककल्याणके निमित्त स्वयं शंकर-भगवानने यह सर्वतोभद्र रस बताया है ॥३३६-३४१॥

बृहज्ज्वरान्तक लौह

रसं गन्धं तोलकञ्च जातीकोषफले तथा।
हेमभस्म तु पादैकं तोलार्द्धं रूप्यलौहकम् ॥ ३४२ ॥
शिलाजत्वभ्रकञ्चैव भृङ्गराजञ्च मुस्तकम्।
केशराजमपामार्गं लवङ्गञ्च फलत्रिकम् ॥ ३४३ ॥
वराङ्गवल्कलञ्चैव पिप्पलीमूलमेव च।
सैन्धवञ्च विडञ्चैव गुडूचीचूर्णमेव च ॥ ३४४ ॥
कण्टकारी रसोनञ्च धान्यकं जीरकद्वयम्।
चन्दनं देवकाष्ठञ्च दार्वीन्द्रयवमेव च ॥ ३४५ ॥
किराततिक्तकं बालं तोलकञ्च समाहरेत्।
द्वितोलं मरिचं देयं भावयेदार्द्रकद्रवैः ॥ ३४६ ॥

माषार्द्धं भक्षयेत्प्रातर्मधुना मधुरीकृतम् ।
ज्वरं नानाविधं हन्ति शुक्रस्थं चिरकालजम् ॥ ३४७ ॥
साध्यासाध्यविचारोऽत्र नैव कार्य्यो भिषग्वरैः ।
अन्तर्धातुगतञ्चैव नाशयेन्नात्र संशयः ॥ ३४८ ॥
भूतोत्थं श्रमजञ्चापि सन्निपातज्वरं तथा ।
असाध्यञ्च ज्वरं हन्ति यथा सूर्योदयस्तमः ॥ ३४९ ॥
गरुडञ्च समालोक्य यथा सर्पः पलायते ।
तथैवास्य प्रसादेन ज्वरः सोपद्रवो ध्रुवम् ॥ ३५० ॥
बलदं पुष्टिदञ्चैव मन्दाग्निनाशनं परम् ।
वीर्य्यस्तम्भकरञ्चैव कामलापाण्डुरोगनुत् ॥ ३५१ ॥
सदा तु रमते नारीं न वीर्य्यं क्षयतां व्रजेत् ।
प्रमेहं विविधञ्चैव विविधां ग्रहणीं तथा ।
अनुपानविशेषेण सर्वव्याधिं विनाशयेत् ॥ ३५२ ॥

शुद्ध पारा १ तोला, शुद्ध गन्धक १ तोला, जायफल १ तोला, जावित्री १ तोला, सुवर्णभस्म चौथाई तोला, चाँदीभस्म आधा तोला, लौहभस्म आधा तोला, शुद्ध शिलाजीत, अभ्रकभस्म, भाँगरा, मोथा, केशराज, अपामार्ग, लौंग, हर्रा, बहेड़ा, आँवला, दालचीनी, पिप्पलीमूल, सेंधानमक, बिडलवण, गुरुच, कंटकारी, लहसुन, धनियाँ, सफेद जीरा, लाल चन्दन, देवदारु, दारुहल्दी, इन्द्रजौ, चिरायता और सुगन्धवाला, इनका चूर्ण एक-एक तोला तथा मिर्चका चूर्ण दो तोला डालकर अदरखके रसमें ७ बार भावना दे और छायामें सुखाकर रख ले। यदि प्रातः कालके समय आधा मासा यह रस मधुके साथ खाय तो विविध प्रकारके ज्वर, शुक्रगत ज्वर और विषमज्वर दूर हो जाता है। वैद्यको चाहिए कि इसे देनेमें साध्य और असाध्यका विचार न करे। क्योंकि यह रस तो धातुगत ज्वर तकको नष्ट करनेकी सामर्थ्य रखता है। भूतज्वर, श्रमज्वर, सन्निपात ज्वर और असाध्य ज्वरको भी यह इस तरह दूर करता है, जैसे सूर्य-भगवान अन्धकारराशिको मार भगाते हैं। जैसे गरुड़को देखकर सर्प भाग जाते हैं, उसी प्रकार इस रसका सेवन करनेसे विविध उपद्रवयुक्त ज्वर भाग जाते हैं। यह बल और पुष्टिदायक, मन्दाग्निनाशक, वीर्यका स्तम्भनकारी एवं

पाण्डु तथा कामलारोगका शामक है। इसका सेवन करनेवाला प्राणी यदि सदा स्त्रीसे संभोग करता रहे, फिर भी वीर्य क्षय नहीं होता। यह नाना प्रकारके प्रमेहों और विविध भाँतिकी ग्रहणीको भी नष्ट करता है। और कहाँ तक कहें—अनुपान-विशेषके साथ इसका उपयोग करनेसे यह सब प्रकारकी व्याधियें दूर करता है ॥ ३४२–३५२ ॥

चूड़ामणि रस

मृतं सूत प्रवालञ्च स्वर्णं तारञ्च वङ्गकम्।
शुल्वं मुक्ता तीक्ष्णमभ्रं सर्वमेकत्र योजयेत् ॥ ३५३ ॥
पिष्ट्वा जलेन वटिका कार्य्या वल्लप्रमाणतः।
धातुस्थं सन्निपातोत्थं ज्वरं विषमसम्भवम् ॥ ३५४ ॥
कामशोकसमुद्भूतं त्रिदोषजनितं तथा।
कासं श्वासञ्च विविधं शूलं सर्वाङ्गसम्भवम् ॥ ३५५ ॥
शिरोरोगं कर्णशूलं दन्तशूलं गलग्रहम्।
वातपित्तसमुद्भूतं ग्रहणीं सर्वसम्भवाम् ॥ ३५६ ॥
आमवातं कटीशूलमग्निमान्द्यं विसूचिकाम्।
अर्शांसि कामलां मेहं मूत्रकृच्छ्रादिकञ्च यत् ॥ ३५७ ॥
तत्सर्वं नाशयत्याशु विष्णुचक्रमिवासुरान्।
चूड़ामणिरसो ह्येष शिवेन परिकीर्त्तितः ॥ ३५८ ॥

मृत पारा (रससिन्दूर), मूँगाभस्म, स्वर्ण-चाँदी-वंग-ताम्र-मोती-लौह और अभ्रकभस्म, ये वस्तु समभाग ले और सबको जलमें घोंटकर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले। इसका सेवन करनेसे धातुगत, सन्निपातज, विषज, कामज, शोकसे जायमान और त्रिदोषजनित ज्वर नष्ट हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त कास, श्वास, विविध प्रकारके सर्वांगशूल, शिरोरोग, कर्णशूल, दन्त-शूल, वातपित्तजनित गलग्रह, किसी भी दोषसे उत्पन्न ग्रहणी, आमवात, कटि-शूल, अग्निमांद्य, विसूचिका, अर्श, कामला, प्रमेह और मूत्रकृच्छ्र आदि सब प्रकारके रोग ऐसे नष्ट हो जाते हैं, जैसे विष्णुभगवानका चक्र दैत्योंको ध्वस्त कर देता है। यह साक्षात् शंकरभगवानका बताया हुआ चूड़ामणि रस है ॥ ३५३–३५८ ॥

भानुचूड़ामणि रस

सुवर्णं रससिन्दूरं प्रवालं वङ्गमेव च।
लौहं ताम्रं तेजपत्रं यमानीं विश्वभेषजम् ॥ ३५९ ॥
सैन्धवं मारिचं कुष्ठं खादिरं द्विहरिद्रकम्।
रसाञ्जन माक्षिकञ्च समभागञ्च कारयेत् ॥ ३६० ॥
वारिणा वटिका कार्य्या रक्तिद्वयप्रमाणतः।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय सर्वज्वरकुलान्तकृत् ॥ ३६१ ॥

स्वर्णभस्म, रससिन्दूर, मूँगा, वंग, लौह और ताम्रभस्म, तेजपत्र, अजवायन, सोंठ, सेंधानमक, काली मिर्च, कूठ, खैर, हल्दी, दारुहल्दी तथा रसौत, इनका चूर्ण और स्वर्णमाक्षिकभस्म, ये सभी वस्तुयें समभाग लेकर जलमें भली भाँति खरल करके दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। प्रातःकालके समय इसका सेवन करनेसे सब प्रकारके ज्वर दूर हो जाते हैं ॥ ३५९–३६१ ॥

वृहत् चूड़ामणि रस

कस्तूरिकाविद्रुमरौप्यलौहं तालं हिरण्यं रससिन्दुरञ्च।
सुवर्णसिन्दूरलवङ्गमुक्ताः चोचं घनं माक्षिकराजपट्टम् ॥ ३६२ ॥
गोक्षूरजातीफलजातिकोषं मरीचकर्पूरशिखित्रिवञ्च।
प्रगृह्य सर्वं हि समं प्रयत्नादथाश्वगन्धाद्विगुणं हि वैद्यः ॥ ३६३ ॥
वक्ष्यमाणौषधैर्भाव्य प्रत्येकं मुनिसंख्यया।
निर्गुण्डिफञ्जिकावासारविमूलत्रिकण्टकैः ॥ ३६४ ॥
तद्वीर्य्यं कथयिष्यामि वातिकं पैत्तिकं ज्वरम्।
कफोद्भवं द्विदोषोत्थं त्रिदोषजनितं तथा ॥ ३६५ ॥
सन्ततं सततं हन्ति तृतीयकचतुर्थकौ।
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च विषमं भूतसम्भवम् ॥ ३६६ ॥
नाशयेदचिरादेव वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा।
चूड़ामणिरसो ह्येष शिवेन परिभाषितः ॥ ३६७ ॥

कस्तूरी, प्रवालभस्म, चाँदी तथा लौहभस्म, शुद्ध हड़ताल, रससिन्दूर, सुवर्णसिन्दूर, लौंगका चूर्ण, मोतीभस्म, दालचीनी, नागरमोथा, स्वर्णमाक्षिकभस्म, कान्तपाषाणभस्म, गोखरू, जायफल, जावित्री और काली मिर्चका चूर्ण,

कपूर तथा शुद्ध तूतिया, ये द्रव्य समभाग लेकर असगंधका चूर्ण दो भाग डाले। फिर संभालू, ब्रह्मयष्टी, वासा, मदारकी जड़ और त्रिकण्टकके रस अथवा काढ़ेमें सात-सात बार भावना देनी चाहिए। इसके बाद इसे छायामें सुखाकर रख ले। इसका सेवन करनेसे वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, द्विदोषज, त्रिदोषज, सन्तत, तृतीयक, चतुर्थक, ऐकाहिक, द्व्याहिक, विषम एवं भूतज्वर शीघ्र वैसे ही दूर हो जाते हैं, जैसे इन्द्रका वज्र वृक्षोंको ढहा देता है। यह साक्षात् शंकर-भगवानका बताया हुआ चूडामणि रस है ॥ ३६२–३६७ ॥

वृहत् ज्वरचूडामणि रस

सुवर्णं स्वर्णसिन्दूरं लौहं तारं मृगाण्डजम्।
जातीफलं जातिकोषं लवङ्गञ्च त्रिकण्टकम् ॥ ३६८ ॥
कर्पूरं गगनञ्चैव चोचं मुषलतालकम्।
प्रत्येकं कर्षमानन्तु तुरङ्गञ्च द्विकार्षिकम् ॥ ३६९ ॥
विद्रुमं भस्मसूतञ्च मौक्तिकं माक्षिकं तथा।
राजपट्टं शिखिग्रीवं सर्वं सञ्चूर्ण्य यत्नतः ॥ ३७० ॥
खल्ले तु चूर्णमादाय भावयेत्परिकीर्त्तितैः ॥ ३७१ ॥
निर्गुण्डीफञ्जिकावासारविमूलत्रिकण्टकैः।
ज्वरमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा ॥ ३७२ ॥

स्वर्णभस्म, स्वर्णसिन्दूर, लौहभस्म, चाँदीभस्म, कस्तूरी, जायफल, लौंग और गोखरूका चूर्ण, कपूर, अभ्रकभस्म, दालचीनी, मुसली, शुद्ध हड़ताल, इन सभी द्रव्योंको एक-एक कर्षके परिमाणमें और शुद्ध गंधक, मूँगाभस्म, रससिन्दूर, मोतीभस्म, स्वर्णमाक्षिकभस्म, कान्तपाषाणभस्म, शुद्ध तूतिया, इन वस्तुओंको दो-दो कर्षके परिमाणमें लेकर भलीभाँति खरल करके गोला बना ले। फिर इस गोलेको संभालू, ब्रह्मयष्टी, वासा, मदारकी जड़ और गोखरू इनमेंसे प्रत्येकके स्वरस अथवा क्वाथमें सात-सात बार भावना दे। फिर छायाशुष्क करके गोलियें बना ले। इस रसका सेवन करनेसे साध्य तथा असाध्य आठ प्रकारके ज्वर नष्ट हो जाते हैं ॥३६८–३७२॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे 'रसायनी' भाषाटीकायां ज्वरचिकित्सा समाप्ता।

अथ ज्वरातिसार-चिकित्सा

मृतसंजीवनी वटी

मागधी वत्सनाभश्च तयोस्तुल्यश्च हिङ्गुलम् ।
मृतसञ्जीवनी ख्याता जम्बीररसमर्दिता ॥ १ ॥
मूलकस्य च बीजानां वटिका तुल्यरूपिणी ।
पानीया शीततोयेन ज्वरातीसारनाशिनी ।
विसूच्यां सन्निपाते च ज्वरे चैवातिदुस्तरे ॥ २ ॥

पिप्पलीका चूर्ण और शुद्ध वत्सनाभ विप एक-एक भाग तथा शुद्ध सिंगरिफ दो भाग इन्हें लेकर जम्भीरी नीबूके रसमें घोंटकर मूलीके बीज बराबर गोलियाँ बनाकर रख ले । इसे यदि ठंढे जलके साथ खाया जाय तो ज्वरातीसार निवृत्त हो जाता है । विसूचिका, सन्निपात और भयानक ज्वरमें भी यह उपकार करता है ॥१॥२॥

आनन्दभैरव रस

हिङ्गुलञ्च विपं व्योपं टङ्कणं गन्धकं समम् ।
जम्बीररससंयुक्तं मर्दयेद्यामकद्वयम् ॥ ३ ॥
कासश्वासातिसारेपु ग्रहण्यां सान्निपातिके ।
अपस्मारेऽनिले मेहेऽप्यजीर्णे वह्निमान्द्यके ।
गुञ्जामात्रः प्रदातव्यो रस आनन्दभैरवः ॥ ४ ॥

शुद्ध सिंगरिफ, शुद्ध वत्सनाभ विप, सोंठ-मिर्च-पिप्पलीका चूर्ण, शुद्ध सोहागा और शुद्ध गंधक ये द्रव्य समभाग लेकर एकमें पीसे । बादमें जंभीरी नीबूके रसमें दो पहर घोंटकर एक-एक रत्तीकी गोलियें बना ले । खाँसी, दमा, अतिसार, ग्रहणी, सन्निपात, अपस्मार (मिरगी), वातजनित रोग, प्रमेह, अजीर्ण और अग्निमांद्यमें यदि रत्ती भरकी मात्रामें 'आनन्दभैरव' दिया जाय तो बड़ा लाभ होता है ॥३॥४॥

अमृतार्णव रस

हिङ्गुलोत्थो रसो लौहं टङ्कणं गन्धकं शटी ।
धान्यकं बालकं मुस्तं पाठाजाजी घुणप्रिया ॥ ५ ॥

प्रत्येकं तोलकं चूर्णं छागीदुग्धेन पेषयेत्।
माषैका वटिका कार्य्या रसोऽयममृतार्णवः॥ ६॥
धान्यजीरकयूषेण विजयाशणबीजतः॥ ७॥
वटिकां भक्षयेत्प्रातर्गहनानन्दभाषिताम्।
मधुना छागदुग्धेन मण्डेन शीतवारिणा।
कदलीमोचकरसैः कञ्चटद्रवकेण च॥ ८॥
अतिसारं जयेदुग्रमेकजं द्वन्द्वजं तथा।
दोषत्रयसमुद्भूतमुपसर्गसमन्वितम् ॥ ९॥
शूलघ्नो वह्निजननी ग्रहण्यर्शोविकारनुत्।
अम्लपित्तप्रशमनः कासघ्नो गुल्मनाशनः॥ १०॥

सिंगरिफसे निकाला हुआ पारा, लौहभस्म, शुद्ध सोहागा, शुद्ध गंधक, कचूर, धनियाँ, सुगंधबाला, नागरमोथा, पाढ़, जीरा और घुणप्रिया (अतीस) का चूर्ण ये सभी चीजें एक-एक तोले लेकर बकरीके दूधमें पीसे। भली भाँति पिस जानेपर एक-एक मासेकी गोलियें बनाकर रख ले। यह अमृतार्णव रस है और गहनानन्दने इसे बताया है। यदि प्रातःकालके समय धनियां और जीरा-के चूर्ण, भाँगके बीज, सनके बीज, मधु, बकरीके दूध, चावलके माड़, ठंढे पानी, केलेके रस, केलेके फल अथवा चौराईके रसमें इसका सेवन करे तो भयानक अतीसार, एकज, द्वन्द्वज, त्रिदोषज एवं विविध उपद्रवों युक्त अतिसार नष्ट हो जाता है। यह रस शूलनाशक, अग्निदीपक, ग्रहणी, अर्श, अम्लपित्त, खाँसी एवं गुल्मरोगका नाशक है॥ ५-१०॥

सिद्धप्राणेश्वर रस

गन्धेशाभ्रं पृथग्वेदभागमन्यच्च भागिकम्।
स्वर्जिटङ्कयवक्षाराः पञ्चैव लवणानि च॥ ११॥
वराव्योषेन्द्रबीजानि द्विजीराग्नियमानिकाः।
सहिङ्गुजीरसारञ्च शतपुष्पा सुचूर्णिता॥ १२॥
सिद्धप्राणेश्वरः सूतः प्राणिनां प्राणदायकः।
माषैकं भक्षयेदस्य नागवल्लीदलैर्युतम्॥ १३॥

उष्णोदकानुपानञ्च दद्यात्तत्र पलत्रयम् ।
ज्वरातिसारेऽतिस्नुतौ केवले वा ज्वरेऽपि वा ॥ १४ ॥
ज्वरे त्रिदोषजे घोरे ग्रहण्यादिगदेऽपि च ।
वातरोगे तथा शूले शले च परिणामजे ॥ १५ ॥

शुद्ध गंधक और शुद्ध पारा चार-चार तोला लेकर कज्जली करे। फिर इसमें चार ही तोला अभ्रकभस्म मिला दे। तब सज्जी, शुद्ध सोहागा, जवाखार, पाँचों नमक, हड़, बहेड़ा, आँवला, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, इन्द्रजौ, जीरा, चीता और सोया, ये द्रव्य एक-एक तोला लेकर मिलावे। तदनन्तर इन सबको एक साथ पीसकर मासे-मासे भर (आज-कल तीन-तीन रत्ती) की गोलियें बना ले। यह सिद्ध प्राणेश्वर रस है। यदि पानके पत्तेपर एक गोली रखकर इसे खाय और बादमें तीन तोले गरम जल पी ले तो यह ज्वरातीसार, बहुत पतला दस्त, साधारण ज्वर, त्रिदोषज्वर, भयंकर संग्रहणी, वातरोग, शूल और परिणामशूलको नष्ट कर देता है ॥ ११–१५ ॥

अभ्रवटिका

अथ शुद्धस्य सूतस्य गन्धकस्याभ्रकस्य च ।
प्रत्येकं कर्षमानन्तु ग्राह्य रसगुणैषिणा ॥ १६ ॥
ततः कज्जिलकां कृत्वा व्योषचूर्णं प्रदापयेत् ।
केशराजस्य भृङ्गस्य निर्गुण्ड्याश्चित्रकस्य च ॥ १७ ॥
ग्रीष्मसुन्दरकस्याथ जयन्त्याः स्वरसन्तथा ।
मण्डूकपर्ण्याः स्वरसं तथा शक्राशनस्य च ॥ १८ ॥
श्वेतापराजितायाश्च स्वरसं पर्णसम्भवम् ।
दापयेद्रसतुल्यञ्च विधिज्ञः कुशलो भिषक् ॥ १९ ॥
रसतुल्यं प्रदातव्यं चूर्णं मरिचसम्भवम् ।
देयं रसार्द्धभागेन चूर्णं टङ्कणसम्भवम् ॥ २० ॥
शुभे शिलामये पात्रे घर्षणीयं प्रयत्नतः ।
शुष्कमातपसंयोगाद्वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ २१ ॥
कलायपरिमाणान्तु खादेत्तान्तु प्रयत्नतः ।
दृष्ट्वा वयश्चाग्निञ्च यथाव्याध्यनुपानतः ॥ २२ ॥

हन्ति कासं क्षयं श्वासं वातश्लेष्मभवां रुजम्।
परं वाजीकरः श्रेष्ठो बलवर्णाग्निवर्द्धकः॥ २३॥
ज्वरे चैवातिसारे च सिद्ध एष प्रयोगराट्।
नातः परतरः श्रेष्ठो विद्यतेऽभ्ररसायनात्॥ २४॥
भोजने शयने पाने नास्त्यत्र नियमः क्वचित्।
दधि चावश्यकं भक्ष्यं प्राह नागार्जुनो मुनिः॥ २५॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक एक-एक कर्ष लेकर कज्जली करे। तदनन्तर अभ्रकभस्म, सोंठ, मिर्च तथा पिप्पली का चूर्ण एक-एक कर्ष मिलाकर खूब घोंटे। अब उसमें केशराज, भाँगरा, संभालू, चीता, ग्रीष्मसुन्दर, जयन्ती, मण्डूकपर्णी, भाँग एवं श्वेत अपराजिताके पत्तोंका स्वरस एक-एक कर्ष डाले और पत्थरके खरलमें मिर्च एवं शुद्ध सोहागा डालकर घोंटे। घुँट जानेपर मटरके बराबर गोलियें बना तथा धूपमें सुखाकर रख ले। अवस्था, पाचनशक्ति और व्याधिके अनुसार अनुपानके साथ यदि इसका सेवन किया जाय तो यह वटिका खाँसी, श्वास, क्षय और वात-कफजनित सभी रोगोंको नष्ट कर देती है। यह बड़ी ही वाजीकरण, श्रेष्ठ, बल और वर्णको बढ़ानेवाली है। ज्वर और अतीसारमें तो यह सिद्ध प्रयोग है। इस अभ्ररसायनसे बढ़कर श्रेष्ठ और कोई भी रस नहीं है। इसका सेवन करनेमें भोजन, शयन और पानविषयक कोई भी परहेज नहीं है। हाँ, इस रसका सेवन करते समय दही अवश्य खाता रहे। यह नागार्जुन मुनिका कथन है॥ १६–२५॥

कनकसुन्दर रस

हिङ्गुलं मरिचं गन्धं टङ्कणं पिप्पलीं विषम्।
कनकस्य च बीजानि समांशं विजयाद्रवैः।
मर्दयेद्यामामात्रन्तु चणमात्रा वटी कृता॥ २६॥
भक्षणाद्ग्रहणीं हन्ति रसः कनकसुन्दरः।
अग्निमान्द्यं ज्वरं तीव्रमतिसारञ्च नाशयेत्।
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं सदा तक्रौदनं हितम्॥ २७॥

शुद्ध सिंगरिफ, काली मिर्चका चूर्ण, शुद्ध गंधक, शुद्ध सोहागा, पिप्पली, शुद्ध वत्सनाभ विष और धतूरेके बीज, ये द्रव्य समभाग लेकर भाँगके रसमें

पहरभर घोंटकर चनेके बराबर गोलियें बना ले। इसका सेवन करनेसे ग्रहणी, अग्निमान्द्य, तीव्र ज्वर और अतीसार दूर हो जाता है। इसका सेवन करनेवाले-को दही तथा मंठा-भातका पथ्य लेना चाहिये ॥ २६ ॥ २७ ॥

कनकप्रभा वटी

सुवर्णबीजं मरिचं मरालपाद कणा टङ्कणक विषञ्च।
गन्धं जयाद्भिर्दिवसं विमर्द्य गुञ्जाप्रमाणां वटिकां विदध्यात् ॥२८॥
एषाऽतिसारग्रहणीं ज्वराग्निमान्द्यं निहन्यात्कनकप्रभेयम्।
दध्योदनं भोज्यमनुष्णवारि मांसं भजेत्तित्तिरिलावकानाम् ॥२९॥

धतूरेके बीज, कालीमिर्च, हंसपदी, पिप्पली, शुद्ध सोहागा, शुद्ध विष और शुद्ध गंधक, ये द्रव्य समभाग लेकर भाँगके रसमें दिनभर घोंटे और एक-एक रत्तीकी गोलियें बनाकर रख ले। भली भाँति सेवन करनेसे यह अतिसार, संग्रहणी, ज्वर एवं अग्निमांद्यका शमन कर देती है। यह कनकप्रभा वटी है। इसमें ठंडा जल, दही-भात तथा तित्तिर और बटेरका मांस पथ्य है ॥२८॥२९॥

कारुण्यसागर रस

भस्मसूताद्द्विधा गन्धं तथा द्वित्वं मृताभ्रकम्।
दिनं सार्षपतैलेन पिष्ट्वा यामं विपाचयेत् ॥ ३० ॥
रसैर्मार्कवमूलोत्थैः पिष्ट्वा यामं विपाचयेत्।
त्रिक्षारपञ्चलवणविषव्योषाग्निजीरकैः ॥ ३१ ॥
सविडङ्गैस्तुल्यभागैरयं कारुण्यसागरः।
माषमात्रं ददीताऽस्य भिषक्सर्वातिसारके ॥ ३२ ॥
सज्वरे विज्वरे वाऽपि सशूले शोणितोद्भवे।
निरामे शोथयुक्ते वा ग्रहण्यां सान्निपातिके।
अनुपानं विनाप्येष कार्य्यसिद्धिं करिष्यति ॥ ३३ ॥

रससिन्दूर एक भाग, शुद्ध गंधक दो भाग और अभ्रकभस्म दो भाग लेकर पीसे। फिर सरसोंके तेलमें घोंट तथा बालुकायंत्रमें रखकर पहरभर आँच दे। तब निकाले और भाँगरेके रसमें घोंटकर फिर बालुकायंत्रमें पकावे। तदनन्तर जवाखार, शुद्ध सोहागा, सज्जी, पाँचों नमक, शुद्ध विष, सोंठ-मिर्च-पिप्पलीका चूर्ण तथा चीता-जीरा-विडंगका चूर्ण ये द्रव्य पाँच-पाँच भाग उन्हींमें

मिलाकर मर्दन करे । भली भाँति घुँट जानेपर मासे-मासे भरकी गोलियें बना ले । इसका सेवन करनेसे सब प्रकारके अतिसार, ज्वरातिसार, विज्वरातिसार, अतिसारके सब उपद्रव, शूल, रक्तप्रवाह, निराम एवं शोथयुक्त ग्रहणी और सन्निपात दूर हो जाते हैं । यदि बिना अनुपानके भी इसका उपयोग किया जाय तो यह अपना काम पूरा कर देता है ॥ ३०-३३ ॥

बृहत्कनकसुन्दर रस

शुद्धसूतं समं गन्धं मरिचं टङ्कणं तथा ।
स्वर्णबीजं समं मर्द्यं भार्गीद्रावैर्दिनार्द्धकम् ॥ ३४ ॥
सूततुल्यं मृतं चाभ्रं रसः कनकसुन्दरः ।
अस्य गुञ्जाद्वयं हन्ति पित्तातीसारमुग्रकम् ॥ ३५ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, काली मिर्च, शुद्ध सोहागा, शुद्ध धतूरेके बीज, ये द्रव्य समभाग लेकर एकमें पीस डाले । फिर भार्गीके रसमें आधे दिन घोंटे । फिर पारेके बराबर अभ्रकभस्म मिलाकर दो-दो रत्तीकी गोली बना ले । इसका सेवन करनेसे भयंकर पित्तातिसार भी दूर हो जाता है ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

मृतसंजीवन रस

रसगन्धौ समौ ग्राह्यौ सूतपादं विषं क्षिपेत् ।
सर्वतुल्यं मृतं चाभ्रं मर्द्यं धुस्तूरजैर्द्रवैः ॥ ३६ ॥
सर्पाद्याश्च द्रवैर्यामं कषायेणाथ भावयेत् ।
धातक्यतिविषाभुस्तं शुण्ठीजीरकवालकम् ॥ ३७ ॥
यमानी धान्यकं बिल्वं पाठा पथ्या कणान्विता ।
कुटजस्य त्वचं बीजं कपित्थं दाडिमं बलाम् ॥ ३८ ॥
प्रत्येकं कर्षमात्रं स्यात्कुट्टितं क्वाथयेज्जलैः ।
चतुर्गुणं जलं दत्त्वा यावत्पादावशेषितम् ॥ ३९ ॥
अनेन त्रिदिनं भाव्यं पूर्वोक्तं मर्दितं रसम् ।
रुद्ध्वा तद्वालुकायन्त्रे क्षणं मृद्वग्निना पचेत् ॥ ४० ॥
मृतसञ्जीवनी नाम चास्य गुञ्जाचतुष्टयम् ।
दातव्यमनुपानेन चासाध्यमपि साधयेत् ॥ ४१ ॥

षट्प्रकारमतीसारं साध्यासाध्यञ्जयेद्ध्रुवम् ।
नागरातिविषा मुस्तं देवदारु वणा वचा ॥ ४२ ॥
यमानो वालकं धान्यं कुटजत्वग्हरीतकी ।
धातकीन्द्रयवौ बिल्वं पाठामोचरसं समम् ।
चूर्णितं मधुना लेह्यमनुपान सुखावहम् ॥ ४३ ॥

शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लेकर कज्जली कर ले। फिर पारेकी चौथाई शुद्ध विष और सबको मिलाकर जितनी वजन हो, उतना अभ्रकभस्म डालकर धतूरेके रसमें घोटे। तब सर्पाक्षीके रस अथवा काढ़ेमें दो पहर भावना दे। तदनन्तर धातकी (धायके फूल) अतीस, मोथा, सोंठ, जीरा, सुगन्धवाला, अजवायन, धनियाँ, वेल, पाढ़, हर्र, पिप्पली, कुटजकी छाल, कैथा, अनार, वला (वरियारा) इन सब वस्तुओंको एक-एक कर्षके परिमाणमें लेकर कूट डाले। फिर जितना परिमाण इन औषधियोंका हो, उसका चौगुना जल डालकर पकावे। जब चौथाई जल शेष रहे, तब इसी काढ़ेमें पूर्वोक्त घुँटा हुआ रस डालकर तीन दिन भावना दे। उसमेंसे निकालकर इसे वालुकायंत्रमें रखे और क्षण भर मन्द-मन्द आँच दे। तब उसमेंसे निकाल और जलमें घोंटकर चार-चार रत्तीकी गोलियें बना ले, यही मृतसंजीवनी रस है। यदि अनुपानके साथ इसका सेवन किया जाय तो यह छहों प्रकारके साध्य अथवा असाध्य अतिसारको मार भगाता है। सोंठ, अतिविषा (अतीस) मोथा, देवदारु, पिप्पली, वच, अजवायन, सुगन्धवाला, धनियाँ, कुटजकी छाल, हरीतकी, धायके फूल, इन्द्रजौ, वेल, पाढ़, मोचरस (सहिंजन) ये वस्तुयें समभाग लेकर चूर्ण कर ले। इसी चूर्णमें मृतसंजीवनी रस और मधु मिलाकर चाटना चाहिये ॥ ३६—४३ ॥

प्राणेश्वर रस

रसगन्धकमभ्रञ्च टङ्कणं शतपुष्पकम् ।
यमानी जीरकाख्यं च प्रत्येकं कर्षयुग्मकम् ॥ ४४ ॥
कर्षमेकं यवक्षार हिङ्गुपट्ुकपञ्चकम् ।
विडङ्गेन्द्रयवं सर्जरसकं चाग्निसंज्ञितम् ।
घृष्ट्वा च वटिका कार्य्या नाम्ना प्राणेश्वरो रसः ॥४५॥

पित्तज्वरे पित्तभवोऽतिसारस्तथातिसारे यदि वा ज्वरः स्यात् ।
दोषस्य दूष्यस्य समानभावाज्ज्वरातिसारः कथितो भिषग्भिः ॥४६॥

इति ज्वरातीसारचिकित्सा समाप्ता ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, अभ्रकभस्म, शुद्ध सोहागा, सौंफ, अजवायन और जीरा, ये सभी द्रव्य दो-दो कर्ष लेकर पारा-गंधककी कज्जली कर ले । फिर जैवा-खार, हींग, पाँचों नमक, वायविडंग, इन्द्रजौ, राल, शुद्ध खपरिया तथा चीता, ये वस्तुयें एक-एक कर्ष ले और सबको एकमें मिलाकर जलसे घोंट ले । घुँट जानेपर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले । यही प्राणेश्वर रस है । पित्तज्वर, पित्तातिसार और अतिसारज्वर इससे दूर हो जाते हैं । विज्ञ वैद्योंका यह मत है कि दोष और दूष्यको समानता होनेपर ही ज्वरातिसार होता है ॥ ४४–४६ ॥

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे 'रसायनी' भाषाटीकायां ज्वरातिसारचिकित्सा समाप्ता ।

अथ अतिसारचिकित्सा ।

अतिसारवारण रस

दरदं कृतकर्पूरं मुस्तेन्द्रयवसंयुतम् ।
सर्वातीसारशमनं खाखसीक्षीरभावितम् ॥ १ ॥

शुद्ध सिंगरिफ, उड़ाया हुआ कपूर, नागरमोथा और इन्द्रजौ, ये द्रव्य समभाग लेकर खाखसीक्षीर (अफीम) के रसमें भावना दे । इसके बाद जलमें घोंटकर गोली बना ले । इसका सेवन करनेसे सब प्रकारके अतिसार दूर हो जाते हैं ॥ १ ॥

पूर्णचन्द्रोदय रस

शुद्धं च तालकं लौहं गगनं च पलं पलम् ।
कर्पूरं पारदं गन्धं प्रत्येकं वटकोन्मितम् ॥ २ ॥
जातीकोषमुरापत्रं शटीतालीशकेशरम् ।
व्योषं चोचं कणामूलं लवंगं पिचुसम्मितम् ॥ ३ ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय गुरुदेवद्विजार्चकः ।
नानारूपमतीसारं ग्रहणीं सर्वरूपिणीम् ॥ ४ ॥

अम्लपि तथा शू शूल च परिणामजम्।
रसायनवरश्चायं वाजीकरण उत्तमः ॥ ५ ॥

शुद्ध हड़ताल, लौहभस्म और अभ्रकभस्म द्रव्य एक-एक पल, कपूर, शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक इन्हें एक-एक वटक (आठ-आठ मासा) जावित्री, मुरामांसी, तेजपत्र, कचूर, तालीशपत्र, नागकेशर, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, दारुचीनी, पिप्पलीमूल और लौंग, इनका चूर्ण एक-एक कर्ष लेकर सर्वप्रथम पारे-गन्धककी कज्जली करे। फिर अन्य द्रव्य मिला तथा जलके साथ घोंटकर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले। गुरु तथा देवताका पूजक आस्तिक रोगी यदि प्रातःकालके समय इसका सेवन करे तो विविध भाँतिके अतिसार, सब तरहकी ग्रहणी, अम्लपित्त, शूल और परिणाम-शूल नष्ट हो जाते हैं। यह एक प्रकारका उत्तम रसायन और वाजीकरण रस है॥ २--५॥

कणाद्य लौह

कणा नागरपाठाभिस्त्रिवर्गत्रितयेन च।
विल्वचन्दनह्रीवेरैः सर्वातीसारजिद्भवेत्॥ ६॥
सर्वोपद्रवसंयुक्तामपि हन्ति प्रवाहिकाम्।
नानेन सदृशं लौहं विद्यते ग्रहणीहरम्॥ ७॥

पिप्पली, सोंठ, पाढ़, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, हर्रा, बहेड़ा, आँवला, वायविडंग, मोथा, चीता, बेलका गूदा, रक्तचन्दन और सुगंध वाला, इन द्रव्योंका चूर्ण समभाग और सबको मिलाकर जितनी वजन हो, उतनी ही लौहभस्म मिलाकर जलसे मर्दन करके दो-दो रत्तीकी गोली बना ले। अतिसारको नष्ट करनेमें इस कणाद्य लौहसे बढ़कर कोई भी रस नहीं है॥ ६॥ ७॥

वृहद्गगनसुन्दर रस

पारदं गन्धकं चाभ्रं लौहं चापि वराटकम्।
रूप्यं चातिविषं कर्षं समभागं प्रकल्पयेत्॥ ८॥
धान्यशुण्ठीकृतकाथैर्भावयेच्च पृथक्पृथक्।
गुञ्जाप्रमाणां वटिकां कारयेत्कुशलो भिषक्॥ ९॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय गुरुदेवद्विजार्चकः।
दग्धविल्वं गुडेनैव कुर्य्यात्तदनुपानकम्॥ १०॥

अजादुग्धेन वा पेयं जम्बूत्वक्साधितं रसम्।
आतीसारे ज्वरे घोरे ग्रहण्यामरुचौ तथा ॥ ११ ॥
सामे सशूले रक्ते च पिच्छास्रावे भ्रमे तथा।
शोथे रक्तातिसारे च संग्रहग्रहणीषु च ॥ १२ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, अभ्रकभस्म, लौहभस्म, कौड़ीभस्म, चाँदीभस्म और अतीस, ये द्रव्य एक-एक कर्ष लेकर पारे और गंधककी कज्जली करे। इसे अन्यान्य द्रव्योंके साथ एकमें कूटकर धनियाँ तथा सोंठके क्वाथमें पृथक् पृथक् भावना दे। तदनन्तर घोंटकर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले। देवता तथा गुरुका अर्चक (आस्तिक) रोगी प्रातःकालके समय इसका सेवन करे। इसका अनुपान भूना वेल और पुराना गुड़ है। जामुनकी छालके काढ़े अथवा बकरीके दूधमें भी इसे ले सकते हैं। इससे अतीसार, घोर ज्वर, ग्रहणी, अरुचि, आम तथा शूलयुक्त अतिसार, पित्तातिसार, भ्रम, शोथ और संग्रहणीरोग दूर हो जाता है ॥ ८—१२ ॥

लोकनाथ रस

भस्मसूतस्य भागैकं चत्वारः शुद्धगन्धकात्।
क्षिप्त्वा वराटिकागर्भे टङ्कणेन निरुध्य च ॥ १३ ॥
भाण्डे रुद्ध्वा पुटे पाच्यं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
लोकनाथरसो नाम क्षौद्रैर्गुञ्जाचतुष्टयम् ॥ १४ ॥
नागरातिविषामुस्तं देवदारुवचान्वितम्।
कषायमनुपानन्तु सर्वातीसारनाशकः ॥ १५ ॥

रससिन्दूर एक भाग तथा शुद्ध गंधक चार भाग इनको घोंट और कौड़ियोंमें भरके बकरी के दूधमें पिसे हुए सोहागेसे कौड़ियोंका मुख बंद कर दे। सूख जानेपर इन्हें हाँड़ीमें रखकर कपड़मिट्टीसे उस हाँडीका मुख बन्द कर दे और गजपुटमें रखकर फूँक दे। जब वह स्वाङ्गशीतल हो जाय तो निकाल ले। यदि मधुके साथ चार रत्ती यह रस खाय और अनुपानमें सोंठ, अतीस, मोथा, देवदारु तथा वचके काढ़ेका उपयोग करे तो सब प्रकारके अतिसार दूर हो जाते हैं ॥ १३—१५ ॥

चिन्तामणि रस

शुद्धसूतं मृतं ताम्रं गन्धकं प्रतिकार्षिकम् ।
चूर्णयेद्विषकर्षार्द्धं विषार्द्धं तिन्तिडीफलम् ॥ १६ ॥
मर्दयेत्खल्लमध्ये तु चाम्लेन गोलकीकृतम् ।
गर्त्तं षडङ्गुलं कुर्य्यात्सर्वतो वर्त्तुलं शुभम् ॥ १७ ॥
नागवल्ल्याः क्षिपेत्पत्रमादौ पात्रे च गोलकम् ।
आच्छाद्य तच्च पात्रेण रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ॥ १८ ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य सपत्रञ्च विशेषतः ।
कर्षार्द्धं मरिचं दत्त्वा कर्षार्द्धं तिन्तिडीफलम् ॥ १९ ॥
गुञ्जासितां वटीं कुर्य्याच्चिन्तामणिरसो महान् ।
अतिसारे त्रिदोषोत्थे संग्रहग्रहणीगदे ।
अनुपानं विधातव्यं यथादोषानुसारतः ॥ २० ॥

शुद्ध पारा, ताम्रभस्म, शुद्ध गंधक ये तीनों द्रव्य एक-एक कर्ष लेकर पहले गंधक और पारेको कज्जली कर ले। फिर उसमें ताम्रभस्म डालकर घोंटे। तदनन्तर उसमें आधा कर्ष शुद्ध वत्सनाभ विष और चौथाई कर्ष इमलीका फल डाले। इन सबको एकमें मिलाकर काँजीसे खूब घोंटे और घुट जानेपर गोला बना ले। तब एक पात्रमें पानके पत्ते बिछाकर वह गोला रखे और गोलेके ऊपरसे भी पानका पत्ता बिछाकर ढाँक दे। फिर कपड़मिट्टीसे पात्रका मुख बन्द करके गजपुटमें फूँक दे। जब स्वांगशीतल हो जाय तब पत्र सहित गोलेको घोंटकर चूर्ण कर ले। अब इसमें आधा कर्ष काली मिर्चका चूर्ण और आधा कर्ष इमली डाल तथा जलमें घोंटकर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले। यही महान् चिन्तामणि रस है। इसे अतिसार और त्रिदोषजनित संग्रहणी रोगमें देनेसे बड़ा लाभ होता है। दोषोंके तारतम्यसे इसमें कई प्रकारके अनुपान दये जा सकते हैं॥ १६–२० ॥

अहिफेनवटिका

अहिफेनं सखर्जूरं घृष्ट्वा गुञ्जैकमात्रकम् ।
रक्तस्रावमतीसारमतिवृद्धं विनाशयेत् ॥ २१ ॥

शोधित अफीम और खजूर दोनों समभाग लेकर घोंटे और रत्ती-रत्ती भरकी

गोलियें बना ले। यह रक्तस्राव और बहुत अधिक बढ़े हुए अतीसारका शमन करती है ॥ २१ ॥

महागंधक और सर्वाङ्गसुन्दर रस

रसगन्धकयोः कर्षं ग्राह्यमेकं सुशोधितम्।
ततः कज्जलिकां कृत्वा मृदुपाकेन साधयेत् ॥ २२ ॥
जातीफलं तथा कोषं लवङ्गारिष्टपत्रके।
सिंधुवारदलञ्चैव एलाबीजं तथैव च ॥ २३ ॥
एषाञ्च कर्षमात्रेण तोयेनाथ विमर्दयेत्।
मुक्तागृहे पुनः स्थाप्य पुटपाकेन साधयेत् ॥ २४ ॥
घनपङ्कं बहिर्लिप्त्वा पुटमध्ये निधापयेत्।
गुञ्जाषट्कप्रमाणेन प्रत्यहं भक्षयेन्नरः ॥ २५ ॥
एतत्प्रोक्तं कुमाराणां रक्षणाय महौषधम्।
ज्वरघ्नं दीपनञ्चैव बलवर्णप्रसाधनम् ॥ २६ ॥
दुर्वारं ग्रहणीरोगं जयत्येव प्रवाहिकाम्।
सूतिकां च जयेदेतद्रक्तार्शो रक्तसम्भवम् ॥ २७ ॥
पिशाचा दानवा दैत्या बालानां विघ्नकारकाः।
यत्रौषधवरस्तिष्ठेत्तत्र सीमां न यान्ति ते ॥ २८ ॥
बालानां गदयुक्तानां स्त्रीणाञ्चैव विशेषतः।
महागन्धकमेतद्धि सर्वव्याधिनिषूदनम् ॥ २९ ॥
विना पाकेन सर्वाङ्गसुन्दरोऽयं प्रकीर्त्तितः ॥ ३० ॥
ग्रहण्यां ये रसाः प्रोक्तास्तेऽतीसारे प्रकीर्त्तिताः ॥ ३१ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहेऽतीसरचिकित्सा समाप्ता।

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक एक-एक कर्ष लेकर कज्जली कर ले। फिर इसे मन्द आँचमें पर्पटीके समान पकावे। पक जानेपर चूर्ण कर ले और इसमें जायफल, जावित्री, लौंग, नीमकी पत्ती, सँभालूकी पत्ती और इलायचीके बीज, इन सबका चूर्ण एक-एक कर्ष मिलाकर जलसे खूब पीसे। पिस जानेपर इसे सीपके एक खण्डमें भरकर दूसरे खण्डसे बन्द करके ऊपरसे केलेका पत्ता लपेट दे। पत्तेके ऊपर गाढ़ी मिट्टीका गारा पोतकर धूपमें सुखा ले। अब इसे

आठ-दस जंगली उपलोंके बीचमें रखकर फूँक दे और तबतक पकने दे, जबतक कि उसमेंसे गंधकको गंध न निकलने लगे। गंध निकलनेपर निकाल ले और स्वांगशीतल होनेपर चूर्ण करके रख ले। नित्य छ रत्ती इस रसका सेवन करना चाहिए। बालकोंकी रक्षाके लिए यह महान् औषध है। इससे ज्वर दूर होता, मन्द (उदर्य) अग्नि उद्दीप्त हो जाती, बल और वर्ण (सौन्दर्य) की वृद्धि होती, दुःसाध्य ग्रहणीरोग, प्रवाहिका, सूतिकारोग और रक्तजनित रक्तार्श (खूनी बवासीर) मिट जाता है। जहाँ कहीं यह महान् औषध रहता है, वहाँ पिशाच, दानव और बालकोंपर आघात करनेवाले दैत्य नहीं जाते। रोगी बालकों और स्त्रियोंके सभी रोगोंको नष्ट करनेवाला यह महागंधक रस है। इसी औषधिकी सब क्रियायें की जायँ, किन्तु सीपमें भरकर पुट न दें तो यह सर्वांग-सुन्दर रस कहलायेगा। आगे ग्रहणीरोगमें जो रस कहे जायंगे, वे सभी अति-सार रोगपर भी काम करेंगे ॥ २८—३१ ॥

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे 'रसायनी' भाषाटीकायामतीसारचिकित्सा समाप्ता।

अथ ग्रहणीरोगचिकित्सा।

जातीफलादि ग्रहणीकपाट रस

जातीफलं टंगणमभ्रकं च धुस्तूरबीजं समभागचूर्णम्।
भागद्वयं स्यादहिफेनकस्य गन्धालिकापत्ररसेन मर्द्यम् ॥ १ ॥
चणप्रमाणा वटिका विधेया यत्नाद्विदध्याद्ग्रहणीगदेषु।
सामेषु रक्तेषु सशूलकेषु पक्वेष्वपक्वेषु गुदामयेषु ॥ २ ॥
रोगेषु दद्यादनुपानभेदैर्मधुप्रयुक्ता ग्रहणीगदेषु।
पथ्यं सदध्योदनमत्र देयं रसोत्तमोऽयं ग्रहणीकपाटः ॥ ३ ॥

जायफल, शुद्ध सोहागा, अभ्रकभस्म, शुद्ध धतूरेका बीज, इनका चूर्ण समभाग और दो भाग शोधित अफीम मिलाकर गंधालिका (गंध-प्रसारणी) के स्वरसमें घोंटे। भली-भाँति घुट जानेपर चनेके बराबर गोलियें बना लें। ग्रहणी, आम, रक्तस्राव, शूलयुक्त, पक्व-अपक्व गुदारोग एवं सब प्रकारकी ग्रहणीमें अनुपानभेदसे इसका उपयोग किया जा सकता है। भूख

लगनेपर इसमें दही-भातका पथ्य देना चाहिये। संग्रहणीको शान्त करनेके लिए यह उत्तम रस है॥ १—३॥

अपर ग्रहणीकपाट रस

टङ्कणक्षारगन्धाश्म रसं जातीफलं तथा।
विल्वं खदिरसारञ्च जीरकञ्च मधूलिका॥ ४॥
कपित्थकबीजञ्च तथा चोरकपुष्पकम्।
एषां शाणं समादाय श्लक्ष्णचूर्णञ्च कारयेत्॥ ५॥
विल्वपत्रककार्पासफलं शालिञ्चदुग्धिकाम्।
शालिञ्चमूलं कुटजं तथा कञ्चटपत्रकम्॥ ६॥
सर्वेषां स्वरसेनैव वटिकां कारयेद्भिषक्।
रक्तिकैकप्रमाणेन खादयेद्दिवसत्रयम्॥ ७॥
दधिमस्तु ततः पेयं पलमात्रप्रमाणतः।
अपि योगशताक्रान्तां ग्रहणीमुद्धतां जयेत्॥ ८॥
आमशूलं ज्वरं कासं श्वासञ्चैव प्रवाहिकाम्।
रक्तस्रावकरं द्रव्यं कार्य्यं नैवात्र युक्तितः॥ ९॥
कृष्णवार्त्ताकुमत्स्यञ्च दधितक्रञ्च शस्यते।
ज्ञात्वा वायोः कृतिं तत्र तैलं वारि प्रदापयेत्॥ १०॥

शुद्ध सोहागा, जवाखार, शुद्ध गंधक, शुद्ध पारा, जायफल, वेलका गूदा, खैरका सारभाग, जीरा, मूर्वा, केवाँचके बीज और शंखिनी, इनका महीन चूर्ण एक-एक शाण लेकर पहले पारा और गंधककी कज्जली कर ले। फिर वेलकी पत्ती, कपासके फल, शालिञ्चशाकका मूल, दुद्धी और जलचौराई, इन सबके स्वरसमें अच्छी तरह घोंटकर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले। इसको खानेके बाद ऊपरसे १ पल (८ तोला) दहीका पानी पी लेना चाहिए। यदि तीन दिन इसका उपयोग किया जाय तो सैकड़ों योगोंसे भी जो उग्र ग्रहणी न मिटी हो तो यह रस उसे मार भगाता है। यह आमशूल, ज्वर, खाँसी, श्वास और प्रवाहिकाको भी दूर करता है। इस रसका सेवन करते समय कोई ऐसी चीज नहीं खानी चाहिए कि जिससे रक्तस्राव बढ़ जाय। इसमें काला बैगन, मछली,

दही और मंठाका सेवन करे तो अच्छा हो। वायुकी गतिविधि देखकर ही तेल और जलका व्यवहार करना चाहिए॥ ४—१०॥

जातीफलाद्या वटिका

अभ्रस्य सूतस्य च गन्धकस्य प्रत्येकशो माषचतुष्टयञ्च।
विधाय शुद्धोपलमात्रमध्ये सुकज्जलीं वैद्यवरः प्रयत्नात्॥११॥
जातीफलं शाल्मलिवेष्टमुस्तं सटङ्कणं सातिविषं सजीरम्।
प्रत्येकमेषां मरिचस्य शाणप्रमाणमेकं विषमाषकञ्च॥ १२॥
विचूर्ण्य सर्वाण्यवलोड्य पश्चाद्विभावयेत्पत्ररसैरमीषाम्।
इन्द्राणिकेन्द्राशनकश्च जम्बू जयन्तिका दाडिमकेशराजौ।
अविद्धकर्णोऽपि च भृङ्गराजौ विभाव्य सम्यग्वटिका विधेया॥१३॥
कोलास्थिमानाथ बहुप्रकारं सामं निहन्यादनिलान्गदांश्च।
कुर्य्याद्विशेषादनलप्रवृद्धिं कासञ्च पञ्चात्मकमम्लपित्तम्॥१४॥
इयं निहन्याद्ग्रहणीमसाध्यां मर्त्यस्य जीर्णग्रहणीं प्रवृद्धाम्।
असारकत्वं त्वतिसारमुग्रं श्वासं तथा पाण्डुमरोचकञ्च॥१५॥
चिरोद्भवां संग्रहकोष्ठदुष्टिं जयेद्धृशं योगशतैरसाध्याम्॥१६॥

अभ्रकभस्म, शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक, ये द्रव्य चार-चार मासा लेकर पहलेसे शुद्ध किये हुए पत्थरके खरलमें गंधक और पारेकी कज्जली कर ले। फिर उसमें अभ्रकभस्म डालकर घोंटे। तब जायफल, मोचरस (सेमरकी गोंद), मोथा, शुद्ध सोहागा, अतीस, जीरा और काली मिर्च, इनका चूर्ण एक-एक शाण तथा शुद्ध वत्सनाभ विष एक मासा मिलाकर सँभालू, भाँग, जामुन, जयन्ती, अनार, केशराज, पाढ़ और भाँगरा, इनमेंसे हर एकके स्वरसमें भावना देकर बेरके बराबर गोलियें बना ले। यह वटिका बहुत तरहके आमविकार तथा वातजनित रोगोंका शमन करती और विशेष करके मन्द अग्निको उद्दीप्त कर देती है। इससे पाँचों प्रकारकी खाँसी, अम्लपित्त, असाध्य ग्रहणी, जीर्ण, बहुत बढ़ी हुई ग्रहणी, अतिसार, उग्र अतिसार, श्वास, पाण्डु, अरुचि, बहुत प्राचीन संग्रहणी एवं कोष्ठसम्बन्धी सभी दोष दूर हो जाते हैं। सैकड़ों औषधियोंका उपयोग करके भी जो संग्रहणी दूर न होती हो, वह इस रससे नष्ट

हो जाती है। इससे अगणित मनुष्योंकी जीवनरक्षा होती है और यह रस व्याधिरूपी समुद्रको पार करनेके लिए नौकाके समान है॥ ११–१६॥

पूर्णकला वटी

रसं गन्धं घनं लौहं धातकीपुष्पबिल्वकम्।
विषं कुटजबीजञ्च पाठाजीरकधान्यकम्॥ १७॥
रसाञ्जनं टङ्कणञ्च शिलाजतु पलं तथा।
अभ्रांशञ्च पलं ग्राह्यं प्रत्येकं तोलकत्रयम्॥ १८॥
भेकपर्णी पञ्चमूली बलाकञ्चटदाडिमम्।
शृङ्गाटं केशरं जम्बू दधिमस्तु जयन्तिका॥ १९॥
केशराजो भृङ्गराजः प्रत्येकं तोलकद्वयम्।
द्विमाषा वटिका कार्य्या तक्रेण परिषेविता॥ २०॥
इयं पूर्णकला नाम ग्रहणीगदनाशिनी।
शूलघ्नी दाहशमनी वह्निदा ज्वरनाशिनी।
भ्रमच्छर्दिच्छेदकरी ग्रहणीं सत्वरं जयेत्॥ २१॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, मोथा, धायके फूल, बेलका गूदा, शुद्ध वत्सनाभ विष, कुटजके बीज, पाढ़, जीरा, धनियाँ, रसौत, शुद्ध सोहागा, शुद्ध शिलाजीत और अभ्रकभस्म, ये सभी द्रव्य एक-एक पल ले। सर्वप्रथम पारा और गंधककी कज्जली कर ले। फिर उपर्युक्त सभी वस्तुयें तथा हर्रा, बहेड़ा और आँवलाका चूर्ण तीन-तीन तोला लेकर सबको एक साथ भलीभाँति घोंटे। तदनन्तर मण्डूकपर्णी, पंचमूली, बरियाराकी जड़, जलचौराई, अनार, सिंघाड़ा, नागकेशर, जामुनकी छाल, जयन्ती, केशराज, भँगरा, इनका चूर्ण और दहीका पानी दो तोले डालकर घोंटे। घुँट जानेपर दो-दो मासेकी गोलियें बना ले। यदि मंठेके साथ इसका सेवन किया जाय तो यह पूर्णकला वटी ग्रहणी रोग निवृत्त कर देती है। इससे शूल और दाह भी शान्त हो जाता है। यह वटी औदर्य अग्निको उद्दीप्त करती एवं ज्वर, भ्रम, वमन तथा संग्रहणी रोगको दूर भगाती है॥ १७–२१॥

वज्रकपाट रस

पारदं गन्धकञ्चैव अहिफेनं समोचकम् ।
त्रिकटु त्रैफलञ्चैव सममेकत्र कारयेत् ॥ २२ ॥
भङ्गभृङ्गद्रवैश्चैतद्भावयेच्च पुनः पुनः ।
रक्तित्रयं ततश्चास्य मधुना सह भक्षयेत् ।
असाध्यां ग्रहणीं हन्ति रसो वज्रकपाटकः ॥ २३ ॥
पारदाभ्रकसिन्दूरं गन्धं जातीफलं समम् ।

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध अफीम, मोचरस, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, हर्रा, बहेड़ा और आँवलाका चूर्ण, ये द्रव्य समभाग ले। सर्वप्रथम पारे और गंधककी कज्जली कर ले। फिर भाँग एवं भाँगराके रसमें सात-सात बार भावना देकर तीन-तीन रत्तीकी गोली बना ले। यदि मधुके साथ इस वज्रकपाट रसका सेवन करे तो असाध्य ग्रहणी रोग भी मिट जाता है॥ २२—२३ ॥

जातीफल रस

कुटजस्य फलं चैव धूर्त्तबीजानि टङ्कणम् ॥ २४ ॥
व्योषं मुस्ताऽभया चैव चूतबीजं तथैव च ।
बिल्वकं सर्वबीजञ्च दाडिमीफलवल्कलम् ॥ २५ ॥
एतानि समभागानि निक्षिपेत्खल्लमध्यतः ।
विजयास्वरसेनैव मर्दयेत्श्लक्ष्णचूर्णितम् ॥ २६ ॥
गुञ्जाफलप्रमाणान्तु वटिकां कारयेद्भिषक् ।
एकां कुटजमूलत्वक्कषायेण प्रयोजयेत् ॥ २७ ॥
आमातिसारं हरते कुरुते वह्निदीपनम् ।
मधुना बिल्वशुण्टेन रक्तग्रहणिकां जयेत् ॥ २८ ॥
शुण्ठीधान्यकयोगेन चातिसारं निहन्त्यसौ ।
जातीफलरसो ह्येष ग्रहणीगदनाशनः ॥ २९ ॥

शुद्ध पारा, अभ्रकभस्म, शुद्ध गंधक, जायफल, इन्द्रजौ, शुद्ध धतूरेके बीज, शुद्ध सोहागा, सोंठ, मिर्च, पिप्पलीका चूर्ण, मोथा, छोटी हड़, आमकी गुठली, बेलका गूदा, सहिंजनके बीज, अनारके फलका छिलका, ये द्रव्य समभाग ले। पहले पारे और गंधककी कज्जली कर ले। फिर सब द्रव्योंको एकमें मिलाकर

भाँगके रसमें भलीभाँति मर्दन करे। खूब महीन हो जानेपर रत्ती-रत्ती भरकी गोली बनाकर रख ले। यदि कुटजकी छालका काढ़ा बनाकर उसके साथ इस रसकी एक गोलीका सेवन करे तो आमातिसार निवृत्त हो जाता है और औदर्य अग्नि उद्दीप्त हो उठती है। यदि बेलके गूदेमें मधु मिलाकर उसके साथ इस रसका सेवन किया जाय तो रक्त संग्रहणी दूर हो जाती है। यदि धनियाँ और सोंठके साथ इसका उपयोग किया जाय तो यह रस अतिसारको मार भगाता है। यह जातीफल रस ग्रहणीरोगको भी निवृत्त कर देता है॥ २४–२६॥

ग्रहणीगजेन्द्र वटिका

रसगन्धकलौहानि शङ्खटङ्कणरामठम्।
शटीतालीशमुस्तानि धान्यजीरकसैन्धवम्॥ ३०॥
धातक्यतिविषा शुण्ठी गृहधूमो हरीतकी।
भल्लातकं तेजपत्रं जातीफललवङ्गकम्॥ ३१॥
त्वगेला बालकं बिल्वं मेथी शक्राशनं समम्।
छागिदुग्धेन वटिका रसवैद्येन कारिता॥ ३२॥
गहनानन्दनाथेन भाषितेयं रसायने।
वटी गजेन्द्रसंज्ञेयं श्रीमता लोकरक्षणे॥ ३३॥
ग्रहणीं विविधां हन्ति ज्वरातीसारनाशिनी।
शूलगुल्माम्लपित्तानि कामलां च हलीमकम्॥ ३४॥
बलवर्णाग्निजननी सेविता च चिरायुषी।
कण्डुं कुष्ठं विसर्पं च गुदभ्रंशक्रिमिं जयेत्॥ ३५॥
माषद्वयां वटीं खादेच्छागीदुग्धानुपानतः।
वयोऽग्निबलमावीक्ष्य युक्त्वा वा त्रुटिवर्द्धनम्॥ ३६॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौहभस्म, शंखभस्म, शुद्ध सोहागा, हींग, कचूर, तालीसपत्र, नागरमोथा, धनियाँ और जीराका चूर्ण, सेंधानमक, धायके फूल, अतीस, सोंठ, रसोईघरका धुआँ, हड़, शुद्ध भेलावा, तेजपत्र, जायफल, लौंग, दारुचीनी, इलायची, सुगन्धवाला, बेलका गूदा, मेथी और भाँग, ये चीजें सम-भाग लेकर बकरीके दूधमें घोंटकर गोलियें बना ले। रसवैद्य श्रीमान् गहनानन्द-ने लोकोपकारके लिए यह 'ग्रहणीगजेन्द्र वटिका' रसायन बताया है। यह विविध

प्रकारकी ग्रहणी, ज्वरातिसार, शूल, गुल्म, अम्लपित्त, कामला और हलीमक रोगका उन्मूलन करती है। इसका सेवन करनेसे शारीरिक बल तथा वर्ण सौन्दर्य) बढ़ता और उदर्य अग्नि उद्दीप्त हो जाती है। इससे आयु बढ़ती है और खाज, कुष्ठ, विसर्प, गुदभ्रंश तथा क्रिमिरोग दूर होता है। इसकी दो मासेकी १ गोली बकरीके दूधमें सेवन करे। रोगीका बल और अवस्था देखकर इसकी मात्रा बढ़ायी-घटायी भी जा सकती है॥ ३०-३६॥

पीयूषवल्ली रस

सूतमभ्रङ्गन्धकं च तारं लौहं सटङ्कणम्।
रसाञ्जनं माक्षिकं च शाणमेकं पृथक् पृथक्॥ ३७॥
लवङ्गं चन्दनं मुस्तं पाठा जीरकधान्यकम्।
समङ्गाऽतिविषा लोध्रं कुटजेन्द्रयवं त्वचम्॥ ३८॥
जातीफलं विश्वबिल्वं कनकं दाडिमीच्छदम्।
समङ्गा धातकी कुष्ठं प्रत्येकं रससम्मितम्॥ ३९॥
भावयेत्सर्वमेकत्र केशराजरसैः पुनः।
चणकाभा वटी कार्या छागीदुग्धेन पेषिता॥ ४०॥
अनुपानं प्रदातव्यं दग्धबिल्वं समं गुडैः।
हन्ति सर्वानतीसारान्ग्रहणीं चिरजामपि॥ ४१॥
आमसम्पाचनः सम्यग्वह्निवृद्धिकरस्तथा।
पीयूषवल्लीनामायं ग्रहणीरोगनाशनः॥ ४२॥

शुद्ध पारा, अभ्रकभस्म, शुद्ध हड़ताल, लौहभस्म, शुद्ध सोहागा, रसौत, स्वर्णमाक्षिकभस्म, ये द्रव्य एक-एक शाण ले। लौंग, चन्दन, मोथा, पाढ़, जीरा, धनियाँ, वाराहाक्रान्ता, अतीस, लोध, कुटज, इन्द्रजौ, दालचीनी, जायफल, सोंठ, वेलका गूदा, शुद्ध धतूरेके बीज, अनारकी पत्ती, वाराहाक्रान्ता, धायके फूल और कूठ, इनमेंसे हर एक चीजका चूर्ण पारदका समभाग अर्थात् एक-एक शाण लेकर गंधक और पारेकी कज्जली कर ले। फिर सब चीजें एकमें मिलाकर केशराजके रसमें भावना दे। इसके बाद बकरीके दूधमें घोंटकर चनेके बराबर गोलियें बना ले। इसे खानेसे पश्चात् भुना बेल और पुराना गुड़ खाना चाहिए। इस रसका सेवन करनेसे आम पच जाता और उदरकी मन्द

अग्नि उद्दीप्त होती है। यह पीयूषवल्ली नामक रस ग्रहणीरोगको नष्ट कर देता है ॥३७—४२॥

ग्रहणीशार्दूल रस

रसगन्धकयोश्चापि कर्षमेकं सुशोधितम्।
द्वयोः कज्जलिकां कृत्वा हाटकं षोडशांशतः॥ ४३॥
लवङ्गं निम्बपत्रं च जातीकोषफले तथा।
एतेषाङ्कर्षचूर्णेन सूक्ष्मैलां सह मेलयेत्॥ ४४॥
मुक्तागृहेण संस्थाप्य पुटपाकेन साधयेत्।
गुञ्जापञ्चप्रमाणेन प्रत्यहं भक्षयेन्नरः॥ ४५॥
सूतिकां ग्रहणीरोगं हरत्येष सुनिश्चितम्।
अर्शोघ्नो दीपनश्चैव बलपुष्टिप्रसाधनः॥ ४६॥
कासश्वासातिसारघ्नो बलवीर्य्यकरः परः।
दुर्वारग्रहणीरोगमामशूलञ्च नाशयेत्।
संसारलोकरक्षार्थं पुरा रुद्रेण भाषितः॥ ४७॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक दोनों एक-एक कर्ष (८-८ तोले) लेकर कज्जली करे। फिर इसमें पारे-गंधकका षोडशांश (एक तोला) स्वर्णभस्म डाले। तब लौंग, नीमकी पत्ती, जायफल और छोटी इलायची इनमेंसे हर एक चीजका चूर्ण एक-एक कर्ष (आठ-आठ तोले) मिलाकर घोंटे। फिर गोला बनाकर मोतीकी सीपमें भरकर लघु पुट दे। पक जानेपर निकाल ले और घोंटकर पाँच-पाँच रत्तीकी गोलियें बना ले। यदि नित्य इसकी एक गोलीका सेवन करे तो यह सूतिकारोग तथा ग्रहणीको नष्ट कर देता है। यह रस अर्शका नाशका नाशक है और अग्निको उद्दीप्त करता है। इससे बल बढ़ता और शरीर पुष्ट होता है। यह कास, श्वास तथा अतिसारका शमन करता और बल-वीर्य बढ़ाता है। इसके सेवनसे दुर्वार ग्रहणीरोग तथा आमशूल नष्ट हो जाता है। संसारी जीवोंकी रक्षाके निमित्त इसे स्वयं शंकरभगवानने कहा था ॥ ४३—४७॥

वैद्यनाथ वटी

शाणं रसस्य संगृह्य काञ्जिकेन तु शोधयेत्।
चित्रकस्य रसेनापि त्रिफलायाश्च बुद्धिमान्॥ ४८॥

रसार्द्धं गन्धकं शुद्धं भृङ्गराजरसेन वै।
द्वाभ्यां संमूर्छनं कृत्वा स्वरसैः शाणसम्मितैः ॥ ४९ ॥
खल्लयेच्च शिलाखण्डे क्रमशो वक्ष्यमाणकैः।
निर्गुण्डीमधुकश्वेताकुठेरग्रीष्मसुन्दरैः ॥ ५० ॥
भृङ्गाब्दकेशराजैश्च जयेन्द्राशनकोत्कटैः।
सर्षपाभां वटीं कृत्वा दद्यात्तां ग्रहणीगदे ॥ ५१ ॥
सामवातेऽग्निमांद्ये च ज्वरे प्लीहोदरेषु च।
वातश्लेष्माविकारेषु तथा श्लेष्मगदेषु च।
अम्लतक्रादिसेवाञ्च कुर्वीत स्वेच्छया बहु ॥ ५२ ॥
श्रीमता वैद्यनाथेन लोकानुग्रहकारिणा।
स्वप्नान्ते ब्राह्मणस्येयं भाषिता लिखितेन तु ॥ ५३ ॥

एक शाण पारा लेकर पहले कांजीमें, फिर चीतेके रसमें और इसके बाद त्रिफलाके काथमें शोधे। तब भांगरेके रसमें शोधित आधा शाण गन्धक लेकर उसीमें मिला दे और कज्जली करे। तब निर्गुण्डी, मुलेठी, श्वेत तुलसी, वनतुलसी, ग्रीष्मसुन्दर, भँगरा, नागरमोथा, केशराज, जयन्ती, भाँग और पिप्पली इनमेंसे हर एकका एक-एक शाण रस लेकर भावना दे और सरसोंके समान गोली बना ले। ग्रहणी, आमवात, अग्निमान्द्य, ज्वर, प्लीहा, उदरविकार, वातश्लेष्मजनित तथा केवल कफजनित रोगोंमें इसका उपयोग करना चाहिये। इस वटीका सेवन करनेवाला रोगी खटाई और मंठेको विशेष करके खाय। जनसाधारणपर अनुग्रह करके श्रीमान् वैद्यनाथने स्वप्नमें यह योग पाया और सवेरे एक ब्राह्मणको लिखकर बताया था। (उन्हींके नामपर 'वैद्यनाथवटी' इसका नाम रखा गया है) ॥४८–५३॥

रसपर्पटिका

याऽम्लपित्ते विधातव्या गुटिका च क्षुधावती।
तत्र प्रोक्तविधौ शुद्धौ समानौ रसगन्धकौ ॥ ५४ ॥
सम्मर्द्य कज्जलाभौ तु कुर्य्यात्पात्रे दृढाश्रये।
ततो वादरवह्निस्थलौहपात्रे द्रवीकृतम् ॥ ५५ ॥

गोमयोपरि विन्यस्तकदलीपत्रपातनात्।
कुर्यात्पर्प्पटिकाकारमस्य रक्तिद्वयं क्रमात्॥ ५६॥
रक्तिद्वादशकं यावत्प्रयोगः प्रहरार्द्धतः।
तदूर्ध्वम्बहुपूगस्य भक्षणं दिवसे पुनः॥ ५७॥
तृतीय एव मांसाज्यदुग्धाद्यत्र विधीयते।
वर्ज्यं विदाहि स्त्री रम्भामूलं तैलञ्च सार्षपम्॥ ५८॥
कृष्णमत्स्याम्बुजगाँस्त्यक्तनिद्रः पयः पिवेत्।
ग्रहणीक्षयकुष्टार्शः शोथाजीर्णविनाशिनी॥ ५९॥
रसपर्पटिका ख्याता निवद्धा चक्रपाणिना॥ ६०॥

अम्लपित्त रोगकी निवृत्तिके लिए जो क्षुधावती गुटिका बनानेकी विधि बतायी जानेवाली है, उसीके अनुसार समभाग पारा तथा गंधक लेकर शुद्ध करे। इसके बाद उसको खरलमें डाल तथा कज्जली करके एक लोहेके पात्रमें रखे और बेरकी लकड़ीकी आगपर रखकर इस कज्जलीको पिघलावे। तब गोबरसे लिपी हुई शुद्ध भूमिपर केलेका पत्ता बिछाकर वह पिघली हुई कज्जली उँड़ेल दे। उसके ऊपर भी केलेका पत्ता डालकर दबा दे कि जिससे कज्जली पपड़ीके आकारकी बन जाय। यही रसपर्पटी है। दो रत्तीसे लेकर दस रत्तीतक इसकी मात्रा बढ़ायी जाती है। इसका सेवन करनेवाला रोगी आधे पहरके बाद सुपारी खाय। तीसरे पहर मांस तथा घी-दूध आदि पौष्टिक पदार्थ खाय। जब तक रसपर्पटीका सेवन होता रहे, तबतक गरम चीजें न खाय। स्त्रीप्रसंग, केलेकी जड़, सरसोंका तेल, काली मछली, जलसे उत्पन्न जीव और पक्षीका मांस न खाय। दिनमें न सोये। दूध खूब पीवे। इसका सेवन करनेसे ग्रहणी, क्षय, कुष्ठ, अर्श, शोथ और अजीर्ण रोग निवृत्त हो जाते हैं। श्री चक्रपाणिने सबसे पहले इस पर्पटीको बताया था॥ ५४–६०॥

विजयपर्पटी

हाटकं रजतं ताम्रं यद्यत्र परिदीयते।
विजयाख्या तु सा ज्ञेया सर्वरोगनिषूदिनी॥ ६१॥

स्वर्णभस्म, चाँदीभस्म, ताम्रभस्म समभाग और उपर्युक्त रसपर्पटीके समान ही यदि शुद्ध गंधककी कज्जली करके ये तीनों भस्म मिलाकर घोंटे

और पर्पटी बना ले तो यह विजयपर्पटी कहलायेगी। इसमें सब रोग दूर करनेकी सामर्थ्य है॥ ६१॥

स्वर्णपर्पटी

रसोत्तमं पलं शुद्धं हेमतोलकसंयुतम्।
शिलायां मर्दयेत्तावद्यावदेकत्वमागतम्॥ ६२॥
गन्धकस्य पलञ्चैकमयःपात्रे ततो दृढे।
मर्दयेद्दृढपाणिभ्यां यावत्कज्जलतां व्रजेत्॥ ६३॥
ततः पाकविधानज्ञः पर्पटीं कारयेत्सुधीः।
रक्तिकादिक्रमेणैव योजयेदनुपानतः।
ग्रहणीं विविधां हन्ति वृष्या सर्वज्वरापहा॥ ६४॥

शुद्ध पारा १ पल (आठ तोला), स्वर्णभस्म १ तोला, इन दोनोंको खरलमें डालकर तब तक घोंटे, जब तक वह एकदिल न हो जाय। इसके बाद उसमें शुद्ध गंधक १ पल डालकर लोहेके खरलमें दोनों हाथोंसे खूब घोंटे। घुँटकर जब काजल सरीखे हो जाय तो केलेके पत्तेपर ढालकर पर्पटी बना ले। उचित अनुपानके साथ एकसे लेकर दस रत्ती तक क्रमशः बढ़ाकर इसे दे तो यह विविध प्रकारकी ग्रहणियोंको मार भगाती है। यह स्वर्णपर्पटी वृष्य (बलदायिनी) है और सब प्रकारके ज्वर दूर करती है॥ ६२–६४॥

पञ्चामृतपर्पटी

अष्टौ गन्धकमापका रसदलं लौहं तदर्धं शुभं
लोहार्द्धञ्च वराभ्रकं सुविमलं ताम्रं तथाऽभ्राद्धकम्।
पात्रे लौहमये च मर्दनविधौ चूर्णीकृतञ्चैकतो
दर्व्यां बादरवह्निनाऽतिमृदुना पाकं विदित्वा दले॥ ६५॥
रम्भाया लघु ढालयेत्पटुरियं पञ्चामृता पर्पटी
ख्याता क्षौद्रघृतान्विता प्रतिदिनं गुञ्जाद्वयं वृद्धितः।
लौहे मर्दनयोगतः सुविमलं भक्ष्यक्रिया लौहवद्
गुञ्जाऽष्टावथवा त्रिकं त्रिगुणितं सप्ताहमेवं भजेत्॥ ६६॥
नानावर्णग्रहण्यामरुचिसमुदये दुष्टदुर्नामकादौ
छर्द्यां दीर्घातिसारे ज्वरभवकसिते रक्तपित्ते क्षयेऽपि।

वृष्याणां वृष्यराज्ञी बलिपलितहरा नेत्ररोगैकहन्त्री
तत्स्थं दीप्तास्थराग्निं पुनरपि नवकं रोगिदेहं करोति ॥ ६७ ॥

पाकोऽस्याः त्रिविधः प्रोक्तो मृदुर्मध्यः खरस्तथा।
आद्ययोर्दृश्यते सूतः खरपाके न दृश्यते ॥ ६८ ॥

मृदौ न सम्यग्भङ्गः स्यान्मध्ये भङ्गश्च रौप्यवत्।
खरे लघुर्भवेद्भङ्गो रूक्षः श्लक्ष्णोऽरुणच्छविः।
मृदुमध्यो तथा खाद्यौ खरस्त्याज्यो विषोपमः ॥ ६९ ॥

शुद्ध गंधक आठ मासा और शुद्ध पारा चार मासा ले और घोंटकर कज्जली करे। फिर उसमें दो मासे लौहभस्म, एक मासा अभ्रकभस्म और आधा मासा ताम्रभस्म डालकर लोहेकी खरलमें खूब घोंटे। घुट जानेपर इसे एक लोहेकी कड़ाहीमें रखकर जिसमें बेरकी लकड़ी मन्द-मन्द जल रही हो, ऐसी भट्ठीपर चढ़ा दे। ऐसा करनेसे उपर्युक्त चूर्ण पिघलने लगेंगे। उस समय एक लोहेकी सलाईसे उसे चलाता रहे। जब उपर्युक्त सब द्रव्य पिघल जायँ, तब उसे उतारकर केलेके पत्तेपर ढाले और ऊपरसे भी केलेका पत्ता डालकर दबा दे। बस, पंचामृतपर्पटी तैयार हो गयी। प्रतिदिन घी और मधुके साथ दो रत्तीसे आरम्भ करके एक सप्ताह तक क्रमशः आठ-नौ रत्ती तक बढ़ावे। इसे जब खाना हो तो लोहेकी खरलमें घोंटकर ही उपयोगमें लावे। बाकी सब क्रिया लौहभस्मके समान जाननी चाहिये। इस पर्पटीका सेवन करनेसे विविध भाँतिकी ग्रहणी, अरुचि, दुष्ट अर्श, वमन, बढ़ा हुआ अतिसार, ज्वरजनित कास, रक्तपित्त और क्षय, ये रोग नष्ट हो जाते हैं। यह पर्पटी सभी वृष्य औषधियोंकी रानी है। इससे वली (झुर्रियें) पलित (बालोंकी सफेदी) और नेत्ररोग दूर हो जाते हैं। यह उदरकी मन्द अग्नि उद्दीप्त करके सेवन करनेवालेकी देह नयी कर देती है। पञ्चामृतपर्पटीका पाक तीन तरहका होता है–मृदु, मध्य और खर। मृदु और मध्यपाककी पर्पटीमें पारा दिखाई देता है, किन्तु खरपाकमें वह नहीं दीखता। मृदुपाककी पर्पटी ठीक तरहसे टूटती नहीं। मध्यपाकवाली पर्पटीमें तोड़नेपर चाँदी जैसी चमक दीखती है। खरपाककी पर्पटी आसानीसे टूट जाती है और भीतरसे रूखा, चिकना

और लाल रंग दीखता है। मृदु और मध्यपाककी पर्पटी सेवन करनी चाहिए-खरपाकवाली नहीं। क्योंकि वह विष सदृश हो जाती है ॥ ६५-६६ ॥

अग्निकुमार रस

शुद्धसूतं समं गन्धं त्रिकटुं पटुपञ्चकम्।
दशाकं तुल्यतुल्यञ्च विजया सर्वसम्मिता।
भावयेच्चित्रभृङ्गोत्थैस्त्रिधा च विजयाद्रवैः ॥ ७० ॥
दीप्ताग्निना तु यामैकं वालुकायन्त्रके पचेत्।
सञ्चूर्ण्य चार्द्रकद्रावैर्भावयित्वा च भक्षयेत् ॥ ७१ ॥
मधुना शाणमानन्तु रसो ह्यग्निकुमारकः।
दीप्ताग्निकारकः सामग्रहणीदोषनाशनः ॥ ७२ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, सोंठ, मिर्च, पिप्पली और पाँचों नमकका चूर्ण ये द्रव्य समभाग और दसगुनी भाँग लेकर पहले पारे और गंधककी कज्जली कर ले। फिर बाकी चीजें डालकर घोंटे। घुट जानेपर तीन बार चीतेके रसमें, तीन बार भँगरेके रसमें और तीन ही बार भाँगके रसमें भावना दे। तदनन्तर इसे वालुकायन्त्रमें रखकर पकावे। पक जानेपर उसमेंसे निकालकर अदरखके रसमें भावना दे और चूर्ण करके रख ले। यही अग्निकुमार रस है। यदि इसकी एक शाणकी मात्राका मधुके साथ सेवन करे तो मन्द अग्नि प्रज्वलित होती और आमसमेत ग्रहणी रोग नष्ट हो जाता है ॥ ७०-७२ ॥

वडवामुख रस

शुद्धसूतं समं गन्धं मृतताम्राभ्रटङ्कणम्।
सामुद्रञ्च यवक्षारं सर्जिसैन्धवनागरम् ॥ ७३ ॥
अपामार्गस्य च क्षारं पलाशवरुणस्य च।
प्रत्येकं सूततुल्यं स्यादम्लयोगेन मर्दयेत् ॥ ७४ ॥
हस्तिशुण्डीद्रवैश्चाग्नौ मर्दयित्वा पुटेल्लघु।
माषमात्रः प्रदातव्यो रसोऽयं वडवामुखः।
ग्रहणीं त्रिविधां हन्ति संग्रहग्रहणीं ज्वरम् ॥ ७५ ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक ये दोनों समभाग लेकर कज्जली कर ले। फिर इसमें ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, शुद्ध सोहागा, समुद्री नमक, जवाखार, सज्जी,

सेंधानमक, पिसी सोंठ, अपामार्ग, पलाश और वरुणका क्षार समभाग डाले। पहले कांजी, फिर हाथीसुण्डीके रसमें घोंटकर लघुपुटमें पकावे। यही वडवामुख रस है। यदि मासा भर इस रसका सेवन किया जाय तो विविध भाँतिकी ग्रहणी, संग्रह ग्रहणी और ज्वर दूर हो जाता है॥ ७३–७५॥

ग्रहणीकपाट रस

रसगन्धकयोश्चापि जातीफललवङ्गयोः।
प्रत्येकं शाणमानञ्च श्लक्ष्णचूर्णीकृतं शुभम्॥ ७६॥
सूर्यावर्त्तरसेनैव विल्वपत्ररसेन च।
शृङ्गाटकसमुद्भूतस्वरसेन च मर्दयेत्॥ ७७॥
चण्डातपेन संशोष्य वटिकाङ्कारयेद्भिषक्।
बिल्वपत्ररसेनैव दापयेद्रक्तिकाद्वयम्॥ ७८॥
दध्ना च भोजनीयोऽसौ ग्रहणीरोगनाशनः।
पाण्डुरोगमतीसारं शोथं हन्ति तथा ज्वरम्।
अयञ्च ग्रहणीरोगे कपाटो रस उत्तमः॥ ७९॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, जायफल और लौंगका चूर्ण ये चारों एक-एक शाण लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। इसमें दोनों चूर्ण मिलाकर सूर्यमुखीके रसमें मर्दन करे। फिर विल्वपत्र और सिंघाड़ेके रसमें भली-भाँति घोंटे और कड़ी धूपमें सुखाकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। यदि बिल्वपत्रके रसमें इसकी एक गोली देकर पथ्यमें दही खानेको दे तो यह ग्रहणीरोगको नष्ट कर देता है। पाण्डुरोग, अतीसार, शोथ और ज्वरको भी यह दूर करता है॥ ७६–७९॥

संग्रहणीकपाट रस

मुक्तां सुवर्णं रसगन्धटङ्कं घनं कपर्दोऽमृततुल्यभागः।
सर्वैः समं शङ्खकचूर्णकञ्च भाव्यञ्च खल्लेऽतिविषाद्रवेण॥ ८०॥
गोलञ्च कृत्वा मृदुकर्पटस्थं सम्पाच्य भाण्डे दिवसार्द्धकञ्च।
सर्वाङ्गशीतो रस एष भाव्यो धुस्तूरवह्न्योर्मुषलीद्रवैश्च॥ ८१॥
लौहस्य पात्रोपरि भावितश्च सिद्धो भवेत्संग्रहणीकपाटः।
संसाधितः सद्भिषजां प्रयत्नाद्योगस्थितेनार्य्यसमर्चितेन॥ ८२॥

वातोत्तरायां मरिचाज्ययुक्तैः पित्तोत्तरायां मधुपिप्पलीभिः ।
कफोत्तरायां विजयारसेन कटुत्रयेणाज्ययुतां ग्रहण्याम् ॥ ८३ ॥
क्षये ज्वरे चार्शसि षट्प्रकारे समातिसारेऽरुचिपीनसे च ।
मेहे च कृच्छ्रे गतधातुवृद्धौ गुञ्जाद्वयञ्चापि महामयघ्नः ॥ ८४ ॥

मोतीभस्म, सुवर्णभस्म, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध सोहागा, अभ्रकभस्म, कौड़ीभस्म, शुद्ध वत्सनाभ विष, ये चीजें समभाग और सब मिलाकर जो परिमाण हो, उतना शंखभस्म ले। गंधक और पारेकी कज्जली कर लेनेके बाद सब वस्तुएँ एकमें मिलाकर अतीसके रसमें घोंटे। घुट जानेपर गोला बना ले। इस गोलेको एक महीन वस्त्रमें लपेटकर पात्रमें रखे और आधे दिनतक आँचपर पकावे। सर्वांगशीतल होनेपर इसे निकाल ले और अलग-अलगके क्रमसे धतूरा, चीता तथा मुसलीके रससे लौहपात्रमें भावना दे। ऐसा करनेसे संग्रहणीकपाट रस सिद्ध हो जायगा। सज्जनोंके वन्दनीय एवं शान्त चित्तवाले वैद्य ही इसका निर्माण कर सकते हैं। सिद्ध हो जानेपर वातोत्तरा ग्रहणीमें घी और काली मिर्चके चूर्णके साथ, पित्तोत्तरामें शहद पिप्पलीचूर्णके साथ और कफोत्तरा ग्रहणीमें भाँगके रस एवं सोंठ-मिर्च तथा पिप्पलीचूर्ण और घीके साथ इसे देवे। क्षय, ज्वर, छहों प्रकारके अर्श, आमातिसार, अरुचि, पीनस, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र और धातुक्षय आदि बड़े-बड़े रोगोंमें यदि दो रत्ती यह रस दिया जाय तो उन्हें दूर कर देता है ॥ ८०—८४ ॥

ग्रहणीकपाट रसकी दूसरी विधि

गिरिजाभवीजकज्जलीं परिमृद्याद्र्रसेन शोषिता ।
कुटजस्य तु भस्मना पुनर्द्विगुणेनाथ विमृद्य मिश्रिता ॥ ८५ ॥
मर्दयित्वा प्रदातव्यमस्य गुञ्जाचतुष्टयम् ।
अजाक्षीरेण दातव्यं काथेन कुटजस्य वा ।
यूषं देयं मसूरस्य वारिभक्तञ्च शीतलम् ॥ ८६ ॥
दध्ना सह पुनर्देयं रक्तादौ रक्तिकाद्वयम् ॥
वर्द्धयेद्दशपर्यन्तं ह्रासयेत्क्रमशस्तथा ।
निहन्ति ग्रहणीं सर्वां विशेषात्कुक्षिमार्दवम् ॥ ८७ ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक समान भाग लेकर कज्जली करे। फिर अद-

रखके रसमें मर्दन करके धूपमें सुखा ले। सूख जानेपर इसमें पारा और गंधककी दुगुनी कुटजभस्म मिलाकर घोंटे। बकरीके दूध अथवा कुटजके काढ़ेमें चार रत्ती यह रस दिया जाय तो ग्रहणी निवृत्त हो जाती है। पथ्यमें मसूरका यूष और दही-भात जैसी शीतल वस्तु देनी चाहिये। रक्तातिसार आदि रोगोंमें दो रत्तीसे बढ़ाता हुआ दस रत्तीतककी मात्रा दे। फिर क्रमशः घटाता हुआ दो रत्तीतक लावे। इससे सब प्रकारकी ग्रहणी विशेष करके पेटकी मृदुताका रोग दूर हो जाता है॥ ८५–८७॥

विजया वटिका

हाटकं रजतं ताम्रं यद्यत्र परिदीयते।
विजयाख्या तु सा ज्ञेया सर्वरोगनिषूदिनी॥ ८८॥

यदि इसी ग्रहणीकपाट रसमें स्वर्ण, चाँदी और ताम्रभस्म भी मिला दे तो यह विजया वटिका बन जाती है, जो सब रोगोंको उखाड़ फेंकनेमें समर्थ होती है॥ ८८॥

ग्रहणीकपर्दपोट्टली रस

कपर्दतुल्यं रसकन्तु गन्धं लौहं मृतं टङ्कणकञ्च तुल्यम्।
जयारसेनैकदिनं विमर्द्य चूर्णेन संवेष्ट्य पुटेच्च भाण्डे।
दद्दीत तत्पोट्टलिकाऽभिधानं वातप्रधानग्रहणीनिवृत्त्यै॥८९॥

कपर्द (कौड़ी) भस्म, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौहभस्म, शुद्ध सोहागा ये सब चीजें समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सबको भाँगके रसमें दिनभर घोंटकर गोला बनावे। उसे एक कपड़ेमें बाँध तथा किसी पात्रमें रखकर आँच दे। यह ग्रहणीकपर्दपोट्टली रस वातप्रधान ग्रहणी रोगको निवृत्त करनेमें सर्वथा समर्थ है॥ ८९॥

हंसपोट्टली रस

दग्धान्कपर्दकान्पिष्ट्वा त्र्यूषणं टङ्कणं विषम्।
गन्धकं शुद्धसूतञ्च तुल्यं जम्बीरजैर्द्रवैः॥ ९०॥
मर्दयेद्भक्षयेन्माषं संलिह्यान्मरिचार्द्रकम्।
निहन्ति ग्रहणीरोगं पथ्यं तक्रौदनं हितम्॥ ९१॥

कौड़ीभस्म, सोंठ-मिर्च-पिप्पलीका चूर्ण, शुद्ध सोहागा, शुद्ध विष, शुद्ध

पारा और शुद्ध गंधक ये वस्तुयें समभाग ले। सर्वप्रथम पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सब चीजें एकमें मिलाकर जँभीरी नीबूके रसमें खूब घोंटकर मासे-मासे भरकी गोलियें बना ले। यदि काली मिर्चके चूर्ण और आदीके रसमें इस रसका सेवन किया जाय तो ग्रहणी रोग दूर हो जाता है। इसमें मंठा-भातका पथ्य हितकर होता है। ॥१०॥६१॥

अन्य ग्रहणीकपाट रस

तुल्यं कान्तं रसं तालं माक्षिकं टङ्कणं तथा।
सपादनिष्कं प्रत्येकं पञ्चनिष्कं वराटकम्।
द्विनिष्कं गन्धकं सर्वं पिष्ट्वा जम्बीरजैर्द्रवैः॥ ९२॥
अर्द्धभागकरीषेण पुटितं भस्म शोभनम्।
प्रदद्याद्ग्रहणीगुल्मक्षयकुष्टप्रमेहके ॥ ९३॥

कान्तलौहभस्म, शुद्ध पारा, शुद्ध हड़ताल, स्वर्णमाक्षिकभस्म, शुद्ध सोहागा ये सभी चीजें सवा-सवा निष्क, कौड़ीभस्म पाँच निष्क और शुद्ध गधक दो निष्क ले। पारे-गंधककी कज्जली करके बाकी चीजें भी मिलाकर जँभीरी नीबूके रसमें खूब घोंटे। फिर एक गड्ढा खोदकर आधेमें गोहरा (उपले) भर दे। उसपर सम्पुटित गोलेको रखकर ऊपरसे और उपले रखकर आँच लगा दे। शीतल होनेपर निकाल ले। यह अन्य प्रकारका ग्रहणीकपाट रस है। इसका सेवन करनेसे ग्रहणी, गुल्म, क्षय, कुष्ठ और प्रमेह रोग निवृत्त हो जाते हैं॥९२॥९३॥

ग्रहणीकपाट

रसाभ्रगन्धान्क्रमवृद्धियुक्तान् जंघारसेन त्रिदिनं विमर्द्य।
जयन्तिकाभृङ्गकलम्बिनं रैर्दिनं यवक्षारसटङ्कणञ्च॥ ९४॥
क्षिप्त्वा तु गन्धस्य च तुल्यभागं वातारितैलेन युतं पुटित्वा।
गुडूचिकाशाल्मलिकारसेन जयारसेनापि विमर्द्य शाणम्॥९५॥
मरीचसार्द्धं मधुना समेतं ददीत पथ्यं दधिभक्तकञ्च।
शिवेन प्रोक्तो जगतां हिताय महारसोऽयं ग्रहणीकपाटः॥९६॥

शुद्ध पारा १ भाग, अभ्रकभस्म २ भाग, शुद्ध गंधक ३ भाग लेकर पहले कज्जली कर ले। फिर सबको एकमें मिलाकर काकजंघाके रससे तीन दिन घोंटे। फिर एक-एक करके जयन्ती, भाँगरा तथा कलम्बी (करेमू) के रसमें एक-एक

दिन घोंटे। फिर तीन-तीन भाग जवाखार और शुद्ध सोहागा डालकर रेंड़ीके तेलमें घोंटकर आँच दे। शीतल होनेपर इसे गुरुच, सेमर और भाँगके रसमें घोटकर रख ले। यदि काली मिर्च और शहदके साथ एक शाण (४ मासा) यह रस दिया जाय तो ग्रहणी निवृत्त हो जाती है। पथ्य दही-भात देना चाहिए। इस ग्रहणीकपाट महारसको श्रीशंकर भगवानने लोककल्याणके निमित्त बनाया था ॥९४-९६॥

ग्रहणीवज्रकपाट रस

सूतं गन्धं यवक्षारं जयन्त्युग्राऽभ्रटङ्कणम्।
जयन्तीभृङ्गजम्बीरद्रावैः पिष्ट्वा दिनत्रयम् ॥ ९७ ॥
यामार्द्धं गालकं स्वेद्यं मंदेन पावकेन च।
शीत जयारससमैः शाल्मलीविजयाद्रवैः ॥ ९८ ॥
भावयेत्सप्तधा वज्रकपाटः स्याद्रसोत्तमः।
माषद्वयं त्रयं वाऽस्य मधुना ग्रहणीं जयेत् ॥ ९९ ॥

शुद्ध गंधक, शुद्ध पारा, जवाखार, जयन्ती, वच, अभ्रकभस्म और शुद्ध सोहागा लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सबको एक साथ जयन्ती, भाँगरा तथा नीबूके रसमें तीन-तीन दिन घोंटकर गोला बना ले। इस गोलेको मन्द आँचमें आधे पहर तक स्वेदन करे। स्वांगशीतल होनेपर निकाल ले और जयन्तीके समभाग रस और सेमर तथा भाँगके रसमें सात-सात बार भावना दे। यह ग्रहणी वज्रकपाट नामका उत्तम रस है। यदि रोगीका बल और वय देखकर दो या तीन मासा यह रस मधुमें दे तो ग्रहणी निवृत्त हो जाती है ॥ ९७-९९ ॥

ग्रहणीवज्रकपाटका प्रकारान्तर

तारमौक्तिकहेमानि सारश्चैकैकभागिकः।
द्विभागो गन्धकः सूतस्त्रिभागो मर्दयेदिमान् ॥१००॥
कपित्थस्वरसैर्गाढं मृगशृङ्गे ततः क्षिपेत्।
पुटेन्मध्यपुटेनैव तत उद्धृत्य मर्दयेत् ॥१०१॥
बलारसैः सप्तधैवमपामार्गरसैस्त्रिधा।
लोध्रप्रतिविषामुस्ता धातकीन्द्रयवामृताः ॥१०२॥

प्रत्येकमेतत्स्वरसैर्भावना स्यात्त्रिधा त्रिधा ।
माषमात्रो रसो देयो मधुना मरिचैस्तथा ॥१०३॥
हन्यात्सर्वानतीसारान्ग्रहणीं सर्वजामपि ।
कपाटो ग्रहणीरोगे रसोऽयं वह्निदीपनः ॥१०४॥

चाँदीभस्म, मोतीभस्म, स्वर्णभस्म, लोहभस्म ये द्रव्य समभाग और शुद्ध गंधक तथा शुद्ध पारा तीन भाग ले। पारे-गंधककी कज्जली करके सबको एक साथ घोंटे। तदनन्तर कैथेके रसमें मर्दन करके काढ़ा कर ले और तब इसे हिरनकी सींगमें भरकर करड़मिट्टीसे मुख बन्द करके मध्यपुटमें फूँक दे। स्वांगशीतल होनेपर सींगमेंसे निकाल ले और सात बार बला (बरियारा) के रसमें तथा सात ही बार अपामार्ग (चिचिड़ा) के रसमें भावना दे। तदनन्तर लोध, अतीस, मोथा, धायके फूल, इन्द्रजौ तथा गिलोय, इनमेंसे प्रत्येकके स्वरसमें तीन-तीन बार भावना दे। तब सुखाकर रख ले। यदि मधु और काली मिर्चके चूर्णमें एक मासा यह रस दिया जाय तो सभी प्रकारके अतिसार तथा ग्रहणी-रोग दूर हो जाते हैं। यह ग्रहणीवज्रकपाट रस उदर्य अग्निका उद्दीपक भी है ॥ १००–१०४ ॥

पानीयभक्त वटी

कृष्णाभ्रलौहमलशुद्धविडङ्गचूर्णं प्रत्येकमेव पलिकं विधिवद्विधाय ।
चव्यं कटुत्रयफलत्रयकेशराजदन्तीपयोदचपलानलवण्टकर्णाः ॥१०५॥
माणीलकन्दबृहतीत्रिवृताः ससूर्य्यावर्त्ताः पुनर्नविकया सहितास्त्वमीषाम् ।
मूलं प्रति प्रतिविशोधितमक्षमेकं चूर्णं तदर्द्धरसगन्धकमेकसंस्थम् ॥१०६॥
कृत्वाऽर्द्रकीयरससम्वलितञ्च भूयः संम्पिष्य तस्य वटिका विधिवद्विधेया ।
हन्त्यम्लपित्तमरुचिं ग्रहणीमसाध्यां दुर्नामकामलभगन्दरशोथगुल्मान् ॥१०७॥
शूलञ्च पाकजनितं सतताग्निमान्द्यं सद्यः करोत्यपचितिं चिरनष्टवह्नेः ।
कुष्ठं निहन्ति पलितञ्च वलिं प्रवृद्धां श्वासञ्च कासमपि पाण्डुगदं निहन्ति॥१०८॥
वार्य्यन्नमांसदधिकाञ्जिकतक्रमत्स्यवृक्षाम्लतैलपरिपक्वभुजो यथेष्टम् ।
शृङ्गाटविल्वगुड़कञ्जटनारिकेलदुग्धानि सर्वद्विदलानि विवर्जयेत्तु ॥१०९॥

कृष्णाभ्रकभस्म, लौहभस्म, बिना छिलकेका विडंगचूर्ण, ये द्रव्य तथा सोंठ, मिर्च, पिप्पली, त्रिफला, केशराज, दन्तीमूल, मोथा और पिप्पलीका चूर्ण,

चीता, घण्टाकर्ण, मानकन्द, बृहती (बड़ी कटेरी), त्रिवृता, सूर्यावर्ता और पुनर्नवाकी जड़, ये द्रव्य एक-एक अक्ष (कर्ष) और शुद्ध गंधक आधा-आधा कर्ष ले। सर्वप्रथम पारे और गंधककी कज्जली कर ले। फिर सब द्रव्य एकमें मिलाकर खरलमें खूब घोंटे। घुँट जानेपर इसमें अदरखका रस डालकर घोंटे और गोलियें बना ले। यही पानीयभक्त वटिका है। इसका सेवन करनेसे अम्लपित्त, अरुचि, असाध्य ग्रहणी, अर्श, कामला, भगन्दर, शोथ, गुल्म, परिणामशूल और सदा विद्यमान रहनेवाला अग्निमांद्य रोग दूर हो जाता है। जिसकी उदर्य अग्नि बहुत समयसे मन्द पड़ गयी हो तो इसका सेवन करनेसे वह सद्यः उद्दीप्त हो जाती है। यह वटिका कुष्ठ, बालोंकी सफेदी, शरीरकी झुर्रियाँ, श्वास, कास और पाण्डुरोगका शमन करती है। इसे सेवन करनेवाला रोगी जल, अन्न, मांस, दही, कांजी, मंठा, मछली, वृक्षाम्ल (चूक) और तेलमें तले हुए पदार्थ जितना भी खा सके, खाय। किन्तु सिंघाड़ा, बेल, गुड़, कंचट (चौराईका शाक) नारियल, दूध और किसी भी प्रकारकी दाल न खाय ॥ १०५–१०९ ॥

शम्बूकादि वटी

दग्धशम्बूकसिन्धूत्थं तुल्यं क्षौद्रेण मर्दयेत्।
निष्कैकेन निहन्त्याशु वातसंग्रहणीगदम् ॥११०॥

शम्बूक (घोंघे) की भस्म तथा सेंधानमक दोनों बराबर-बराबर लेकर निष्कभरकी मात्रा मधुके साथ सेवन करे तो वातजनित संग्रहणी रोग दूर हो जाता है ॥ ११० ॥

हिरण्यगर्भपोट्टली रस

एकांशो रसराजस्य ग्राह्यौ द्वौ हाटकस्य च।
मुक्ताफलस्य चत्वारो भागाः षड् दीर्घनिःस्वनात् ॥१११॥
त्र्यंशं बलेर्वराट्याश्च टङ्कणो रसपादिकः।
पक्वनिम्बुकतोयेन सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥११२॥
मूषामध्ये न्यसेत्कल्कं तस्य वक्त्रं निरोधयेत्।
गर्त्तेऽरत्निप्रमाणे तु पुटेत्त्रिंशद्वनोपलैः ॥११३॥

स्वाङ्गशीतलतां ज्ञात्वा रसं मूषोदरान्नयेत् ।
ततः खल्लोदरे मर्द्यः सुधारूपं समुद्धरेत् ॥११४॥
एतस्यामृतरूपस्य दद्याद्गुञ्जा चतुष्टयम् ।
घृतमाध्वीकसंयुक्तमेकोनत्रिंशदूषणैः ॥११५॥
मंदाग्नौ रोगसंघे च ग्रहण्यां विषमज्वरे ।
गुदाङ्कुरे महाशूले पीनसे श्वासकासयोः ॥११६॥
अतीसारे ग्रहण्यां च श्वयथौ पाण्डुके गदे ।
सर्वेषु कुष्ठरोगेषु यकृत्प्लीहोदरेषु च ॥११७॥
वातपित्तकफोत्थेषु द्वन्द्वजेषु त्रिजेषु च ।
दद्यात्सर्वेषु रोगेषु श्रेष्ठमेतद्रसायनम् ॥११८॥

शुद्ध पारा एक भाग, स्वर्णभस्म दो भाग, मोतीभस्म चार भाग, कांस्यभस्म छ भाग, शुद्ध गंधक, कौड़ीभस्म और सोहागा ये तीनों पारेका एक-एक तृतीयांश, ये वस्तुयें एकत्र करके पारे और गंधककी कज्जली करे। फिर सबको पके नीबूके रसमें खूब घोंटे। घुँट जानेपर गोला बना ले और उसे मूषामें रखकर मुख बन्द कर दे। फिर एक हाथ गहरा गढ़ा खोदकर उसमें तीस जंगली उपलोंके बीच मूषा रखकर फूँक दे। स्वांगशीतल होनेपर मूषामेंसे रस निकाल ले और खरलमें डालकर मर्दन करे। फिर इसे सम्हालकर रख ले। इस अमृतस्वरूप रसको यदि घी, शहद और उन्नीस काली मिर्चके चूर्णमें चार रत्ती दिया जाय तो मन्दाग्नि तथा जिसको कई रोग एक साथ हो गये हों, उसे आराम होता है। इनके अतिरिक्त ग्रहणी, विषमज्वर, बवासीरके मस्से, महाशूल, पीनस, श्वास, कास, अतिसार, ग्रहणी, शोथ, पाण्डुरोग, सभी प्रकारके कुष्ठरोग, यकृत्, तिल्ली तथा उदर रोगको भी दूर करता है। वात-पित्त-कफजनित, द्वन्द्वज एवं त्रिदोषजनित सभी रोगोंके लिए यह उत्तम रसायन है॥१११-११८॥

रसाभ्र वटी

शुद्धसूतस्य कर्षैकं कर्षैकं गन्धकस्य च ।
द्वयोः कज्जलिकातुल्यं व्योमचूर्णं प्रदापयेत् ॥११९॥
केशराजस्य भृङ्गस्य निर्गुण्ड्याश्चित्रकस्य च ।
ग्रीष्मसुन्दरमण्डूकीजयन्तीन्द्राशनस्य च ॥१२०॥

श्वेतापराजितायाश्च स्वरसं पर्णसम्भवम्।
रसतुल्यं प्रदातव्यं चूर्णञ्च मरिचोद्भवम् ॥१२१॥
देयं रसार्द्धभागेन चूर्णं टङ्कणसम्भवम्।
सम्मर्द्य वटिकां कुर्य्यात्कलायसदृशीं बुधः ॥१२२॥
हन्ति कासं क्षयं श्वासं वातश्लेष्मभवां रुजम्।
ज्वरे चैवातिसारे च सिद्ध एष प्रयोगराट् ॥१२३॥
चातुर्थके ज्वरे श्रेष्ठो ग्रहण्यातङ्कनाशनः।
दधि चावश्यकं देयं प्राह नागार्जुनो मुनिः ॥१२४॥

शुद्ध पारा १ कर्ष और शुद्ध गंधक २ कर्ष लेकर कज्जली करे। फिर जितनी कज्जली हो, उतना ही अर्थात् २ कर्ष अभ्रकभस्म डालकर केशराज, भँगरा, निर्गुण्डी (सँभालू) चीता, ग्रीष्मसुन्दर, मण्डूकपर्णी, जयन्ती, भँग और श्वेता अपराजिता, इनके पत्तोंके स्वरसमें भावना दे। इस प्रकार भावित करके उसमें १ कर्ष काली मिर्च और आधा कर्ष शुद्ध सोहागेका चूर्ण डाले और घोंटकर मटर बराबर गोलियें बना ले। यह खाँसी, क्षय, श्वास, वात एवं कफजनित सभी रोग, ज्वर और अतिसारको नष्ट करनेमें सिद्ध प्रयोगराज है। इससे चौथिया ज्वर और ग्रहणी रोगका भी उन्मूलन हो जाता है। इसका सेवन करनेवालेको दही देना अत्यावश्यक है, यह नागार्जुन मुनिका कथन है ॥११९–१२४॥

अन्य अग्निकुमार रस

रसं गंधं विषं व्योषं टङ्कणं लौहभस्मकम्।
अजमोदाऽहिफेनञ्च सर्वतुल्यं मृताभ्रकम् ॥१२५॥
चित्रकस्य कषायेण मर्दयेद्याममात्रकम्।
मरिचाभां वटीं खादेदजीर्णं ग्रहणीं तथा ॥१२६॥
नाशयेन्नात्र संदेहो गुह्यमेतच्चिकित्सितम् ॥१२७॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध वत्सनाभ विष, सोंठ-पिप्पलीका चूर्ण, शुद्ध सोहागा, लौहभस्म, अजमोदा और अफीम ये द्रव्य एक-एक भाग और अभ्रकभस्म दस भाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर चीतेके काथमें पहर-

भर घोंटकर मिर्चके बराबर गोलियें बना ले। इसका सेवन करनेसे अजीर्ण और ग्रहणी रोगका शमन हो जाता है। यह एक गुप्त चिकित्सा है ॥१२५–१२७॥

नृपतिवल्लभ रस

जातीफललवङ्गाब्दत्वगेलाटङ्गरामठम् ।
जीरकं तेजपत्रञ्च यमानीविश्वसैन्धवाः ॥१२८॥
लौहमभ्रं रसो गंधस्ताम्रं प्रत्येकशः पलम् ।
मरिचं द्विपलं दत्त्वा छागीक्षीरेण पेषयेत् ॥१२९॥
धात्रीरसेन वा पेष्यं वटिकाः कुरु यत्नतः ।
श्रीमद्गहननाथेन विचिन्त्य परिनिर्मितः ॥१३०॥
सूर्य्यवत्तेजसा चायं रसो नृपतिवल्लभः ।
अष्टादशवटीं खादेत्पवित्रः सूर्य्यदर्शकः ॥१३१॥
हन्ति मन्दानलं सर्वमामदोषं विषूचिकाम् ।
प्लीहगुल्मोदराष्ठीलायकृत्पाण्डुत्वकामलाम् ॥१३२॥
सर्वानेव गदान्हन्ति चण्डांशुरिव पापहा ।
बलवर्णकरो हृद्य आयुष्यो वीर्य्यवर्द्धनः ॥१३३॥
परं वाजीकरः श्रेष्ठः पटुदो मंत्रसिद्धिदः ।
अरोगी दीर्घजीवी स्याद्रोगी रोगाद्विमुच्यते ॥१३४॥
रसस्यास्य प्रसादेन बुद्धिमान् जायते नरः ।
बदरास्थिप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ॥१३५॥

जायफल, लौंग, मोथा, दालचीनी, इलायची, शुद्ध सोहागा, शुद्ध गन्धक, पारा, हींग, जीरा, तेजपात, अजवायन, सोंठ, सेंधानमक, लौहभस्म, अभ्रकभस्म ये द्रव्य एक-एक पल और मिर्चका चूर्ण दो पल ले। सर्वप्रथम पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर बकरीके दूध या आँवलेके रसमें घोंटे। घुँट जानेपर बेरके बराबर इसकी गोलियें बना ले। श्रीगहननाथजीने भलीभाँति विचार करके इसका निर्माण किया था। नृपतिवल्लभ रस सूर्यके समान तेजस्वी है। एक गोली रोजके क्रमसे यदि अठारह दिनमें १८ गोलीका सेवन करे तो रोगी रोगमुक्त होकर सूर्यके सदृश देदीप्यमान हो जाता है। यह मन्दाग्नि, सब प्रकारके आमरोग, विसूचिका, प्लीहा,

गुल्म, उदररोग, अष्ठीला, यकृत्, पाण्डु और कामला रोगका शमन करता है। सूर्यके समान यह रस पापरूपी रोगोंका नाशक है। यह बल-वर्ण बढ़ाता और हृदयको आप्यायित करता है। इससे आयु और बलकी वृद्धि होती है। यह परम वाजीकरण और मन्त्रसिद्धिदायक रस है। इसका सेवन करनेवाला प्राणी आरोग्य लाभ करके दीर्घजीवी होता है। इस रसकी कृपासे मनुष्य बुद्धिमान् हो जाता है ॥१२८–१३५॥

राजवल्लभ रस

जातीफललवङ्गाब्दत्वगेलाटङ्करामठम्।
जीरकं तेजपत्रञ्च यमानी विश्वसैन्धवम् ॥१३६॥
लौहमभ्रं सताम्रञ्च रसगन्धकमेव च।
मरिचं त्रिवृता रूप्यं प्रत्येकं द्विपलोन्मितम् ॥१३७॥
धात्रीरसे वटीं कुर्य्याद्द्विगुञ्जाफलमानतः।
हन्ति शूलं तथा गुल्ममामवातं सुदारुणम् ॥१३८॥
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च चक्षुःशूलं हलीमकम्।
शिरःशूलं कटीशूलमानाहञ्चाष्टशूलकम् ॥१३९॥
क्रिमिकुष्ठानि दद्रूणि वातरक्तं भगन्दरम्।
उपदंशमतीसारं ग्रहण्यर्शःप्रवाहिकम्।
राजवल्लभनामाऽयं महेशेन प्रकाशितः ॥१४०॥

जायफल, लौंग, मोथा, दालचीनी, इलायची, शुद्ध सोहागा, हींग, जीरा, तेजपात, अजवायन, सोंठ, सेंधानमक, लौहभस्म, अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक, कालीमिर्च, त्रिवृत् तथा चाँदीभस्म, ये सभी द्रव्य दो-दो पलके परिमाणमें लेकर गंधक-पारेकी कज्जली कर ले। फिर सबको आँवलेके रसमें घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। यह रस शूल, गुल्म, आमवात, हृदयशूल, पार्श्वशूल, नेत्रशूल, हलीमक, शिरःशूल, कटीशूल, आनाह, आठों तरहके शूल, क्रिमिरोग, कुष्ठरोग, दाद, वातरक्त, भगन्दर, उपदंश (गर्मी), अतिसार, ग्रहणी, अर्श तथा प्रवाहिका, इन सभी रोगोंका नाश करता है। इस राजवल्लभ नामक रसको महादेवजीने प्रकाशित किया था ॥१३६–१४०॥

बृहत् नृपवल्लभ रस

रसगन्धकलौहाभ्रं नागं चित्रं त्रिवृत्समम् ।
टङ्कं जातीफलं हिङ्गु त्वगेलाब्दलवङ्गकम् ॥१४१॥
तेजपत्रमजाजी च यमानी विश्वसैन्धवम् ।
प्रत्येकं तोलकं चूर्णं मरीचतारयोस्तथा ॥१४२॥
निरुत्थकं मृतं हेमं तथा द्वादशरक्तिकम् ।
आर्द्रकस्य रसेनैव धात्र्याश्च स्वरसेन च ॥१४३॥
भावयित्वा प्रदातव्यो माषद्वयप्रमाणतः ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय पथ्यं भक्ष्यंथेप्सितम् ॥१४४॥
अग्निमान्द्यमजीर्णञ्च दुर्नामग्रहणीं जयेत् ।
आमाजीर्णप्रशमनः सर्वरोगनिषूदनः ।
नाशयेदौदरान् रोगान्विष्णुचक्रमिवासुरान् ॥१४५॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौहभस्म, अभ्रकभस्म, सीसाभस्म, चीता और त्रिवृत्का चूर्ण, शुद्ध सोहागा, जायफल, हींग, दालचीनी, इलायची, मोथा, लौंग, तेजपत्र, जीरा, अजवाइन, सोंठ, सेंधानमक और काली मिर्चका चूर्ण एवं चाँदीभस्म, ये द्रव्य एक-एक तोला ले। सर्वप्रथम गंधक-पारेकी कज्जली करे। फिर इसमें बारह रत्ती निरुत्थ स्वर्णभस्म डालकर घोंटे। तदनन्तर आदी और आँवलेके रसमें भावना देकर खरल करके रख ले। प्रातःकाल दो मासा इस रसका सेवन करे और पथ्यमें जो चाहे सो खाय। यह मन्दाग्नि, अजीर्ण, अर्श, ग्रहणी, आमाजीर्ण आदि सभी रोगोंको नष्ट कर देता है। उदरविकार तो इससे उसी तरह नष्ट हो जाते हैं, जैसे विष्णुभगवानके चक्रसे दैत्य नष्ट होते हैं ॥१४१–१४५॥

महाराजनृपतिवल्लभ रस

वर्षत्रयं मृतं कान्तं मृताभ्रं मृतताम्रकम् ।
मृतं तारं माक्षिकञ्च कर्षं कर्षं प्रदापयेत् ॥१४६॥
मृतं स्वर्णं मृतं तारं टङ्कणं शृङ्गमेव च ।
बशिरं दन्तिमूलञ्च मरिचं तेजपत्रकम् ॥ १४७ ॥

यमानीं बालकं मुस्तं शुण्ठकञ्च सधान्यकम्।
सिन्धूद्भवं सकर्पूरं विडङ्गं चित्रकं विषम् ॥ १४८ ॥
पारद गन्धकञ्चैव तोलमान प्रदापयेत्।
तोलद्वयं त्रिवृच्चूर्णं लवङ्गं तच्चतुर्गुणम् ॥ १४९ ॥
जाती कोषफलञ्चैव तत्समं स्याद्वराङ्गकम्।
सर्वेषामर्द्धभागन्तु विडकं तत्र मिश्रयेत् ॥ १५० ॥
सर्वमेकीकृतं यद्यत्त्रुटिचूर्णञ्च तत्समम्।
भावना च प्रदातव्या छागादुग्धेन सप्तधा ॥ १५१ ॥
मातुलुङ्गरसैः पश्चाद्भावयेत्सप्तवारकम्।
छायाशुष्कां वटीं कृत्वा भक्षयेद्दशरक्तिकाम् ॥ १५२ ॥
मन्दानलं संग्रहणीं प्रवृद्धामामानुबन्धां क्रिमिपाण्डुरोगम्।
छर्द्यम्लपित्तं हृदयामयञ्च गुल्मोदरानाहभगन्दरञ्च ॥१५३॥
अर्शांसि वै पित्तकृतानशेषान्सामं सशूलाष्टकमेव हन्ति।
साजीर्णविष्टम्भविसर्पदाह विलम्बिकाश्चाप्यलसं प्रमेहम्॥१५४॥
कुष्ठान्यशेषाणि च कासशोषं हन्यात्सशोथं ज्वरमूत्रकृच्छ्रम्।
मतान्तरे सर्वसुभद्रनामा महेश्वरेणैव विभाषितोऽयम् ॥१५५॥

एक कर्ष कांतलौहभस्म और एक-एक कर्ष अभ्रक-ताम्र-रौप्य तथा माक्षिक-भस्म ले। स्वर्णभस्म, रौप्यभस्म, शुद्ध सोहागा, हिरनकी सींगकी भस्म, गज-पिप्पली, दन्तीमूल, काली मिर्च, तेजपात, अजवायन, मोथा, सोंठ और धनियाँ-का चूर्ण, सेंधानमक, कपूर, वायविडंग, चीतेका चूर्ण, शुद्ध वत्सनाभ विष, शुद्ध पारा तथा शुद्ध गंधक ये सभी द्रव्य एक-एक तोला, त्रिवृत्का चूर्ण दो तोले, लौंग, जायफल, जावित्री एवं दालचीनीका चूर्ण आठ-आठ तोले लेकर सबका जितना परिमाण हो, उतना ही विडनमक डाले। इन सबका जितना वजन हो, उतना ही इलायचीके दानेका चूर्ण मिलावे। सर्वप्रथम पारे और गंधककी कज्जली कर ले। फिर सबको भली-भाँति घोंटकर बकरीके दूधमें सात बार भावना दे। इसको छायामें सुखाकर दस-दस रत्तीकी गोलियें बना ले। इसका सेवन करनेसे मन्दाग्नि, बढ़ी भयी संग्रहणी, आमयुक्त ग्रहणी, कृमिरोग, पाण्डु छर्दि (वमन), अम्लपित्त, हृद्रोग, गुल्म, उदररोग, आनाह,

भगन्दर, अर्श, सभी, पित्तजनित रोग, आम, आठों प्रकारके शूल, अजीर्ण, विष्टम्भ, विसर्प, दाह, विलम्बिका, अलसक, प्रमेह, सभी तरहके कुष्ठरोग, कास, शोथ, ज्वर और मूत्रकृच्छ्र आदि रोग नष्ट हो जाते हैं। यह 'सर्वसुन्दर रस' नामसे भी प्रसिद्ध है और साक्षात् शंकरभगवान इस रसके आविष्कारक हैं॥

अन्य महाराजनृपतिवल्लभ रस

माक्षिकं लोहमभ्रञ्च वंगं रजतहाटकम्।
ग्रन्थिर्यमानिका चोचं ताम्रं नागरटंगणम्॥१५६॥
सैन्धवं बालकं मुस्तं धान्याकं गंधकं रसम्।
शृङ्गीकर्पूरकञ्चैव प्रत्येकं माषकोन्मितम्॥१५७॥
माषद्वयं रामठं स्यान्मरिचानां चतुष्टयम्।
जातीकोषं लवंगञ्च पत्रञ्च तोलकोन्मितम्॥१५८॥
नाभिशङ्खं विडङ्गञ्च शाणं माषद्वयं विषम्।
कर्षषट्क सत्रिमाषं सूक्ष्मैलानां ततः क्षिपेत्॥१५९॥
विडं कर्षद्वयं सर्वं छागीक्षीरेण पेषयेत्।
चतुर्गुञ्जामितं खादेत्सानाहग्रहणीं जयेत्॥१६०॥
शम्भुना निर्मितो ह्येष पूर्ववद् गुणकारकः।
नाम्ना महाराजपूर्वो नृपवल्लभ उच्यते॥१६१॥

स्वर्णमाक्षिकभस्म, लौहभस्म, अभ्रक, रौप्यभस्म, स्वर्णभस्म, पिप्पलीमूल, अजवायन और दालचीनीका चूर्ण, ताम्रभस्म, सोंठ, शुद्ध सोहागा, सेंधानमक, सुगंधवाला, मोथा और धनियाका चूर्ण, शुद्ध गंधक, शुद्ध पारा, काकड़ासिंगीका चूर्ण और कपूर, ये द्रव्य एक-एक मासा ले। हींग दो-दो और काली मिर्चका चूर्ण एक-एक तोला, शंखनाभिकी भस्म और वायविडंगका चूर्ण एक-एक शाण, शुद्ध वत्सनाभ विष दो मासे, इलायचीके दानेका चूर्ण ६ कर्ष तीन मासा और विडलवण दो कर्ष ले। सर्वप्रथम गंधक और पारेकी कज्जली कर ले। फिर सब द्रव्य एक साथ बकरीके दूधमें घोंटकर चार-चार रत्तीकी गोलियें बना ले। इसका सेवन करनेसे आनाहयुक्त ग्रहणी नष्ट हो जाती है। इसे भी शंभुभगवानने बनाया है। महाराजनृपतिवल्लभके समान ही यह भी गुणकारी है॥१५६-१६१॥

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे 'रसायनी' भाषाटीकायां ग्रहणीरोगचिकित्सा समाप्ता।

अथ अर्शोरोगचिकित्सा ।

चक्रेश्वर रस

चतुर्भागं शुद्धसूतं पञ्च टङ्कणमभ्रकम् ।
त्रिदिनं भावयेद्घर्मे द्रवैः श्वेतपुनर्नवैः ॥ १ ॥
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं वातदुर्नामशान्तये ।
सिद्धश्चक्रेश्वरो नाम रसश्चार्शःकुलांतकः ॥ २ ॥

शुद्ध पारा (अथवा रससिन्दूर) चार भाग, शुद्ध सोहागा और अभ्रक-भस्म पाँच भाग लेकर भली भाँति घोंटे । फिर श्वेत पुनर्नवाके रसमें तीन दिनों तक घाममें रखकर भावना दे । सूख जानेपर रख ले । यदि नित्य दो रत्ती इसका सेवन किया जाय तो वायुजनित अर्शरोग शान्त हो जाता है । यह चक्रेश्वर रस सब प्रकारके अर्शरोगका नाशक है ॥ १–२ ॥

तीक्ष्णमुख रस

मृतसूतार्कहेमाभ्रं तीक्ष्णं मुण्डञ्च गन्धकम् ।
मण्डूरञ्च समं ताप्यं मर्द्यं कन्याद्रवैर्दिनम् ॥ ३ ॥
अन्धमूषागतं सर्वं ततः पाच्य दृढाग्निना ।
चूर्णितं सितया मासं खादेत्तच्चार्शसां हितम् ।
रसस्तीक्ष्णमुखो नाम चासाध्यमपि साधयेत् ॥ ४ ॥

रससिन्दूर, ताम्रभस्म, स्वर्णभस्म, अभ्रकभस्म, तीक्ष्णलौहभस्म, मुण्डलौह-भस्म, शुद्ध गंधक और मंडूरभस्म ये चीजें समभाग ले और घीकुवारके रसमें दिन भर घोंटे । फिर अन्धमूषामें रखकर तेज आँचमें पकावे । जब स्वांगशीतल हो जाय तो निकालकर चूर्ण करके रख ले । यदि नियमसे महीनेभर मिश्रीके साथ एक रत्ती इस रसका सेवन करे तो अर्शरोगीको बहुत लाभ होता है । यह तीक्ष्णमुख रस असाध्य अर्शरोगको भी साध्य बना लेता है ॥३–४॥

अर्शःकुठार रस

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं मृतलौहञ्च ताम्रकम् ।
प्रत्येकं द्विपलं दन्ती त्र्यूषणं शूरणं तथा ॥ ५ ॥

शुभाटङ्कयवक्षारसैन्धवं पलपञ्चकम् ।
पलाष्टकं स्नुहीक्षीरं द्वात्रिंशच्च गवां जलैः ॥ ६ ॥
आपिष्टितं पचेदग्नौ खादेन्माषद्वयं ततः ।
रसश्चार्शःकुठारोऽयं सर्वरोगकुलान्तकः ॥ ७ ॥

शुद्ध पारा १ तोला और शुद्ध गन्धक २ तोला लेकर दोनोंकी कज्जली कर ले। तब इसमें लौहभस्म २ पल और ताम्रभस्म २ पल मिलावे। तदनन्तर दन्तीमूल, त्र्यूषण (सोंठ-मिर्च-पिप्पली) जिमीकन्द, वंसलोचन, शुद्ध सोहागा, जवाखार तथा सेंधानमक, इनका चूर्ण पाँच-पाँच पल मिलावे। सेंहुड़का दूध आठ पल और गोमूत्र बत्तीस पल सबको मिलाकर आगपर चढ़ा दे। पककर गाढ़ा हो जानेपर उतार ले। यदि दो मासा (आजकल ज्यादासे ज्यादा ४ रत्ती) यह रस सेवन करे तो अर्श आदि सभी रोग दूर हो जाते हैं ॥ ५–७ ॥

चक्राख्य रस

मृतसूताभ्रवैक्रान्तं ताम्रं कांस्यं समं समम् ।
सर्वतुल्येन गन्धेन दिनं भल्लातकैर्द्रवैः ॥ ८ ॥
मर्दयेद्यत्नतः पश्चाद्वटीं कुर्य्याद्द्विगुञ्जिकाम् ।
भक्षणाद्गुदजान्हन्ति द्वन्द्वजान्सर्वजानपि ॥ ९ ॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, वैक्रांतभस्म, ताम्रभस्म, कांस्यभस्म, ये चीजें समभाग और सब मिलाकर जितना हो, उस परिमाणमें शुद्धगंधक ले। इन सबको एकमें करके भेलावेके काढ़ेके साथ दिनभर घोंटे और दो-दो रत्तीकी गोली बना ले। इसका सेवन करनेसे एक दोषसे जायमान, द्वन्द्वज तथा त्रिदोषज अर्श मस्सों समेत नष्ट हो जाते हैं ॥८॥९॥

नित्योदित रस

मृतसूताभ्रलौहार्कविषं गन्धं समं समम् ।
सर्वतुल्यन्तु भल्लातफलमेकत्र चूर्णयेत् ॥ १० ॥
द्रवैः शूरणकन्दोत्थैः खल्ले मर्द्य दिनत्रयम् ।
लिहेदाज्यमाषमात्रं रसश्चार्शांसि नाशयेत् ।
नित्योदितो रसो नाम गुदोद्भवकुलान्तकः ॥ ११ ॥

रससिन्दूर, अभ्रक, लौह तथा ताम्रभस्म, शुद्ध वत्सनाभ विष और शुद्ध

गंधक, ये वस्तुयें समभाग लेकर इन सबके बराबर भेलावेके फलका चूर्ण मिलावे और सबको एक साथ कूट डाले। फिर जिमीकंदका रस डालकर तीन दिन तक खरल करे। यदि एक मासा यह रस घृतके साथ खाय तो सब प्रकारके अर्शरोग दूर हो जाते हैं। इसका नाम नित्योदित रस है और यह बवासीरके मस्सोंको भी नष्ट करता है॥ १०—११॥

चन्द्रप्रभा गुटिका

क्रिमिरिपुदहनव्योषत्रिफलासुरदारुचव्यभूनिम्बः।
मागधीमूलं मुस्तं सशटीवचधातुमाक्षिकञ्चैव।
लवणक्षारनिशायुगकुस्तुम्बुरुगजकणाऽतिविषाः॥ १२॥
कर्षांशकान्येव समानि कुर्य्यात्पलाष्टकं चाश्मजितोर्विदध्यात्।
निष्पन्नशुद्धस्य पुरस्य धीमान्पलद्वयं लौहरजस्तथैव॥ १३॥
सिताचतुष्कं पलमत्र वांशया निकुम्भकुम्भीत्रिसुगंधियुक्तम्।
चंद्रप्रभेयं गुटिका विधेया अर्शांसि निर्णाशयते षडेव॥ १४॥
भगन्दरं कामलपाण्डुरोगं विनष्टवह्नेः कुरुते च दीप्तिम्।
हन्त्यामयान्पित्तकफानिलोत्थान्नाडीगते मर्मगते व्रणे च॥ १५॥
ग्रंथ्यर्बुदे विद्रधिराजयक्ष्ममेहे भगाख्ये प्रदरे च योज्या।
शुक्रक्षये चाश्मरिमूत्रकृच्छ्रे मूत्रप्रवाहेऽप्युदरामये च॥ १६॥
तक्रानुपानं त्वथ मस्तुपानमाजो रसो जांगलजो रसो वा।
पयोऽथवा शीतजलानुपानं बलेन नागस्तुरगो जवेन॥ १७॥
दृष्ट्या सुपर्णः श्रवणे वराहः कांत्या रतीशो धिषणश्च बुद्ध्या।
न पानभोज्ये परिहार्य्यमस्ति न शीतवातातपमैथुनेषु।
शम्भुं समभ्यर्च्य कृतप्रणामैः प्राप्ता गुटी चंद्रमसः प्रसादात्॥ १८॥
शुक्रदोषान्निहंत्याशु प्रमेहानपि दारुणान्।
वलीपलितनिर्मुक्तो वृद्धोऽपि तरुणायते॥ १९॥

वायविडंग, चीता, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, त्रिफला, देवदारु, चव्य, भूनिम्ब (चिरायता) पिप्पलीमूल, मोथा, शटी (कचूर) वच, स्वर्णमाक्षिक भस्म, सेंधानक, जवाखार, हल्दी, दारुहल्दी, धनियाँ, गजपीपल और अतीस इन द्रव्योंका चूर्ण एक-एक कर्ष, शुद्ध शिलाजतु आठ पल, शुद्ध गूगुल और लौह-

भस्म दो-दो पल, मिश्री चार पल, वंशलोचन, त्रिवृत्, दालचीनी, इलायचा और तेजपत्र इनका चूर्ण एक-एक पल ले और इनको एक साथ घोंटकर गोलियें बना ले। यह चन्द्रभा गुटिका छहों प्रकारके अर्शोंको नष्ट कर देती है। इसके अतिरिक्त भगंदर, कामला, पांडुरोग, नष्टाग्नि, वात-पित्त-कफजनित सभी रोग, नाडीगत (नासूर) तथा मर्मगत व्रण, ग्रन्थि, अर्बुद, विद्रधि (फोड़ा-फुंसी) राजयक्ष्मा, प्रमेह, स्त्रियोंके रोग, प्रदर, शुक्रक्षय, अश्मरी (पथरी) मूत्रकृच्छ्र, बहुमूत्र और उदर रोग भी इसका सेवन करनेसे दूर हो जाते हैं। अनुपानमें मंठा, दहीका पानी, बकरेके मांसका रस, किसी बनैले पशु-पक्षीके मांसका रस, दुध अथवा शीतल जल विहित है। इस रसका सेवन करनेवाला प्राणी हाथीके समान बली, घोड़ेके समान वेगशाली, गरुड़के सदृश दूरदर्शी, सुअरके समान श्रवणशक्तिसम्पन्न, कामदेव सदृश सुन्दर और बृहस्पतिके समान बुद्धिमान् हो जाता है। इसमें खान-पानका कोई परहेज नहीं है। शीत, वायु, आतप (धूप) तथा मैथुनके त्यागका भी विधान नहीं है। कुछ उद्योगी पुरुषोंने शंकरभगवान्की आराधना करके चन्द्रमाकी कृपासे यह रस प्राप्त किया था। यह गुटिका वीर्यसम्बन्धी सभी विकारों और दारुण प्रमेहोंका अंत करती और झुर्रियाँ तथा बालोंकी सफेदी दूर करके बूढ़ोंको भी जवान बना देती है॥ १२–१६ ॥

माणाद्य लौह

माणशूरणभल्लातत्रिवृद्दन्तीसमन्वितम् ।
त्रिकत्रयसमायुक्तं लौहं दुर्नामनाशनम् ॥ २० ॥

माण (मानकंद) सूरन, भेलावाँ, त्रिवृत् (निसोथ) दन्तीमूल, त्रिफला, त्रिकटु (सोंठ-मिर्च-पिप्पली) वायविडंग, मोथा, चीता इन सभी द्रव्योंका चूर्ण समभाग और इन सबके बराबर लौह भस्म मिलावे और जलके साथ घोंट कर गोलियें बना ले। इसे खानेसे बवासीर रोग दूर हो जाता है॥ २० ॥

चंचत्कुठार रस

रसगन्धकलौहानां प्रत्येकं भागयुग्मकम् ।
त्रिकटुं दन्तिकुष्ठैकं षडभागं लांगलस्य च ॥ २१ ॥

क्षारसैन्धवटंगाणां प्रत्येकं भागपञ्चकम्।
गोमूत्रस्य च द्वात्रिंशत्स्नुहीक्षीरं तथैव च।
यावच्च पिण्डि सर्वं तावन्मृद्वग्निना पचेत्॥ २२॥
माषद्वयं ततः खादेद्दिवास्वप्नादि वर्जयेत्।
रसश्चञ्चत्कुठारोऽयमर्शसां कुलनाशनः॥ २३॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक दो-दो भाग लेकर कज्जली कर ले। फिर इसमें दो ही भाग लौहभस्म डाले। तदनन्तर सोंठ, काली मिर्च, पिप्पली, दंती (अरणी) और कूठ एक-एक भाग, शुद्ध लांगली विष ६ भाग, जवाखार, सेंधा नमक और शुद्ध सोहागा पाँच-पाँच भाग, गोमूत्र और सेंहुड़का दूध बत्तीस भाग लेकर इन सभी द्रव्योंको एक पात्रमें डालकर मन्द-मन्द आँचपर पकावे। जब पककर गाढ़ा हो जाय तब उतार ले। इसकी मात्रा दो माशे है। इसे सेवन करते समय दिनमें सोना आदि त्याग दे। यह चञ्चत्कुठार रस सभी प्रकारके अर्श नष्ट कर देता है॥ २१–२३॥

शिलागंधक वटक

शिलागंधकयोश्चूर्णं पृथग्भृङ्गरसाप्लुतम्।
सप्ताहं भावयेत्सर्पिर्मधुभ्याञ्च विमर्दयेत्॥ २४॥
अर्शश्चानुलोम्यार्थं हताग्निबलवर्द्धनम्।
रक्तिकाद्वितयं खादेत्कुष्ठादिरहितो नरः॥ २५॥

शुद्ध मैनसिल और शुद्ध गंधक दोनोंको समभाग लेकर एकमें घोंटे। फिर भाँगरेके रसमें अलग-अलग सात दिनोंतक भावना दे और सुखाकर रख ले। यदि मधु और घृतमें घोंटकर दो रत्ती यह रस खाय तो अर्शरोग निवृत्त हो जाता है। इससे मन्द अग्नि तीव्र हो जाती और बल बढ़ जाता है। यह वही प्राणी सेवन करे, जिसे कुष्ठ आदि रोग न हों॥२४॥२५॥

जातीफलादि वटी

जातीफलं लवङ्गञ्च पिप्पली सैन्धवं तथा।
शुण्ठीधुस्तूरबीजञ्च दरदः टंगणं तथा॥ २६॥
समं सर्वं विचूर्ण्याथ जम्भनीरेण मर्दयेत्।
वटी जातीफलाद्येयमर्शोऽग्निमान्द्यनाशिनी॥ २७॥

जायफल, लौंग, पिप्पली, सेंधानमक, सोंठ, धतूरेके बीज, शुद्ध सिंगरिफ और शुद्ध सोहागा, इन द्रव्योंको समभाग लेकर चूर्ण कर । फिर जँभीरी नीबूके रसमें घोटकर रख ले । यह जातीफलादि वटी अर्श और मन्दाग्निरोग-का शमन करती है ॥२६॥२७॥

पंचानन वटी

मृतसूताभ्रलौहानि मृतार्कगंधकैः सह ।
सर्वाणि समभागानि भल्लातं सर्वतुल्यकम् ॥ २८ ॥
वन्यशूरणकन्दोत्थैर्द्रवैः पलप्रमाणतः ।
मर्दयेद्दिनमेकञ्च माषमात्रं पिबेद्घृतैः ॥ २९ ॥
भक्षणाद्धन्ति सर्वाणि चार्शांसि च न संशयः ।
असाध्येष्वपि कर्त्तव्या चिकित्सा शङ्करोदिता ।
कुष्ठरोगं निहन्त्याशु मृत्युरोगविनाशिनी ॥ ३० ॥

रससिंदूर, लौहभस्म, ताम्रभस्म, शुद्ध गंधक ये द्रव्य समभाग और इन सबके बराबर शुद्ध भेलावाँका चूर्ण ले । इन्हें कूट-पीसकर बनैले जिमीकंदके रसमें दिनभर घोंटे और गोलियें बनाकर रख ले । यदि घीके साथ एक मासा इस रसका सेवन किया जाय तो सभी तरहके बवासीर दूर हो जाते हैं । असाध्य रोगोंमें भी शंकरभगवानकी बतायी हुई इस पंचानन वटीका सेवन करना चाहिये । यह कुष्ठरोगको तुरंत दूर करके मृत्युरोग तकका निवारण कर देती है ॥२८–३०॥

अष्टाङ्ग रस

गन्धं रसेन्द्रं मृतलौहकिट्टं फलत्रयं त्र्यूषणवह्निभृङ्गम् ।
कृत्वा समं शाल्मलिकागुडूचीरसेन यामत्रितयं विमर्द्य ॥ ३१ ॥
निष्कप्रमाणं गदितानुपानैः सर्वाणि चार्शांसि हरेद्रसस्य ।
लोकोपकृत्यै करुणामयेन रसोऽयमुक्तस्त्रिपुरान्तकेन ॥ ३२ ॥

शुद्ध गंधक, पारा, मंडूर (लौहकिट्ट) भस्म, त्रिफला, त्र्यूषण (सोंठ-मिर्च-पिप्पली) चीता और दाल-चीनीका चूर्ण, ये द्रव्य समभाग लेकर कज्जली करे । तदनन्तर सेमर और गिलोयके रसमें तीन-तीन पहर भलीभाँति घोंटे । गाढ़ी हो जानेपर एक-एक निष्क भरकी गोलियें बना ले । यदि उचित अनु-

पानके साथ इसका सेवन किया जाय तो सभी प्रकारके अर्श दूर हो जाते हैं। करुणामय (दयालु) शंकरभगवानने लोकोपकारकी भावनासे इस रसका आविष्कार किया था ॥३१॥३२॥

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे 'रसायनी' भाषाटीकायामर्शोरोग चिकित्सा समाप्ता।

अथाजीर्णचिकित्सा।

महोदधि वटी

एकैकं विषसूतञ्च जातीटंगं द्विकं द्विकम्।
कृष्णात्रिकं विश्वषट्कं द्विकं गन्धं कपर्दकम्॥ १॥
देवपुष्पं बाणमितं सर्वं सम्मर्द्य यत्नतः।
नाम्ना महोदधिवटी नष्टमग्निं प्रदीपयेत्॥ २॥

शुद्ध विष और शुद्ध पारा एक-एक भाग, जायफलका चूर्ण और सोहागा दो-दो भाग, पिप्पलीचूर्ण तीन भाग, सोंठका चूर्ण छ भाग, शुद्ध गंधक और कौड़ीभस्म दो-दो भाग और लौंगका चूर्ण पाँच भाग ये सब चीजें लेकर पहले पारे और गंधककी कज्जली कर ले। फिर सबको एकसाथ भलीभाँति घोंटकर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले। यह महोदधि वटी नष्ट अग्निको भी उद्दीप्त कर देती है॥१॥२॥

अग्नितुण्डी रस

शुद्धसूतं विषं गन्धमजमोदा फलत्रिकम्।
सर्जिक्षारं यवक्षारं वह्निसैन्धवजीरकम्॥ ३॥
सौवर्च्चलं विडंगानि सामुद्रं त्र्यूषणं तथा।
विषमुष्टिसमं सर्वं जम्बीराम्लेन मर्दयेत्॥
मरिचाभां वटीं खादेद्वह्निमांद्यप्रशांतये॥ ४॥

शुद्ध पारा, शुद्ध विष, गंधक, अजमोदा, त्रिफला, सज्जी, जवाखार, चीताका चूर्ण, सेंधानमक, जीरा, सौवर्चल (सोचल) नमक, वायविडंग, समुद्री नमक, त्र्यूषण (सोंठ-मिर्च-पिप्पली) का चूर्ण, ये सब द्रव्य समभाग ले और इन सबके बराबर शोधित विष (कुचले) का चूर्ण मिलावे। प्रथम पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सबको जँभीरी नीबूके रसमें घोंटकर काली मिर्चके

बराबर गोलियें बना ले। मंदाग्नि रोगको दूर करनेके लिये इसका सेवन करना चाहिए ॥ ३ ॥ ४ ॥

वडवानल रस

शुद्धसूतस्य कर्षैकं गन्धकं तत्समं मतम्।
पिप्पलीपञ्चलवणमरिचञ्च पलत्रयम् ॥ ५ ॥
क्षारत्रयं समं सर्वं चूर्णं कृत्वा प्रयत्नतः।
निर्गुण्ड्याश्च द्रवेणैव भावयेद्दिनमेकतः।
वडवानलनामाऽयं मन्दाग्निञ्च विनाशयेत् ॥ ६ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, पिप्पली, पाँचों नमक, काली मिर्च, त्रिफला, तीनों क्षार (सज्जी, सोहागा, जवाखार) ये सभी चीजें एक-एक कर्ष लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सबको एकमें मिलाकर घोंटे। फिर इसमें सँभालूका रस डालकर दिनभरकी भावना दे। यही वडवानल रस है। यह मंदाग्नि रोगका नाशक माना गया है ॥ ५ ॥ ६ ॥

हुताशन रस

गन्धेशटङ्कणैकैकं विषमत्र त्रिभागिकम्।
अष्टभागं तु मरिचं जम्भाम्भोमर्दितं दिनम् ॥ ७ ॥
तद्वटीं मुद्गमानेन कृत्वार्द्रेण प्रयोजयेत्।
शूलारोचकगुल्मेषु विसूच्यां वह्निमान्द्यके।
अजीर्णे सन्निपातादौ शैत्ये जाड्ये शिरोगदे ॥ ८ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक और शुद्ध सोहागा एक-एक भाग, शुद्ध विष तीन भाग और काली मिर्च आठ भाग लेकर गंधक-पारेकी कज्जली करे। फिर सब चीजें एकमें मिलाकर जंभीरी नीबूके रसमें घोंटे। घुट जानेपर मूँगके बराबर गोलियें बना ले। यदि आदीके रसमें इसे खाय तो शूल, अरुचि, विसूची, मन्दाग्नि, अजीर्ण, सन्निपात, शीत, जड़ता और मस्तककी पीड़ा ये सब रोग दूर हो जाते हैं ॥ ७ ॥ ८ ॥

अथवा

एकद्विकद्वादशभागयुक्तं योज्यं विषं टङ्कणमूषणञ्च।
हुताशनो नाम हुताशनस्य करोति वृद्धिं कफजिन्नराणाम् ॥ ९ ॥

शुद्ध विष एक भाग, शुद्ध सोहागा दो भाग और काली मिर्च बारह भाग लेकर भली भाँति घोंट ले । यही हुताशन रस है । यह अग्निवर्धक और कफनाशक है ॥ ९ ॥

अमृतकल्प वटी

शुद्धौ पारदगन्धौ च समानौ कज्जलीकृतौ ।
तयोरर्द्धं विषं शुद्धं तत्समं टङ्कणं भवेत् ॥ १० ॥
भृङ्गराजद्रवैर्भाव्यं त्रिदिनं यत्नतः पुनः ।
मुद्गप्रमाणा वटिका कर्त्तव्या भिषजां वरैः ॥ ११ ॥
वटीद्वयं हरेच्छूलमग्निमान्द्यं सुदारुणम् ।
अजीर्णं जरयत्याशु धातुपुष्टिं करोति च ॥ १२ ॥
नानाव्याधिहरा चेयं वटी गुरुवचो यथा ।
अनुपानविशेषेण सम्यग्गुणकरी भवेत् ॥ १३ ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक समभाग लेकर कज्जली करे । इसमें शुद्ध विष और शुद्ध सोहागा एक-एक भाग डालकर घोंटे । फिर भाँगरेके रसमें तीन दिन भावना दे । सूखनेपर मूँगके बराबर गोलियें बना ले । यदि इसकी दो गोली खायी जाय तो शूल और मन्दाग्नि दूर हो जाती है । यह अजीर्ण रोग-को शीघ्र पचा देती और धातु पुष्ट करती है । अनुपानविशेषसे यह वटी नाना प्रकारके रोगोंको नष्ट करती है । गुरुवाक्यके सदृश यह वचन सत्य है ॥ १०–१३ ॥

अग्निकुमार रस

रसेन्द्रगंधौ सह टङ्कणेन समं विषं योज्यमिह त्रिभागम् ।
कपर्दशंखाविह नेत्रभागौ मरीचमत्राष्टगुणं प्रदेयम् ॥ १४ ॥
सुपक्वजम्बीररसेन घृष्टः सिद्धो भवेदग्निकुमार एषः ।
विसूचिकाऽजीर्णसमीरणार्त्ते दद्याद्द्विवल्लं ग्रहणीगदे च ॥ १५ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक तथा शुद्ध सोहागा समभाग, शुद्ध विष तीन भाग, कौड़ीभस्म तथा शंखभस्म दो-दो भाग और काली मिर्चका चूर्ण आठ भाग लेकर सर्वप्रथम पारे-गंधककी कज्जली कर ले । फिर सभी चीजें मिलाकर

परिपक्व जँभीरी नीबूके रसमें घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। इसका सेवन करनेसे विसूचिका, वातव्याधि और ग्रहणीका शमन हो जाता है॥ १४-१५॥

अथवा

शुद्धसूतं द्विधा गंधं गंधतुल्यञ्च टङ्कणम्।
पलत्रयं यवक्षारं व्योषं पञ्च पटूनि च॥ १६॥
द्वादशैतानि सर्वाणि रसतुल्यानि दापयेत्।
सम्मर्द्य सप्तधा सर्वं भावयेदार्द्रकद्रवैः॥ १७॥
संशोष्य चूर्णयित्वा तु भक्षयेदार्द्रकाम्बुना।
शाणमात्रं वयो वीक्ष्य नानाऽजीर्णप्रशान्तये॥ १८॥
रसश्चाग्निकुमारोऽयं महेशेन प्रकाशितः।
महाग्निकारकश्चैव कालभास्करतेजसाम्॥ १९॥
अग्निमान्द्यभवान् रोगान् शोथं पाण्ड्वामयं जयेत्।
दुर्नामग्रहणीसामरोगान्हन्ति न संशयः।
यथेष्टाहारचेष्टस्य नास्त्यत्र नियमः क्वचित्॥ २०॥

शुद्ध पारा एक भाग, शुद्ध गंधक और शुद्ध सोहागा दो-दो भाग, त्रिफला, जवाखार, व्योष (सोंठ, मिर्च, पिप्पली) और पाँचों नमक इन बारह चीजोंका एक-एक भाग लेकर भली-भाँति घोंटे। फिर अदरखके रसमें सात बार भावना देकर सुखा ले और चूर्ण करके रख ले। यदि अवस्थाके अनुसार एक शाणकी मात्रा बनाकर इसे अदरखके रसमें खाय तो विविध प्रकारका अजीर्ण रोग दूर हो जाता है। इस अग्निकुमार रसका स्वयं शंकरभगवानने आविष्कार किया है। इससे उदराग्नि भली भाँति प्रदीप्त हो जाती और रोगी आरोग्य लाभ करके काल और सूर्यभगवानके सदृश तेजस्वी हो जाता है। यह मन्दाग्नि-सम्बन्धी सभी रोगों, शोथ, पांडुरोग, अर्श, ग्रहणी और आमजनित रोगोंको दूर करता है। इसका सेवन करते समय किसी परहेजकी आवश्यकता नहीं रहती। आहार-विहार भी स्वेच्छानुसार किया जा सकता है॥ १६-२०॥

अथवा

व्योषं जातीफले द्वे च लवङ्गञ्च वराङ्गकम्।
पत्रं शृङ्गी कणा टङ्कं यमानी जीरकद्वयम्॥ २१॥

सैन्धवञ्च विडं हिङ्गु रसं गंधञ्च रौप्यकम्।
लौहमभ्रं समं सर्वं जम्बीररसमर्दितम्॥ २२॥
अजीर्णशांतये खादेच्चतुर्गुञ्जां वटीं नरः।
अत्यग्निकारकश्चायं रसश्चाग्निकुमारकः॥ २३॥
संग्रहग्रहणीञ्चैव वातपित्तकफोद्भवाम्।
नाशयेदामदोषञ्च त्रिदोषजनितञ्च यत्।
शूलदोषं विसूचीञ्च भास्करस्तिमिरं यथा॥ २४॥

व्योष (सोंठ, मिर्च, पिप्पली) जावित्री, जायफल, लौंग, दालचीनी, तेजपात, काकड़ा सिंगी, पिप्पली, शुद्ध सोहागा, अजवायन, स्याह और सफेद जीरा, सेंधा नमक, विडलवण, हींग, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, चाँदीभस्म, लोहा-भस्म और अभ्रकभस्म ये द्रव्य समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सबको जँभीरी नीबूके रसमें घोंटकर चार-चार रत्तीकी गोलियें बना ले। अजीर्ण-की शान्तिके लिए नित्य एक-एक गोली खाय। यह अग्निकुमार रस अतिशय अग्निवर्धक है। इससे वात-पित्त-कफजनित संग्रहणी, त्रिदोषजनित आमदोष, शूलदोष और विसूचिका रोग इस तरह दूर होता है, जैसे भास्कर भगवान अन्धकारराशिको दूर करते हैं॥ २१–२४॥

बृहन्महोदधि वटी

लवङ्गं चित्रकं शुण्ठी जयपालः समं समम्।
टङ्कणञ्च प्रदातव्यं वृद्धदारस्य कार्षिकम्॥ २५॥
चतुर्दश भावनाश्च दंतीद्रावैः प्रदापयेत्।
लिम्पाकेन त्रिधा देया वृद्धदारेण पञ्चधा॥ २६॥
रसं गन्धञ्च गरलं मेलयित्वा विभावयेत्।
आर्द्रकस्य रसेनैव चित्रकस्य रसेन वा॥ २७॥
मुद्गप्रमाणां वटिकां कृत्वा खादेद्दिने दिने।
क्षुत्प्रबोधकरी चेयं जीर्णज्वरविनाशिनी॥ २८॥

लौंग, चीता, सोंठ, शुद्ध जमालगोटा, शुद्ध सोहागा और विधारा इनका चूर्ण एक-एक कर्ष लेकर दंतीके रसमें चौदह बार भावना दे। फिर नीबूके रसमें तीन और विधाराके काढ़ेमें पाँच बार भावना दे। तदनंतर शुद्ध पारा और शुद्ध

गंधक एक-एक कर्ष लेकर कज्जली करे। तब इसमें एक कर्ष शुद्ध विष मिलाकर उपर्युक्त सभी चीजें एक साथ घोंटे और अदरख अथवा चीतेके रसमें भावना दे। गाढ़ा होनेपर मूँगके समान गोली बना ले। यदि नित्य इसकी एक-एक गोलीका सेवन करे तो भूख बढ़ती और जीर्णज्वर नष्ट हो जाता है॥ २५-२८॥

रामबाण रस

पारदामृतलवङ्गगन्धकं भागयुग्ममरिचेन मिश्रितम्।
जातिकाफलमथार्द्धभागिकं तिन्तिड़ीफलरसेन मर्दितम्॥२९॥
माषमात्रमनुपानयोगतः सद्य एवं जठराग्निदीपनः।
वह्निमान्द्यदशवक्त्रनाशनो रामबाण इति विश्रुतो रसः॥३०॥
जाठरामयरुजाञ्च ताड़कां दुःसहं ह्यरुचिकं कबन्धकम्।
संग्रहग्रहणिकुम्भकर्णकं सामवातखरदूषणं जयेत्॥ ३१॥

शुद्ध पारा, शुद्ध विष, लौंग और शुद्ध गंधक एक-एक भाग, काली मिर्चका चूर्ण दो भाग और जायफलका चूर्ण अर्ध भाग ले। पारा-गंधककी कज्जली करके हरी इमलीके फलोंके रसमें सभी द्रव्योंको एक साथ घोंटकर मासे-मासे भरकी गोलियें बना ले। यदि उचित अनुपानके साथ नित्य इसकी एक गोलीका सेवन किया जाय तो जठराग्नि तत्काल प्रदीप्त हो जाती है। मंदाग्निरूपी रावणको नष्ट करनेमें यह रस रामबाण सदृश है। उदररोगरूपिणी ताटका, दुःसह अरुचिरूपी कबंध, संग्रहग्रहणीरूपी कुम्भकर्ण तथा आमवातरूपी खरदूषणको यह रामबाण शीघ्र नष्ट कर देता है॥ २९-३१॥

अजीर्णकण्टक रस

शुद्धसूतं विषं गन्ध समं सर्वं विचूर्णयेत्।
मरिचं सर्वतुल्यञ्च कण्टकार्याः फलद्रवैः॥ ३२॥
मर्दयेद्भावयेत्सर्वमेकविंशतिवारकम्।
त्रिगुञ्जां वटिकां खादेत्सर्वाजीर्णप्रशान्तये।
अजीर्णकण्टकः सोऽयं रसो हन्ति विसूचिकाम्॥ ३३॥

शुद्ध पारा, शुद्ध विष, शुद्ध गंधक, ये द्रव्य समभाग लेकर घोंट डाले। फिर पारा-गंधककी कज्जली करके इसमें सबके बराबर मिर्चका चूर्ण मिलाकर

कटेरीके रसमें इक्कीस बार भावना दे। गाढ़ा होनेपर तीन-तीन रत्तीकी गोलियें बनाकर सेवन करनेसे अजीर्ण रोग नष्ट हो जाता है। यह अजीर्णकण्टक रस विसूचिकाको भी नष्ट करता है॥ ३२॥ ३३॥

पाशुपत रस

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं त्रिभागं तीक्ष्णभस्मकम्।
त्रिभिः समं विषं देयं चित्रकक्काथभावितम्॥ ३४॥
धूर्त्तबीजस्य भस्मापि द्वात्रिंशद्भागसंयुतम्।
कटुत्रयं त्रिभागं स्याल्लवङ्गैले च तत्समे॥ ३५॥
जातीफलं तथा कोषमर्द्धभागं नियोजयेत्।
तथार्द्धं लवणं पञ्च स्नुह्यर्कैरण्डतिन्तिडी।
अपामार्गाश्वत्थजञ्च क्षारं दद्याद्विचक्षणः॥ ३६॥
हरीतकी यवक्षारं स्वर्जिका हिङ्गु जीरकम्।
टङ्कणं सूततुल्यञ्च अम्लयोगेन मर्दयेत्॥ ३७॥
भोजनान्ते प्रयोक्तव्यो गुञ्जाफलप्रमाणतः॥ ३८॥
रसः पाशुपतो नाम सद्यः प्रत्ययकारकः।
दीपनः पाचनो हृद्यः सद्यो हन्ति विसूचिकाम्॥ ३९॥
तालमूलीरसेनैव उदरामयनाशनः।
अतीसारं मोचरसैर्ग्रहणीं तक्रसैन्धवैः॥ ४०॥
सौवर्चलकणाशुण्ठीयुतः शूलं विनाशयेत्।
अर्शो हन्ति च तक्रेण पिप्पल्या राजयक्ष्मकम्॥ ४१॥
वातरोगं निहन्त्याशु शुण्ठीसौवर्चलान्वितः।
शर्कराधान्ययोगेन पित्तरोगं निहन्त्ययम्॥ ४२॥
पिप्पलीक्षौद्रयोगेन श्लेष्मरोगञ्च तत्क्षणात्।
अस्मात्परतरो नास्ति धन्वन्तरिमतो रसः॥ ४३॥

शुद्ध पारा एक भाग, शुद्ध गंधक दो भाग, तीक्ष्ण लौहभस्म तीन भाग और इन सबके बराबर अर्थात् छ भाग शुद्ध विष मिलाकर घोंट ले। फिर पारा-गंधककी कज्जली करके सबको एक साथ चीताके क्वाथमें डालकर भावना

दे। तदनन्तर शुद्ध धतूरेका बीज बारह भाग, त्रिकटु (सोंठ, मिर्च पिप्पली) का चूर्ण तीन भाग, लौंग, इलायची तीन-तीन भाग, जायफल-जावित्री और पाँचों नमक आधा-आधा भाग डाले। सेंहुड़, मदार, एरण्ड, इमली, अपामार्ग और पीपल वृक्षकी छाल, इनकी भस्मका क्षार, हरीतकी, जवाखार, सज्जी, हींग, जीरा और शुद्ध सोहागा ये सभी चीजें एक एक भाग मिलावे। इन सबको कच्ची इमलीके रसमें घोंटकर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले। भोजन करनेके बाद यदि इसकी एक गोली खायी जाय तो सद्यः लाभ पहुँचाती है। यह रस उदराग्निका उद्दीपक, पाचक तथा हृदयग्राही है और विसूचिका रोगको तत्काल दूर करता है। यदि मुसलीके रसमें इसका सेवन किया जाय तो यह उदररोगोंको नष्ट करता है। मोचरसमें देनेसे अतिसार, मंठा और सेंधानमकमें दें तो ग्रहणी, सौर्चवल लवण तथा पिप्पलीके चूर्णमें देनेसे शूल, मंठाके साथ देनेसे बवासीर, पिप्पलीचूर्णके साथ दें तो राजयक्ष्मा, सोंठ और सोंचल नमकके साथ सेवन करनेसे वातरोग, शक्कर तथा धनियाँके चूर्णमें मिलाकर यह रस देनेसे पित्तरोग और पिप्पली तथा मधुके साथ इसे खानेसे कफजनित सभी रोग दूर हो जाते हैं। धन्वन्तरि भगवानके मतमें इससे बढ़कर और कोई रस है ही नहीं ॥ ३४–४३ ॥

बृहत् शंखवटी

दग्धशंखस्य चूर्णं स्यात्तथा लवणपञ्चकम्।
तिन्तिडीक्षारकञ्चैव कटुकत्रयमेव च ॥ ४४ ॥
तथैव हिङ्गुकं ग्राह्यं विषं पारदगन्धकम्।
अपामार्गस्य वह्नेश्च क्वाथैर्लिम्पाकजैर्द्रवैः ॥ ४५ ॥
भावयेत्सर्वचूर्णं तदम्लवर्गैर्विशेषतः।
यावत्तदम्लतां याति गुटिकाऽमृतरूपिणी ॥ ४६ ॥
सद्यो वह्निकरी चैव भस्मकञ्च नियच्छति।
भुक्त्वाऽऽकण्ठं तु तस्यान्ते खादेच्च गुटिकामिमाम् ॥ ४७ ॥
तत्क्षणाज्जारयत्याशु पुनर्भोजनमिच्छति।
हन्ति वातं तथा पित्तं कुष्ठानि विषमज्वरम् ॥ ४८ ॥

गुल्माख्यं पांडुरोगञ्च निद्राऽऽलस्यमरोचकम्।
शूलञ्च परिणामोत्थ प्रमेहञ्च प्रवाहिकाम्।
रक्तस्रावञ्च शोथञ्च दुर्नामानि विशेषतः॥ ४६॥

शंखभस्म, पाँचों नमक, इमलीका क्षार, त्रिकटु (सोंठ-मिर्च-पिप्पली) का चूर्ण, हींग, शुद्ध विष और शुद्ध गंधक ये वस्तुयें समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। तब सभी चीजें मिलाकर गोली बनावे और अपामार्गके रस, चीतेके क्वाथ और जँभीरी नीबूके रसमें भावना दे। खास करके अम्ल-वर्गकी भावना तबतक देता रहे, जबतक कि वह गोली खट्टी न हो जाय। यह अमृत-स्वरूपिणी गोली उदराग्निको तुरन्त उद्दीप्त करती और भस्मकरोगको दूर कर देती है। यदि कोई गलेतक ठूँसकर भोजन किये हो, उसे यदि एक गोली खिला दे तो तत्क्षण उसका भोजन हजम हो जाता है और फिर भूख लग जाती है। यह वात, पित्त, कुष्ठ, विषमज्वर, गुल्म, पाण्डुरोग, निद्रा, आलस्य, अरुचि, परिणामशूल, प्रमेह, प्रवाहिका, रक्तस्राव, शोथ और बवासीरको भी नष्ट करती है॥ ४४–४६॥

महाविपाक वटी

माक्षिकं रसगन्धौ च हरितालं मनःशिला।
त्रिवृद्दन्ती वारिवाहश्चित्रकञ्च महौषधम्॥ ५०॥
पिप्पली मरिचं पथ्या यमानी कृष्णजीरकम्।
रामठं कटुका पाठा सैन्धवं साजमोदकम्॥ ५१॥
जातीफलं यवक्षारं समभागं विचूर्णयेत्।
आर्द्रकस्य रसेनैव निर्गुण्ड्याः स्वरसेन च॥ ५२॥
सूर्य्यावर्त्तरसेनैव तुलस्याः स्वरसेन च।
आतपे भावयेद्वैद्यः खल्लपात्रे च निर्मले।
पेषयित्वा वटीं खादेद्गुञ्जाफलसमप्रभाम्॥ ५३॥
भुक्तोत्तरीये बहुभोजनान्ते मुहुर्मुहुर्वाञ्छति भोजनानि।
आमानुबंधे च चिराग्निमांद्ये विड्विग्रहे पित्तकफानुबंधे॥ ५४॥
अर्शःसु शोथोदरकेऽप्यजीर्णे शूलप्रदोषप्रभवे ज्वरे च।
शस्ता वटी भक्तविपाकसंज्ञा सुखं विपाच्याशु निरस्य कोष्टम्॥ ५५॥

स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध हरताल, शुद्ध मैनसिल, निसोथ, दन्तीमूल, मोथा, चीता, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, हड़, अजयायन, काला जीरा, हींग, कटुकी, पाढ़, सेंधा नमक, अजवायनका चूर्ण, जायफल और जवाखार, ये चीजें समभाग लेकर गंधक-पारेकी कज्जली कर ले। फिर सब वस्तुयें एक साथ मिलाकर घोंटे और अदरख, सँभालू, सूर्यमुखी तथा तुलसीके रसमें धूपमें रखकर भावना दे। तदनन्तर घोंटकर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले। भोजनके बाद यदि इसे खाय तो भोजन हजम हो जाता है और फिरसे भोजन करनेकी इच्छा हो उठती है। आँवकी शिकायत, पुरानी मन्दाग्नि, कब्ज, पित्त-कफके दोष, सब प्रकारके अर्श, शोथ, उदररोग, अजीर्ण, शूल और ज्वरमें यह वटी विशेष उपकार करती है। यह भक्तविपाक वटी कोष्ठगत अन्नको बड़ी आसानीसे पचाकर बाहर निकाल देती है॥ ५०—५५॥

पञ्चामृत वटी

अभ्रकं पारदं ताम्रं गन्धकं मरिचानि च।
समभागमिदं चूर्णं चाङ्गेरीरसमर्दितम्॥ ५६॥
मर्दिते हि रसे भूयो जयंतीसिंधुवारयोः।
भावनापि च कर्त्तव्या गुञ्जापरिमिता वटी॥ ५७॥
तप्तोदकानुपानेन चतस्रस्तिस्र एव वा।
वह्निमांद्ये प्रदातव्या वट्यः पञ्चामृताः शुभाः॥ ५८॥

अभ्रकभस्म, शुद्ध पारा, ताम्रभस्म, शुद्ध गंधक और काली मिर्चका चूर्ण, ये वस्तुयें समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सब चीजें एकत्रित करके चांगेरीके रसमें घोंटे। तदनन्तर जयन्ती तथा सिंधुवार (संभालू) के रसमें एक-एक भावना देकर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले। मन्दाग्निका रोगी यदि तीन-चार पंचामृत वटीकी गोली खाकर गरम जल पी ले तो उसे बहुत लाभ हो॥ ५६—५८॥

क्रव्याद रस

पलं रसस्य द्विपलं बलेः स्याच्छुल्वायसी चार्द्धपलप्रमाणे।
सञ्चूर्ण्य सर्वं द्रुतमग्नियोगादेरण्डपत्रेऽथ निवेशनीयम्॥ ५९॥

कृत्वाऽथ तां पर्पटिकां विदध्याल्लौहस्य पात्रे त्ववपूतमस्मिन्।
जम्बीरजं पक्करसं पलानां शतं नियोज्याग्निमथाल्पमल्पम् ॥ ६०॥
जीर्णे रसे भावितमेतदेतैः सुपञ्चकोलोद्भववारिपूरैः।
सवेतसाम्लैः शतमत्र योज्यं समं रजष्टङ्कणजं सुभृष्टम् ॥६१॥
विडं तदर्द्धं मरिचं समञ्च तत्सप्तवारं चणकाम्लकेन।
क्रव्यादनामा भवति प्रसिद्धो रसस्तु मन्थानकभैरवोक्तः ॥६२॥
माषद्वयं सैन्धवतक्रपीतो ह्यसौ सुधन्यः खलु भोजनान्ते।
गुरूणि मांसानि पयांसि पिष्टघृतानि सेव्यानि फलानि चापि ॥६३॥
मात्रातिरिक्तान्यपि सेवितानि यामद्वयाज्जारयति प्रसिद्धः।
निहन्त्यजीर्णान्यपि षट् प्रवृद्धमग्निं करोति क्रमसेवनेन ॥६४॥

काश्यंस्थौल्यनिवर्हणो गरहरः सामार्तिनिर्णाशनो
गुल्मप्लीहनिषूदनो ग्रहणिकाविध्वंसनः स्रंसनः।
वातश्लेष्मनिबर्हणः श्रमहरः शूलार्त्तिशूलापहो
वातग्रन्थिमहोदरापहरणः क्रव्यादनामा रसः ॥ ६५ ॥

शुद्ध पारा १ पल, शुद्ध गंधक दो पल, ताम्रभस्म आधा पल, लौहभस्म आधा पल, ये वस्तुयें लेकर पहले पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सब चीजें एकमें घोंटकर आगपर रखे। पिघल जानेपर रेंड़के पत्तेपर ढालकर पर्पटी बना ले। फिर चूर्ण करके एक पात्रमें रखे और वस्त्रसे छना हुआ सौ पल जँभीरी नीबूका रस डालकर आगपर चढा दे। जब सब रस सूख जाय तो उतार ले और फिर घोंटे। तदनंतर पंचकोल (पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चीता तथा सोंठके काढ़ेमें भावना दे। फिर भुने सोहागेका लावा ४ पल, विडलवण २ पल, काली मिर्च ४ पल डाले और पुनः घोंटकर चणकाम्लमें सात बार भावना दे। मन्थान भैरवने यह रस रावणको इसलिए बताया था कि जिससे वह अधिकसे अधिक मांस खाकर पचा सके। यदि भोजनके बाद दो मासा यह रस सेंधा नमक मिश्रित मंठेके साथ सेवन करे तो बड़ा उपकार होता है। इसका सेवन करनेवाला रोगी गुरु पदार्थ जैसे--मांस, दूध, पीठीके बने बड़े आदि, घी तथा फल खूब खाय। यदि कोई परिमाणसे अधिक भोजन भी कर ले तो यह रस दो पहरमें उसे पचा देता है। यह बात प्रसिद्ध है। यदि

ठीक क्रमसे इसका सेवन किया जाय तो छहों प्रकारके अजीर्ण दूर हो जाते और उदराग्नि तीव्र हो जाती है। इसके सेवनसे शरीरकी कृशता, मोटाई, शारीरिक विष, आमजनित क्लेश, गुल्म, प्लीहा, ग्रहणी, वात, कफ, कफजनित विकार, थकावट, शूलकी पीड़ा, वातज ग्रन्थि और महान् उदररोग दूर हो जाते हैं। इसका नाम है—क्रव्याद रस ॥ ५९–६५ ॥

ज्वालानल रस

क्षारद्वयं सूतगंधौ पञ्चकोलमिदं समम्।
सर्वतुल्या जया देया तदर्द्धं शिग्रुवल्कलम् ॥ ६६ ॥
एतत्सर्वं जयाशिग्रुवह्निमार्कवजै रसैः।
भावयेत्त्रिदिनं घर्मे ततो लघुपुटे पचेत् ॥ ६७ ॥
भावयेत्सप्तधा चार्द्रद्रावैर्ज्वालानलो भवेत्।
पाचनो दीपनो हृद्यश्चोदरामयनाशनः ॥ ६८ ॥
निष्कोऽस्य मधुना लीढोऽनुपानं गुडनागरैः।
ज्वराजीर्णमतीसारं ग्रहणीं वह्निमार्दवम्।
श्लेष्महृल्लासवमनमालस्यमरुचिं जयेत् ॥ ६९ ॥

दोनों क्षार (सज्जी और जवाखार) शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, पंचकोल (पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चीता और सोंठ) का चूर्ण, ये चीजें समभाग और इन सबके बराबर यानी नौ भाग भाँग, इसका आधा अर्थात् साढ़े चार भाग सहिंजनकी छालका चूर्ण ले और पारे-गन्धककी कज्जली करके सबको एकमें मिलाकर घोंटे। घुँट जानेपर गोला बना ले और इस गोलेको भाँग, सहिंजन, चीता तथा भाँगरेके रसमें डाल और धूपमें रखकर तीन दिनकी भावना दे। सूखनेपर लघुपुटमें पकावे। तदनन्तर अदरखके रसमें सात बार भावना दे। बस, ज्वलानल रस तैयार हो गया। यह उदराग्निदीपन, पाचन, हृदयग्राही और उदरविकारका नाशक है। यदि निष्कभर यह रस मधुके साथ चाटकर अनुपानमें गुड़ तथा नागरमोथाका सेवन करे तो ज्वर, अजीर्ण, अतिसार, ग्रहणी, मन्दाग्नि, कफ, जी मिचलाना, वमन, आलस्य और अरुचि दूर हो जाती है ॥ ६६–६९ ॥

अमृत वटी

अमृतवराटकमरिचैर्द्विपञ्चनवभागयोजितैः क्रमशः ।
वटिका मुद्गसमाना कफत्रिदोषानलमान्द्यहारिणी ॥ ७० ॥

शोधित विष दो भाग, कौड़ीभस्म पाँच भाग और मिर्चका चूर्ण नौ भाग, इनको जलके साथ एकमें घोंटकर मूँगके दाने जैसी गोलियें बना ले। यह गोली कफ, त्रिदोष एवं मन्दाग्निको दूर करती है ॥ ७० ॥

बृहद्भक्तपाक वटी

अभ्रं पारदगन्धकौ सदरदौ ताम्रञ्च तालं शिला
वङ्गञ्च त्रिफला विषञ्च कुनटी भागास्त्रयो दन्तिनः ।
शृङ्गी व्योषयमानिचित्रजलदं द्वे जीरके टङ्कणम्
एलापत्रलवङ्गहिङ्गुकटुकी जातीफलं सैन्धवम् ॥ ७१ ॥
एतान्यार्द्रकचित्रदन्तिसुरसावासारसैर्बिल्वजैः
पत्रोत्थैरपि सप्तधा सुविमले खल्ले विभाव्यान्यतः ।
खादेद्वल्लमितं तथा च सकलव्याधौ प्रयोज्याबुधै-
र्विड्बंधे कफजे त्रिदोषजनिते ह्यामानुबंधेऽपि च ॥ ७२ ॥
मंदेऽग्नौ विषमज्वरे च सकले शूले त्रिदोषोद्भवे
हन्यात्तानपि भक्तपाकवटिका भूयश्च सामं जयेत् ॥ ७३ ॥

अभ्रकभस्म, शुद्ध गंधक, शुद्ध सिंगरिफ, ताम्रभस्म, शुद्ध हरताल, शुद्ध मैनसिल, वंगभस्म, त्रिफलाका चूर्ण, शुद्ध विष, कुनटी (शुद्ध मैनसिल) ये वस्तुयें एक-एक भाग और दन्तीमूलका चूर्ण तीन भाग, काकड़ासिंगी, व्योष (सोंठ, मिर्च, पिप्पली) का चूर्ण, चीता, मोथा, जीरा, शुद्ध सोहागा, इलायची, तेजपात, लौंग, हींग, कुटकी, जायफल और सेंधा नमक, इनका चूर्ण एक-एक भाग लेकर पहले पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सबको मिलाकर घोंटे। घुँट जानेपर अदरखके रस, चीता, दन्तीके क्वाथ, तुलसीपत्रके रस, अडूसा तथा बेलपत्रके रसमें सात बार भावना दे। गाढ़ा हो जानेपर रत्ती-रत्ती भरकी गोली बना ले। यह वटी सभी रोगोंमें दी जाती है। कब्ज, कफ, त्रिदोष एवं आमजनित मन्दाग्नि, विषमज्वर, सभी प्रकारके शूल एवं त्रिदोष शूलका नाश करती और आमरोगको भी परास्त करती है ॥ ७१–७३ ॥

लवङ्गादि वटी

लवङ्गशुण्ठीमरिचानि भृष्टसौभाग्यचूर्णानि समानि कृत्वा।
भाव्यान्यपामार्गहुताशवारा प्रभूतमांसादिकजारणाय ॥७४॥

लौंग, सोंठ, मिर्च और भुने हुए सुहागेके लावाका चूर्ण ये चीजें समभाग लेकर खरल करे। फिर अपामार्ग और चीतेके रसमें भावना दे। सूख जानेपर रख ले। अधिक मात्रामें खाये हुए मांस आदिको पचानेके लिए यह एक ही चीज है ॥ ७४ ॥

वृहल्लवङ्गादि वटी

लवङ्गजातीफलधान्यकुष्ठं जीरद्वयं त्र्यूषणत्रैफलञ्च।
एलात्वचं टङ्कवराटमुस्तं वचाऽजमोदाविडसैन्धवञ्च ॥७५॥
तदर्द्धकं पारदगन्धमभ्रं लौहञ्च तुल्यं सुविचूर्ण्य सर्वम्।
तन्नागवल्लीदलतोयपिष्टं वल्लप्रमाणां वटिकाञ्च कृत्वा ॥७६॥
प्रातर्विदध्यादपि चोष्णतोयैरियं निहन्याद्ग्रहणीविकारम्।
आमानुवन्धं सरुचं प्रवाहं ज्वरं तथा श्लेष्मभवं सशूलम् ॥७७॥
कुष्ठाम्लपित्तं प्रवलं समीरं मन्दानलं कोष्ठगतञ्च वातम्।
वटी लवङ्गादि वसुप्रणीता तथा सवातं विनिहन्ति शीघ्रम् ॥७८॥

लौंग, जायफल, धनियाँ, कूठ, स्याह तथा सफेद जीरा, त्र्यूषण (सोंठ, मिर्च, पिप्पली), त्रिफला, इलायची, दालचीनी, शुद्ध सोहागा, कौड़ीभस्म, मोथा, वच, अजमोदा, सेंधा नमक, ये द्रव्य एक-एक भाग और शुद्ध गंधक, अभ्रक-भस्म और लौहभस्म, ये द्रव्य आधा-आधा भाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सबको एकमें मिलाकर पानके रसमें अच्छी तरह घोंटे। घुट जानेपर रत्ती-रत्ती भरकी गोली बना ले। प्रातःकाल इसकी एक गोली खाकर ऊपरसे गरम जल पी ले तो ग्रहणी, आँव, पीड़ायुक्त प्रवाहिका, कफजनित ज्वर, शूल, कुष्ठ, अम्लपित्त, प्रबल वातव्याधि, मन्दाग्नि, कोष्ठगत वातविकार और सभी प्रकारके वातज रोग नष्ट हो जाते हैं। अष्ट वसुओंने यह लवंगादि वटी वनायी थी ॥ ७५–७८ ॥

जातीफलादि वटी

जातीफलं लवङ्गञ्च पिप्पलीसिन्धुकामृतम्।
शुण्ठिधुस्तूरबीजञ्च दरदं टङ्कणं तथा ॥ ७९ ॥
समं सर्वं समाहृत्य जम्भनीरेण मर्दयेत्।
वल्लमाना वटी कार्य्या चाग्निमान्द्यप्रशान्तये ॥ ८० ॥

जायफल, लौंग, पिप्पली, सेंधा नमक, शुद्ध विष, सोंठ, शुद्ध धतूरेका बीज, शुद्ध सिंगरिफ, शुद्ध सोहागा ये वस्तुएँ समभाग लेकर जँभीरी नीबूके रसमें मर्दन करे। घुँट जानेपर रत्ती-रत्ती भरकी गोली बना ले। इसका सेवन करनेसे मन्दाग्नि रोग दूर हो जाता है ॥ ७९ ॥ ८० ॥

शंखवटी

सार्द्धं कर्षं रसेन्द्रस्य गन्धकस्य तथैव च।
विषं कर्षत्रयं दद्यात्सर्वतुल्यं मरीचकम् ॥ ८१ ॥
दग्धशङ्खञ्च तत्तुल्यं पञ्च कर्षाणि नागरात्।
स्वर्जिका रामठकणासिन्धुसौवर्चलं विडम् ॥ ८२ ॥
सामुद्रमौद्भिदञ्चैव भावयेन्निम्बुकद्रवैः।
वटी ग्रहण्यम्लपित्तशूलघ्नी वह्निदीपनी।
वह्निमान्द्यकृतान् रोगान्सामदोषं विनाशयेत् ॥ ८३ ॥

शुद्ध पारा डेढ़ कर्ष, शुद्ध गंधक डेढ़ कर्ष, शुद्ध विष तीन कर्ष, काली मिर्चका चूर्ण ६ कर्ष, शंखभस्म ६ कर्ष, सोंठका चूर्ण पाँच कर्ष, सज्जी, हींग, पिप्पली, सेंधानमक, सोचल नमक, विडनमक, समुद्री नमक और नौसादर ये सभी द्रव्य पाँच-पाँच कर्ष लेकर खरल कर ले। फिर नीबूके रसमें भावना देकर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले। यह वटी ग्रहणी, अम्लपित्त और शूलको दूर करके उदराग्नि उद्दीप्त करती और मन्दाग्निजनित रोगों एवं आमजनित दोषोंका नाश करता है ॥ ८१–८३ ॥

चिन्तामणि रस

रसं गन्धं मृतं ताम्रं मृतमभ्रं फलत्रयम्।
त्र्यूषणं दन्तिबीजञ्च सर्वं खल्ले विमर्दयेत् ॥ ८४ ॥

द्रोणपुष्पीरसैश्चापि भावयेच्च पुनः पुनः।
अस्या मात्रा प्रदातव्या गुञ्जैका वा द्विगुञ्जिका ॥ ८५ ॥
चिन्तामणिरसो ह्येष चाजीर्णे शस्यते सदा।
आमवातं ज्वरं हन्ति सर्वशूलनिषूदनः ॥ ८६ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, त्रिफला, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, दन्तीके बीज, ये चीजें समभाग ले और कज्जली करके सबको खरलमें खूब घोंटे। तदनन्तर द्रोणपुष्पी (गूमा) के रसमें सात बार भावना दे। सूखनेपर रख ले। एक या दो रत्ती इसकी मात्रा देनी चाहिए। यही चिन्तामणि रस है। यह अजीर्णमें सदा लाभ करता है। आमवात, ज्वर और सब प्रकारके शूलोंको वह मार भगाता है ॥ ८४—८६ ॥

प्रदीपन रस

रसनिष्कं गन्धनिष्कं निष्कमात्रं प्रदीपनम्।
मानमर्द्धं प्रदातव्यं चुल्लिकालवणं भिषक् ॥ ८७ ॥
मर्दयित्वा प्रदातव्यमथास्या माषमात्रकम्।
अजीर्णे चाग्निमान्द्ये च दातव्यो रसवल्लभः ॥ ८८ ॥

शुद्ध पारा एक निष्क, शुद्ध गंधक और चीता एक निष्क, नौसादर डेढ़ निष्क लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सभी चीजें एकमें मिलाकर घोंटे। यदि एक मासा यह रस सेवन करे तो अजीर्ण और मन्दाग्निरोग दूर हो जाता है ॥ ८७ ॥ ८८ ॥

विजय रस

रसस्यैकं पलं दत्त्वा नागञ्च गन्धकं पलम्।
क्षारत्रयं पलं देयं लवङ्गं पलपञ्चकम् ॥ ८९ ॥
दशमूली जयाचूर्णं तद्द्रवेण तु भावयेत्।
चित्रकस्य रसेनाथ भृङ्गराजरसेन तु ॥ ९० ॥
शिग्रुमूलद्रवैश्चापि ततो भाण्डे निरुध्य च।
याममात्रं पचेदग्नौ मर्दयेदार्द्रकद्रवैः।
ताम्बूलीपत्रसंयुक्तं खादेन्निष्कमितं सदा ॥ ९१ ॥

शुद्ध पारा १ पल और शुद्ध गंधक १ पल लेकर कज्जली करे। फिर इसमें

नागभस्म और तीनों क्षार (सज्जी, जवाखार और भुना सोहागा) एक-एक पल मिलावे। लौंगका चूर्ण, दशमूलके द्रव्य तथा भाँग, ये चीजें पाँच-पाँच पल डालकर खरल करे। फिर चीता, भाँगरा तथा सहिंजनके रसमें भावना दे। तदनन्तर इस भावित चूर्णको एक पात्रमें रखकर उसका मुख बन्द कर दे और भट्ठीपर रखकर पहरभर पकावे। शीतल होनेपर निकाल ले और अदरखके रसमें भावना देकर रख ले। निष्कभर यह रस पानके पत्तेपर रखकर खानेसे अजीर्णरोग दूर होता है ॥ ८९–९१ ॥

महाभक्त पाकवटी

माक्षिकं रसगन्धौ च हरितालं मनःशिलाम्।
गगनं कान्तलौहञ्च सर्वमेतच्च कार्षिकम् ॥ ९२ ॥
त्रिवृद्दन्ती वारिवाहं चित्रकञ्च महौषधम्।
पिप्पलीं मरिचं पथ्यां यमानीं कृष्णजीरकम् ॥ ९३ ॥
रामठं कटुकां पाठां सैन्धवं साजमोदकम्।
जातीफलं यवक्षारं समभागं विचूर्णयेत् ॥ ९४ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव निर्गुण्ड्याः स्वरसेन च।
सूर्य्यावर्त्तरसेनैव ज्योतिष्मत्या रसेन च ॥ ९५ ॥
आतपे भावयेद्वैद्यः कृत्वा गुञ्जामितां वटीम्।
भक्षयेत्तां वटीं प्राज्ञो लवंगेन नियोजिताम् ॥ ९६ ॥
भुक्तोत्तरीये बहुभोजनान्ते आमानुवंधे चिरवह्निमांद्ये।
विड्विग्रहे वातकफानुवंधे शोथोदरानाहगदेऽप्यजीर्णे ॥ ९७ ॥
शूले त्रिदोषप्रभवे ज्वरे च शस्ता वटी भक्तविपाकसंज्ञा।
सुखं विरेच्याशु नरस्य कोष्ठं मुहुर्मुहुर्वाञ्छयतीप्सितान्नम् ॥ ९८ ॥

स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध हड़ताल, शुद्ध मैनसिल, अभ्रकभस्म, कान्तलौहभस्म, ये द्रव्य एक-एक कर्ष, निसोथ, दन्ती, मोथा, चीता, सोंठ, पिप्पली, काली मिर्च, हरीतकी, अजवायन, काला जीरा, हींग, कटुकी, पाढ़, सेंधानमक, अजमोदा, जायफल, जवाखार, ये द्रव्य एक-एक कर्ष लेकर पीसे। फिर पारे गंधककी कज्जली करके सबको एकमें मिलावे और अदरख, सँभालू, सूर्यमुखी तथा ज्योतिष्मती (मालकाँगनी) के रसमें

यह चूर्ण डाल तथा धूपमें रखकर भावना दे। गाढ़ा होनेपर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले। यदि भोजनके बाद और अधिक भोजन हो जानेपर लौंगके चूर्णमें इस वटीका सेवन किया जाय तो वह शीघ्र हजम हो जाता है। इसके अतिरिक्त आवँकी शिकायत, पुरानी मन्दाग्नि, कब्ज, वातज एवं कफजनित विकार, शोथ, उदररोग, आनाह, अजीर्णशूल तथा त्रिदोषज ज्वर भी दूर हो जाता है। यह महाभक्त-विपाक वटी रोगीके कोष्ठको भलीभाँति साफ करके वार-वार भूख लगाती है ॥९२–९८॥

रसराक्षस

ताम्रं पारदगन्धकं त्रिकटुकं तीक्ष्णञ्च सौवर्चलं
खल्ले मर्द्य दिनं निधाय सिकताकुम्भेषु यामं ततः।
स्विन्नं तेष्वपि रक्तशाकिनिभवं क्षारं सम भावयेत्
एकीकृत्य च मातुलुङ्गकजलैर्नाम्ना रसो राक्षसः॥ ९९॥

ताम्रभस्म, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, तीक्ष्णलौहभस्म और सोंचल नमक इनमेंसे हर चीज वरावर-वरावर ले। पारे-गंधककी कज्जली करनेके बाद सभी चीजें एकमें मिलाकर घोंटे और घुट जानेपर वालुकायंत्रमें एक पहर स्वेदन करे। तदनन्तर निकालकर चूर्णके वरावर लाल पुनर्नवाका क्षार डाले और घोंटकर नीबूके रसमें भावना दे। यही रसराक्षस है ॥९९॥

त्रिफला लौह

त्रिफलामुस्तवेल्लैश्च सितया कणया समम्।
खरमञ्जरिबीजैश्च लौहं भस्मकनाशनम्॥ १००॥

त्रिफला, मोथा, विडंग, मिश्री, पिप्पली और अपामार्गके बीजका चूर्ण, ये द्रव्य समभाग और इन सबका समानभाग लौहभस्म लेकर घोंटे। घुट जानेपर रख ले। इसका सेवन करनेसे भस्मक रोग निवृत्त होता है ॥१००॥

अपामार्गाद्यञ्जन

अपामार्गस्य पत्रञ्च मरिचञ्च समं समम्।
अम्लरोलीयुतं पिष्टमञ्जनात्सूचिकाञ्जयेत्॥ १०१॥

अपामार्गकी ताजी पत्ती और काली मिर्च दोनों समान भाग लेकर पीसे

और फिर चांगेरीके रसमें रगड़कर आँखोंमें आँजे तो विसूचिका रोग दूर हो जाता है ॥१००॥

अग्निकुमार रस

टङ्कणं रसगन्धौ च समं भागत्रयं विषात्।
कपर्दशङ्खयोस्त्र्यंशं वसुभागं मरीचकम् ॥ १०२ ॥
दिनं जम्भाम्भसा पिष्टं वल्लमात्रं प्रदापयेत्।
विसूचीमूलविष्टम्भवह्निमान्द्ये ज्वरे तथा।
अजीर्णे संग्रहण्याञ्च सिद्धश्चाग्निकुमारकः ॥ १०३ ॥

शुद्ध सोहागा, शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक ये तीनों समभाग, शुद्ध विष, शंखभस्म और कौड़ीभस्म ये तीन-तीन भाग और मिर्चका चूर्ण आठ भाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सबको एकमें घोंटकर जँभीरी नीबूके रसमें भावना दे। यदि एक रत्ती इस रसका सेवन करे तो विसूची, शूल, विष्टम्भ, अग्निमांद्य, ज्वर, अजीर्ण और संग्रहणी रोग दूर हो जाते हैं। इन रोगोंके लिए अग्निकुमार रस विख्यात है ॥१०२॥१०३॥

शंखवटीकी अन्य विधि

द्वौ क्षारौ रसगंधकौ सलवणौ क्षारेण तुल्यं विषम्
चिञ्चाशङ्खचतुर्गुणं रसवरैर्लिम्पाकजातैः कृतम्।
वारं वारमिदं सुपाकरचितं लौहं क्षिपेद्धिङ्गुकम्
भूयष्टङ्कसमं सुमर्दितमिदं गुञ्जाप्रमाणं भजेत् ॥ १०४ ॥
ख्याता शङ्खवटी महाग्निजननी शूलान्तकृत्पाचनी
कासश्वासविनाशिनी क्षयहरी मंदाग्निसंदीपनी।
वातव्याधिमहोदरादिशमनी तृष्णामयोच्छेदिनी
सर्वव्याधिनिषूदिनी क्रिमिहरी दुष्टामयध्वंसिनी ॥ १०५ ॥

इति अजीर्णरोगचिकित्सा

दोनों क्षार (सज्जी और जवाखार) शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, सेंधानमक और शुद्ध विष ये वस्तुयें समान भाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सब चीजें एकमें करके इमलीकी भस्म तथा शंखभस्म चार-चार भाग मिलावे। उनको एक साथ घोंटकर नीबूके रसमें भावना दे। तदनन्तर इसमें

लौहभस्म, हींग और शुद्ध सोहागा, ये चीजें एक-एक भाग डालकर फिरसे घोंटे। घुँट जानेपर रत्ती-रत्ती भरकी गोली बना ले। इसका सेवन करनेसे अग्नि उद्दीप्त होता, पाचनशक्ति ठीक हो जाती, कास-श्वास और क्षय निवृत्त होते और मन्दाग्नि तीव्र हो जाती है। यह शंखवटी वातव्याधि एवं महोदरादि रोग तृष्णारोग एवं कृमि आदि दुष्ट रोगोंका शमन करती है .१०४॥१०५॥

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे रसायनीभाषाटीकायामजीर्णरोगचिकित्सा समाप्ता।

अथ क्रिमिचिकित्सा।

कृमिकालानल रस

विडङ्गं द्विपलञ्चैव विषचूर्णं तदर्द्धकम्।
लौहचूर्णं तदर्द्धञ्च तदर्द्धं शुद्धपारदम्॥ १॥
रसतुल्यं शुद्धगंधं छागीदुग्धेन पेषयेत्।
छायाशुष्कां वटीं कृत्वा खादेत्षोडशरक्तिकाम्॥ २॥
धान्यजीरानुपानेन क्रिमिकालानलो रसः।
उदरस्थं क्रिमि हन्याद्ग्रहण्यर्शःसमन्वितम्॥ ३॥
अग्निदः शोथशमनो गुल्मप्लीहोदरान् जयेत्।
गहनानन्दनाथेन भाषितो विश्वसम्पदे॥ ४॥

वायविडंग दो पल, शुद्ध विष एक पल, लौहभस्म आधा फल, शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक चौथाई पल, ये वस्तुयें लेकर पारे-गंधककी कर ले। फिर अन्य द्रव्य मिलाकर बकरीके रसमें घोंट तथा छायामें सुखकार गोलियें बना ले। यदि धनियाँ और जीरेके अनुपानके साथ सोलह रत्ती यह क्रिमिकालानल रस खाय तो ग्रहणी तथा अर्शके साथ उदरके सभी कृमि नष्ट हो जाते हैं। यह अग्निवर्धक, शोथशामक, गुल्म, प्लीहा और सभी उदररोगोंका नाशक है। विश्वकल्याणके निमित्त गहनानन्दनाथने इसे बताया था॥ १–४

क्रिमिनाशक रस

शुद्धसूतं समं गन्धमभ्रं लौहं मनःशिला।
धातकी त्रिफलालोध्रो विडङ्गं रजनीद्वयम्॥ ५॥

भावयेत्सप्तधा सर्वं शृङ्गवेरभवै रसैः।
चणमात्रां वटीं कृत्वा त्रिफलारससंयुताम् ॥ ६ ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय क्रिमिरोगोपशांतये।
वातिकं पैत्तिकं हन्ति श्लैष्मिकञ्च त्रिदोषजम्।
नाम्ना क्रिमिविनाशोऽयं क्रिमिरोगकुलांतकः ॥ ७ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौहभस्म, शुद्ध मैनसिल, धायके फूल, त्रिफला, लोध, वायविडंग, हल्दी और दारुहल्दी, ये चीजें समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सब द्रव्य एकमें घोंटकर अदरखके रसमें सात बार भावना दे। भावित हो जानेपर चनेके बराबर गोली बना ले। यदि त्रिफलाके रसमें प्रातःकाल इसका सेवन करे तो वातज, पित्तज, कफज एवं त्रिदोषज कृमि नष्ट हो जाते हैं। इस रसका क्रिमिविनाश नाम है। यह क्रिमिकुलके लिये वज्रप्रहार सदृश है ॥ ५—७ ॥

क्रिमिरोगारि रस

सूतं गन्धं मृतं लौहं मरिचं विषमेव च।
धातकी त्रिफला शुण्ठी मुस्तकं सरसाञ्जनम् ॥ ८ ॥
पाठा त्रिकटु मुस्ता च वालकं बिल्वमेव च।
भावयेत्सर्वमेकत्र स्वरसैर्भृङ्गजैस्ततः ॥ ९ ॥
वराटिकाप्रमाणेन भक्षणीयो विशेषतः।
क्रिमिरोगविनाशाय रसोऽयं क्रिमिनाशनः ॥ १० ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौहभस्म, काली मिर्च, शुद्ध विष, धायके फूल, त्रिफला, सोंठ, मोथा, रसौत, पाढ़, त्रिकटु (सोंठ-मिर्च-पिप्पली) मोथा, सुगंधवाला, बेल ये चीजें समभाग लेकर पीसे और भाँगरेके रसमें भावना दे। यदि कौड़ी भर (आजकल एक रत्ती) इस रसका सेवन करे तो उदरस्थ क्रिमि नष्ट हो जाते हैं ॥ ८—१० ॥

कीटमर्द रस

शुद्धसूतं शुद्धगन्धो ह्यजमोदा विडङ्गकम्।
विषमुष्टिब्रह्मबीजं क्रमाद्‌द्वित्रिगुणं भवेत् ॥ ११ ॥

चूर्णयेन्मधुना मिश्रं निष्कैकं क्रिमिजिद्भवेत् ।
कीटमर्दो रसो नाम मुस्ताक्वाथं पिबेदनु ॥ १२ ॥

शुद्ध पारा एक भाग, शुद्ध गन्धक दो भाग, अजमोदा तीन भाग और पलाशके बीज छ भाग ले। पहले पारे-गन्धककी कज्जली कर ले। फिर उपरोक्त सभी चीजें एकमें पीसकर रख ले। यदि निष्कभर यह रस मधुके साथ खाय तो क्रिमिरोग निवृत्त हो जाता है। इसका नाम कीटमर्द रस है। इसे खानेके बाद मोथेका काढ़ा पीना चाहिए ॥ ११ ॥ १२ ॥

क्रिमिघ्न रस

क्रिमिघ्नकिंशुकारिष्टबीजं सुरसभस्मकम् ।
वल्लद्वयं चाखुपर्णीरसैः क्रिमिविनाशनम ॥ १३ ॥

वायविडंग, ढाकके बीज, नीमके बीज और रससिन्दूर, ये वस्तुयें समभाग ले। यदि मूषाकर्णीके रसमें इसका सेवन किया जाय तो क्रिमिरोग दूर हो जाता है ॥ १३ ॥

कृमिमुद्गर रस

क्रमेण वृद्धं रसगन्धकाजमोदाविडङ्गं विषमुष्टिका च ।
पलाशबीजञ्च विचूर्ण्यमस्य निष्कप्रमाणं मधुनाऽवलीढम् ॥१४॥
पिबेत्कषायं घनजं तदूर्ध्वं रसोऽयमुक्तः क्रिमिमुद्गराख्यः ।
क्रिमिं निहन्यात्क्रिमिजाँश्च रोगान्संदीपयत्यग्निमयं त्रिरात्रात् ॥१५॥

शुद्ध पारा एक भाग, शुद्ध गंधक दो भाग, अजवायन तीन भाग, वायविडंग चार भाग, शुद्ध कुचला पाँच भाग और पलाशके बीज छ भाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर अन्य सब चीजें मिलाकर घोंटे। यदि एक निष्क यह कृमिमुद्गर रस मधुके साथ खाय और ऊपरसे मोथेका काढ़ा पी ले तो कृमिरोग नष्ट हो जाते हैं। यह रस कृमिरोगका उन्मूलन करता और तीन दिनमें ही उदर्य अग्निको भी उद्दीप्त कर देता है ॥ १४ ॥ १५ ॥

कृमिधूलिजलप्लव रस

पारदं गन्धकं शुद्धं वङ्गं शङ्खं समं समम् ।
चतुर्णां योजयेत्तुल्यं पथ्याचूर्णं भिषग्वरः ॥ १६ ॥

दण्डयन्त्रेण निर्मथ्य पटोलस्वरसं क्षिपेत् ।
कार्पासबीजसदृशीं कुर्य्याद्वै यत्नतो वटाम् ।
त्रिवटीं भक्षयेत्प्रातः शीततोयं पिवेदनु ॥ १७ ॥
केवलं पैत्तिके योज्यः कदाचिद्वातपैत्तिके ।
श्रीमद्गहननाथोक्तः क्रिमिधूलिजलप्लवः ॥ १८ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, वंभस्म ये द्रव्य समभाग और इन चारोंके वराबर हरितकीका चूर्ण ले । सर्वप्रथम कज्जली करे । फिर सव चीजें एक साथ पटोलपत्र (परवलकी पत्ती) के रसमें घोंटकर विनौलेके वरावरकी गोलियें बना ले । प्रातःकालके समय इसकी गोलियें खाकर ठंढा जल पी ले । इस कृमिधूलिजलप्लव रसका केवल पित्तज कृमिरोगमें ही उपयोग करे । कभी-कभी वात-पित्तज कृमिरोगमें भी इसका उपयोग किया जा सकता है । यह श्रीमान् गहननाथजीका वताया हुआ रस है ॥१६–१८॥

कृमिकाष्ठानल रस

विशुद्धं पारदं गन्धं वङ्गं तालं वराटकम् ।
मनःशिला कृष्णकाचं सोमराजी विडङ्गकम् ॥ १९ ॥
दन्तीवीजञ्च जैपालं शिला टङ्कणचित्रकम् ।
कर्षमात्रन्तु प्रत्येकं वज्रीक्षीरेण मर्दयेत् ॥ २० ॥
कलायसदृशीं कृत्वा वटिकां भक्षयेत्ततः ।
क्रिमिकाष्ठानलो नाम रसोऽयं परिनिर्मितः ।
श्लैष्मिके श्लेष्मपित्ते च श्लेष्मवाते च शस्यते ॥ २१ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध हड़ताल, कौड़ीभस्म, शुद्ध मैनसिल, काला नोन, सोमराजी (वकुची), वायविडंग, दन्तिबीज, शुद्ध जमालगोटा, शुद्ध शिलाजीत, शुद्ध सोहागा और चीता, ये सभी द्रव्य एक-एक कर्ष ले । पहले पारे-गंधककी कज्जली कर ले । फिर वाकी चीजें मिला और सेंहुड़के दूधमें घोंटकर मटर वरावर गोलियें वना ले । यही कृमिकाष्ठानल रस है । कफज, कफ-पित्तज एवं श्लेष्म-वातज कृमिरोगोंपर यह रस विशेष काम करता है ॥१९–२१॥

लाक्षादि वटी

लाक्षाभल्लातश्रीवासश्वेतापराजिताशिफाः ।
अर्जुनस्य फलं पुष्पं विडङ्गं सर्जगुग्गुलू ॥ २२ ॥

एभिः कीटाश्च शाम्यन्ते धूपितैश्च गृहे सदा।
भुजङ्गा मूषिका दंशा घुणा लूताश्च मत्कुणाः।
दूरादेव पलायन्ते क्लिन्नकीटाश्च ये स्मृताः॥ २३॥

लाह, भेलावाँ, विरोजा, श्वेत अपराजिता (विष्णुक्रांता) की जड़, अर्जुन वृक्षका फल तथा फूल, वायविडंग, राल और गूगुल, ये द्रव्य समभाग लेकर पीस डाले। यदि सदा घरमें इसकी धूप दी जाय तो साँप, चूहे, मच्छड़, घुन, मकड़ी, खटमल और सील (गीली) जगहोंपर होनेवाले कीड़े दूर भाग जाते हैं॥ २२॥ २३॥

कृमिहर रस

शुद्धसूतमिन्द्रयवमजमोदां मनःशिलाम्।
पलाशबीजं गन्धञ्च देवदाल्या द्रवैर्दिनम्॥ २४॥
सम्मर्द्य भक्षयेन्नित्यं शालपर्णीरसैः सह।
सितायुक्तं पिवेच्चानु क्रिमिपातो भवत्यलम्॥ २५॥

शुद्ध पारा, इन्द्रजौ, अजवायन, शुद्ध मैनसिल और पलाशके बीज, ये द्रव्य समान भाग लेकर देवदाली (बाँदा) के रसमें दिन भर घोंटे। यही कृमिहर रस है। यदि नित्य शालपर्णीके रसमें मिश्री मिलाकर उसीके साथ इस रसको पिये तो पेटके कीड़े अवश्य गिर जाते हैं॥२४॥२५॥

विडंग लौह

रसं गन्धञ्च मरिचं जातीफललवङ्गकम्।
शुण्ठी टङ्गं कणा तालं प्रत्येकं भागसम्मितम्॥ २६॥
सर्वचूर्णसमं लौहं विडंगं सर्वतुल्यकम्।
लौहं विडङ्गकं नाम कोष्ठस्य क्रिमिनाशनम्॥ २७॥
दुर्नाम ह्यरुचिञ्चैव मन्दाग्निञ्च विषूचिकाम्।
शोथं शूलं ज्वरं हिक्कां श्वासं कासं विनाशयेत्॥ २८॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, काली मिर्च, जायफल, लौंग, सोंठ, शुद्ध सोहागा, पिप्पली, शुद्ध हरताल, ये चीजें समभाग और सबके बराबर वायविडंग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर बाकी चीजें मिलाकर पीस डाले। इसका सेवन करनेसे कोष्ठके कृमि नष्ट हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त अर्श, अरुचि,

मन्दाग्नि विसूचिका, शोथ, शूल, ज्वर, हिचकी, श्वास और कास, ये रोग भी इससे निवृत्त हो जाते हैं ॥२६-२८॥

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे 'रसायनी'भाषाटीकायां कृमिरोगचिकित्सा समाप्ता।

अथ पाण्डु-कामलाचिकित्सा।

निशालौह

लौहचूर्णं निशायुग्मं त्रिफलारोहिणीयुतम्।
प्रलिह्यान्मधुसर्पिर्भ्यां कामलापाण्डुशान्तये ॥ १ ॥

दारु हल्दी, हल्दी, त्रिफला और कुटकी ये चीजें समान भाग और सबके बराबर लौहभस्म लेकर सबको एक साथ घोंट डाले। यदि घी तथा मधुके साथ इसका सेवन करे तो कामला और पाण्डु रोग शान्त हो जाता है ॥१॥

धात्रीलौह

धात्री लौहरजो व्योषनिशाक्षौद्राज्यशर्कराः।
भक्षणाच्च विनिघ्नन्ति कामलाञ्च हलीमकम् ॥ २ ॥

आँवला, लौहभस्म, सोंठ, मिर्च तथा पिप्पलीका चूर्ण, मधु, घी और चीनी ये चीजें समभाग लेकर पीस डाले। इसका सेवन करनेसे कामला तथा हलीमक रोग दूर हो जाता है ॥२॥

पञ्चानन वटी

शुद्धसूतं तथा गन्धं मृतताम्राभ्रगुग्गुलू।
जैपालबीजं तुल्यांशं घृतेन वटकीकृतम् ॥ ३ ॥
भक्षयेद्बदरास्थ्याभं शोथपाण्डुप्रशान्तये।
पञ्चाननवटी ख्याता पाण्डुरोगकुलान्तिका ॥ ४ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, ताम्रभस्म, शुद्ध गूगुल और शुद्ध जमाल-गोटेके बीज ये चीजें समभाग लेकर एक साथ घोंटे और बेरकी गुठलीके बराबर गोली बना ले। इसका सेवन करनेसे शोथ और पाण्डु रोग नष्ट हो जाता है। यह पञ्चानन वटी पाण्डुरोगोंका शमन कर देती है ॥३॥४॥

प्राणवल्लभ रस

हिंगूलसम्भवं सूतं काश्मीरोद्भवगन्धकम् ।
लोह ताम्रं वराटञ्च तुत्थं हिङ्गुफलत्रिकम् ॥ ५ ॥
स्नुहीक्षीरं यवक्षारो जैपालो दन्तिक त्रिवृत् ।
प्रत्येकं शाणभागन्तु छागीक्षीरेण पेषयेत् ॥ ६ ॥
चतुर्गुञ्जां वटीं खादेद्वारिणा मधुना सह ।
प्राणवल्लभनामायं गहनानन्दभाषितः ॥ ७ ॥
श्लेष्मदोषं समालोक्य युक्त्या च त्रुटिवर्द्धनम् ।
निहन्ति कामलां पाण्डुमानाहं श्लीपदं तथा ॥ ८ ॥
गलगण्डं गण्डमालां व्रणानि च हलीमकम् ।
शोथशूलमुरुस्तम्भं संग्रहग्रहणीं जयेत् ॥ ९ ॥
वान्तिं मूर्च्छां भ्रमिं दाहं कासं श्वासं गलग्रहम् ।
असाध्यं सन्निपातञ्च जीर्णज्वरमरोचकम् ॥ १० ॥
वातरक्तं तथा शोषं कण्डूं विस्फोटकापचाम् ।
नातः परतरं किञ्चित्कामलार्त्तिरुजापहम् ॥ ११ ॥

सिंगरिफसे निकला हुआ पारा, काश्मीरी गंधक, लौहभस्म, ताम्रभस्म, कौड़ीभस्म, शुद्ध तूतिया, हींग, त्रिफला, सेंहुड़का दूध, जवाखार, शुद्ध जमालगोंटा, दन्तीमूल, निसोथ, ये सभी चीजें एक शाण लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे । फिर सबको एक साथ बकरीके दूधमें घोंटकर चार-चार रत्तीकी गोलियें बना ले । गहनानन्दके बताये इस प्राणवल्लभ रसको मधु और जलमें मिलाकर सेवन करे । कफदोषकी कमी-बेशी देखकर इस रसकी मात्रा भी कम-बेश की जा सकती है । इससे कामला, पाण्डु, आनाह, श्लीपद, गलगंड, गण्डमाला, व्रण, हलीमक, शोथ, ऊरुस्तम्भ, संग्रहग्रहणी, वमन, मूर्च्छा, भ्रमि (चक्कर) दाह, कास, श्वास, गलग्रह, असाध्य सन्निपात, जीर्णज्वर, अरुचि, वातरक्त, शोथ, खुजली, विस्फोटक और अपची आदि रोग दूर हो जाते हैं । कामलारोगको दूर करनेके लिये इससे बढ़कर और कोई औषध है ही नहीं ॥ ५–११ ॥

कामेश्वर रस

पलं सूतं पलं गन्धं पथ्याचित्रकयोः पलम्।
मुस्तैलापत्रकाणाञ्च प्रति सार्द्धपलं क्षिपेत्॥ १२॥
त्र्यूषणं पिप्पलीमूलं विषञ्चापि पलं न्यसेत्।
नागकेशरकं कर्षमेरण्डस्य पलं तथा॥ १३॥
पुरातनगुडेनैव तुल्येनैव विमिश्रयेत्।
मर्दयेत्कनकद्रावैर्भावयेच्च घृतान्विताम्॥ १४॥
वटिकां बदरास्थ्याभां कारयेद्भक्षयेन्निशि।
पाण्डुरोगहरः सोऽयं रसः कामेश्वरः स्वयम्॥ १५॥

शुद्ध पारा १ पल, शुद्ध गंधक १ पल, हड़ और चीतेका चूर्ण एक-एक पल, मोथा, इलायची और तेजपातका चूर्ण डेढ़-डेढ़ पल, सोंठ, मिर्च, पिप्पली-मूल और शुद्ध विष ये वस्तुयें एक-एक पल, नागकेशर एक पल तथा एरण्डका चूर्ण एक कर्ष ले। पहले पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सबको एक साथ घोंटकर सबके बराबर पुराना गुड़ मिलावे। तब धतूरेके रस और घीमें घोंटकर बेरकी गुठली जैसी गोलियें बना ले और रातके समय इसका सेवन करे। यह कामेश्वर रस पांडुरोगका नाशक है॥ १२—१५॥

त्रिकत्रयाद्य लौह

पलं लौहस्य किट्टस्य पलं गव्यस्य सर्पिषः।
सितायाश्च पलञ्चैकं क्षौद्रस्यापि पलं तथा॥ १६॥
तोलकं लौहकान्तस्य त्रिकत्रयसुभावितम्।
ततः पात्रे विधातव्यं लौहे वा मृन्मये तथा॥ १७॥
हविषा भावितञ्चापि रौद्रे च शिशिरे तथा।
भोजनादौ तथा मध्ये चान्ते चापि प्रदापयेत्॥ १८॥
अनुपानं प्रदातव्यं बुद्ध्वा दोषबलाबलम्।
कामलां पाण्डुरोगञ्च सुदारुणहलीमकम्।
निहन्ति नात्र संदेहो भास्करस्तिमिरं यथा॥ १६॥

लौहकिट्ट (मण्डूर) भस्म, गौका घी, मिश्री, मधु, त्रिफला, त्रिकटु, वाय-विडंग, मोथा तथा चीता एक-एक पल इन तीनों त्रिकोंको लोहे तथा मिट्टीके

पात्रमें घीसे पुनः पुनः भावित करके धूप और छायामें सुखायी हुई कान्तलौह भस्म तोला भर मिलावे। फिर सबको एकमें घोंटकर रख ले। भोजनके आदि, अन्त अथवा मध्यमें दोषका बलाबल देखकर उचित अनुपानके साथ सेवन करे तो कामला, पाण्डु और दारुण हलीमक रोग दूर हो जाते हैं। इन रोगोंको यह उसी तरह नष्ट करता है, जैसे सूर्य अन्धकारको नष्ट करते हैं॥ १६–१६॥

विडंगादि लौह

त्रिडङ्गमुस्तं त्रिफलादेवदारुषड्षणैः।
तुल्यमात्रमयश्चूर्णं गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत्॥ २०॥
तैरक्षमात्रां गुटिकां कृत्वा खादेद्दिने दिने।
कामलापाण्डुरोगार्त्तः सुखमाप्यतेऽचिरात्॥ २१॥

वायविडंग, मोथा, त्रिफला, देवदारु, षड्षण (सोंठ, पिप्पली, पिपरामूल, चव्य, चीता और काली मिर्च) इनमेंसे हर एक चीजका चूर्ण समभाग और इन सबके बराबर लौहभस्म ले। फिर इन सबका जो वजन हो, उसका अठगुना गोमूत्र डालकर आगपर चढ़ा दे। पककर गाढ़ा हो जानेपर अक्ष-अक्षभरकी गोलियें बना ले। इसका प्रतिदिन सेवन करनेसे कामला और पाण्डुरोग दूर होकर शरीर सुखी हो जाता है॥ २०॥ २१॥

अन्य विधि

विडङ्गत्रिफलाव्योषं शुद्धलौहन्तु तत्समम्।
पुरातनगुडेनाथ लेहयेद्दिनसप्तकम्।
श्वयथुं नाशयेच्छीघ्रं पाण्डुरोगं हलीमकम्॥ २२॥

वायविडंग, त्रिफला, व्योष सोंठ, मिर्च, पिप्पली) ये द्रव्यं समभाग और सबके बराबर लौहभस्म लेकर एकमें घोट डाले। यदि सात दिनोंतक पुराने गुड़के साथ इसका सेवन किया जाय तो जन, पाण्डु और हलीकम रोग निवृत्त हो जाता है॥ २२॥

त्रैलोक्यसुन्दर रस

मानञ्चैकं ततः सूतं षडभ्रं वसुलौहकम्।
गन्धकं त्रिफलाव्योषचूर्णं मोचरसस्य च॥ २३॥

मुपली चामृतासत्त्वं प्रत्येकं पञ्चभागिकम्।
भावयेत्सर्वमेकत्र त्रिफलानां कषायके ॥ २४ ॥
भावना विंशतिर्देया दशरात्रं सुभावना।
शिग्रुचित्रकमूलाभ्यामष्टधा च पृथक् पृथक् ॥ २५ ॥
त्रैलोक्यसुन्दरो नाम रसो निष्कमितो हितः।
सितया च समं क्षौद्रैः शोथपाण्डुक्षयापहः।
ज्वरातिसारसंयुक्तसर्वोपद्रवनाशनः ॥ २६ ॥

शुद्ध पारा १ भाग, अभ्रकभस्म ६ भाग, लौहभस्म ८ भाग, शुद्ध गंधक, व्योष (सोंठ, मिर्च, पिप्पली) मोचरस, मुसली और गुरुचका सत ये वस्तुयें पाँच-पाँच भाग ले। सर्वप्रथम पारे-गंधककी कज्जली कर ले। तदनन्तर उपर्युक्त अन्य वस्तुयें मिलाकर घोंटे और घुँट जानेपर त्रिफलाके काढ़ेमें बीस बार और सहिंजन तथा चीतेकी जड़के क्वाथमें आठ बार भावना दे। यही त्रैलोक्यसुन्दर रस है। यदि मिश्री और शहदके साथ इसकी निष्क-भर मात्राका सेवन करे तो सूजन, पाण्डु, क्षय एवं ज्वरातिसार समेत सभी प्रकारके उपद्रव शान्त हो जाते हैं ॥ २३–२६ ॥

दार्व्यादि लौह

दार्वीसत्रिफलाव्योषविडङ्गान्ययसो रजः।
मधुसर्पिर्युतं लिह्यात्कामलापाण्डुरोगवान् ॥ २७ ॥
शालिषष्टिकगोधूमयवमुद्गादयो हिताः।
रसाश्च जाङ्गलभवा मधुराः पाण्डुरोगिणाम् ॥ २८ ॥

दारुहल्दी, त्रिफला, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, वायविडंग, ये द्रव्य समभाग और सबके बराबर लौहभस्म लेकर भलीभाँति मर्दन करे। मधु और घीके साथ इसका सेवन करनेसे कामला और पाण्डुरोग दूर हो जाते हैं। इसमें शालि (अगहनी) तथा साठीके चावल, जौ और मूँग ये अन्न तथा जंगली पशु-पक्षियोंका मांसरस पथ्य है ॥ २७ ॥ २८ ॥

चन्द्रसूर्यात्मक रस

सूतकं गन्धकं लौहमभ्रकञ्च पलं पलम्।
शंखं वराटकञ्चैव प्रत्येकार्द्धपलं हरेत् ॥ २९ ॥

गोक्षुरबीजचूर्णञ्च पलैकं तत्र दीयते।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं बाष्पयंत्रे विभावयेत् ॥ ३० ॥
पटोलः पर्पटी भार्गी विदारी शतपुष्पिका।
दन्ती वासा कुण्डली च काकमाचीन्द्रवारुणी ॥ ३१ ॥
वर्षाभूः केशराजश्च शालिञ्ची द्रोणपुष्पिका।
प्रत्येकार्द्धपलैर्द्रावैर्भावयित्वा वटीं चरेत् ॥ ३२ ॥
चतुर्दशवटीं खादेच्छागीदुग्धानुपानतः।
गहनानन्दनाथोक्तश्चन्द्रसूर्य्यात्मको रसः ॥ ३३ ॥
हलीमकं निहन्त्याशु पाण्डुरोगं सकामलम्।
जीर्णज्वरं सविषमम्लपित्तमरोचकम् ॥ ३४ ॥
शूलं प्लीहोदरानाहमष्ठीलागुल्मविद्रधीन्।
शोथं मन्दानलं हिक्कां कासं श्वासं वमिं भ्रमिम् ॥ ३५ ॥
भगन्दरोपदंशौ च दद्रुकण्डुव्रणापचीः।
ऊरुस्तम्भश्चामवातं दाहं तृष्णां कटीग्रहम् ॥ ३६ ॥
युक्तो मण्डेन मद्येन मुद्गयूषेण वारिणा।
गुडूचीत्रिफलावासाक्काथनीरेण वा क्वचित् ॥ ३७ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौहभस्म, ये तीनों एक-एक पल लेकर गोखरूके बीजका चूर्ण एक पल डाले। इन सबको इकट्ठा करके पीस ले। फिर इन्हें वाष्पयंत्र (तप्त खरल) में डालकर परवलकी पत्ती पित्तपापड़ा, भार्ङ्गी, विदारीकन्द, सौंफ, दन्ती, अडूसा, गुरुच, मकोय, इन्द्रायण, पुनर्नवा, केशराज तथा गूमा, इनका स्वरस आधा-आधा पल लेकर इसीमें भावना दे। गाढ़ा होनेपर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बनाकर रख ले। यदि बकरीके दूधमें इसकी १४ गोलीका सेवन करे तो हलीमक, पाण्डु तथा कामला रोग शीघ्र नष्ट हो जाता है। श्रीगहनानन्दने यह रस बनाया है। उपर्युक्त रोगोंके अतिरिक्त जीर्णज्वर, अम्लपित्त, अरोचक, शूल, प्लीहा, उदररोग, आनाह, अष्ठीला, गुल्म, विद्रधि, शोथ, मन्दाग्नि, हिचकी, कास, स्वास, वमन, भ्रम, उपदंश, दद्रु, कंडु (खुजली) अपची, ऊरुस्तम्भ, आमवात, दाह, तृष्णा और कटीग्रह रोग निवृत्त हो जाते हैं। मण्ड (माँड़), मदिरा, मूँगका रस, जल, गिलोयका

स्वरस, त्रिफलाका रस एवं अडूसाका रस तथा क्वाथ ये इसके अनुपान हैं ॥ २६—३७ ॥

पांडुसूदन रस

रसं गन्धं मृतं ताम्रं जयपालञ्च गुग्गुलम् ।
समांशमाज्यसंयुक्तां गुटिकां कारयेद्भिषक् ॥ ३८ ॥
एकैकां भक्षयेन्नित्यं पाण्डुशोथप्रशान्तये ।
शीतलञ्च जलं चाम्लं वर्जयेत्पाण्डुसूदने ॥ ३९ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, ताम्रभस्म, शुद्ध जमालगोटा तथा शुद्ध गूगुल ये सभी चीजें समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सब वस्तुयें एक साथ घीमें घोंटकर एक-एक रत्तीकी गोलियें बना ले। यदि नित्य इसकी एक-एक गोलीका सेवन करे तो पाण्डु तथा शोथरोग निवृत्त हो जाता है। हाँ, इसका सेवन करनेवाला रोगी ठंढा पानी और खटाई त्याग दे ॥ ३८ ॥ ३६ ॥

मण्डूरवज्र वटक

पञ्चकोलं समरिचं देवदारु फलत्रिकम् ।
विडङ्गमुस्तयुक्ताश्च भागास्त्रिपलसम्मिताः ॥ ४० ॥
यावन्त्येतानि चूर्णानि मण्डूरं द्विगुणं ततः ।
पक्त्वा चाष्टगुणे मूत्रे घनीभूते तदुद्धरेत् ॥ ४१ ॥
ततोऽक्षमात्रान्वटकान् पिबेत्तक्रेण तक्रभुक् ।
पांडुरोगं जयत्याशु मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥ ४२ ॥
अर्शांसि ग्रहणीदोषमूरुस्तम्भमथापि वा ।
क्रिमिं प्लीहानमानाहं गलरोगञ्च नाशयेत् ।
मण्डूरवज्रनामायं रोगानीकप्रणाशनः ॥ ४३ ॥

पंचकोल (पिप्पली, पिपरामूल, चव्य, चीता और सोंठ), काली मिर्च, देवदारु, त्रिफला (हर्रा, वहेड़ा, आँवला) बायबिडंग, मोथा इनमेंसे हर एक चीज तीन-तीन पल ले। सबका जितना वजन हो उसका दूना मंडूरभस्म लेकर अठगुने गोमूत्रमें पकावे। पककर गाढ़ा हो जानेपर इसमें उपर्युक्त पंचकोल आदिका चूर्ण मिला दे। अब इसे भलीभाँति घोंटकर एक-एक अक्षकी गोलियें बना ले। मंठेके साथ इसे पीनेसे पाण्डु, मन्दाग्नि, अरोचक, अर्श,

ग्रहणी, ऊरुस्तम्भ, क्रिमिरोग, प्लीहा, आनाह और गलरोग नष्ट हो जाते हैं। यह मंडूरवज्र वटक विविध प्रकारके रोग नष्ट करता है ॥ ४०—४३ ॥

लघ्वानन्द रस

पारदं गंधकं लौहं विषमभ्रकमेव च।
समांशं मरिचञ्चाष्टौ टङ्कणञ्च चतुर्गुणम् ॥ ४४ ॥
भृंगराजरसैश्चाम्लवेतसैः सप्तभावना।
गुञ्जाद्वयं पर्णखण्डे खादेत्सायं निहन्ति च ॥ ४५ ॥
पाण्डुतामरुचिञ्चैव मन्दाग्निं ग्रहणीं ज्वरम्।
वातश्लेष्मभवान्रोगान् जयेदचिरसेवनात् ॥ ४६ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौहभस्म, शुद्ध विष, अभ्रकभस्म, ये वस्तुयें समभाग, काली मिर्च आठ भाग और शुद्ध सोहागा चार भाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। तब बाकी चीजें एकमें मिलाकर भलीभाँति घोंटे। तदनन्तर भाँगरे तथा अमिलवेतके रसमें एक-एक करके सात भावना देकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। यदि प्रतिदिन सायंकालके समय पानके पत्तेपर रखकर इसकी एक गोलीका सेवन करे तो पाण्डु, अरुचि, मन्दाग्नि, ग्रहणी, ज्वर और वातश्लेष्म रोग दूर हो जाता है ॥ ४४—४६ ॥

सम्मोह लौह

त्रिकटुत्रिफला वह्निविडंगे लौहमभ्रकम्।
एतानि समभागानि घृतेन वटिकां कुरु ॥ ४७ ॥
कामलां पाण्डरोगञ्च हृद्रोगं शोथमेव च।
भगन्दरं कोष्ठक्रिमिं मन्दानलमरोचकम् ॥ ४८ ॥
तान्सर्वान्नाशयेदाशु बलवर्णाग्निवर्द्धनः।
सम्मोहलौहनामाऽयं पाण्डुरोगे च पूजितः ॥ ४९ ॥

त्रिकटु अर्थात् सोंठ, मिर्च, पिप्पली, त्रिफला, चीता, वायविडंग, लौहभस्म और अभ्रकभस्म ये द्रव्य समभाग एकत्रित करे और घीमें घोंटकर गोलियें बना ले। इसका सेवन करनेसे कामला, पाण्डु, हृदयरोग, शोथ, भगन्दर, कोष्ठक्रिमि, मन्दाग्नि और अरुचि रोग दूर होता है। बल वर्ण (कान्ति)

तथा जठरानल उद्दीप्त हो जाता है। यह पाण्डुरोगको नष्ट करनेमें विशेष उपयोगी है ॥ ४७–४९ ॥

त्र्यूषणादि मण्डूर

स्विन्नमष्टगुणे मूत्रे लौहकिट्टं सुशोधितम्।
पाकान्ते त्र्यूषणं वह्निवरादार्वीसुरद्रुमान् ॥ ५० ॥
विडङ्गबीजचूर्णञ्च मुस्तं किट्टसमं क्षिपेत्।
प्रातः कर्षं भजेदस्य जीर्णे तक्रौदनं भजेत् ॥ ५१ ॥
हलीमकं पाण्डुरोगमर्शांसि श्वयथुं तथा।
ऊरुस्तम्भं जयेदेतत्कामलां कुम्भकामलम् ॥ ५२ ॥

एक भाग शुद्ध मण्डूर लेकर अठगुने गोमूत्रमें स्वेदन करे। पक जानेपर सोंठ, मिर्च, पिप्पली, चीता, हर्रा, बहेड़ा, आँवला, दारुहल्दी, देवदारु, वायविडंग एवं मोथा इन द्रव्योंका चूर्ण एक-एक पल डालकर घोंटे। घुँट जानेपर एक-एक कर्षकी गोलियें बना ले। इस रसके हजम हो जानेपर मंठा-भात खाना चाहिए। यह रस हलीमक, पाण्डुरोग, अर्श, शोथ, ऊरुस्तम्भ, कामला तथा कुम्भकामला रोगको नष्ट कर देता है ॥ ५०–५२ ॥

कामलारोगकी अन्य औषधियाँ

पाण्डुरोगोदिता योगा घ्नन्ति ते कामलामपि।
त्रिफलाया गुडूच्या वा दार्व्या निम्बस्य वा रसः ॥ ५३ ॥
प्रातर्माक्षिकसंयुक्तः शीलितः कामलापहः ॥ ५४ ॥

पाण्डुरोगकी निवृत्तिके लिये जो योग ऊपर बतालाये गये हैं, वे कामला-को भी नष्ट करते हैं। त्रिफला, गुरुच, दारुहल्दी और नीमकी पत्ती, इन-मेंसे किसीका स्वरस यदि मधुके साथ नित्य प्रातःकाल सेवन करे तो कामला रोग नष्ट हो जाता है ॥ ५३ ॥ ५४ ॥

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे 'रसायनी' भाषाटीकायां पाण्डु-कामलाचिकित्सा समाप्ता।

अथ रक्तपित्तचिकित्सा।

अर्केश्वर रस

मृतार्कं मृतवङ्गञ्च मृताभ्रञ्च समाक्षिकम्।
अमृतास्वरसैर्भाव्यं पुटे त्रिःसप्तकं पचेत्॥ १॥
वासाक्षीरविदारीभ्याञ्चतुर्गुञ्जाप्रमाणतः।
भक्षणाद्विनिहन्त्याशु रक्तपितं सुदारुणम्॥ २॥

ताम्रभस्म, वंगभस्म, अभ्रकभस्म, स्वर्णमाक्षिकभस्म, ये सभी चीजें समभाग लेकर गुरुचके स्वरसमें तीन सप्ताह (२१ दिन) तक भावना दे। भावित हो जानेपर पुट दे। स्वांगशीतल होनेपर निकालकर घोंट ले। यदि अडूसाके स्वरस अथवा क्षीरविदारी कन्दके चूर्णमें चार रत्ती इस रसका सेवन किया जाय तो भयानक रक्तपित्त रोग भी तुरन्त दूर हो जाता है॥ १॥ २॥

सुधानिधि रस

सूतं गन्धं माक्षिकञ्चैव लौहं सर्वं घृष्ट्वा त्रैफलेनोदकेन।
लौहे पात्रे गोमयैः पाचयित्वा रात्रौ दद्याद्रक्तपित्तप्रशान्त्यै॥ ३॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, स्वर्णमाक्षिकभस्म, लौहभस्म ये द्रव्य समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर इन सबको एक लोहेके पात्रमें डालकर त्रिफलाके क्वाथ अथवा गोमूत्रके साथ उपलोंकी आँच देकर पकावे। पक जाने-पर गोली बना ले। रात्रिके समय इसका सेवन करनेसे रक्तपित्त रोग निवृत्त हो जाता है॥ ३॥

आमलाद्य लौह

आमलापिप्पलीचूर्णं तुल्यया सितया सह।
रक्तपित्तहरं लौहं योगराजमिदं स्मृतम्॥ ४॥
वृष्याग्निदीपनं वल्यमम्लपित्तविनाशनम्।
पित्तोत्थानपि वातोत्थान्निहन्ति विविधान्गदान्॥ ५॥

आमला, पिप्पली और मिश्रीका चूर्ण समभाग लेकर सबका समभाग लौहभस्म मिलावे। फिर सबको एकमें घोंटकर रख ले। यह लौह रक्तपित्त रोग हरनेमें योगराज माना गया है। यह वृष्य (वाजीकरण), अग्निका

उद्दीपक तथा अम्लपित्तविनाशक है। इसका सेवन करनेसे विविध भाँतिके वातज और पित्तज रोग निवृत्त हो जाते हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥

शतमूल्याद्य लौह

शतमूली सिताधान्यनागकेशरचन्दनैः।
त्रिकत्रयतिलैर्युक्तं लौहं सर्वगदापहम् ॥ ६ ॥
तृष्णादाहज्वरच्छर्दिरक्तपित्तविनाशनम् ।
रक्तपित्ते पिबेद्व्योमसहितं पर्पटीरसम् ॥ ७ ॥
वासाद्राक्षाऽभयानाञ्च क्वाथं वा शर्करान्वितम्।
योगवाहिरसान् सर्वान् रक्तपित्ते प्रयोजयेत् ॥ ८ ॥

शतावर, मिश्री, धनियाँ, नागकेशर, चन्दन, त्रिफला, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, मोथा, बायविडंग, चीता, तिल, इन सबका चूर्ण समभाग और सबका समभाग लौहभस्म लेकर सबको एकमें घोंट डाले और गोलियें बना ले। यह लौह सभी प्रकारके रोग दूर करता है। तृष्णा, दाह, ज्वर, वमन और रक्तपित्त, ये सब रोग इससे दूर भागते हैं। इसे अभ्रकभस्मके साथ पित्तपापड़ेके रस तथा अडूसा, मुनक्का एवं हड़के क्वाथमें चीनी मिलाकर देनेसे रक्तपित्त रोग नष्ट हो जाता है ॥ ६—८ ॥

रक्तपित्तान्तक रस

सूताभ्रं मुण्डतीक्ष्णञ्च माक्षिकं रसतालकम्।
गन्धकञ्च भवेत्तुल्यं यष्टिद्राक्षामृताद्रवैः ॥ ९ ॥
दिनैकं मर्दयेत्खल्ले सिताक्षौद्रसमन्वितम्।
माषमात्रं निहन्त्याशु रक्तपित्तं सुदारुणम्।
ज्वरं दाहं क्षतक्षीणं तृष्णाशोषमरोचकम् ॥ १० ॥
रसस्य द्विगुणं गन्धं माक्षिकञ्च शिलाजतु।

अभ्रकभस्म, मुण्डलौहभस्म, तीक्ष्णलौहभस्म, स्वर्णमाक्षिकभस्म, शुद्ध पारा, शुद्ध हड़ताल, शुद्ध गंधक, ये द्रव्य समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सब चीजें एकमें मिलाकर मुलैठी, मुनक्का तथा गुरुचके रस अथवा काढ़ेमें एक-एक दिन घोंटकर रखे। यदि एक मासा यह रस मधु और मिश्रीमें मिलाकर खाय तो दारुण रक्तपित्तरोगका भी शमन हो जाता है। ज्वर,

दाह, क्षतक्षीण, तृष्णा, शोथ तथा अरुचि रोगको भी यह निवृत्त करता है ॥ ९ ॥ १० ॥

रसामृत रस

गुडूचीं चन्दनं द्राक्षां मधुपुष्पञ्च धान्यकम् ॥ ११ ॥
कुटजस्य त्वचं बीजं धातकीं निम्बपत्रकम् ।
यष्टीमधुसमायुक्तं मधुशर्करयाऽन्वितम् ॥ १२ ॥
विधिना मर्दयित्वा तु कर्षमात्रन्तु भक्षयेत् ।
धारोष्णपयसा युक्तं प्रातरेव समुत्थितः ॥ १३ ॥
पित्तं तथाऽम्लपित्तञ्च रक्तपित्तं विशेषतः ।
निहन्ति सर्वदोषञ्च ज्वरं सर्वं न संशयः ।
रसामृतरसो नाम गहनानन्दभाषितः ॥ १४ ॥

शुद्ध पारा १ भाग और शुद्ध गंधक २ भाग लेकर कज्जली कर ले । फिर स्वर्णमाक्षिकभस्म, शुद्ध शिलाजीत, गुरुच, चन्दन, मुनक्का, महुआ, धनियाँ, कुटजकी छाल, इन्द्रजौ, धायके फूल, नीमकी पत्ती और मुलैठी इनका चूर्ण एक-एक भाग मिलाकर घोंटे । यदि प्रातःकाल मधु तथा मिश्रीके साथ कर्ष भर यह रस खाकर धारोष्ण दूध पी ले तो पित्त, अम्लपित्त, रक्तपित्त और सभी तरहके ज्वर नष्ट हो जाते हैं । श्रीगहनानन्दने इस रसामृत रसका अनुसंधान किया था ॥ ११–१४ ॥

खंडकूष्मांडक रस

कूष्माण्डकात्पलशतं सुस्विन्नं निष्कुलीकृतम् ।
पचेत्तप्ते घृतप्रस्थे शनैस्ताम्रमये दृढे ॥ १५ ॥
यदा मधुनिभः पाको न्यस्येत्खण्डशतं तदा ।
पिप्पलीशृंगवेराभ्यां द्वे पले जीरकस्य च ॥ १६ ॥
त्वगेलापत्रमरिचधान्यकानां पलार्द्धकम् ।
न्यस्येच्चूर्णीकृतं तत्र दर्व्या संघट्टयेन्मुहुः ॥ १७ ॥
तत्पक्वं स्थापयेद्भाण्डे दत्त्वा क्षौद्रं घृतार्द्धकम् ।
तद्यथाऽग्निबलं खादेद्रक्तपित्ती क्षतक्षयी ॥ १८ ॥

भली-भाँति पके पेठे (सफेद कुम्हड़े) को छील तथा बीज निकालकर

उसका गूदा जलमें डाले और आगपर चढ़ाकर तनिक देर उबाल ले। फिर उसे निकालकर रस निचोड़ दे। यह गूदा सौ पल ले और एक प्रस्थ घी किसी ताँबेके पात्रमें डालकर आगपर चढ़ा दे। पेठा घीमें पककर जब शहदके समान लाल हो जाय, तब उसमें १०० पल खाँड़ डाल दे। फिर पिप्पली, सोंठ, सफेद जीरा ये द्रव्य दो-दो पल और दालचीनी, इलायची, तेजपात, काली मिर्च तथा धनियाँ इनमेंसे हर एकका चूर्ण आधा-आधा पल डाल तथा कलछीसे चलाकर मिला दे। मिल जानेपर उतार ले। यह पाक तैयार हो जानेपर इसमें घीका आधा अर्थात् आधा प्रस्थ शहद मिला दे। अपनी पाचनशक्ति देखकर उचित मात्रामें यदि इसका सेवन किया जाय तो रक्तपित्त और क्षतक्षय रोग नष्ट हो जाता है ॥ १५–१८ ॥

शर्कराद्य लौह

शर्करातिलसंयुक्तं त्रिकत्रययुतन्त्वयः।
रक्तपित्तं निहन्त्याशु चाम्लपित्तहरं परम् ॥ १९ ॥

खाँड़, काला तिल, त्रिफला, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, वायविडंग, मोथा और चीता ये चीजें समभाग ले और सबके बराबर लौहभस्म मिलाकर घोंट डाले। यह लौह रक्तपित्त और अम्लपित्त रोगको शीघ्र नष्ट कर देता है ॥ १९ ॥

समशर्कर लौह

लौहाच्चतुर्गुणं क्षीरमाज्य द्विगुणमुत्तमम्।
चूर्णं पादन्तु वैडंगं दद्यान्मधुसिते समे ॥ २० ॥
ताम्रमयत्रे दृढे पक्त्वा स्थापयेद्घृतभाजने।
मापकादिक्रमेणैव भक्षयेद्विधिपूर्वकम् ॥ २१ ॥
अनुपान प्रयुञ्जीत नारिकेलोदकादिकम्।
रक्तपित्तं जयेत्तीव्रमम्लपित्तं क्षतक्षयम्।
प्रहृष्टकान्तिजननमायुष्यमुत्तमोत्तमम् ॥ २२ ॥

लौहभस्म १ भाग, गोदुग्ध ४ भाग और घी २ भाग लेकर एक तामेके पात्रमें पकावे। फिर चौथाई भाग वायविडंगका चूर्ण डाल तथा भलीभाँति मिलाकर उतार ले। तब इसमें १ भाग शहद और १ भाग मिश्री मिलाकर पुराने घीके बर्तनमें रखे। एक मासेसे उत्तरोत्तर बढ़ाता हुआ यदि इस लौह-

का सेवन करे और अनुपानमें नारियलका जल आदि पीवे तो तीव्र रक्तपित्त, अम्लपित्त और क्षतक्षय रोग दूर हो जाता है। यह लौह मन प्रसन्न रखता और कान्ति तथा आयु बढ़ाता है ॥ २०—२२ ॥

कपर्दक रस

मृतं वा मूर्च्छितं सूतं कार्पासकुसुमद्रवैः।
मर्दयेद्दिनमेकन्तु तेन पूर्य्या वराटिका ॥ २३ ॥
निरुध्य चान्धमूषायां भाण्डे रुद्ध्वा पुटे पचेत्।
उद्धृत्य चूर्णयेच्छ्लक्ष्णं मरिचैर्द्विगुणैः सह ॥ २४ ॥
गुञ्जामात्रं घृतेनैव भक्षयेत्प्रातरुत्थितः।
उदुम्बरं घृतञ्चैव ह्यनुपानं प्रयोजयेत्।
कपर्दकरसो नाम्ना रक्तपित्तविनाशनः ॥ २५ ॥
नीलोत्पलसिताक्षौद्रसंयुक्तं पद्मकेशरम्।
तण्डुलोदकपानेन रक्तपित्तं नियच्छति ॥ २६ ॥

मृत (रससिन्दूर) अथवा मूर्छित पारे एवं शुद्ध गंधकको कपासके फूलके रसमें दिनभर घोंटे। तब उसे कौड़ियोंमें भर तथा मुँह बन्द करके अन्धमूषामें रखे और वह मूषा एक पात्रमें रखकर पात्रका मुख बन्द कर दे। तदनन्तर इसमें आँच देकर पकावे। स्वांगशीतल होनेपर निकाले और कौड़ियों सहित वह रस घोंटे। जितना वह चूर्ण हो, उसका दूना काली मिर्चका चूर्ण मिलाकर फिर-से घोंटे। यदि एक रत्ती यह रस घीमें मिलाकर नित्य प्रातःकाल सेवन करे और अनुपानमें गूलर तथा घी खाय तो रक्तपित्त रोग नष्ट हो जाता है। नीलोत्पल, मिश्री और मधुके साथ कमलकी केसर खाय और अनुपानमें चावलके धोवनका पानी पिये तो भी रक्तपित्तरोग नष्ट हो जाता है ॥ २३—२६ ॥

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे 'रसायनी' भाषाटीकायां रक्तपित्तचिकित्सा समाप्ता।

अथ यक्ष्माचिकित्सा।

रास्नादि लौह

रास्नाऽश्वगन्धाकर्पूरभेकपर्णीशिलाह्वयैः।
त्रिकत्रयसमायुक्तैर्लौहं यक्ष्मान्तकृन्मतम् ॥ १ ॥

सर्वोपद्रवसंयुक्तमपि वैद्यविवर्जितम्।
हन्ति कासं स्वराघातं राजयक्ष्म क्षतक्षयम्।
बलवर्णाग्निपुष्टीनां वर्द्धनं दोषनाशनम्॥ २॥

रास्ना, असगंध, कपूर, मंडूकपर्णी (मंजीठ), शुद्ध शिलाजीत, त्रिफला, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, वायविडंग, मोथा, चीता इन सबका चूर्ण समभाग और सबके बराबर लौहभस्म लेकर घोंट ले। यही रास्नादि लौह है। इसका सेवन करनेसे सब उपद्रवोंसे युक्त यक्ष्मा और वैद्यों द्वारा परित्यक्त कास (खाँसी) दूर हो जाता है। यह स्वराघात, यक्ष्मा तथा क्षतक्षय रोगको नष्ट करता और बल, वर्ण, अग्नि एवं पुष्टिको बढ़ाता है। इससे सभी दोष दूर होते हैं॥ १॥ २॥

राजमृगाङ्क रस

रसभस्म त्रयो भागा भागैकं हेमभस्मकम्।
मृततारस्य भागैकं शिलागन्धकतालकम्॥ ३॥
प्रतिभागद्वयं शुद्धमेकीकृत्य विचूर्णयेत्।
वराटिका तेन पूर्य्या चाजाक्षीरेण टङ्कणम्॥ ४॥
पिष्ट्वा तेन मुखं रुद्ध्वा मृद्भाण्डे तां निरोधयेत्।
शुष्कं गजपुटे पाच्यं चूर्णयेत्स्वाङ्गशीतलम्॥ ५॥
दशपिप्पलिकैः क्षौद्रैर्मरिचैर्वा घृतान्वितैः।
गुञ्जाचतुष्टयञ्चास्य क्षयरोगप्रशान्तये॥ ६॥
सघृतैर्दापयेद्वाऽथ वातश्लेष्मभवे क्षये।
रसो राजमृगाङ्कोऽयं नानारोगनिषूदनः॥ ७॥

रससिन्दूर ३ भाग, स्वर्णभस्म, चाँदीभस्म, शुद्ध मैनसिल, शुद्ध गंधक, शुद्ध हड़ताल, ये द्रव्य एक-एक भाग लेकर पीस ले। फिर इन्हें कौड़ियोंमें भरकर बकरीके दूधमें पिसे सोहागेसे कौड़ियोंका मुख बन्द करके एक हाँड़ीमें रखे। कपड़मिट्टीसे इस हाँड़ीका मुख तथा संधियें बन्द करके सुखा ले और गजपुटकी आँच देकर पकावे। स्वांगशील होनेपर हाँड़ीमेंसे निकालकर कौड़ियों समेत घोंट डाले। क्षयरोगवाले रोगीको दस पिप्पलीके चूर्ण और शहदमें इस रसकी चार रत्ती मात्रा देनी चाहिए। काली मिर्चके चूर्ण और घीमें भी

इसे देनेसे क्षयरोग दूर होता है। यदि वायु तथा कफसे जायमान क्षयरोग हो तो केवल घीमें भी इसे दे सकते हैं। यह राजमृगाङ्करस विविध प्रकारके रोग मिटाता है ॥ ३–७ ॥

मृगाङ्क रस

स्याद्रसेन समं हेम मौक्तिकं द्विगुणं भवेत्।
गन्धकञ्च समं तेन रसतुल्यन्तु टङ्कणम् ॥ ८ ॥
तत्सर्वं गोलकं कृत्वा काञ्जिकेन च पेषयेत्।
भाण्डे लवणपूर्णेऽथ पचेद्यामचतुष्टयम् ॥ ९ ॥
मृगाङ्कसंज्ञको ज्ञेयो राजयक्ष्मनिकृन्तनः।
गुञ्जाचतुष्टयं चास्य मरिचैः सह भक्षयेत् ॥ १० ॥
पिप्पलीदशकैर्वापि मधुना सह लेहयेत्।
पथ्यन्तु लघुभिर्मांसैः प्रयोगेऽस्मिन्प्रयोजयेत् ॥ ११ ॥
व्यञ्जनैर्घृतपक्वैश्च नातिक्षारैरहिङ्गुभिः।
एलाऽजाजीमरीचैस्तु संस्कृतैरविदाहिभिः ॥ १२ ॥
वृन्ताकबिल्वतैलानि कारवेल्लञ्च वर्जयेत्।
स्त्रियं परिहरेद्दूरं कोपञ्चापि विवर्जयेत् ॥ १३ ॥

शुद्ध पारा १ भाग, स्वर्णभस्म १ भाग, मोतीभस्म २ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग और सोहागा १ भाग, इन सबको मिलाकर कांजीमें घोंटे। फिर गोला बनाकर नमक भरे हुए एक पात्रमें रखकर चार पहरकी आँच दे। स्वांगशीतल होनेपर निकालकर घोंट ले। यही राजयक्ष्माका नाशक मृगाङ्क रस है। काली मिर्चके चूर्ण या दस पिप्पलीके चूर्ण तथा मधुके साथ चार रत्ती इस रसका सेवन करे। इसका प्रयोग करते समय लघुमांस तथा ऐसे घृतपक्व पदार्थ जिनमें अधिक नमक या हींग न पड़ी हो और जो विदाही न हों—उनमें इलायची, जीरा और काली मिर्चका चूर्ण मिलाकर खानेको दे। बैगन, बेल और करैला न खाय और क्रोध न करे ॥ ८–१३ ॥

रत्नगर्भपोट्टली रस

रसं वज्रं हेम तारं नागं लौहञ्च ताम्रकम्।
तुल्यांशं मरिचं देयं मुक्ताविद्रुमसाक्षिकम् ॥ १४ ॥

शङ्खं तुत्थञ्च तुल्यांशं सप्ताहं चित्रकद्रवैः।
मर्दयित्वा विचूर्ण्याथ तेन पूर्य्या वराटिका॥ १५॥
टङ्कणं रविदुग्धेन मुखं लिप्त्वा निरोधयेत्।
मृद्भाण्डे तां निरुध्याथ सम्यग्गजपुटे पचेत्॥ १६॥
आदाय चूर्णयेत्सर्वं निर्गुण्ड्या सप्त भावयेत्।
आर्द्रकस्य रसैः सप्त चित्रकस्यैकविंशतिः॥ १७॥
द्रवैर्भाव्यं ततः शोष्यं देयं गुञ्जाचतुष्टयम्।
क्षयरोगं निहन्त्याशु साध्यासाध्यं न संशयः॥ १८॥
योजयेत्पिप्पलीक्षौद्रैः सघृतैर्मरिचैस्तथा।
महारोगाष्टके कासे श्वासे चैवातिसारके।
पोट्टलीरत्नगर्भोऽयं सर्वरोगकुलान्तकः॥ १९॥

शुद्ध पारा, हीरा, चाँदी, सोना, सीसा, लोहा और ताँबा इनकी भस्म, काली मिर्चका चूर्ण मोती, मूँगा, सोनामाखी और शंख इनकी भस्म तथा शुद्ध तूतिया, ये द्रव्य समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। तदनन्तर सब चीजें एकमें मिलाकर घोंटे और चीतेके काढ़ेमें भावना दे। अब इसे फिरसे कौड़ियोंमें भरकर मदारके दूधमें पीसे हुए सोहागेसे कौड़ियोंका मुख बन्द करके हाँड़ीमें रखे। कपड़मिट्टीसे हाँड़ीका मुख बन्द करके इसे गजपुटमें फूँक दे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर कौड़ियोंको घोंट डाले और सात बार सँभालूके रस, सात बार अदरखके रस और इक्कीस बार चीतेके रसमें भावना दे। इसके बाद इसे सुखा और घोंटकर रख ले। पिप्पलीके चूर्ण और मधुमें अथवा काली मिर्चके चूर्ण तथा घीमें चार रत्ती यह रस दे तो साध्य एवं असाध्य क्षयरोग भी नष्ट हो जाता है। इसके अतिरिक्त आठों प्रकारके महारोग, कास, श्वास और अतिसार, इन सभी रोगोंको यह रत्नगर्भपोट्टली रस दूर कर देता है॥ १४–१९॥

लोकेश्वरपोट्टली रस

रसस्य भस्मना हेम पादांशेन प्रकल्पयेत्।
द्विगुणं गन्धकं दत्त्वा मर्दयेच्चित्रकाम्बुना॥ २०॥

पूर्य्या वराटिका तेन टंगणेन निरुध्य च।
भाण्डे चूर्णप्रलिप्तेऽथ क्षिप्त्वा रुद्ध्वा च मृन्मये॥ २१॥
शोषयित्वा गजपुटे पुटेत्तु चापराह्निके।
स्वांगशीतं समुद्धृत्य चूर्णयित्वा तु विन्यसेत्॥ २२॥
एष लोकेश्वरो नाम वीर्य्यपुष्टिविवर्द्धनः।
गुञ्जाचतुष्टयं चास्य पिप्पलीमधुसंयुतम्॥ २३॥
मरिचैर्घृतयुक्तैश्च भक्षयेद्दिवसत्रयम्।
अगकार्श्येऽग्निमान्द्ये च कासे पित्ते क्षयेऽपि च॥ २४॥
लवणं वर्जयेत्तत्र साज्यं दधि च योजयेत्।
एकविंशद्दिनं यावत्सघृतं मरिचं पिबेत्।
पथ्यं मृगाङ्कवद्देयं शयीतोत्तानपादतः॥ २५॥

ये शुष्का विषमाशनैः क्षयरुजा व्याप्ताश्च येऽष्ठीलया
पाण्डुत्वेन हताश्च वैद्यविधिना ये चाधिना दुर्भगाः।
ये सप्ता निविधैर्ज्वरैः श्रममदोन्मादैः प्रमादं गता—
स्ते सर्वे विगतामया हतरुजाः स्युः पोट्टलीसेवनात्॥२६॥

रससिन्दूर १ भाग, स्वर्णभस्म चौथाई भाग और शुद्ध गंधक २ भाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सब चीजें एकमें मिलाकर घोंटे। घुँट जाने-पर गोला बना ले और चीतेके क्वाथमें भावना दे। फिर इसे घोंटकर कौड़ियों-में भरकर सोहागेसे कौड़ियोंका मुख बन्द कर दे। फिर एक मिट्टीकी हँड़िया लेकर उसके भीतर पेटमें चूना लीप दे। अब उसीमें कौड़ियें भरकर कपड़मिट्टी-से संधियें बन्द कर दे और धूपमें सुखा ले। तब गजपुटकी आँच दे। स्वांग-शीतल होनेपर निकालकर कौड़ियों समेत पीस ले। यह लोकेश्वर पोट्टली रस वीर्य और पुष्टिवर्धक है। तीन दिन तक पिप्पली, मधु, काली मिर्चके चूर्ण और घीमें चार रत्ती मात्राका सेवन करनेसे अंगोंकी कृशता, मन्दाग्नि, कास, पित्त एवं क्षयरोग दूर हो जाता है। इसका सेवन करते समय नमक त्याग दे और घृतमिश्रित दहीका उपयोग करे। २१ दिनोंतक काली मिर्चका चूर्ण मिलाकर घी पिये। पथ्य मृगाङ्क रसमें बताया हुआ ले और रोगी सदा सीधा पैर करके उतान सोये। विषम भोजनके कारण शुष्क, क्षयरोगके रोगी, अष्ठीला रोगसे

दुखी, पाण्डुरोगके सताये, चिन्ता-शोक आदि मानसिक क्लेशोंसे कुरूप, विविध प्रकारके ज्वरोंसे सन्तप्त और श्रम, मद एवं उन्मादसे उन्मत्त रोगी इस लोकेश्वर पोट्टली रसका सेवन करनेसे नीरोग हो जाते हैं और उनकी सब पीड़ायें दूर हो जाती हैं॥ २०–२६ ॥

कनकसुन्दर रस

रसस्य तुर्यभागेन हेमभस्म प्रयोजयेत्।
मनःशिला गन्धकञ्च तुत्थं माक्षिकतालकम्॥ २७॥
विषं टङ्कणकं सर्वं रसतुल्यं प्रदापयेत्।
मर्दयेत्सर्वमेकत्र खल्वपात्रे च निर्मले॥ २८॥
जयन्ताभृङ्गराजोत्थैः पाठाया वासकस्य च।
अगस्तिलाङ्गलाग्नीनां स्वरसैश्च पृथक् पृथक्॥ २९॥
भावयित्वा विशोष्याथ पुनश्चार्द्रकवारिणा।
सप्तधा भावयित्वा च रसः कनकसुन्दरः॥ ३०॥
गुञ्जाद्वयं त्रयं वाऽस्य राजयक्ष्मप्रशान्तये।
मधुना पिप्पलीभिर्वा मरिचैर्वा घृतान्वितम्॥ ३१॥
सन्निपाते प्रदातव्यमार्द्रकस्य रसेन वै।
जयपालरजोभिर्वा गुल्मिने शूलरोगिणे॥ ३२॥
अम्लवर्ज्जं चरेत्पथ्यं वल्यं हृद्यं रसायनम्।
वर्ज्जयेल्लवणं हिङ्गु तक्रं दधि विदाहि यत्॥ ३३॥

शुद्ध मैनसिल, शुद्ध गंधक, शुद्ध तूतिया, स्वर्णमाक्षिकभस्म, शुद्ध हड़ताल, शुद्ध विष, शुद्ध सोहागा, ये सभी चीजें एक-एक भाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सबको एकमें मिलाकर घोंटे। घुँट जानेपर गोला बना ले और इस गोलेको लेकर जयन्ती, भँगरा, पाढ़, अड्सा, अगस्त्य, इनमेंसे प्रत्येक द्रव्यके रसमें भावना दे। फिर इसे सुखाकर अदरखके रसमें सात बार भावना दे और सूख जानेपर घोंटकर रख ले। यही कनकसुन्दर रस है। मधु, पिप्पली, काली मिर्चके चूर्ण और घृतमें यदि दो या तीन रत्ती इस रसका सेवन करे तो राजयक्ष्मा रोग निवृत्त हो जाता है। सन्निपातके रोगीको अदरखके रस और गुल्म एवं शूलरोगके रोगीको शुद्ध जमालगोटेके चूर्णमें इसे दे।

इस रसका सेवन करते समय खटाई त्यागकर ऐसी चीजें खाय जो बलदायक, हृदयग्राही और रसायन हों। नमक, हींग, मंठा, दही और विशेष दाहकारी वस्तुयें सर्वथा छोड़ दे ॥ २७–३३ ॥

हेमगर्भपोट्टली रस

रसभस्म त्रयो भागा भागैकं हेमभस्मकम्।
मृतताम्रस्य भागैकं भागैकं गन्धकस्य च॥ ३४॥
मर्दयेच्चित्रकद्रावैर्द्दियामान्ते समुद्धरेत्।
पूर्य्या वराटिका तेन टङ्कणेन विलेपयेत्॥ ३५॥
वराटीं पूरयेद्भांडे रुद्ध्वा गजपुटे पचेत्।
विचूर्णयेत्स्वाङ्गशीते पोट्टलीं हेमगर्भिकाम्।
मृगाङ्कवच्चतुर्गुञ्जाभक्षणाद्राजयक्ष्मनुत्॥ ३६॥

रससिन्दूर ३ भाग, स्वर्णभस्म १ भाग, ताम्रभस्म १ भाग, शुद्ध गंधक १ भाग, ये सब चीजें एकमें मिलाकर चीतेके रसमें २ पहर तक घोंटे। फिर इसको पीली कौड़ियोंमें भरकर सोहागेसे कौड़ीका मुख बन्द कर दे। इन कौड़ियोंको एक मिट्टीके बर्तनमें रखकर कपड़मिट्टीसे पात्रका मुख और संधियें बन्द कर दे। फिर सुखाकर इसे गजपुटमें फूँक दे। स्वांगशीतल होनेपर निकालकर उसे कौड़ियों समेत घोंट डाले। यही हेमगर्भपोट्टली रस है। मृगाङ्कके समान ही नित्य यदि चार रत्ती इस रसका सेवन करे तो राजयक्ष्मा दूर हो जाता है॥ ३४–३६॥

सर्वाङ्गसुन्दर रस

गन्धो रसश्च तुल्यांशं द्वौ भागौ टङ्कणस्य च।
मौक्तिकं विद्रुमं शङ्खभस्म देयं समांशिकम्॥ ३७॥
हेमभस्मार्द्धभागञ्च सर्वं खल्ले विमर्दयेत्।
निम्बुद्रवेण सम्पिष्य पिण्डिकां कारयेत्ततः॥ ३८॥
पश्चाद्गजपुटं दत्त्वा सुशीतञ्च समुद्धरेत्।
हेमभस्मसमं तीक्ष्णं तीक्ष्णार्द्धं दरदं मतम्॥ ३९॥
एकीकृत्य समस्तानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत्।
ततः पूजां प्रकुर्वीत रसस्य दिवसे शुभे॥ ४०॥

सर्वाङ्गसुन्दरो ह्येष राजयक्ष्मनिकृन्तनः ।
वातपित्तज्वरे घोरे सन्निपाते सुदारुणे ॥ ४१ ॥
अर्शःसु ग्रहणीदोषे मेहे गुल्मे भगन्दरे ।
निहन्ति वातजान् रोगान् श्लैष्मिकांश्च विशेषतः ॥ ४२ ॥
पिप्पलीमधुसंयुक्तं घृतयुक्तमथापि वा ।
भक्षयेत्पर्णखण्डेन सितया चार्द्रकेण वा ॥ ४३ ॥

शुद्ध गंधक और शुद्ध पारा दोनों समभाग लेकर कज्जली करे। तब शुद्ध सोहागा, मोतीभस्म, मूँगाभस्म और शंखभस्म ये चारों दो-दो भाग तथा स्वर्ण-भस्म आधा भाग ले और सबको नीबूके रसमें एक साथ घोंटे। घुँट जानेपर गोला बनाकर सम्पुटित करे और गजपुटमें रखकर फूँक दे। स्वांगशीतल होनेपर निकाल ले और इसमें तीक्ष्णलौहभस्म आधा भाग तथा शुद्ध सिंगरिफ चौथाई भाग मिलाकर खूब महीन चूर्ण बना ले। किसी शुभ दिन इस रसका पूजन करके सेवन करे। राजयक्ष्माका विनाशक यही सर्वांगसुन्दर रस है। इससे वातपित्तज्वर, घोर सन्निपात, अर्श, ग्रहणी, प्रमेह, गुल्म, भगन्दर, वात एवं कफजनित सभी रोग दूर हो जाते हैं। पिप्पली-चूर्ण-मिश्रित मधु, घृत, मानके पत्ते, मिश्री और अदरखके रसमें इसके खानेका विधान है ॥ ३७–४३ ॥

लोकेश्वर रस

पलं कपर्दचूर्णस्य पलं पारदगन्धयोः ।
माषञ्च टङ्कणस्यैव जम्बीराद्भिर्विमर्दयेत् ।
पुटेल्लोकेश्वरो नाम्ना लोकनाथरसोत्तमः ॥ ४४ ॥
ऋते कुष्ठं रक्तपित्तमन्यान् रोगान्बलाज्जयेत् ।
पुष्टिवीर्य्यप्रसादौजःकान्तिलावण्यदः परः ॥ ४५ ॥
कोऽस्ति लोकेश्वरादन्यो नृणां शम्भुमुखोद्गतात् ।
पथ्यं शाल्योदनं सर्पिर्दधि शाकं सहिङ्गुकम् ॥ ४६ ॥
नित्यं यामद्वयादूर्ध्वं कार्य्यं वारत्रयं दिवा ।
त्र्यहाद्वान्तेऽरुचौ वापि लग्नः सूतो न चेत्पुनः ॥ ४७ ॥

अष्टमेऽह्नि प्रदातव्यः पूर्ववत्कार्यसिद्धये।
प्रथमे सप्तमे देया लावशूरणमुद्गकाः॥ ४८॥
द्वितीये माषगोधूमा भक्ष्या पूर्वोदितञ्च यत्।
देयानि मत्स्यमांसानि तृतीये मर्दनादिकम्॥ ४९॥
तैलबिल्वारनालानि कोपस्त्रीस्वप्नजागरान्।
त्यजेत्कादीनि द्रव्याणि हृद्यं स्वादु च शीलयेत्॥ ५०॥
वायौ सेव्यं पयः कोष्णं पित्ते तु ससितं हितम्।
अत्यग्नौ चारबीजानि तिलेक्षुकदलीफलम्॥ ५१॥
खर्जूरमांसमृद्वीकासितादि सफलं भजेत्।
वीर्य्यच्युतौ नारिकेलजलं तालफलानि च॥ ५२॥
आनाहारुचिमूर्च्छार्त्तिधूमोद्गारविसूचिकाः।
एतेषु लघु शाल्यन्नं केवलं सघृतं हितम्॥ ५३॥
अतिवांतौ पिबेच्छिन्नारसं क्षौद्रेण संयुतम्।
सक्षौद्रं वासकं रक्तपित्ते रुचिविपर्य्यये॥ ५४॥
भृष्टधान्यं सितायुक्तमथवा क्षौद्रसंयुतम्।
यवान्नं मधुसंयुक्तं पिबेद्वा माहिषं दधि॥ ५५॥
घृतान्नं भक्षयेन्नित्यं सुखोष्णेन च वारिणा।
छिन्नाऽम्बु सहितं देयं दाहेऽजीर्णे सुधाजलम्॥ ५६॥
आर्द्रकं सर्षपं रम्भाफलं भृङ्गं कफोल्बणे।
अन्येऽप्युपद्रवा ये स्युस्तत्तच्छान्त्यै यथौषधम्॥ ५७॥
द्वात्रिंशद्दिवसे कार्य्यं स्नानमामलकैस्तिलैः।
युक्तं सेव्यं बले जाते शनैरग्निबलादनु॥ ५८॥

कौड़ीभस्म एक पल, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक आधा-आधा पल तथा शुद्ध सोहागा एक मासा लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर बाकी चीजें एकमें मिलाकर जँभीरी नीबूके रससे घोंटे और चूर्ण करके रख ले। यह लोकेश्वर रस है। कुष्ठ और रक्तपित्तको छोड़कर बाकी सभी रोगोंको यह बलपूर्वक मार भगाता है। यह पुष्टि, बल, प्रसन्नता, ओज, कान्ति और लावण्य प्रदान करता है। साक्षात् शंकरभगवानके मुखसे निःसृत इस लोकेश्वर रससे बढ़कर

मनुष्योंके लिए हितकर भला और कौन हो सकता है ? इस रसका सेवन करने-वालेके लिए साठी चावलका भात, घी, दही और हींगमें बघारा हुआ शाक पथ्य है। नित्य दिन भरमें तीन बार रोगीको पथ्य देना चाहिये। तीन दिनके बाद यदि दवा हजम न हो—वमन हो जाय तो इसे बन्द कर दे और फिर आठ दिन बाद कार्यसिद्धिके निमित्त यह रस दे। इसका सेवन करनेवाले रोगी-को प्रथम सप्ताहमें बटेरका मांस, सूरन और मूँग, दूसरे सप्ताहमें उड़द, गेहूँ तथा उपर्युक्त पथ्य, तीसरे सप्ताहमें मछली खानेको दे और तेलसे मालिश करावे। जबतक रोगी इसका सेवन करे तबतक तेल, बेल, कांजी, क्रोध, स्त्रीप्र-संग, निद्रा, अधिक जागरण और कुम्हड़ा-ककड़ी आदि ककरादि पदार्थका उपयोग न करे। जो चीजें हृदयग्राही हों और सुस्वादु लगें, उन्हें ही खाय। वातज विकारमें कुछ गरम और पित्तज दोषमें ठंढा दूध पिये। यदि भस्मक रोग हो तो चोर (अपामार्ग) का बीज, तिल, ऊँख, केलेके फल, खजूर, मुनक्का और मिश्री खाय। वीर्यपात होता हो तो नारियलका जल पिये और ताड़का फल खाय। आनाह, अरुचि, मूर्छा, खट्टी डकार और विसूचिका रोगमें शालि चावलका भात और घृत हितकारी होता है। अति वमनमें गुरुचके रसमें मधु मिलाकर अडूसाका रस पिये। अरुचि रोगमें धानके लावामें मधु या मिश्री मिलाकर खाय। अथवा जौकी दरिया बना और मधु मिलाकर खाय या कि भैंसका दही पिये। इस रसका सेवन करनेवाला रोगी नित्य घृतमिश्रित अन्न खाय और गुनगुना जल पिये। दाहरोगके रोगीको गुरुचके रसमें और अजीर्ण रोगवालेको चूनेके जलमें यह रस दे। कफाधिक्यमें अदरख, सरसों, केलेका फल और दालचीनीका चूर्ण अनुपान देना चाहिये। अन्यान्य उपद्रवोंमें वैद्य रोगके अनुसार अनुपान निर्धारित करके यह रस दे। रोग निवृत्त होने और शारीरिक बल आ जानेपर बत्तीसवें दिन रोगी आँवला और तिलमिश्रित जलसे स्नान करे। अग्निबल और शारीरिक बल आ जानेपर भी रोगी कुछ दिन उचित पथ्यका ही सेवन करे ॥ ४४–५८ ॥

स्वल्पमृगाङ्क रस

रसभस्म हेमभस्म तुल्यं गुञ्जाद्वयं भजेत्।
दोषं बुद्ध्वाऽनुपानेन मृगांकोऽयं क्षयापहः ॥ ५९ ॥

रससिन्दूर और स्यर्णभस्म एक-एक रत्ती मिलाकर दोषके अनुसार उचित अनुपानके साथ दे तो क्षयरोग नष्ट हो जाता है। यह स्वल्पमृगाङ्क रस कहलाता है ॥ ५९ ॥

काञ्चनाभ्र रस

काञ्चनं रससिन्दूरं मौक्तिकं लौहमभ्रकम्।
विद्रुमञ्चाभया तारं कस्तूरी च मनःशिला ॥ ६० ॥
प्रत्येकं त्रिंदुमानन्तु सर्वं सम्मर्द्य यत्नतः।
वारिणा वटिका कार्य्या द्विगुञ्जाफलमानतः ॥ ६१ ॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं यथादोषानुसारतः।
क्षयं हन्ति तथा कासं श्लेष्मपित्तसमुद्भवम् ॥ ६२ ॥
प्रमेहं विविधञ्चैव दोषत्रयसमुत्थितम्।
कफजान्वातजान् रोगान्नाशयेत्सद्य एव हि ॥ ६३ ॥
बलवृद्धिं वीर्य्यवृद्धिं लिङ्गदार्ढ्यं करोति च।
श्रीकरः पुष्टिजननो नानारोगनिपूदनः।
गहनानन्दनाथोक्तो रसोऽयं काञ्चनाभ्रकः ॥ ६४ ॥

स्वर्णभस्म, रससिन्दूर, मोतीभस्म, लौहभस्म, अभ्रकभस्म, विद्रुम (मूँगा) भस्म, हरीतकीचूर्ण, चाँदीभस्म, कस्तूरी, शुद्ध मैनसिल, ये द्रव्य एक-एक कर्ष ले और जलमें घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। रोगके अनुसार विभिन्न अनुपानोंके साथ यदि इस रसका सेवन करे तो पित्तज एवं कफज खाँसी, तीनों ही दोषोंसे जायमान नाना प्रकारके प्रमेह और कफ तथा वायुसे उत्पन्न सभी तरहके रोग शीघ्र नष्ट हो जाते हैं। यह रस बल तथा वीर्य बढ़ाता और लिंगमें दृढ़ता लाता है। यह श्रीकारक, पुष्टिजनक और विविध रोगोंका नाशक है। श्री गहनानन्दनाथका बताया हुआ यही काञ्चनाभ्र रस है ॥ ६०—६४ ॥

बृहत्कांचनाभ्र रस

काञ्चनं रससिन्दूरं मौक्तिकं लौहमभ्रकम्।
विद्रुमं मृतवैक्रान्तं तारं ताम्रञ्च वङ्गकम् ॥ ६५ ॥

कस्तूरिका लवङ्गञ्च जातीकोषैलबालुकम्।
प्रत्येकं बिन्दुमात्रञ्च सर्वं मर्द्यं प्रयत्नतः॥ ६६॥
कन्यानीरेण सम्मर्द्य केशराजरसेन च।
अजाक्षीरेण सम्भाव्यं प्रत्येकं दिवसत्रयम्॥ ६७॥
चतुर्गुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक्।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं यथादोषानुसारतः॥ ६८॥
क्षयं हन्ति तथा कासं यक्ष्माणं श्वासमेव च।
प्रमेहान् विंशतिञ्चैव दोषत्रयसमुद्भवान्।
सर्वरोगान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा॥ ६६॥

स्वर्णभस्म, रससिन्दूर, मोतीभस्म, अभ्रकभस्म, मूँगाभस्म, वैक्रान्तभस्म, चांदीभस्म, ताम्रभस्म, वंगभस्म, कस्तूरी, लौंग, जावित्री और इलायची ये सभी चीजें एक-एक कर्ष लेकर घीगुवारके रसमें घोंटकर घीगुवार और केशराजके रस तथा बकरीके दूध, इन तीनोंमें अलग-अलग तीन-तीन दिन भावना दे। फिर चार-चार रत्तीकी गोलियें बनाकर रख ले। दोषके अनुसार विभिन्न अनुपानोंमें इसका सेवन करनेसे क्षय, कास, यक्ष्मा, श्वास और वात-पित्त-कफ इन तीनों दोषोंसे जायमान बीसों प्रकारके प्रमेह, ये रोग इस तरह नष्ट हो जाते हैं, जैसे सूर्यकिरणके निकलते ही अंधकार दूर हो जाता है॥ ६५–६६॥

शिलाजत्वादि लौह

शिलाजतु मधु व्योषं ताप्यं लौहरजस्तथा।
क्षीरेण लेहितस्याशु क्षयः क्षयमवाप्नुयात्॥ ७०॥

शुद्ध शिलाजीत, मुलैठी, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, स्वर्णमाक्षिक भस्म और लौहभस्म, ये द्रव्य समभाग ले और सबको जलमें घोंटकर गोलियें बना ले। यदि दूधमें मिलाकर इस रसका सेवन करे तो क्षयरोग नष्ट हो जाता है॥७०॥

कुमुदेश्वर रस

हेमभस्म रसभस्म गन्धकं मौक्तिकन्तु रसटङ्कणं तथा।
तारकं गरुडसर्पतुल्यकङ्काञ्जिकेन परिमर्द्य गोलकम्॥७१॥

मृत्स्नया च परिवेष्ट्य शोषितं भाण्डगे लवणगेऽथ पाचयेत्।
एकरात्रमृदुसम्पुटेन वा सिद्धिमेति कुमुदेश्वरो रसः।
वल्लमस्य मरिचैर्घृताप्लुतै राजयक्ष्मपरिशान्तये पिबेत्॥७२॥

सुवर्णभस्म, रससिन्दूर, शुद्ध गंधक, मोतीभस्म, शुद्ध सोहागा, चाँदी-भस्म और स्वर्णमाक्षिकभस्म, ये सभी चीजें समभाग ले और काँजीमें घोंटकर गोला बना ले। इस गोलेको कपड़मिट्टीसे वेष्टित करके सुखा ले और लवण-भरे पात्रमें रखकर रातभर पकावे। अथवा रात्रि भर मृदुपाककी विधिसे पकावे तो यह कुमुदेश्वर रस सिद्ध हो जाता है। यदि एक रत्ती यह रस घृतमिश्रित काली मिर्चके चूर्णमें खाय तो राजयक्ष्मारोग निवृत्त हो जाता है॥७१॥७२॥

क्षयकेसरी रस

त्रिकटु त्रिफलैलाभिर्जातीफललवङ्गकैः।
नवभागोन्मितैस्तुल्यं लौहं पारदसिन्दुरम्।
मधुना क्षयरोगांश्च हन्त्ययं क्षयकेसरी॥ ७३॥

सोंठ, मिर्च, पिप्पली, त्रिफला, इलायची, जायफल और लौंग, ये द्रव्य समभाग और इन नवोंकी जो वजन हो, उसका आधा लौहभस्म और इतना ही रससिन्दूर ले। फिर इन सबको एकमें घोंटकर रख ले। यदि मधुके साथ इसका सेवन करे तो क्षयरोग दूर हो जाता है। यह क्षयकेसरी रस है॥७३॥

बृहच्चन्द्रामृत रस

रसगन्धकयोर्ग्राह्यं कर्षमेकं सुशोधितम्।
अभ्रं निश्चन्द्रकं दद्यात्पलार्द्धञ्च विचक्षणः॥ ७४॥
कर्पूरं शाणकं दद्यात्स्वर्णं तोलकसम्मितम्।
ताम्रञ्च तोलकं दद्याद्विशुद्धं मारितं भिषक्॥ ७५॥
लौहं कर्षं क्षिपेत्तत्र वृद्धदारकजीरकम्।
विदारी शतमूली च क्षुरकञ्च बला तथा॥ ७६॥
मर्कट्यतिबला चैव जातीकोषफले तथा।
लवङ्गं विजयाबीजं श्वेतसर्जरसं तथा॥ ७७॥
शाणभागं समादाय चैकीकृत्य प्रयत्नतः।
मधुना मर्दयेत्तावद्यादेकत्वमागतम्॥ ७८॥

चतुर्गुञ्जाप्रमाणेन वटीं कुर्य्यात्प्रयततः ।
भक्षयेद्वटिकामेकां पिप्पलीमधुना सह ॥ ७६ ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक दोनों एक-एक कर्ष लेकर कज्जली कर ले। फिर इसमें अभ्रकभस्म आधा पल, कपूर एक शाण, स्वर्णभस्म एक तोला, ताम्रभस्म एक तोला, लौहभस्म एक कर्ष, विधारा, जीरा, विदारीकन्द, शतावर, क्षुरक (तिलकवृक्ष), वरियारा, केवाँचके बीज, अतिबला, जायफल, जावित्री, लौंग, भाँगके बीज, सफेद राल, इन सभी द्रव्योंको एक-एक शाण लेकर सब चीजें मधुके साथ तब तक घोंटे, जबतक वह एलदिल न हो जाय। घुँट जानेपर चार-चार रत्तीकी गोलियें बना ले। यदि नित्य पिप्पलीपूर्ण तथा मधुके साथ इसकी एक गोलीका सेवन करे तो क्षयरोग निवृत्त हो जाता है ॥ ७४—७६ ॥

महामृगाङ्क रस

निरुत्थभस्म सौवर्णं द्विगुणं भस्मसूतकम्।
त्रिगुणं भस्म मुक्तोत्थं शुकपुच्छं चतुर्गुणम् ॥ ८० ॥
मृततात्यकञ्च पञ्चांशं तारभस्म चतुर्गुणम्।
सप्तभागं प्रवालञ्च रसतुल्यञ्च टङ्कणम् ॥ ८१ ॥
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य त्रिदिनं लुङ्गवारिणा।
ततश्च गोलकं कृत्वा शोषयित्वा खरातपे ॥ ८२ ॥
लवणैः पात्रमापूर्य्य तन्मध्ये गोलकं क्षिपेत्।
तन्मुखन्तु मृदा रुद्ध्वा पचेद्यामचतुष्टयम् ॥ ८३ ॥
आकृष्य चूर्णयेत्सर्वं चतुःषष्टिविभागतः ।
वज्रं वा तदभावे तु वैक्रान्तं षोडशांशिकम् ॥ ८४ ॥
महामृगाङ्कः खलु एष सिद्धः श्रीनन्दिनाथप्रकटीकृतोऽयम्।
वल्लोऽस्य सेव्यो मरिचाज्ययुक्तः सेव्योऽथवा पिप्पलिकासमेतः ॥८५॥
तत्रोपचाराः कर्त्तव्याः सर्वे क्षयगदोदिताः ।
बल्यं वृष्यञ्च भोक्तव्यं तन्न सूतविरोधि यत् ॥ ८६ ॥
यक्ष्माणं बहुरूपिणं ज्वरगणं गुल्मं तथा विद्रधिं
मन्दाग्निं स्वरभेदकासमरुचिं वान्तिञ्च मूर्च्छां भ्रमिम्।

अष्टावेव महागदान्गरगदान्पाण्ड्वामयान्कामलान्
पित्तोत्थाँश्च समग्रकान्वहुविधानन्याँस्तथा नाशयेत् ॥ ८७ ॥

निरुत्थ स्वर्णभस्म १ भाग, रससिन्दूर २ भाग, मोतीभस्म ३ भाग, शुद्ध गंधक ४ भाग, स्वर्णमाक्षिकभस्म ५ भाग, चाँदीभस्म ६ भाग, मूँगाभस्म ७ भाग और शुद्ध सोहागा २ भाग, ये सब चीजें लेकर बिजौरा नीबूके रसमें लगातार ३ दिन घोंटे। घुँट जानेपर इसका गोला बनाकर कड़ी धूपमें सुखा ले। फिर एक पात्रमें नमक भरकर उसीमें यह गोला रख दे। कपड़मिट्टीसे पात्रका मुख बन्द करके उसे भट्टीपर चढ़ा दे और चार पहरतक पकावे। शीतल होनेपर गोला निकाल ले और गोलेका जो वजन हो, उसका चौंसठवाँ भाग हीराभस्म, न मिलनेपर इतना ही वैक्रान्तभस्म मिलाकर घोंट ले। श्री नन्दीनाथके द्वारा आविष्कृत यही महामृगाङ्क रस है। काली मिर्चका चूर्ण, घी और पिप्पलीके चूर्णमें १ वल्ल इस महामृगाङ्क रसका नित्य सेवन करे। क्षयरोगमें कहे हुए सभी उपचार इसमें भी करना चाहिए। यह रस बलदायक और वाजीकरण है। इसका सेवन करते समय ऐसी कोई चीज न खाय, जो पारदसेवीके विरुद्ध हो। अनेक प्रकारके यक्ष्मा, विविध भाँतिके ज्वर, गुल्म, मन्दाग्नि, स्वरभेद, खाँसी, अरुचि, वमन, मूर्छा, भ्रमि (चक्कर), आठ महारोग, विषरोग, पाण्डुरोग, कामला, सब तरहके पित्तज रोग तथा अनेक प्रकारके अन्य रोग भी इससे दूर होते हैं ॥८०-८७॥

बृहत् क्षयकेसरी

मृतमभ्रं मृतं सूतं मृतं लौहं तथा रविः।
मृतं नागञ्च कांस्यञ्च मण्डूरं विमलं शिला ॥ ८८ ॥
वङ्गं खर्परकं तालं शङ्खटङ्कणमाक्षिकम्।
वैक्रान्तं कान्तलौहञ्च स्वर्णं विद्रुममौक्तिकम् ॥ ८९ ॥
वराटं मणिरागञ्च राजपट्टञ्च गन्धकम्।
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य खल्लमध्ये विनिक्षिपेत् ॥ ९० ॥
मर्दयेत्त्वग्निभानुभ्यां प्रपुटेत्त्रिदिनं लघु।
भावयेत्पुटयेदेभिर्वाराँस्त्रींश्च पृथक् पृथक् ॥ ९१ ॥

मातुलुङ्गवराविह्निस्वम्लवेतसमार्कवैः ।
हयमाराद्रककरसैः पाचितो लघुवह्निना ॥ ९२ ॥
वातपित्तकफोत्क्लेशाञ्ज्वरान्संमर्दितानपि ।
सन्निपातं निहन्त्याशु सर्वाङ्गैकाङ्गमारुतान् ॥ ९३ ॥
सेवितश्च सितायुक्तो मागधीरजसा युतः ।
मधुकाद्रकसंयुक्तस्तद्व्याधिहरणौषधैः ॥ ९४ ॥
रोगिणां सेवितो हन्ति व्याधिवारणकेसरी ।
क्षयमेकादशविधं शोषं पाण्डुं क्रिमिं जयेत् ॥ ९५ ॥
कासं पञ्चविधं श्वासं मेहमेदोमहोदरम् ।
अश्मरीं शर्करां शूलं प्लीहगुल्मं हलीमकम् ।
सर्वव्याधिहरो बल्यो वृष्यो मेध्यो रसायनः ॥ ९६ ॥

अभ्रकभस्म, रससिन्दूर, लौहभस्म, ताम्रभस्म, सीसाभस्म, कांस्यभस्म, मण्डूरभस्म, शुद्ध मैनसिल, जस्ताभस्म, खपरियाभस्म, शुद्ध हड़ताल, शंखभस्म, शुद्ध सोहागा, स्वर्णमाक्षिकभस्म, वैक्रान्तभस्म, कान्तलौहभस्म, स्वर्णभस्म, मूँगा-भस्म, मोतीभस्म, कौड़ीभस्म, शुद्ध सिंगरिफ, कान्तपाषाण (चुम्बक) भस्म और शुद्ध गंधक ये द्रव्य समभाग लेकर एकमें घोंट डाले और चीतेके काढ़ेमें तीन बार भावना देकर ३ दिनमें ३ पुट दें। तदनन्तर मदारके रसमें भावना देकर पुट दे। इसके बाद निम्नलिखित द्रव्योंकी भावना देकर तीन बार लघु पुट देना चाहिए। जैसे-बिजौरा नीबू, त्रिफला, चीता, अमलबेत, भाँगरा, कनेर और अदरखका रस। स्वांगशीतल होनेपर उसे घोंटकर रख ले। इसका सेवन करनेसे वात-पित्त एवं कफसे वृद्धिको प्राप्त ज्वर छूट जाते हैं। इनके अतिरिक्त सन्निपात, सर्वाङ्गवात और एकांतवात भी दूर होते हैं। मिश्री, पिप्पलीका चूर्ण, शहद, अदरखके रस अथवा विभिन्न रोगोंका हरण करनेवाली औषधियोंके साथ इस रसका सेवन करनेसे अनेक रोग दूर होते हैं। इससे ग्यारह लक्षणों युक्त क्षय, शोष, पाण्डु, क्रिमि, पाँच प्रकारकी खाँसी, श्वास, प्रमेह, मेद, महोदर, अश्मरी, शर्करा, शूल, प्लीहा, गुल्म और हलीमक आदि सब रोग दूर हो जाते हैं। यह रस बलदायक, वृष्य, बुद्धिवर्धक एवं रसायन है ॥ ८८–९६ ॥

क्षयारि रस

भस्मत्वं समुपागतं विधिकृतं हेमामृतेनान्वितं
पादांशेन कणाऽऽज्यवल्लसहितङ्गुञ्जोन्मितं सेवितम् ।
यक्ष्माणं ज्वररोगपाण्डुगुदजान् श्वासञ्च कासामयं
दुष्टाञ्च ग्रहणीं क्षतक्षयमुखान्रोगाञ्जयेद्देहभृत् ॥ ९७ ॥

सुवर्णभस्म १ भाग और शुद्ध विष चौथाई भाग, ये दोनों चीजें लेकर एकमें घोंट ले। यदि दो रत्ती घृतमिश्रित पिप्पलीके चूर्णमें एक रत्ती यह रस सेवन करे तो यक्ष्मा, ज्वर, पाण्डु, अर्श, श्वास, कास, दुष्ट ग्रहणी और क्षत-क्षय आदि रोग नष्ट हो जाते हैं ॥ ९७ ॥

क्षयसंहार रस

लीढो व्योषवरान्वितो विमलको युक्तो घृतैः सेवितो
हन्याद्धृद्गदुर्जयं श्वयथुकं पाण्डुप्रमेहारुचिम् ।
शूलार्त्तिं ग्रहणींञ्च गुल्ममतुलं यक्ष्मामयं कामलां
सर्वान्पित्तमरुद्गदान्किमपरैर्योगैरशेषामयान् ॥ ९८ ॥

रौप्य माक्षिकभस्मको यदि सोंठ, मिर्च, पिप्पली तथा त्रिफलाके चूर्णमें घी मिलाकर चाटे तो दारुण हृदयरोग, शोथ, पाण्डु, प्रमेह, अरुचि, शूलरोग, ग्रहणी, गुल्म, यक्ष्मा कामला और वातजनित सभी प्रकारके रोग दूर हो जाते हैं। जब कि अकेला क्षयसंहार रस सभी रोग दूर कर सकता है, तब अन्यान्य योगोंसे क्या काम ? ॥ ९८ ॥

रजतादि लौह

भस्मीभूतं रजतममलं तत्समं व्योमचूर्णं
सर्वैस्तुल्य त्रिकटु सवरं सायमाज्येन युक्तम् ।
लीढं प्रातः क्षपयतितरां यक्ष्मपाण्डूदरार्शः-
श्वासं कासं नयनजरुजः पित्तरोगानशेषान् ॥ ९९ ॥

चाँदीभस्म और अभ्रकभस्म दोनों एक-एक भाग, त्रिकटु (सोंठ, मिर्च तथा पिप्पली) और त्रिफलाका चूर्ण दो भाग ले। फिर इन सबके बराबर अर्थात् चार भाग लौहभस्म मिलाकर घोंट ले। यदि प्रातःकाल घीमें एक

रत्ती इस रजतादि लौहका सेवन करे तो यक्ष्मा, पांडु, उदररोग, बवासीर, श्वास, कास, चक्षुरोग एवं सभी प्रकारके पित्तरोग शान्त हो जाते हैं ॥ ९९ ॥

नित्योदय रस

सुशुद्धं पारदं गन्ध प्रत्येकं शुक्तिसम्मितम्।
ततः कज्जलिकां कृत्वा मर्दयेच्च पृथक् पृथक् ॥ १०० ॥
बिल्वाग्निमन्थश्योनाकाः काश्मरी पाटला बला।
मुस्तं पुनर्नवा धात्री बृहती वृषपत्रकम् ॥ १०१ ॥
विदारी बहुपुत्री च एषां कर्षरसैर्भिषक्।
सुवर्णं रजतं ताप्यं प्रत्येकं शाणमानकम् ॥ १०२ ॥
पलमात्रन्तु कृष्णाभ्रं तदर्द्धञ्च शिलाह्वयम्।
जातीकोषफले मांसी तालीशैलालवङ्गकम् ॥ १०३ ॥
प्रत्येकं कोलमानन्तु वासानीरैर्विमर्दयेत्।
शोषयित्वाऽऽतपे पश्चाद्विदारीरसमर्दितम् ॥ १०४ ॥
द्विगुञ्जिकां वटीं खादेत्पिप्पलीमधुसंयुताम्।
नाम्ना नित्योदयश्चायं रसो विष्णुविनिर्मितः ॥ १०५ ॥
पञ्च कासान्निहंत्याशु चिरकालोद्भवानपि।
राजयक्ष्माणमत्युग्रं जीर्णं ज्वरमरोचकम् ॥ १०६ ॥
धातुस्थं विषमाख्यञ्च तृतीयकचतुर्थकम्।
अर्शांसि कामलाम्पाण्डुमग्निमांद्यं प्रमेहकम्।
सेवनादस्य कन्दर्परूपो भवति मानवः ॥ १०७ ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक दोनों एक-एक कर्ष लेकर कज्जली करे। फिर बेल, अरणी, श्योनाक, गंभारी, पाटला, बला, मोथा, पुनर्नवा, आँवला, बृहती (बड़ी कटेरी), बाँसकी पत्तियें, विदारीकन्द और शतावर इन सभी द्रव्योंको एक-एक कर्ष लेकर अलग-अलग घोंटे। फिर इसमें सुवर्ण, चाँदी तथा स्वर्ण-माक्षिकभस्म एक-एक शाण, कृष्णाभ्रकभस्म १ पल और शुद्ध मैनसिल आधा पल ले। फिर जावित्री, जायफल, जटामासी, तालीसपत्र, इलायची और लौंग, इन सबका चूर्ण आधा-आधा कर्ष लेकर अडूसाके रसमें घोंटकर धूपमें सुखा ले। तदनन्तर विदारीकन्दके रसमें खरल करके दो-दो रत्तीकी गोलियें बना

ले। यदि पिप्पलीके चूर्ण और मधुमें मिलाकर विष्णुभगवानके बताये हुए इस नित्योदित रसका सेवन करे तो बहुत पुरानी भी पाँचों प्रकारकी खाँसी दूर हो जाती है। इसके अतिरिक्त अतिशय उग्र राजयक्ष्मा, जीर्णज्वर, अरुचि, धातुगत ज्वर, विषमज्वर, तृतीयज्वर, चतुर्थज्वर, ववासीर, कामला, पाण्डु, मन्दाग्नि और प्रमेह, ये सभी रोग इस रसका सेवन करनेसे दूर हो जाते हैं। इसका सेवन करनेवाला पुरुष कामदेवके सदृश सुन्दर हो जाता है ॥१००—१०७॥

इति श्रीरसेन्द्रसंग्रहे 'रसायनी' भाषाटीकायां राजयक्ष्मचिकित्सा समाप्ता।

अथ कासचिकित्सा

बृहद्रसेन्द्रगुटिका

कर्षं शुद्धरसेन्द्रस्य गन्धकस्याभ्रकस्य च।
ताम्रस्य हरितालस्य लौहस्य च विषस्य च ॥ १ ॥
मनःशिलायाः क्षाराणाम्बीजस्य कनकस्य च।
मरिचस्य च सर्वेषां समञ्चूर्णं प्रकल्पयेत् ॥ २ ॥
जयन्ती चित्रकं माणं खण्डकर्णोऽथ मण्डुकी।
शक्राशनं भृङ्गराजं केशराजं तथाऽऽर्द्रकम् ॥ ३ ॥
निर्गुण्डीस्वरसेनापि कर्षमात्रेण मर्दयेत्।
कलायपरिमाणां तु वटिकाङ्कारयेद्भिषक्।
आर्द्रकस्वरसेनैव पञ्चकासं व्यपोहति ॥ ४ ॥
हन्ति कासं तथा श्वासं यक्ष्माणं सभगन्दरम्।
अग्निमान्द्यारुचिं शोथमुदरं पाण्डुकामलाम्।
रसायनी च वृष्या च बलवर्णप्रसादिनी ॥ ५ ॥
बृंहणं मधुरं स्निग्धं मत्स्यं मांसञ्च जाङ्गलम्।
घृतपक्वं सदा भक्ष्यं रूक्षं तीक्ष्णं विवर्जयेत् ॥ ६ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, शुद्ध हड़ताल, लौहभस्म, शोधित विष, शुद्ध मैनसिल, जवाखार, शुद्ध धतूरेके बीज और काली मिर्चके चूर्ण, ये चीजें एक-एक कर्ष लेकर सर्वप्रथम पारे-गंधककी कज्जली कर ले।

फिर सब वस्तुओंको जयन्ती, चीता, मानकन्द, शकरकंद, मण्डूकपर्णी, भाँग, भाँगरा, केशराज, अदरख तथा निर्गुण्डी (संभालू) इन सबके एक-एक कर्ष स्वरसमें अलग-अलग घोंटकर मटर जैसी गौलियें बना ले। यदि अदरखके रसमें इसका सेवन करे तो पाँचों प्रकारकी खाँसी नष्ट हो जाती है। यह गुटिका कास, श्वास, यक्ष्मा, भगन्दर, मन्दाग्नि, अरुचि, शोथ, उदरविकार, पाण्डु और कामलारोग निवृत्त कर देती है। यह गोली रसायनी, वृष्य तथा बल और वर्ण बढ़ानेवाली है। इस गुटिकाका सेवन करते समय बृंहण, मधुर, स्निग्ध, मछली, जंगली पशुका मांस और घृतपक्क पदार्थ खाय। रूखा और तीखा पदार्थ सर्वथा त्याग दे ॥ १—६ ॥

अमृतार्णव रस

पारदं गन्धकं शुद्धं मृतलौहञ्च टङ्कणम्।
रास्ना विडङ्गं त्रिफला देवदारु च चित्रकम् ॥ ७ ॥
अमृता पद्मकं क्षौद्रं विषञ्चैव विमर्दयेत्।
द्विगुञ्जं वातकासार्त्तः सेवयेदमृतार्णवम् ॥ ८ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौहभस्म, शुद्ध सोहागा, रास्ना, वायविडंग, त्रिफला, देवदारु, चीता, गिलोय, पद्माक्ष इनके चूर्ण, मधु और शोधित विष, ये द्रव्य समभाग लेकर पारे-गंधककी जजली कर ले। फिर सबको एकमें घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। वातज कास (खाँसी) से दुखी रोगी इस अमृतार्णव रसका अवश्य सेवन करें ॥ ७ ॥ ८ ॥

पित्तकासान्तक रस

भस्म ताम्राभ्रकान्तानां कासमर्दत्वचो रसैः।
मणिजैर्वेतसाम्लैश्च दिनं मर्द्यं सुपिण्डितम् ॥ ९ ॥
निष्कार्द्धं पित्तकासार्त्तो भक्षयेच्च दिनत्रयम्।
कासश्वासाग्निमान्द्यञ्च क्षयञ्चापि निहन्त्यलम् ॥ १० ॥

ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म और कान्तलौहभस्म, ये चीजें समभाग लेकर कासमर्द (कसौंदी), अगस्त्यपुष्प तथा तथा अम्लवेतकेरसमें घोंटकर आधे-आधे निष्ककी गोलियें बना ले। पित्तज कासका रोगी यदि इस रसका तीन

दिन सेवन करे तो उसका दुख दूर हो जाता है। यह कास, श्वास, मन्दाग्नि और क्षयरोगको नष्ट करता है ॥ ९ ॥ १० ॥

काससंहारभैरव रस

रसगन्धकताम्राभ्रशङ्खटङ्कणलौहकम्।
मरिचं कुष्ठतालीशं जातीफललवङ्गकम् ॥ ११ ॥
कार्षिकश्चूर्णमादाय दण्डेनामर्द्य भक्षयेत्।
भेकपर्णीकेशराजनिर्गुण्डीकाकमाचिकाः ॥ १२ ॥
द्रोणपुष्पी शालपर्णी ग्रीष्मसुन्दरकस्तथा।
भार्गी हरीतकी वासा कार्षिकैः पत्रजै रसैः।
वटिकां कारयेद्वैद्यः पञ्चगुञ्जाप्रमाणतः ॥ १३ ॥
श्रीमद्गहननाथेन कासंसंहारभैरवः।
रसोऽयं निर्मितो यत्नाल्लोकरक्षणहेतवे ॥ १४ ॥
वासा-शुण्ठी-कण्टकारीक्वाथेन पाययेद्बुधः।
वातजं पैत्तिकं कास श्लैष्मिकं चिरजन्तथा ॥ १५ ॥
कासं नानाविधं हन्ति श्वासमुग्रमरोचकम्।
बलवर्णकरः श्रीदः पुष्टिदः कान्तिवर्द्धनः ॥ १६ ॥

शुद्ध गंधक, शुद्ध पारा, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, शंखभस्म, शुद्ध सोहागा, लौहभस्म और काली मिर्च, कूठ, तालीसपत्र, जायफल तथा लौंग, इनका चूर्ण, ये सभी द्रव्य एक-एक कर्ष लेकर घोंटे। घुट जानेपर मण्डूकपर्णी, केशराज, संभालू, मकोय, द्रोणपुष्पी (गूमा), शालपर्णी, ग्रीष्मसुन्दर, भार्गी, हरीतकी और अडूसा, इनकी पत्तीके एक-एक कर्ष रसमें अलग-अलग भावना दे। इसके बाद पाँच-पाँच रत्तीकी गोलियें बनाकर रख ले। लोकरक्षाकी भावनासे ही गहननाथने बड़े यत्नपूर्वक इस कासंसंहारभैरव रसका निर्माण किया था। अडूसा, सोंठ अथवा कण्टकारी (कटेरी)के क्वाथमें यह रस मिलाकर पिलाना चाहिए। यह वातज, पित्तज, कफज और पुरानी तथा विविध प्रकारकी खाँसियाँ, श्वास और उग्र अरुचि रोगका नाश करता है। यह रस बलवर्णवर्धक, शोभादायक, पुष्टिकारी और कान्तिवर्धक है ॥ ११–१६ ॥

लक्ष्मीविलास रस

शुद्धसूतं सतालञ्च तालार्द्धं रसखर्परम्।
वङ्गं ताम्रं घनं कान्तं कांस्यं गन्धं पलं पलम्॥ १७॥
केशराजरसेनैव भावयेद्दिवसत्रयम्।
कुलत्थस्य रसेनैव भावयेच्च पुनः पुनः॥ १८॥
एलाजातीफलाख्यञ्च तेजपत्रं लवङ्गकम्।
यमानी जीरकं चैव त्रिकटु त्रिफला समम्॥ १९॥
नतं भृङ्गं वंशगर्भं कर्षमात्रञ्च कारयेत्।
भावयेच्च रसेनैव गोलयेत्सर्वमौषधम्।
छायाशुष्का वटी कार्य्या चणकप्रमिता शुभा॥ २०॥
शीताम्बुना पिबेद्धीमान् सर्वकासनिवृत्तये।
मत्स्यं मांसं तथा क्षीरं पथ्यं स्यात्स्निग्धभोजनम्॥ २१॥
क्षयं कासं तथा श्वासं सज्वरं वाऽथ विज्वरम्।
हलीमकं पांडुरोगं शोथं शूलं प्रमेहकम्॥ २२॥
अर्शोनाशं करोत्येव बलवृद्धिं च कारयेत्।
वर्जयेच्छाकमम्लं च भृष्टद्रव्यं हुताशनम्॥ २३॥

शुद्ध पारा, शुद्ध हड़ताल, वंगभस्म, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, कान्तलौह-भस्म तथा कांस्यभस्म ये द्रव्य एक-एक पल और शुद्ध खपरिया आधा पल लेकर पहले पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सबको एक साथ घोंटकर तीन दिन केशराजके रसमें और फिर तीन दिन कुलथीके रसमें भावना दे। तत्पश्चात् इलायची, जायफल, तेजपत्र, लौंग, अजवायन, जीरा, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, त्रिफला, तगर, दालचीनी और वंशलोचन, ये सभी चीजें एक-एक कर्ष लेकर सबको एकमें घोंट डाले। फिर भाँगरे और कुथलीके क्काथमें भावना देकर छायामें सुखा ले और चनेके बराबर गोलियें बना ले। यदि ठंढे जलके साथ इसे पिये तो सब प्रकारकी खाँसियें निवृत्त हो जाती हैं। इसका सेवन करते समय मछली, मांस, दूध तथा स्निग्ध पदार्थ भोजन करे। क्योंकि इसमें ये ही पथ्य हैं। यह रस क्षय, कास, ज्वरसहित अथवा ज्वररहित श्वास, हलीमक,

पाण्डुरोग, शोथ, शूल, प्रमेह और अर्शरोगको नष्ट करता तथा बल बढ़ाता है। किन्तु शाक, खटाई, भुना चबेना और आग तापना त्याग दे ॥ ७–२३॥

सर्वेश्वर रस

रसगन्धकयोश्चूर्णमेकीकृत्याभ्रकं तथा।
हेमभिश्च समं कृत्वा मर्दयेद्यामकद्वयम् ॥ २४ ॥
त्र्यूषणानि लवंगैल टगणं हेमतुल्यकम्।
कन्टकार्या रसैर्भाव्यमेकविंशतिवारकम् ॥ २५ ॥
शिग्रुबीजार्द्रकरसैः सप्तधा भावयेत्पृथक्।
रसः सर्वेश्वरो नाम कासश्वासक्षयापहः।
अनुपान प्रयोक्तव्यं विभीतकफलत्वचम् ॥ २६ ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक समभाग लेकर कज्जली करे। इसमें समान भाग अभ्रक तथा स्वर्णभस्म डालकर दो पहर घोंटे। फिर सोंठ, मिर्च, पिप्पली, लौंग, इलायची और शुद्ध सोहागा, ये चीजें भी उतनी ही उतनी डाले जितनी कि स्वर्णभस्म मिलायी हो। अब इन सबको एकमें पीसकर कटेरीके रसमें इक्कीस बार भावना दे। इसके बाद सहिंजनके बीजके काढ़े तथा आदीके रसमें अलग-अलग सात बार भावना दे। कास, श्वास तथा क्षयरोगका विनाशक यही सर्वेश्वर रस है। इसके लिए अनुपान बहेड़ेके फलका चूर्ण है ॥ २४–२६ ॥

शृङ्गाराभ्र रस

शुद्धं कृष्णाभ्रचूर्णं द्विपलपरिमितं शाणमानं यदन्यत्
कर्पूरं जातिकोषं सजलमिभकणा तेजपत्रं लवंगम्।
मांसी तालीशचोचे गजकुसुममदं धातकी चेति तुल्यं
पथ्या धात्री विभीतं त्रिकटुरथ पृथक्त्वर्द्धशाणं द्विशाणम् ॥२७ ॥
एलाजातीफलाख्यं क्षितितलविधिना शुद्धगन्धाश्मकोलं
कोलार्द्धं पारदस्य प्रतिपदविहितं पिष्टमेकत्र मिश्रम्।
पानीयेनैव कार्याः परिणतचणकस्विन्नतुल्याश्च वट्यः
प्रातः खाद्याश्चतस्रस्तदनु च हि कियत्शृंगवेरं सपर्णम् ॥ २८ ॥

पानीयं पीतमन्ते ध्रुवमपहरति क्षिप्रमेतान्विकारान्
कोष्ठे दुष्टाग्निजातान्ज्वरमुदररुजो राजयक्ष्मक्षयञ्च।
कासं श्वासं सशोथं नयनपरिभवं मेहमेदोविकारान्
छर्दिं शूलाम्लपित्तं तृषमपि महतीं गुल्मजालं विशालम् ॥ २९ ॥
पाण्डुत्वं रक्तपित्तं गरलभवगदान्पीनसं प्लीहरोगं
हन्यादामानिलोत्थान्कफपवनकृतान्पित्तरोगानशेषान्।
बल्यो वृष्यश्च योगस्तरुणतरकरः सर्वरोगे प्रशस्तः
पथ्यं मांसैश्च यूषैर्घृतपरिलुलितैर्गव्यदुग्धैश्च भूयः ॥ ३० ॥
भोज्यं योज्यं यथेष्टं ललितललनया दीयमानं मुदा यत्
शृङ्गाराभ्रेण कामी युवतिजनशताभोगयोगादतुष्टः।
वर्ज्यं शाकाम्लमादौ दिनकतिपयचित्स्वेच्छया भोज्यमन्यत्
दीर्घायुः काममूर्तिर्गतवलिपलितो मानवोऽस्य प्रसादात् ॥ ३१ ॥

कृष्ण अभ्रकभस्म २ पल, कपूर, जावित्री, सुगन्धवाला, गजपिप्पली, तेजपत्र, लौंग, जटामासी, तालीशपत्र, दालचीनी, नागकेसर, पुष्करमूल, धायके फूल इनका चूर्ण एक-एक शाण. त्रिफला, सोंठ, मिर्चका चूर्ण आधा-आधा शाण और इलायची तथा जायफलका चूर्ण दो-दो शाण ले। पातालयंत्रसे शोधित गंधक एक कोल तथा शुद्ध पारा आधा कोल ले। तदनन्तर पारे-गंधककी कज्जली करके सब द्रव्योंको एक साथ पानीमें घोंटकर चनेके बराबर गोलियें बना ले। प्रातःकाल यदि इस रसकी ४ गोली खाकर अदरख तथा पानका रस पिये तो निम्नलिखित विकार तत्काल शान्त हो जाते हैं—अग्निदोषसे कोष्ठमें उत्पन्न विकार, उदररोग, राजयक्ष्मा, क्षय, कास, शोथ, नेत्रका तीखापन, प्रमेह, मेदोरोग, वमन, शूल, अम्लपित्त, पिपासा, गुल्म, पाण्डु, रक्तपित्त, विषजनित रोग, पीनस, प्लीहा, आमवातजनित विकार, कफवातजनित रोग और सभी तरहके पित्तरोग। इस रसका सेवन करनेसे ये सब निवृत्त होते हैं। यह रस बलदायक और वृष्य है। इसके उपयोगसे वृद्ध भी नौजवान हो जाता है। अतएव सब रोगोंकी निवृत्तिके लिए इसे प्रशस्त माना गया है। मांसरस, घृतमिश्रित रस, गौका दूध और सुन्दरी स्त्रियोंके हाथों दिया हुआ भोजन पथ्य है। इसका सेवन करनेवाला कामी मनुष्य सौ स्त्रियोंके साथ सम्भोग

करके भी सन्तुष्ट नहीं होता। इसका सेवन करते समय कुछ दिनोंके लिए साग और खटाई त्याग दे। और जो चाहे सो खाय। इस रसकी कृपासे मनुष्य दीर्घायु, कामदेव सदृश सुन्दर, वली (झुर्रियें) और पलित (बालोंकी सफेदी) से रहित हो जाता है॥ २७–३१॥

सार्वभौम रस

जीर्णं सुवर्णं लौहं वा यद्यत्रैव प्रदीयते।
तदाऽयं सर्वरोगाणां सार्वभौमो न संशयः॥ ३२॥

उपर्युक्त शृङ्गाराभ्र रसमें ही यदि स्वर्णभस्म मिला दे तो 'सार्वभौम रस' बन जाता है, जो सभी रोगोंपर काम करता है॥ ३२॥

तरुणानन्द रस

कर्षद्वयं रसेन्द्रस्य शुद्धस्य गन्धकस्य च।
कज्जलीकृत्य यत्नेन शुभे दृढशिलातले॥ ३३॥
विल्वाग्निमन्थः श्योनाकः काश्मीरी पाटला बला।
मुस्तं पुनर्नवा धात्री बृहती वृषपत्रकम्॥ ३४॥
विदारी शतमूली च कर्षैरेषां पृथक् रसैः।
मर्दयित्वा पुनर्वासास्वरसैर्दशतोलकैः॥ ३५॥
मर्दयेत्तत्र शुद्धाभ्रं रसस्य द्विगुणं क्षिपेत्।
रसस्यार्द्धञ्च कर्पूरं तत्रैव दापयेद्भिषक्॥ ३६॥
जातीकोषफले मांसी तालीशैलालवङ्गकम्।
चूर्णं कृत्वा प्रयत्नेन माषमात्रं क्षिपेत्पृथक्॥ ३७॥
विदारीस्वरसेनैव वटिकां कारयेद्भिषक्।
राजयक्ष्माणमत्युग्रं क्षयञ्चोग्रमुरःक्षतम्॥ ३८॥
कासं पञ्चविधं श्वासं स्वराघातमरोचकम्।
कामलापाण्डुरोगञ्च प्लीहानं सहलीमकम्॥ ३९॥
जीर्णज्वरं तृषा गुल्मं ग्रहणीमामसम्भवाम्।
अतीसारञ्च शोथञ्च कुष्ठानि च भगन्दरम्॥ ४०॥
नाशयेदेष विख्यातस्तरुणानन्दसंज्ञितः।
रसायनवरो वृष्यश्चक्षुष्यः पुष्टिवर्द्धनः॥ ४१॥

सहस्रं याति नारीणां भक्षणादस्य मानवः।
क्षीणता न च शुक्रस्य न च बुद्धिबलक्षयः॥ ४२॥
द्विमासमुपयोगेन निहन्ति सकलान्गदान्।
शुक्रसन्दीपनं कृत्वा ज्वरं हन्ति न संशयः॥ ४३॥
नारिकेलजलेनैव भक्ष्योऽयञ्च रसायनः।
क्षीरानुपानाद्वृष्योऽयं न क्वचित्प्रतिहन्यते॥ ४४॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक दोनों दो-दो कर्ष लेकर पत्थरकी खरलमें कज्जली करे। फिर बेल, अग्निमन्थ (अरणी), श्योनाक, गंभारी, पाठा, बरियारा, मोथा, पुनर्नवा, आँवला, बड़ी कटेरी, बाँसकी पत्ती, विदारीकन्द और शतावर, इनमेंसे प्रत्येक द्रव्यका स्वरस अथवा क्वाथ दो-दो कर्ष लेकर अलग-अलग घोंटे। तदनन्तर १० तोला अडूसाका स्वरस लेकर उसमें घोंटे। फिर इसमें अभ्रकभस्म चार कर्ष तथा एक कर्ष कपूर डाले। तत्पश्चात् जावित्री, जायफल, जटामासी, तालीसपत्र, इलायची और लौंग, इनमेंसे प्रत्येक द्रव्यका चूर्ण एक-एक मासा डाले और विदारीकन्दके रसमें घोंटकर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले। यह तरुणानन्द रस भीषण राजयक्ष्मा, उग्र उरःक्षत, पाँचों प्रकारकी खाँसी, श्वास, स्वराघात, अरुचि, कामला, पाण्डुरोग, प्लीहा, हलीमक, जीर्णज्वर, तृष्णा, गुल्म, आमजनित ग्रहणी, अतीसार, शोथ, कुष्ठ और भगन्दर, इन सभी रोगोंको नष्ट करता है। यह श्रेष्ठ रसायन वृष्य, नेत्रोंके लिए हितकारी और पुष्टिवर्धक है। इसका सेवन करनेवाला पुरुष हजारों स्त्रियोंके साथ रमण करे तो भी उसका वीर्य क्षीण नहीं होता। इससे बुद्धि तथा बल बढ़ता है। यदि केवल दो महीने इस रसका उपयोग करे तो कामलादि रोग नष्ट करके शुक्रवृद्धि करता और ज्वरको भी नष्ट कर देता है। विशेष करके यह रसायन नारियलके जलमें खाना चाहिए। यदि दूधके साथ इसका उपयोग किया जाय तो यह वृष्य और अव्यर्थ सिद्ध होकर—अपना काम करता ही है॥ ३३-४४॥

महोदधि रस

सूतकं गन्धकं लौहं विषञ्चैव वराङ्गकम्।
ताम्रकं वङ्गभस्मापि व्योमकञ्च समांशकम्॥ ४५॥

त्रिकटु भद्रमुस्तञ्च विडङ्गं नागकेशरम् ।
रेणुकामलकञ्चैव पिप्पलीमूलमेव च ॥ ४६ ॥
एषाञ्च द्विगुणं भागं मर्दयित्वा प्रयत्नतः ।
भावना तत्र दातव्या गजपिप्पलिकाम्बुभिः ॥ ४७ ॥
मात्रा चणकतुल्या तु वटिकेयं प्रकीर्त्तिता ।
कासं हन्ति तथा श्वासमर्शांसि च भगन्दरम् ॥ ४८ ॥
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च कर्णरोगं कपालिकाम् ।
हरेत्संग्रहणीरोगानष्टौ च जाठराणि च ।
प्रमेहान्विंशतिञ्चैव चतुर्विधमजीर्णकम् ॥ ४९ ॥
न चान्नपाने परिहार्य्यमस्ति न शीतवातातपमैथुनेषु ।
यथेष्टचेष्टाभिरतः प्रयोगे नरो भवेत्काञ्चनराशिगौरः ॥ ५० ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौह-भस्म, शोधित विष, दालचीनी, ताम्रभस्म, बंग-भस्म और अभ्रकभस्म ये द्रव्य समभाग ले। सोंठ मिर्च पिप्पली नागरमोथा, वायविडंग, नागकेसर, रेणुका, आवँला और पिप्पलीमूल ये द्रव्य दो-दो भाग लेकर प्रयत्नपूर्वक मर्दन करे। मर्दित हो जानेपर गजपिप्पलीके क्वाथमें भावना देकर चनेके बराबर गोलियें बना ले। यह रस कास, श्वास, बवासीर, भगन्दर, हृदयशूल, पार्श्वशूल, कर्णरोग, कपालिका, आठ प्रकारकी संग्रहणी, उदररोग, बीसों प्रकारके प्रमेह और चार प्रकारके अजीर्ण रोगोंको दूर करता है। अन्न, पान, शीत, वात, आतप तथा मैथुनका इसमें कोई परहेज नहीं है। इस रसका उपयोग करनेवाला मनुष्य स्वेच्छाचार करता हुआ भी स्वर्ण-राशिके सदृश गौरवर्ण हो जाता है ॥ ४५–५० ॥

जया गुटिका

सूतकं गन्धको लौहं विषं वत्सकमेव च ।
विडङ्गं केसरं मुस्तमेलाग्रंथिकरेणुकम् ॥ ५१ ॥
त्रिकटु त्रिफला चित्रं शुद्धं जैपालबीजकम् ।
एतानि समभागानि द्विगुणो गुड उच्यते ॥ ५२ ॥
तिन्तिडीबीजमानेन प्रातःकाले च भक्षयेत् ।
कासं श्वासं क्षयं गुल्मं प्रमेहं विषमज्वरम् ॥ ५३ ॥

अजीर्णं ग्रहणीरोगं शूलं पाण्ड्वामयं जयेत्।
अपाने हृदये शूले वातरोगे गलग्रहे ॥ ५४ ॥
अरुचावतिसारे च सूतिकाऽऽतङ्कपीडिते।
जयाऽऽख्या निर्मिता ह्येषा भक्षणीया सुरैरपि ॥ ५५ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौहभस्म, शुद्ध विष, कुड़ेकी छाल, वायविडंग, केसर, मोथा, इलायची. ग्रन्थिक (पिप्पलीमूल), रेणुका (सम्भालूके बीज) त्रिकटु (सोंठ मिर्च, पिप्ली) त्रिफला, चीता और शुद्ध जमालगोटा, ये द्रव्य समभाग तथा जो परिमाण इन सबका हो, उसका दूना गुड़ ले। सर्वप्रथम पारा-गंधककी कज्जली करके सब चीजें एक साथ घोंट ले। घुँट जानेपर इमलीके बीज बराबर चिपटी गोलियें बना ले। यदि नित्य प्रातःकाल इस रसका सेवन करे तो कास, श्वास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, अजीर्ण, ग्रहणी, शूल, पाण्डुरोग, गुदाशूल, हृदयशूल, वातरोग गलग्रह, अरुचि. अतीसार और सूतिकारोग दूर हो जाता है। यह जया बटी देवताओंके लिए भी उपयोगी है ॥५१–५५॥

विजया गुटिका

सूतकं गन्धकं लौहं विषं चित्रकपत्रकम्।
विडङ्गरेणुकामुस्तमेलाकेसरग्रन्थिकम् ॥ ५६ ॥
फलत्रिकं त्रिकटुकं शुल्वभस्म तथैव च।
एतानि समभागानि द्विगुणो दीयते गुडः ॥ ५७ ॥
कासे श्वासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे।
सूतायां ग्रहणीरोगे शूले पाण्ड्वामये तथा।
हस्तपादादिदाहे च गुटिकेयं प्रशस्यते ॥ ५८ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौहभस्म, शुद्ध विष, चीता, तेजपात, वायविडंग, रेणुका (सम्हालूके बीज) मोथा, इलायची, नागकेसर पिप्पलीमूल त्रिफला, सोंठ, मिर्च, पिप्पली और ताम्रभस्म ये चीजें समभाग लेकर सर्वप्रथम पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर अन्य सब द्रव्य एकमें मिलाकर खरलमें घोंटे और फिर जितना वजन सबको हो, उसका दूना पुराना गुड़ डालकर गोलियें बना ले। यह गुटिका कास श्वास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, प्रसूतज्वर, ग्रहणी, शूल, पांडु और हाथ-पैरकी जलनमें बहुत उपकार करती है।५६–५८॥

स्वच्छन्दभैरव रस

रसमेकं द्विधा गन्धं गन्धतुल्यञ्च सैन्धवम् ।
ज्वालामुखीरसैः पञ्च दिनानि परिमर्दयेत् ॥ ५९ ॥
मूषिकायां निरुध्याथ पुटेद्रात्रौ च मध्यमम् ।
सर्वं भस्म यदा याति वल्लमेनं प्रयच्छति ॥ ६० ॥
ग्रहण्यां संग्रहण्यां च कासे श्वासे विशेषतः ।
उग्रासु ज्वरतन्द्रासु निद्रास्वल्पासु योजयेत् ॥ ६१ ॥
अन्यरोगेषु तं दद्याद्रसं स्वच्छन्दभैरवम् ।
तुष्टिं पुष्टिमसौ कुर्यात्सौकुमार्यञ्च कारयेत् ॥ ६२ ॥

शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग और सैन्धव लवण २ भाग, इन्हें लेकर ज्वालामुखी (भेलावा) के रसमें पाँच दिनों तक घोंटे। घुट जानेपर इसे मूषामें बन्द करके एक रात मध्यम आँच दे। जब कि सभी चीजें भस्मके रूपमें परिणत हो जायँ, तब निकालकर रख ले। इसकी मात्रा १ वल्ल (रत्ती) होती है। ग्रहणी, संग्रहणी कास, श्वास, उग्र ज्वरकी तन्द्रा तथा साधारण अनिद्रारोगमें यदि यह रस दें तो बड़ा लाभ होता है। इनके अतिरिक्त और-और रोगोंमें भी यह काम आता है। यह रस तुष्टि (तृप्ति) तथा पुष्टि देता और शरीरको कोमल बनाता है ॥ ५९–६२ ॥

रसगुटिका

रसभागो भवेदेको गन्धको द्विगुणो मतः ।
त्रिभागा पिप्पली पथ्या चतुर्भागो विभीतकः ॥ ६३ ॥
पञ्चभागा त्वामला च षड्गुणा सप्तभागिका ।
भार्गी सर्वमिदं चूर्णं भाव्यं बब्बूलजैर्द्रवैः ॥ ६४ ॥
एकविंशतिवारञ्च मधुना गुटिका कृता ।
विभीतकप्रमाणेन प्रातरेकान्तु भक्षयेत् ।
कासं श्वासं हरेत्तन्द्राक्काथं तदनु कृष्णया ॥ ६५ ॥

शुद्ध पारा १ भाग शुद्ध गंधक २ भाग, पिप्पली ३ भाग, हरीतकी ४ भाग, बहेड़ा ५ भाग, आँवला ६ भाग और भार्गी ७ भाग, ये द्रव्य लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सबको एकमें घोंटकर बबूलके काथमें २१

बार भावना दे। तदनन्तर शहद मिलाकर बहेड़े बराबर गोलियें बनाकर रख ले। यदि प्रातःकाल एक गोलीका नित्य सेवन करे और ऊपरसे कटेरीके काढ़े-में पिप्पलीचूर्ण डालकर पिये तो कास-श्वास दूर हो जाते हैं॥ ६३–६५॥

रसेन्द्रगुटिका

माक्षिकञ्च शिखिग्रीवमभ्रकं तालकं तथा।
एतांस्तु मिलितान्सर्वान्भावयेदार्द्रकद्रवैः।
रक्तिद्वयप्रमाणान्तु कल्पयेद्गुटिकां भिषक्॥ ६६॥
जीर्णान्ने भक्षयेदेकां क्षीरमांसरसाशनः।
पंचकासं क्षयं श्वासं रक्तपित्तं विनाशयेत्॥ ६७॥
पाण्डुक्रिमिज्वरहरी कृशानां पुष्टिवर्द्धनी।
शुक्रवृद्धिकरी चैषा अम्लपित्तविनाशिनी।
वह्निसन्दीपनी श्रेष्ठा त्वरोचकविनाशिनी॥ ६८॥

स्वर्णमाक्षिकभस्म, शुद्ध तूतिया, अभ्रकभस्म और शुद्ध हड़ताल, इन सबको समभाग लेकर अदरखके रसमें भावना दे और फिर दो-दो रत्तीकी गोलियें बनाकर रख ले। भोजन पच जानेके बाद यदि यह एक गोली खाय और दूध तथा मांसरसका आहार करे तो पाँचों प्रकारकी खाँसी, क्षय, श्वास और रक्त-पित्त रोग दूर हो जाता है। यह पाण्डुरोग, क्रिमिरोग और ज्वर हरती, दुर्बलों-को तगड़ा बनाती, वीर्य बढ़ाती, अम्लपित्त रोगका शमन करती, उदर्य अग्नि-को उद्दीप्त करती और अरुचिको दूर भगाती है॥ ६६–६८॥

पुरन्दर वटी

सूतकाद्द्विगुणं गन्धमेकधा कज्जलीकृतम्।
त्रिकटु त्रिफलाचूर्णं प्रत्येकं सूतसम्मितम्॥ ६९॥
अजाक्षीरेण संभाव्य वटिकां कारयेत्ततः।
आर्द्रकस्य रसैः सेव्या शीततोयं पिबेदनु॥ ७०॥
कासश्वासप्रशमनी विशेषादग्निवर्द्धनी।
इयं यदि सदा सेव्या तदा स्याद्योगवाहिका।
वृद्धोऽपि तरुणः शक्तः स्त्रीशतेषु वृषायते॥ ७१॥

शुद्ध पारा १ भाग और शुद्ध गंधक २ भाग इनकी कज्जली करके सोंठ,

मिर्च, पिप्पली, त्रिफला, इनका चूर्ण एक-एक भाग लेकर मिलावे। फिर सबको पीसकर बकरीके दूधमें भावना दे और गोली बनाकर रख ले। यदि अदरखके रसमें नित्य इसकी एक गोलीका सेवन करे और ऊपरसे ठण्डा जल पिये तो यह पुरन्दर वटी श्वास-कास दूर करती और अग्निको उद्दीप्त करती है। यदि कोई सर्वदा इस वटीका सेवन करे तो यह योगवाही हो जाती है और इससे बूढ़ा मनुष्य भी जवान होकर सैकड़ों स्त्रियोंके साथ संभोग कर सकता है॥ ६६—७१॥

कासान्तक रस

सूतं गन्धो विषञ्चैव शालपर्णी च धान्यकम्।
यावन्त्येतानि चूर्णानि तावन्मात्रं मरीचकम्॥
गुञ्जाचतुष्टयं खादेन्मधुना कासशान्तये॥ ७२॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध विष, शालपर्णी और धनियाँ, ये द्रव्य सम-भाग लेकर जितनी वजन इन सबका हो, उतनी ही काली मिर्चका चूर्ण ले। पारे-गंधककी कज्जली करनेके बाद सबको एकमें घोंटकर रख ले। यदि मधुके साथ चार रत्ती कासान्तक रसका सेवन करे तो खाँसी दूर हो जाती है॥ ७२॥

कासकुठार

हिङ्गुलं मरिचं गन्धं त्र्यूषणं टङ्कणं तथा।
द्वि गुञ्जार्द्रकद्रावैः सन्निपातं सुदारुणम्।
कासं नानाविधं हन्ति शिरोरोगं विनाशयेत्॥ ७३॥

शुद्ध सिंगरिफ, काली मिर्च, शुद्ध गंधक, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, शुद्ध सोहा-गा, ये चीजें समभाग ले और एकमें घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोली बना ले। यदि अदरखके रसमें इसका सेवन करे तो दारुण सन्निपात, विविध भाँति-की खाँसी और सिरके रोग दूर हो जाते हैं॥ ७३॥

श्रीचन्द्रामृत लौह

त्रिकटु त्रिफला धान्यं चव्यं जीरकसैन्धवम्।
दिव्यौषधिहतस्यापि तत्तुल्यमयसो रजः॥ ७४॥
नवगुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक्।
प्रातःकाले शुचिर्भूत्वा चिन्तयित्वाऽमृतेश्वरीम्॥ ७५॥

एकैकां वटिकां खादेद्रक्तोत्पलरसालुताम्।
नीलोत्पलरसेनैव कुलत्थस्वरसेन च॥ ७६॥
निहन्ति विविधं कासं दोषत्रयसमुद्भवम्।
वातिकं पैत्तिकञ्चैव गरदोषसमुद्भवम्॥ ७७॥
सरक्तमथ नीरक्त ज्वरं श्वाससमन्वितम्।
भ्रमतृड्दाहशूलघ्नं रुच्यं वह्निप्रदीपनम्॥ ७८॥
वलवर्णकरं वृष्यं जीर्णज्वरविनाशनम्।
इदं चन्द्रामृतं लौहं चन्द्रनाथेन निर्मितम्॥ ७९॥

सोंठ, मिर्च, पिप्पली, त्रिफला, धनियाँ, चव्य, जीरा और सेंधा नमक ये सभी चीजें समभाग और मैनसिलके साथ भस्म की हुई लौहभस्म उतना ले, जितना कि ऊपर लिखी वस्तुओंका परिमाण हो। इन सबको एकमें घोंटकर नौ-नौ रत्तियोंकी गोली बना ले। प्रातःकालके समय पवित्र हो तथा भगवती अमृतेश्वरीका ध्यान करके नित्य एक गोलीका सेवन करे और ऊपरसे लाल कमल अथवा नील कमलका रस तथा कुलथीका स्वरस पिये तो वात-पित्त-कफ इन तीनों दोषोंसे जायमान नाना प्रकारकी खाँसियें दूर हो जाती हैं। इसके अतिरिक्त वातिक, पैत्तिक, विषदोषज, रक्तसहित एवं रक्तरहित खाँसी और श्वासरोग युक्त ज्वर इस लौहसे दूर हो जाता है और भ्रम, तृष्णा, दाह तथा शूल शान्त होता है। यह चन्द्रामृत लौह रुचिकारी, अग्निका उद्दीपक, बलवर्णकारक, वृष्य और जीर्णज्वरका विनाशक है। इस लौहको श्रीचन्द्रनाथने आविष्कृत किया है॥ ७४—७९॥

श्रीचन्द्रामृत रस

रसगन्धकलौहानां प्रत्येकं कार्षिकं क्षिपेत्।
टङ्कणस्य पलं दत्त्वा मरिचस्य पलार्द्धकम्॥ ८०॥
त्रिकटु त्रिफला चव्यं धान्यजीरकसैन्धवम्।
प्रत्येकं तोलकं ग्राह्यं छागीदुग्धेन पेषयेत्।
नवगुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक्॥ ८१॥
प्रातःकाले शुचिर्भूत्वा चिन्तयित्वाऽमृतेश्वरीम्।
एकैकां वटिकां खादेद्रक्तोत्पलरसेन च॥ ८२॥

नीलोत्पलरसेनापि कुलत्थस्वरसेन च।
छागीक्षीरेण मण्डेन केशराजरसेन च ॥ ८३ ॥
निहन्ति विविधं कासं वातरक्तसमुद्भवम्।
वातश्लेष्मज्वरं कासं पित्तश्लेष्मज्वरं तथा।
वातिकं पैत्तिकं वाऽपि गरदोषसमन्वितम् ॥ ८४ ॥
वासा गुडूचिका भार्गी मुस्तकं कण्टकारिका।
समभागकृतं क्वाथं प्रत्यहं भक्षयेदनु ॥ ८५ ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक एक-एक कर्ष, शुद्ध सोहागा एक पल, काली मिर्च आधा पल, सोंठ, मिर्च पिप्पली, त्रिफला, चव्य, धनियाँ, जीरा, सेंधा नमक ये चीजें एक-एक तोला ले। सर्वप्रथम पारे-गंधककी कज्जली करके सबको बकरीके दूधमें घोंटकर नौ-नौ रत्तीकी गोलियें बना ले। प्रातःकालके समय पवित्र होकर अमृतेश्वरीका ध्यान करे। फिर इस रसकी एक गोली रक्तकमल, नीलकमल या कुलथीके स्वरस, बकरीके दूध, माड़ तथा केशराजके रसमें खाय तो वातरक्तसे जायमान विविध प्रकारकी खाँसियें, वात-श्लेष्मजनित ज्वर, खाँसी, पित्तश्लेष्मज्वर, वातिक, पैत्तिक तथा विषदोषयुक्त ज्वर दूर हो जाता है। यह रस खानेके बाद अडूसा गुरुच, भार्गी, मोथा और कटेरी समभाग ले और इनका काढ़ा बनाकर नित्य पिये ॥८०—८५॥

अमृतमञ्जरी रस

हिङ्गुलञ्च विषञ्चैव कणा मरिचटङ्कणम्।
जातीकोष समं सर्वं जम्बीररसमर्दितम् ॥ ८६ ॥
रक्तिमानां वटीं कुर्यादार्द्रकद्रवसंयुताम्।
वटीद्वयं त्रयं खादेत्सन्निपातं सुदारुणम् ॥ ८७ ॥
अग्निमान्द्यमजीर्णञ्च सामवातं सुदारुणम्।
उष्णतोयानुपानेन सर्वं व्याधिं नियच्छति ॥ ८८ ॥
कासं पञ्चविधं श्वासं सर्वाङ्गग्रहमेव च।
जीर्णज्वरं क्षयं कासं हन्यादमृतमञ्जरी ॥ ८९ ॥

शुद्ध सिंगरिफ, शुद्ध विष, पिप्पली, काली मिर्च शुद्ध सोहागा और जावित्री; ये द्रव्य समभाग लेकर जँभीरी नीबूके रसमें घोंटे। घुट जानेपर रत्ती-

रत्ती भरकी गोलियें बना ले। यदि यह दो या तीन गोली अदरकके रसमें खाय तो दारुण सन्निपात, अग्निमान्द्य, अजीर्ण तथा घोर आमवात रोग दूर हो जाते हैं। इसका अनुपान गरम जल है। इसके साथ अमृतमंजरीका सेवन करनेसे सब व्याधियाँ दूर हो जाती हैं। पाँचों प्रकारकी खाँसी, श्वास, सारे शरीरकी जकड़न, जीर्णज्वर, क्षय और कासको अमृतमंजरी रस मार भगाता है ॥ ८६–८६ ॥

कासान्तक रस

त्रिफला व्योषचूर्णञ्च समभागं प्रकल्पयेत्।
मधुना सह पानात्तु दुष्टकासं नियच्छति ॥ ९० ॥

त्रिफला, सोंठ, मिर्च और पिप्पली, ये द्रव्य समभाग लेकर एकमें घोंट ले। यदि शहदके साथ इसका एक मासा चूर्ण सेवन करे तो दुष्ट खाँसी भी निवृत्त हो जाती है ॥९०॥

बृहच्छृङ्गाराभ्र रस

पारदं गन्धकञ्चैव टङ्गणं नागकेसरम्।
जातीकोषञ्च कर्पूरं लवंगं तेजपत्रकम् ॥ ९१ ॥
सुवर्णञ्चापि प्रत्येकं कर्षमात्रं प्रकल्पयेत्।
शुद्धकृष्णाभ्रचूर्णन्तु चतुष्कर्षं प्रयोजयेत् ॥ ९२ ॥
तालीशं घनकुष्ठञ्च मांसी त्वग्धातकी तथा।
एलाबीजं त्रिकटुकं त्रिफला करिपिप्पली ॥ ९३ ॥
कर्षद्वयं वा चैतेषां पिप्पलीक्वाथमर्दितम्।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं चोचं क्षौद्रसमायुतम् ॥ ९४ ॥
अग्निमान्द्यादिकान्रोगानरुचिं पाण्डुकामलाम्।
उदराणि तथा शोथमानाहं ज्वरमेव च ॥ ९५ ॥
ग्रहणीं श्वासकासञ्च हन्याद्यक्ष्माणमेव च।
नानारोगप्रशमनं बलवर्णाग्निकारकम् ॥ ९६ ॥
बृहच्छृङ्गाराभ्रनाम विष्णुना परिकीर्त्तितम्।
एतस्याभ्यासमात्रेण निर्व्याधिर्जायते नरः ॥ ९७ ॥

शुद्ध सोहागा, नागकेसर, जावित्री, कपूर, लौंग, तेजपात और सुवर्णभस्म,

ये सभी द्रव्य एक-एक कर्ष लेकर पहले पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सबको एकमें खरल करके कृष्ण अभ्रकभस्म चार कर्ष मिलावे। फिर तालीसपत्र, मोथा, कूठ, जटामासी, दालचीनी, धायके फूल, इलायची, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, त्रिफला और गजपिप्पली, इन चीजोंका चूर्ण दो-दो कर्ष डालकर सबको पिप्पलीके क्वाथसे घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। यदि दालचीनीके चूर्ण और शहदके साथ इसे सेवन करे तो मन्दाग्नि, पाण्डु, कामला, उदररोग, शोथ, आनाह, ज्वर, ग्रहणी, श्वास, कास और यक्ष्मारोग निवृत्त हो जाता है। यह श्रृंगाराभ्र रस विविध रोगोंका नाशक तथा बल-वर्ण एवं अग्निवर्धक है। स्वयं विष्णुभगवानने इसका आविष्कार किया था। इस रसका सेवन करनेमात्रसे मनुष्य नीरोग हो जाता है ॥११-१७॥

इति 'रसायनी' भाषाटीकासहिते रसेन्द्रसारसंग्रहे कासचिकित्सा समाप्ता।

अथ हिक्का-श्वासचिकित्सा।

सूर्यावर्त रस

गन्धकं सूतकं मर्द्यं यामैकं कन्यकाद्रवैः।
द्वयोस्तुल्यं ताम्रपत्रं पूर्वकल्केन लेपयेत् ॥ १ ॥
दिनैकं हण्डिकायन्त्रे पचेच्छीतं समुद्धरेत्।
शुर्य्यावर्त्तरसो नाम द्विगुञ्जः श्वासकासनुत् ॥ २ ॥
इन्द्रवारुणिकामूलं देवदारु कटुत्रयम्।
शर्करासहितं खादेदूर्ध्वश्वासनिवृत्तये ॥ ३ ॥

शुद्ध गंधक और शुद्ध पारा, दोनों समभाग लेकर कज्जली कर ले। फिर इसे घीगुवारके रसमें पहर भर घोंटे। इन दोनोंकी जितनी वजन हो, उतनी वजनका एक शुद्ध ताम्रपत्र लेकर उसीपर यह कल्क लीप दे। इस पत्तरको एक मिट्टीके पात्रमें रखकर उसका मुँह बन्द करके भट्ठी पर चढ़ा दे और दिनभर आँच देकर पकावे। शीतल होनेपर पात्रमेंसे रस निकाल ले। यदि दो रत्ती इसका सेवन करे तो श्वास और कास दोनों निवृत्त हो जाते हैं। अथवा इन्द्रायनकी जड़, देवदारु, सोंठ, मिर्च तथा पिप्पली ये चीजें समभाग

लेकर सब एकमें पीस डाले। यदि शक्करमें मिलाकर इसे खाय तो उर्ध्वश्वास रोग छूट जाता है ॥ १-३ ॥

विजय वटी

गन्धकं सूतकं लौहं विषमभ्रकमेव च।
विडङ्गं रेणुकं मुस्तमेलाग्रन्थिककेशरम् ॥ ४ ॥
त्रिकटु त्रिफला ताम्रं शुद्धं जैपालचित्रकम्।
एतानि समभागानि द्विगुणो दीयते गुडः ॥ ५ ॥
कासे श्वासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे।
सूतायां ग्रहणीदोषे शूले पाण्ड्वामये तथा।
हस्तपादादिदाहेषु वटिकेयं प्रशस्यते ॥ ६ ॥
घृतेन पाचयेन्मूलं पत्रञ्च वासकस्य च।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय कासे श्वासे क्षये तथा ॥ ७ ॥
देवदारु पिप्पली च शुण्ठीचूर्णं समं तथा।
ऊर्ध्वश्वासं सदा हन्ति पिबेदुष्णजलेन च ॥ ८ ॥

शुद्ध गंधक, शुद्ध पारा, लौहभस्म, शुद्ध विष, अभ्रकभस्म, वायविडंग, रेणुका (सम्हालूके बीज), मोथा, इलायची, पिप्पलीमूल, नागकेसर, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, त्रिफला, ताम्रभस्म, शुद्ध जयपाल (जमालगोटा) और चीता, ये द्रव्य समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सब द्रव्य एकमें मिलाकर चूर्ण कर ले और सबका दूना पुराना गुड़ मिलाकर गोली बना डाले। यह वटी कास, श्वास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, प्रसूतीरोग, ग्रहणी, शूल, पाण्डुरोग और हाथ-पैर आदिकी दाह आदि रोग दूर करती है। अडूसेकी जड़ और पत्तीको घीमें पकाकर यदि नित्य प्रातःकाल खाय तो भी कास, श्वास और क्षयरोग निवृत्त हो जाता है ॥ ४-७ ॥ अथवा देवदारु, पिप्पली और सोंठ, ये चीजें समभाग लेकर चूर्ण करके रख ले। यदि गरम पानीके साथ इसे सेवन करे तो ऊर्ध्वश्वास रोग दूर होता है ॥ ८ ॥

लौहपर्पटी रस

भागौ रसस्य गन्धस्य द्वावेकौ लौहभस्मतः।
एतद्घृष्टं द्रवीभूतं मृद्वग्नौ कदलीदले ॥ ९ ॥

पातयेद्गोमयगते तथैवोपरि योजयेत्।
ततः पिष्ट्वा द्रवैरेभिः सप्तधा भावयेत्पृथक् ॥ १० ॥
भार्गी मुण्डी मुनिवरा जया निर्गुण्डिका तथा।
व्योषवासककन्यार्द्रद्रवैस्तस्मात्पुटे पचेत् ॥ ११ ॥
आगन्धं खर्परे ताम्रे पर्पट्याख्यो रसो भवेत्।
सर्वरोगहरस्तैस्तैरनुपानैर्हि माषकैः ॥ १२ ॥
ताम्बूलीपत्रसहितः श्वासकासहरः परः।
सकणः सुरसाकाथोऽनुपानं वासकाजलम् ॥ १३ ॥
अम्लिकातैलवार्त्ताकुकूष्माण्डं कदलीफलम्।
वर्ज्यं मांसरसं सर्वं पथ्यं दद्याद्विचक्षणः।
वर्जयेच्च विशेषेण कफकृत्स्त्रीसुखादिकम् ॥ १४ ॥

शुद्ध पारा २ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग और लौहभस्म १ भाग ले। पहले गंधक-पारेकी कज्जली करे। फिर लौहभस्म डालकर घोंटे। घुँट जानेपर इस कल्कको एक लोहेकी कलछुलमें रक्खे और आँचपर रखकर पिघलावे। पिघल जानेपर इसे गोबरपर फैलाये हुए केलेके पत्तेपर उलट दे। इसके ऊपरसे भी केलेके पत्ते बिछाकर दाब दे। इस प्रकार पर्पटी बनाकर फिरसे घोंटे और भारंगी, मुण्डी, अगस्त्य, त्रिफला, भाँग, निर्गुण्डी, त्रिकटु, अडूसा, घीगुवार और अदरख, इनमेंसे प्रत्येकके रसमें सात-सात बार भावना देकर सुखा ले और ताँबेके पात्रमें सम्पुटित करके आँच दे। जब उसमेंसे गंधकको गंध आने लगे, तब आँच बन्द कर दे। शीतल होनेपर निकाल ले और चूर्ण करके रख ले। यही लौहपर्पटी रस है। इस रसको यदि मासे-मासे भर भिन्न-भिन्न अनुपानके साथ सेवन करे तो सब रोग निवृत्त हो जाते हैं। यदि पानके रसमें इसे खाय तो श्वास-कास रोग दूर हो जाते हैं। इसका अनुपान पिप्पलीचूर्णमिश्रित तुलसीका काढ़ा अथवा अडूसेका रस है। इस रसका सेवन करनेवाला रोगी इमली, तेल, मंठा, पेठा और केला त्याग दे। मांसरस आदि पथ्य इसके लिए उपयुक्त है। विशेष करके कफ बढ़ानेवाली चीजें न खाय और नारीसम्भोग आदि सुखोंसे दूर रहे ॥ ९–१४ ॥

ताम्रपर्पटी

लौहस्थाने ताम्रयोगात्ताम्रपर्पटिका भवेत् ॥ १५ ॥

उपर्युक्त योगमें ही यदि लौहभस्मके स्थानपर ताम्रभस्म डाल दे तो वह ताम्रपर्पटी हो जाती है। इससे भी कई विशेष लाभ होते हैं ॥ १५ ॥

पिप्पल्याद्य लौह

पिप्पल्यामलकी द्राक्षा कोलास्थि मधु शर्करा।
विडङ्गपुष्करैर्युक्तं लौहं हन्ति सुदारुणाम्।
छर्दिं हिक्कां तथा तृष्णां त्रिरात्रेण न संशयः ॥ १६ ॥

पिप्पली, आँवला, मुनक्का, बेरकी गुठलीका गूदा, मुलेठी, शक्कर, वायविडंग और पुष्करमूल, ये चीजें समभाग ले और सबके बराबर लौहभस्म डालकर मर्दन करे। इस लौहका सेवन करनेसे वमन, हिक्का और तृष्णारोग तीन दिनमें दूर हो जाता है ॥ १६ ॥

श्वासकुठार रस

टङ्कणं पारदं गन्धं शिलां विषकटुत्रिकम्।
निष्पिष्य वटिका कार्या बाणगुञ्जाप्रमाणतः ॥ १७ ॥
उष्णोदकं पिबेच्चानु क्षुद्राक्वाथमथापि वा।
कासं पञ्चविधं हन्ति श्वासं श्लेष्मसमुद्भवम्।
शिरोरोगं निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥ १८ ॥

शुद्ध सोहागा, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, मैनसिल, शुद्ध विष, त्रिकटु, (सोंठ, मिर्च, पिप्पली) ये सभी चीजें समभाग ले और भलीभाँति घोंटकर पाँच-पाँच रत्तीकी गोलियें बना ले। इसे खाकर ऊपरसे गरम पानी या कटेरीका काढ़ा पिये तो पाँचों प्रकारकी खाँसियें और कफजनिक श्वासरोग निवृत्त हो जाता है। शिरोरोगको तो यह रस इस तरह नष्ट करता है, जैसे इन्द्रका वज्र (बिजली) वृक्षोंको धराशायी कर देता है ॥ १७ ॥ १८ ॥

श्वास-कासचिन्तामणि रस

पारदं माक्षिकं स्वर्णं समांशं परिकल्पयेत्।
पारदार्धं मौक्तिकञ्च सूताद्द्विगुणगन्धकः ॥ १९ ॥

अभ्रञ्चैव तथा योज्यं व्योम्नो द्विगुणलौहकम् ।
कण्टकारीरसेनैव छागीदुग्धेन च पृथक् ॥ २० ॥
यष्टीमधुरसेनैव पर्णपत्ररसेन च ।
भावयेत्सप्तवारञ्च द्विगुञ्जां वटिकां भजेत् ।
पिप्पलीं मधुसंयुक्तां श्वासकासविमर्दिनीम् ॥ २१ ॥

शुद्ध पारा, स्वर्णमाक्षिकभस्म और स्वर्णभस्म, ये तीनों एक-एक भाग, मोतीभस्म आधा भाग, शुद्ध गंधक एक भाग, अभ्रकभस्म दो भाग और लौह-भस्म चार भाग लेकर कज्जली करे । फिर सबको एक साथ घोंटे । घुँट जानेपर कटेरी, मुलैठी तथा पानके रस और बकरीके दूध, इनमें अलग-अलग सात बार भावना देकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले । पिप्पली और मधुमें मिला-कर यदि इस रसका सेवन करे तो श्वास और कास दोनों ही निवृत्त हो जाते हैं ॥ १९-२१ ॥

अन्य श्वासकुठार रस

रसं गन्धो विषं टङ्कं शिलांपणकटुत्रयम् ।
सर्वं सम्मर्द्य दातव्यो रसः श्वासकुठारकः ।
वातश्लेष्मसमुद्भूतं श्वासं कासं क्षयं जयेत् । २२ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध वत्सनाभ विष, शुद्ध सोहागा, शुद्ध मैनसिल, काली मिर्च, सोंठ और पिप्पली, ये चीजें समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे । फिर सबको एकमें घोंटकर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले । इसका सेवन करनेसे वायु और कफजनित श्वास, कास एवं क्षयरोग दूर होता है ॥ २२ ॥

अथवा

रसं गन्धो विषञ्चैव टङ्कणं समनःशिलम् ।
एतानि समभागानि मरिचं तच्चतुर्गुणम् ॥ २३ ॥
त्रिभागं त्र्यूषणं ज्ञेयं खल्ले सर्वं विचूर्णयेत् ।
रसः श्वासकुठारोऽयं द्विगुञ्जः श्वासकासजित् ॥२४ ॥
गता संज्ञा यदा पुंसां तदा नस्यं प्रदापयेत् ।
त्रापयेन्नासिकारन्ध्रे संज्ञाजननमुत्तमम् ॥ २५ ॥

प्रतिश्यायन्नतक्षीणमेकादशविधं क्षयम्।
हृद्रोगं श्वासशूलञ्च स्वरभेदं सुदारुणम्।
सन्निपातं तथा घोरं तन्द्रामोहान्वितं जयेत्॥ २६॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध विष, शुद्ध सोहागा, शुद्ध मैनसिल, ये वस्तुयें समभाग और इन सबके बराबर काली मिर्च लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सोंठ मिर्च, पिप्पलीका चूर्ण तथा ऊपर लिखी अन्य वस्तुयें कज्जली-में मिलाकर भली भाँति घोंट ले। दो रत्ती इस श्वासकुठार रसको देनेसे श्वास-कास दूर हो जाते हैं। जब कोई रोगी अचेत हो जाय तो इसका नस्य दे। नाकोंमें इसे सुँघाते ही चेतना आ जाती है। इसके अतिरिक्त जुकाम, क्षत-क्षीण तथा ग्यारह प्रकारके क्षयरोग, हृदयके रोग, श्वास, शूल, दारुण स्वर-भेद, तन्द्रा और मोहयुक्त सन्निपात भी दूर भाग जाता है ॥ २३–२६ ॥

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे 'रसायनी' भाषाटीकायां हिक्का-श्वासचिकित्सा समाप्ता।

अथ स्वरभेदचिकित्सा।

भैरव रस

रसं गन्धं विषं टङ्कं मरिचं चव्यचित्रकम्।
आर्द्रकस्वरसेनैव सम्मर्द्य वटिकां ततः॥ १॥
गुञ्जात्रयप्रमाणेन खादेत्तोयानुपानतः।
स्वरभेदं निहन्त्याशु श्वासं कासं सुदुस्तरम्॥ २॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध विष, काली मिर्च, चव्य और चीता, ये द्रव्य समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सबको अदरखके रसमें खूब घोंटकर तीन-तीन रत्तीकी गोलियें बना ले। यदि जलके साथ इसकी एक गोली खायी जाय तो स्वरभेद, भयानक खाँसी और दमा दूर हो जाता है ॥१॥२॥

चव्यादि चूर्ण

चव्याम्लवेतसकटुत्रयतिन्तिडीकतालीशजीरकतुगादहनैः समांशैः।
चूर्णं गुडप्रमृदितं त्रिसुगन्धियुक्तं वैस्वर्य्यपीनसकफारुचिषु प्रशस्तम्॥३॥

अनेनैवानुपानेन भस्मसूतं प्रयोजयेत् ।
योगवाहिरसञ्चापि योजयन्ति भिषग्वराः ॥ ४ ॥
सशर्करं शुण्ठिचूर्णं क्षौद्रेण सह योजितम् ।
कोकिलस्वर एव स्याद्गुडिकाभुक्तमात्रतः ॥ ५ ॥

चव्य, अमलवेत, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, इमली, तालीसपत्र, जीरा, वंशलोचन, चीता, इलायची, दारुचीनी और तेजपात, ये चीजें समभाग और सब द्रव्योंके बराबर पुराना गुड़ डालकर मासे-मासे भरकी गोलियें बना ले। इस चूर्णका सेवन करनेसे स्वरभेद, पीनस और कफजनित अरुचि आदि रोग दूर हो जाते हैं। यदि इसी गोलीके साथ रत्ती भर रससिन्दूर अथवा अन्य किसी योगवाही रसका सेवन करे तो भी स्वरभंग दोष दूर हो जाता है। यदि शक्करमें सोंठका चूर्ण और मधु मिलाकर यह गोली खाय तो खाते ही स्वरभंग दोष दूर हो जाता है और गलेमें कोकिलके स्वर जैसी मिठास आ जाती है ॥३–५॥

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे 'रसायनी' भाषाटीयां स्वरभेदचिकित्सा समाप्ता ।

अथ अरोचकचिकित्सा ।

सुधानिधि रस

रसगन्धौ समौ शुद्धौ दन्तीक्वाथेन भावयेत् ।
जम्बीरस्य रसेनैव आर्द्रकस्य रसेन च ॥ १ ॥
मातुलुङ्गस्य तोयेन तथा मज्जरसेन च ।
पश्चाद्विशोष्य सर्वांशं टङ्कणञ्चावचारयेत् ॥ २ ॥
देवपुष्पं बाणमितं रसपादं मृतामृताम्
माषमात्रञ्च तत्सर्वं नागरेण गुडेन वा ॥ ३ ॥
सर्वारोचकशूलार्त्तिसामवातं सुदारुणम् ।
विसूचीञ्चाग्निमान्द्यञ्च भक्तद्वेषञ्च दारुणम् ।
रसोऽयं वारयत्याशु केसरी करिणं यथा ॥ ४ ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक दोनों समभाग लेकर कज्जली करे। फिर जम्भीरी नीबू, अदरख, मातुलुङ्ग (बिजौरा नीबू) तथा सेंहुड़, इनमेंसे हर एकके रसमें भावना देकर सुखा ले। तदनन्तर इसमें शुद्ध सोहागा पारेका

दुगुना, लौंगका चूर्ण पँचगुना और शुद्ध विष पारेकी एक चौथाई डालकर भली-भाँति खरल कर ले। यदि एक मासा सुधानिधि रस सोंठके चूर्ण अथवा पुराने गुड़में मिलाकर खाय तो यह सभी प्रकारकी अरुचि, शूल, दारुण आमवात, विसूची, मन्दाग्नि एवं भयानक अरुचिको इस तरह दूर करता है जैसे सिंह हाथियोंको मार भगाता है ॥ १–४ ॥

सुलोचनाभ्र

पलं सुजीर्णं गगनन्तु वन्त्रकं तेजोवतीकोलमुशीरदाडिमम्।
धात्र्यम्लरोलीरुचकं पृथग्दशपलोन्मितं मर्दितमेव सेवितम् ॥५॥
अरोचकं वातकफत्रिदोषजं पित्तोद्भवं गन्धसमुद्भवं नृणाम्।
कासं स्वराघातमुरोग्रहं रुजं श्वासं बलासञ्च यकृद्भगन्दरम् ॥६॥
प्लीहाग्निमान्द्यं श्वयथुं समीरणं मेहं भृशं कुष्ठमसृग्दरं कृमिम्।
शूलाम्लपित्तक्षयरोगमुद्धतं सरक्तपित्तं वमिदाहमश्मरीम्।
निहन्ति चार्शांसि सुलोचनाभ्रकं बलप्रदं वृष्यतमं रसायनम् ॥७॥

बढ़िया अभ्रकभस्म, चव्य, बेरकी गुठलीका गूदा, खस, अनार, आँवला, ये द्रव्य एक-एक पल और चाँगेरीका रस तथा बिजौरे नीबूका रस दोनों दस दस तोला लेकर सब चीजें एकमें घोंट ले। इसका सेवन करनेसे वात, कफ तथा दूषित गन्धजनित अरुचि, खाँसी, स्वराघात, उरोग्रह (छातीकी दर्द), श्वास, कफ, यकृत्, भगंदर, तिल्ली, मन्दाग्नि, शोथ, वातरोग, प्रमेह, कुष्ठ, रक्तप्रदर, कृमि, शूल, अम्लपित्त, उद्धत क्षयरोग, रक्तपित्त, वमन, पथरी, दाह और अर्श (बवासीर) ये सभी रोग नष्ट हो जाते हैं। यह बलदायक और अतिशय वृष्य रसायन है। इसका नाम सुलोचनाभ्र है ॥ ५–७ ॥

शुद्धसूत योग

ससूतमरुचिघ्नं स्यात्तिन्तिडीकगुडोषणम्।
मृद्वीका जीरकं कृष्णा मातुलुङ्गाम्लवेतसम् ॥ ८ ॥

रससिन्दूर, पुरानी पकी इमली, पुराना गुड़, काली मिर्च, मुनक्का, जीरा, पिप्पली, बिजौरा नीबूका रस और अम्लवेत ये सभी द्रव्य समभाग लेकर घोंट ले। इसका सेवन करनेसे सब प्रकारकी अरुचि दूर हो जाती है ॥ ८ ॥

इत्यरोचकचिकित्सा समाप्ता।

अथ छर्दिरोगचिकित्सा।

छर्दिसंहार रस

अजाजीधान्यपथ्याभिः सशुण्ठीभिः कटुत्रिकैः।
एभिः सार्द्धं भस्मसूतः सेव्यो वान्तिप्रशान्तये ॥ १ ॥

रससिन्दूर, जीरा, धनियाँ, हरीतकी, सोंठ, मिर्च, पिप्पली और कटेरी, ये चीजें समभाग लेकर एकमें घोंट ले। इसका सेवन करनेसे छर्दि (वमन) रोग शान्त हो जाता है ॥ १ ॥ इति छर्दिचिकित्सा समाप्ता।

अथ तृष्णारोगचिकित्सा।

महोदधि रस

ताम्रं चक्रिकया वङ्गं सूतं तालं सतुत्थकम्।
वटाङ्कुररसैर्भाव्यं तृष्णाहृद्वल्लमात्रतः ॥ १ ॥
सक्षौद्रमाम्रजम्बूत्थं पिबेत्क्वाथं पलोन्मितम्।
सकृष्णामधुना कुर्य्याद्गण्डूषं शीतले स्थितः ॥ २ ॥

ताम्रभस्म, वंगभस्म, शुद्ध पारा, शुद्ध हड़ताल और शुद्ध तूतिया, ये वस्तुयें समभाग लेकर घोंटे। उसके बाद बरगदके अंकुरोंके रसमें भावना दे और खरल करके रख ले। एक रत्ती यह रस सेवन करनेसे तृष्णारोग दूर हो जाता है। अथवा आम और जामुनके पत्तोंके पलभर काढ़ेमें मधु डालकर पीनेसे भी प्यास दूर हो जाती है। यदि इसके ठंढे काढ़ेमें पिप्पलीका चूर्ण और शहद डालकर पिये तो भी तृष्णारोग निवृत्त हो जाता है ॥ १ ॥ २ ॥

कुमुदेश्वर रस

मृतताम्रस्य भागौ द्वौ भागैकं वङ्गभस्मकम्।
यष्टीमधुरसैर्भाव्यं शुष्कं माषार्द्धकं शुभम्।
सेवयेच्चानुपानेन वक्ष्यमाणेन बुद्धिमान् ॥ ३ ॥
चन्दनं शारिवां मुस्तं क्षुद्रैलां नागकेशरम्।
सर्वंतुल्यां तथा लाजां पचेत्षोडशिकैर्जलैः ॥ ४ ॥

अर्द्धशेषं हरेत्काथं सिताक्षौद्रयुतन्तु तत्।
छर्दिं तृष्णां निहन्त्याशु रसोऽयं कुमुदेश्वरः॥ ५॥

ताम्रभस्म २ भाग और वंगभस्म १ भाग इन दोनोंको एकमें घोंट तथा मुलैठीके रसमें भावना देकर सुखा ले। यदि एक मासा यह रस निम्नलिखित अनुपानमें सेवन करे तो वमन और तृष्णा शान्त हो जाती है। अनुपान—लाल चन्दन, सरिवन, नागरमोथा, छोटी इलायची तथा नागकेसर ये चीजें समभाग और इन सबके बराबर धानका लावा लेकर सोलहगुना जलमें पकावे। जलकर जब आधा जल शेष रहे, तब उसमें मिश्री, मधु तथा एक मासा कुमुदेश्वर रस डालकर पिये॥ ३–५॥

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे 'रसायनी' भाषाटीकायां तृष्णाचिकित्सा समाप्ता।

अथ मूर्च्छारोगचिकित्सा।

सुधानिधि रस

कणामधुयुतं सूतं मूर्च्छायामनुशीलयेत्।
शीतसेकावगाहादि सर्वं वा शीतलं भजेत्।
सुधानिधिरसो नाम मदमूर्च्छाविनाशनः॥ १॥

यदि पिप्पलीचूर्ण और मधुमें रससिन्दूर मिलाकर सेवन करे तो मूर्च्छा दूर हो जाती है। मूर्च्छावस्थामें यह रस देनेके बाद रोगीपर ठंढे जलका छींटा देना और उसे ठंढे जलसे नहलाना आदि सभी शीतल उपचार करना चाहिये। यह सुधानिधि रस मद और मूर्च्छा रोग को नष्ट करनेमें समर्थ रस माना गया है॥१॥

इति मूर्छाचिकित्सा समाप्ता।

अथ मदात्ययचिकित्सा।

मदात्ययभञ्जन रस

सचव्यहिङ्गुरुचकं धन्याकं विश्वदीप्यकम्।
चूर्णं ससूतं मद्येन पीतं पानात्ययं जयेत्॥ १॥

रससिंदूर, चव्य, हींग, सोंचल लवण, धनियाँ, सोंठ और अजवायन, ये

सभी चीजें समभाग लेकर मदिराके साथ सेवन करनेसे मदात्यय रोग निवृत्त हो जाता है ॥ १ ॥

अष्टांग लवण

सौवर्चलमजाज्यञ्च वृक्षाम्लं साम्लवेतसम् ।
त्वगेला मरिचार्द्धांशं शर्करामधुयोजितम् ॥ २ ॥
हितं लवणमष्टाङ्गमग्निसन्दीपनं परम् ।
मदात्यये कफप्राये दद्यात्स्रोतोविशोधनम् ॥ ३ ॥

सोंचल नमक, जीरा, वृक्षाम्ल (चूक) और अमलवेत, ये सभी द्रव्य एक-एक भाग लेकर दालचीनी, छोटी इलायची और काली मिर्च ये तीनों आधा-आधा भाग ले । इन सबको एकमें पीसकर यदि शक्कर और शहदमें मिलाकर कफ-प्रधान मदात्यय रोगमें दिया जाय तो बड़ा लाभ हो । यह अष्टांग लवण अग्निका उद्दीपक और स्रोतःशोधक माना जाता है ॥ २ ॥ ३ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे 'रसायनी' भाषाटीकासहिते मदात्ययरोगचिकित्सा समाप्ता ।

अथ दाहचिकित्सा ।

दाहान्तक रस

सूतात्पञ्चार्कतश्चैकं कृत्वा पिण्डं सुशोभनम् ।
जम्बीरस्वरसैर्मर्द्यं सूततुल्यञ्च गन्धकम् ॥ १ ॥
नागवल्लीदलैः पिष्ट्वा ताम्रपत्रीं प्रलेपयेत् ।
प्रपुटेद्भूधरे यन्त्रे यावद्भस्मत्वमाप्नुयात् ॥ २ ॥
द्विगुञ्जमार्द्रकद्रावैस्त्र्यूषणेन च योजयेत् ।
निहन्ति दाहसन्तापं मूर्च्छां पित्तसमुद्भवाम् ॥ ३ ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक दोनों पाँच-पाँच तोले लेकर कज्जली करे । फिर दोनोंको एकमें घोंटकर गोला बना ले । उस गोलेको जँभीरी नीबूके रसमें भावना दे । तदनन्तर उसे पानके रसमें घोटकर एक शुद्ध ताम्रपत्रपर लीप दे । अब इस ताम्रपत्रको भूधरयंत्रमें रखकर तब तक आँच दे, जब तक कि ताम्रपत्र भस्म न बन जाय । भस्म हो जानेपर निकालकर घोंट ले । यदि अदरखके रस और त्रिकटु (सोंठ, मिर्च तथा पिप्पली) के चूर्णमें दो रत्ती दाहान्तक रसका

सेवन करे तो दाह, सन्ताप और पित्तजनित मूर्च्छा निवृत्त हो जाती है ॥१-३॥

इति रसेन्द्रसारसारसंग्रहे 'रसायनी' भाषाटीकायां दाहचिकित्सा समाप्ता।

अथोन्मादरोगचिकित्सा।

उन्मादगजांकुश रस

त्रिदिनं कनकद्रावैर्महाराष्ट्रीद्रवैः पुनः।
विषमुष्टिजलैः सूतं समुत्थाप्यार्कचक्रिकाम् ॥ १ ॥
कृत्वा तप्तां सगन्धां तां युक्त्या बन्धनमाचरेत्।
तत्समं कानकं बीजमभ्रकं गन्धकं विषम् ॥ २ ॥
मर्दयेत्त्रिदिनं सर्वं वल्लमात्रं प्रयोजयेत्।
दोषोन्मादं द्रुतं हन्ति भूतोन्मादं विशेषतः ॥ ३ ॥

शुद्ध पारा यथेष्ट मात्रामें लेकर धतूरेके रस, ब्रह्मदंडीके रस तथा कुचलेके रस, इन तीनों रसोंमें क्रमशः एक-एक दिन घोंटकर ऊर्ध्वपातन यंत्रसे उड़ा ले। अब पारेके बराबर शुद्ध गंधक मिलाकर दोनोंकी कज्जली करे। फिर इसे एक ताम्रसंपुटमें रखकर लघुपुटकी आँच दे। तत्पश्चात् इसे निकालकर शुद्ध धतूरेके बीज, अभ्रकभस्म एवं शुद्ध वत्सनाभ विष ये द्रव्य समभाग मिलाकर तीन दिन तक घोंटे और रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले। यह रस त्रिदोषजनित उन्माद और विशेष करके भूतोन्माद रोगको मार भगाता है ॥ १-३॥

भूतांकुश रस

सूतायस्ताम्रमभ्रञ्च मुक्तां चापि समं समम्।
सूतपादोत्तमं वज्रं शिलागन्धकतालकम् ॥ ४ ॥
तुत्थं रसाञ्जनं शुद्धमब्धिफेनं शिलाञ्जनम्।
पञ्चानां लवणानाञ्च प्रतिभागं रसोन्मितम् ॥ ५ ॥
भृङ्गराजचित्रवज्रिदुग्धेनापि विमर्दयेत्।
दिनान्ते पिण्डिकां कृत्वा रुध्वा गजपुटे पचेत् ॥ ६ ॥
भूताङ्कुशरसो नाम नित्यं गुञ्जाद्वयं लिहेत्।
आर्द्रकस्य रसेनापि भूतोन्मादनिवारणम् ॥ ७ ॥

पिप्पल्याक्तं पिबेच्चानु दशमूलकषायकम् ।
स्वेदयेत्कटुतुम्ब्या च तीक्ष्णं रूक्षञ्च वर्जयेत् ॥ ८ ॥
माहिषं च घृतं क्षीरं गुर्वन्नमपि भक्षयेत् ।
अभ्यङ्गं कटुतैलेन हितो भूताङ्कुशो रसः ॥ ९ ।

शुद्ध पारा, लौहभस्म, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म और मोतीभस्म, ये द्रव्य समभाग, हीराभस्म चौथाई भाग, शुद्ध मैनसिल, शुद्ध हड़ताल, शुद्ध तूतिया, रसौत, शुद्ध समुद्रफेन, शुद्ध मैनसिल और पाँचों नमक, ये द्रव्य पारेके बराबर लेकर भाँगरा, चीता और सेंहुड़के दूधमें दिनभर घोंटे । शामको पिण्डी बना तथा सम्पुटमें रखकर गजपुटमें फूँक दे । यदि इस भूताङ्कुश रसको नित्य दो रत्ती अदरखके रसमें चाटे तो भूतोन्माद दूर हो जाता है । इसका सेवन करनेके बाद दशमूलके काढ़ेमें पिप्पलीका चूर्ण डालकर पिये और कड़वी लौकीसे शरीरका स्वेदन करे । कोई तीखी और रूखी वस्तु न खाय । भैंसका घी, दूध और भारी अन्न खाय और शरीरमें कड़ुए तेलकी मालिश कराये ॥ ४–९ ॥

उन्मादभंजनी वटिका

शुद्धं मनःशिलाचूर्णं सैन्धवं कटुरोहिणी ।
वचा शिरीषबीजञ्च हिङ्गु च श्वेतसर्षपः ॥ १० ॥
करञ्जबीजं त्रिकटु मलं पारावतस्य च ।
एतानि समभागानि गोमूत्रैर्वटिकां कुरु ॥ ११ ॥
गिरिमल्लीबीजसमां छायाशुष्काञ्च कारयेत् ।
प्रातःसन्ध्यानिशाकाले चक्षुषोरञ्जनं हितम् ॥ १२ ॥
मधुरादिरनेनाञ्ज्यं रात्रावपि जलेन च ।
वटिकैका समाख्याता नाम्ना चोन्मादभञ्जनी ॥
चतुर्थकमपस्मारमथोन्मादं विनाशयेत् ॥ १३ ॥

शुद्ध मैनसिल, सेंधा नमक, कुटकी, वच, सिरसके बीज, हींग, सफेद सरसों कंजेके बीज, सोंठ, मिर्च, पिप्पली और कबूतरकी बीट, ये सभी चीजें समभाग पीस और गोमूत्रसे खरल करके इन्द्रजौके दानेके समान वटी बनाकर छायामें सुखा ले । प्रातःकाल, सन्ध्या-समय और रात्रिमें इसका अंजन

लगानेसे बहुत लाभ होता है। रात्रिके समय मधुर आदि रसों तथा जलमें भिगोकर इससे नेत्रमें अंजन करना चाहिए। इसका नाम उन्मादभंजनी वटिका है। यह चौथिया ज्वर, अपस्मार (मृगी) और उन्माद रोगको दूर करती है॥ १०–१३॥

त्रिकत्रयादि लौह

त्रिकत्रयसमायुक्तं जीवनीययुतं त्वयः।
हन्त्यपस्मारमुन्मादं वातव्याधिं सुदुस्तरम्॥ १४॥

हर्रा, बहेड़ा, आँवला, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, वायविडंग, चीता, नागरमोथा, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, जीवन्ती और मुलैठी, इनका चूर्ण समभाग ले। सबके बराबर लौहभस्म मिलाकर उपयोगमें लावें तो उन्माद, अपस्मार तथा भयानक वातव्याधि दूर हो जाती है॥ १४॥

उन्मादभञ्जन रस

त्रिकटु त्रिफला चैव गजपिप्पलिका तथा।
देवदारु विडङ्गञ्च किरातः कटुका तथा॥ १५॥
कण्टकारी च यष्टीन्द्रयवं चित्रकमेव च।
बला च पिप्पलीमूलं मूलञ्च वारणस्य च॥ १६॥
शोभाञ्जनस्य बीजानि त्रिवृता चेन्द्रवारुणी।
वङ्गं रूप्यकमभ्रञ्च प्रवालं समभागिकम्॥ १७॥
सर्वचूर्णसमं लौहं सलिलेन विमर्दयेत्।
उन्मादमपि भूतोत्थमुन्मादं वातजं तथा॥ १८॥
अपस्मारं तथा कार्श्यं रक्तपित्तं सुदारुणम्।

त्रिकटु (सोंठ, मिर्च, पिप्पली) त्रिफला, गजपिप्पली, देवदारु, वायबिडंग, चिरायता, कुटकी, कटेरी, मुलैठी, इन्द्रजौ, चीता, बरियारा, पिप्पलीमूल, खस, सहिंजनके बीज, त्रिवृत्, इन्द्रवारुणी, वंगभस्म, चाँदीभस्म, अभ्रकभस्म और मूँगाभस्म, ये द्रव्य समभाग लेकर सबके बराबर लौहभस्म डाल तथा जलसे घोंटकर गोलियें बना ले। उन्माद, भूतोन्माद, वातजनित उन्माद, अपस्मार,

कृशता और दारुण रक्तपित्त, इन रोगोंको यह उन्मादभंजन रस अवश्य नष्ट कर देता है ॥ १५–१६ ॥

चतुर्भुज रस

मृतसूतस्य भागौ द्वौ भागैकं हेमभस्मकम् ।
शिलाकस्तूरिका तालं प्रत्येकं हेमतुल्यकम् ॥ २० ॥
सर्वं खल्लतले क्षिप्त्वा कन्यया मर्दयेद्दिनम् ।
एरण्डपत्रैरावेष्ट्य धान्यगर्भे दिनत्रयम् ॥ २१ ॥
संस्थाप्य च तदुद्धृत्य सर्वरोगेषु योजयेत् ।
एतद्रसायनवरं त्रिफलामधुमर्दितम् ॥ २२ ॥
अपस्मारे ज्वरे कासे शोषे मन्दानले क्षये ।
हस्तकम्पे शिरःकम्पे गात्रकम्पे विशेषतः ॥ २३ ॥
तद्यथाग्निवलं खादेद्वलीपलितनाशनम् ।
वातपित्तसमुत्थांश्च कफजान्नाशयेद् ध्रुवम् ॥ २४ ॥
सर्वौषधिप्रयोगैर्ये व्याधयो न प्रसाधिताः ।
कर्मभिः पञ्चभिश्चैव मन्त्रौषधिप्रयोगतः ॥ २५ ॥
सर्वांस्तान्नाशयत्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ।
चतुर्भुजरसो नाम महेशेन प्रकाशितः ॥ २६ ॥

रससिन्दूर २ भाग, स्वर्णभस्म, शुद्ध मैनसिल, कस्तूरी और शुद्ध हड़ताल, ये प्रत्येक द्रव्य एक-एक भाग ले और इन सबको खरलमें डालकर दिन भर घोंटे। घुँट जानेपर पिण्डी वना ले और इस पिण्डीको रेंडके पत्तोंमें लपेटकर धानकी राशिमें तीन दिनके लिए गाड़ दे। फिर उसमेंसे निकाल तथा चूर्ण करके रख ले। रोगीका वल और पाचनशक्ति देकर वैद्य त्रिफला और मधुमें इसे सब रोगोंमें दे सकता है। इससे झुर्रियाँ और बालोंकी सफेदी दूर हो जाती है। अपस्मार, ज्वर, कास, शोष, मन्दाग्नि, क्षय, हस्तकम्प, मस्तककम्प, गात्रकम्प और वायु तथा पित्तसे जायमान सभी रोग इसका सेवन करनेसे नष्ट होते हैं। सभी औषधियों, वमन-विरेचादि पंचकर्मों तथा मन्त्र और औषधिका प्रयोग करनेपर जो रोग न हटे हों वे भी इस रससे ऐसे दूर होते हैं, जैसे वज्रपातसे वृक्ष गिर जाते हैं। चतुर्भुज रसको स्वयं महेश्वरने प्रचारित किया था ॥

उन्मादपर्पटी रस

कृष्णधुस्तूरजैर्बीजैः पञ्चभिः पर्पटीरसः ।
सम्प्रयोज्यः प्रशमयेदुन्मादं भूतसम्भवम् ॥ २७ ॥

काले धतूरेके पाँच बीज यदि पूर्वोक्त रसपर्पटीके साथ सेवन करे तो भूतोन्माद रोग नष्ट हो जाता है ॥ २७ ॥

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे 'रसायनी' भाषाटीकायामुन्मादचिकित्सा समाप्ता ।

अथापस्माररोगचिकित्सा

भूतभैरव रस

मृतसूतार्कलौहञ्च शिलागन्धकतालकम् ।
रसाञ्जनञ्च तुल्यांशं नरमूत्रेण मर्दयेत् ॥ १ ॥
तद्गोलं द्विगुणं गन्धं लोहपात्रे क्षणं पचेत् ।
पञ्चगुञ्जामितं खादेदपस्मारहरं परम् ॥ २ ॥
हिङ्गु सौवर्चं व्योषं नरमूत्रेण सर्पिषा ।
कर्षमात्रं पिबेच्चानु रसोऽयं भूतभैरवः ॥ ३ ॥

रससिंदूर, ताम्रभस्म, लौहभस्म, शुद्ध मैनसिल, शुद्ध गंधक, शुद्ध हड़ताल और रसौत, ये चीजें समभाग लेकर मनुष्यके मूत्रमें घोंटे । घुट जानेपर गोला बना ले । इस गोलेका दूना शुद्ध गंधक मिलाकर लौहपात्रमें क्षणभर पकावे । फिर इसे निकाल और चूर्ण करके रखले । अनुपानमें यदि पाँच रत्ती यह रस खाकर हींग, सोंचल नमक, त्रिकटु (सोंठ, मिर्च, पिप्पली), मनुष्यका मूत्र एवं घी इनको पिये तो अपस्मार दूर हो जाता है ॥ १–३ ॥

सूतभस्मप्रयोग

शङ्खपुष्पी वचा ब्राह्मी कुष्ठमेलारसैः सह ।
सूतभस्मप्रयोगोऽयं रक्तिकाद्वयमानतः ।
सर्वापस्मारनाशाय महादेवेन भाषितः ॥ ४ ॥

शंखपुष्पी, वच, ब्राह्मी, कूठ, इलायची, ये चीजें समभाग लेकर काढ़ा बना ले । उसमें दो रत्ती रससिन्दूर डालकर पिये तो सब प्रकारके अपस्मार दूर हो जाते हैं । यह साक्षात् शंकरभगवानका कथन है ॥ ४ ॥

इन्द्रब्रह्म वटी

मृतसूताभ्रकं तीक्ष्णं तारं ताप्यं विषं समम्।
पद्मकेशरसंयुक्तं दिनैकं मर्दयेद्द्रवैः ॥ ५ ॥
स्नुह्यग्निविजयैरण्डवचानिष्पावशूरणैः ।
निर्गुण्ड्याश्च द्रवैर्मर्द्यं तद्गोलं पाचयेत्पुनः ॥ ६ ॥
कङ्गुनीसर्षपोत्थेन तैलेन गन्धसंयुतम्।
ततः पक्त्वा समुद्धृत्य चणमात्रा वटी कृता ॥ ७ ॥
इन्द्रब्रह्मवटी नाम भक्षयेदार्द्रकद्रवैः।
दशमूलकषायञ्च कणायुक्तं पिबेदनु।
अपस्मारं जयत्याशु यथा सूर्योदयस्तमः ॥ ८ ॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, तीक्ष्ण लौहभस्म, चाँदीभस्म, स्वर्णमाक्षिकभस्म, शुद्ध विष और पद्मकेसर, ये सभी द्रव्य समभाग लेकर घोंटे फिर सेंहुड़, चीता, भाँग, एरण्ड, वच, निष्पाव (सेम), सूरन और सँभालू, एक-एक करके इन सबके रसमें क्रमशः एक-एक दिन घोंटकर गोला बना ले। अब उस गोलेको सरसोंके तेलमें ककुनी तथा गंधक डालकर पकावे। पक जानेपर निकालकर पुनः खरल करे और चने जैसी गोलियें बनाकर रख ले। इसका नाम इन्द्रब्रह्म वटी है। यदि अदरखके रसमें इसे खाकर दसमूलके काढ़ेमें पिप्पलीका चूर्ण डालकर पिये तो अपस्मार ऐसे भागता है, जैसे सूर्योदय होनेपर अन्धकार दूर भाग जाता है ॥ ५–८ ॥

वातकुलान्तक

मृगनाभिः शिला नागकेशरं कलिवृक्षजम्।
पारदो गन्धको जातीफलमेलालवङ्गकम् ॥ ९ ॥
प्रत्येकं कर्षार्द्धिकञ्चैव श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत्।
जलेन मर्दयित्वा तु वटीं कुर्य्याद्द्विरक्तिकाम्।
यथाव्याध्यनुपानेन योजयेच्च चिकित्सकः ॥ १० ॥
अपस्मारे महाघोरे मूर्छारोगे च शस्यते।
वातजान्सर्वरोगांश्च हन्यादचिरसेवनात् ॥ ११ ॥

नातः परतरं श्रेष्ठमपस्मारेषु वर्त्तते ।
ब्रह्मणा निर्मितः पूर्वं नाम्ना वातकुलान्तकः ॥ १२ ॥

कस्तूरी, शुद्ध मैनसिल, नागकेसर, कलिवृक्ष (बहेड़ा), शुद्ध गंधक, जूही, जायफल, इलायची और लौंग, ये सभी द्रव्य एक-एक कर्ष लेकर खूब महीन चूर्ण करे । इसके बाद जलसे घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले । चिकित्सक व्याधि और अनुपानको ध्यानमें रखते हुए महादारुण अपस्मार, मूर्छारोग तथा वायुसे जायमान सभी रोगोंमें इसका उपयोग करे तो यह कुछ ही समयमें सब रोगोंको नष्ट कर देता है । अपस्मारमें तो इससे बढ़कर और कोई औषधि ही नहीं है। बहुत दिनों पहले ब्रह्माजीने इस वातकुलान्तक रस-की रचना की थी ॥ ९–१२ ॥

इत्यपस्मारचिकित्सा समाप्ता ।

अथ वातव्याधिचिकित्सा ।

द्विगुणाख्य रस

गन्धकाद्द्विगुणं सूतं शुद्धं मृद्वग्निना क्षणम् ।
पक्त्वाऽवतार्य्य सञ्चूर्ण्य चैतत्तुल्याऽभयाऽन्वितम् ॥ १ ॥
सप्तगुञ्जामितं खादेद्वर्द्धयेच्च दिने दिने ।
गुञ्जैकैकक्रमेणैव यावत्स्यादेकविंशतिः ॥ २ ॥
क्षीराज्यशर्कराभिश्च शाल्यन्नं पथ्यमाचरेत् ।
कम्पवातप्रशान्त्यर्थं निर्वाते निवसेत्सदा ।
द्विगुणाख्यो रसो नाम त्रिपक्षात्कम्पवातजित् ॥ ३ ॥

शुद्ध गंधक १ भाग और शुद्ध पारा २ भाग, इन दोनोंको लेकर कज्जली करे । फिर इसे मन्द आँचपर क्षण भर पकाकर उतार ले । फिर इसमें ३ भाग हरड़का चूर्ण मिलाकर घोंट ले । इसका सेवन करनेवाला पहले दिन सात, दूसरे दिन आठ और तीसरे दिन नौ रत्ती, इस क्रमसे एक दिनमें इक्कीस रत्ती तक बढ़ाकर इसे खाय । पथ्यमें दूध, घी और शक्करके साथ शालिचावलका भात खाय । यदि कम्पवातकी चिकित्सा हो रही हो तो रोगी

सदा ऐसी जगह रहे, जहाँ हवाको पहुँच न हो। यह द्विगुणाख्य रस तीन पखवारेसें कम्पवातका शमन कर देता है ॥ १–३ ॥

वातगजांकुश

मृतं सूतं मृतं लौहं ताप्यं गन्धकतालकम्।
पथ्या शृङ्गी विषं व्योषमग्निमन्थश्च टङ्कटम् ॥ ४ ॥
तुल्यं खल्ले दिनं मद्यं मुण्डीनिर्गुण्डिकाद्रवैः।
द्विगुञ्जां वटिकां खादेत्सर्ववातप्रशान्तये ॥ ५ ॥
कणाचूर्णयुतश्चैव जिङ्गीकाथं पिवेदनु।
साध्यासाध्यं निहन्त्याशु रसो वातगजाङ्कुशः ॥ ६ ॥
सप्ताहाद्गृध्रसीं हन्ति दारुणं सान्निपातिकम्।
क्रोष्ठुशीर्षकवातञ्चाप्यवबाहुकसंज्ञकम् ॥ ७ ॥
ऊरुस्तम्भं हनुस्तम्भं मन्यास्तम्भं विनाशयेत्।
पक्षाघातादिरोगेषु कथितः परमोत्तमः ॥ ८ ॥
रसोऽम्बुशोपणो ह्यत्र युक्तोऽन्यो योगवाहिकः ॥ ९ ॥

रससिन्दूर, लौहभस्म, स्वर्णमाक्षिकभस्म, शुद्ध गंधक, शुद्ध हड़ताल, हरड़, काकड़ाशिंगी, शुद्ध विष, व्योष (सोंठ, मिर्च, पिप्पकी) अरणी और शुद्ध सोहागा ये सभी चीजें समभाग लेकर मुण्डी और सँभालूके रसमें दिन भर घोंटे। घुँट जानेपर दो-दो रत्तीकी गोली बनाकर रख ले। यदि पिप्पली-के चूर्णमें एक गोली यह रस खाकर ऊपरसे मंजीठका क्वाथ पिये तो यह वातगजांकुश रस सभी साध्य और असाध्य वातरोगोंको दूर कर देता है। यह एक सप्ताहमें सन्निपातजनित दारुण गृध्रसी रोगको शान्त करता है। शीर्षक, अपबाहुक, ऊरुस्तम्भ, हनुस्तम्भ; मन्यास्तम्भ और पक्षाघातादि रोगोंको दूर करनेके लिए यह सर्वोत्तम रस है। इसका सेवन करते हुए साथ-साथ कोई अम्बुशोषण और योगवाही रस भी लेते रहना चाहिये ॥४–९॥

बृहद्वातगजांकुश रस

सूताभ्रतीक्ष्णकान्तानि ताम्रतालकगन्धकम्।
स्वर्णं शुण्ठी वला धान्यं कट्फलञ्चाभया विषम्।
पथ्या शृंगी पिप्पली च मरिचं टंगणं तथा ॥ १० ॥

तुल्यं खल्ले दिनं मर्द्यं मुण्डीनिर्गुण्डिजैर्द्रवैः।
द्विगुञ्जां वटिकां खादेत्सर्ववातप्रशान्तये।
साध्यासाध्यं निहन्त्याशु बृहद्वातगजाङ्कुशः॥ ११॥

शुद्ध पारा, अभ्रकभस्म, तीक्ष्णलौहभस्म, ताम्रभस्म, शुद्ध हड़ताल, शुद्ध गंधक, स्वर्णभस्म, सोंठ, बला, धनियाँ, कायफल, हर्रा, शुद्ध विष, हरीतकी, काकड़ासिंगी, पिप्पली, काली मिर्च और शुद्ध सोहागा, ये सभी द्रव्य समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सब चीजें एकमें मिलाकर मुण्डी और निर्गुण्डीके रसमें एक-एक दिन घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। इसे खानेसे सब प्रकारके साध्य और असाध्य वातरोग दूर हो जाते है। इसका नाम है—बृहत् वातगजांकुश रस॥ १०॥ ११॥

महावातगजांकुश

मृताभ्रतीक्ष्णताम्रञ्च सूततालकगन्धकम्।
भार्गी शुण्डी बला धान्यं कट्फलञ्चाभया विषम्॥ १२॥
सर्पिष्य चपलाद्रावैर्निष्कैकां भक्षयेद्वटीम्।
वातश्लेष्महरो ह्येष महावातगजाङ्कुशः॥ १३॥

अभ्रकभस्म, तीक्ष्णलौहभस्म, ताम्रभस्म, शुद्ध पारा, शुद्ध हड़ताल, शुद्ध गंधक, भार्गी, सोंठ, बला, धनिया, कायफल, हरीतकी, शुद्ध विष, ये सभी वस्तुयें समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सब चीजें एक साथ घोंटे। घुँट जानेपर एक-एक निष्ककी गोलियें बना ले। इस महावातगजांकुश रसका सेवन करके ऊपरसे यदि पिप्पलीका काढ़ा पिये तो वातजनित तथा श्लेष्मजनित सभी रोग शान्त हो जाते हैं॥ १२॥१३॥

वातनाशन रस

सूतहाटकवज्राणि ताम्रं लोहञ्च माक्षिकम्।
तालं नीलाञ्जनं तुत्थं सिन्धुफेनं समांशिकम्॥ १४॥
पञ्चानां लवणानाञ्च भागैकं सुविमर्दयेत्।
वज्रीक्षीरै दनैकन्तु रुध्वा त भूधरे पचेत्॥ १५॥
माषैकमार्द्रकद्रावैर्लिह्याद्वातविनाशनम्।
पिप्पलीमूलकक्काथं सकृष्णामनुपाययेत्।
सर्वान् वातविकारांश्च निहन्त्याक्षेपकादिकान्॥ १६॥

शुद्ध पारा, स्वर्णभस्म, ताम्रभस्म, लौहभस्म, स्वर्णमाक्षिकभस्म, हड़ताल, नीलांजन (सुरमा) शुद्ध तूतिया और समुद्रफेन ये सभी चीजें समभाग लेकर पाँचों नमक एक-एक भाग (५ भाग) मिलावे और सबको सेंहुड़के दूधमें भलीभाँति घोंटे। घुट जानेपर गोली बना ले और सम्पुटित करके भूधरयन्त्रमें पकावे। यदि अदरखके रसमें एक मासा इस रसका सेवन करे तो वातविकार और पिपरामूलके काढ़ेमें पिप्पलीका चूर्ण डालकर पिये तो आक्षेपादि वात-जनित व्याधियें मिट जाती हैं ॥ १४–१६ ॥

वातारि रस

रसभागो भवेदेको द्विगुणो गन्धको मतः।
त्रिगुणा त्रिफला ग्राह्या चतुर्भागन्तु चित्रकम् ॥ १७ ॥
गुग्गुलोः पञ्चभागश्चैरण्डतैलेन मर्दयेत्।
क्षिप्त्वाऽत्र पूर्वकं चूर्णं पुनस्तेनैव मर्दयेत् ॥ १८ ॥
गुडिकाङ्कर्षमात्रान्तु भक्षयेत्प्रातरुत्थितः।
नागरैरण्डमूलानां क्वाथं तदनु पाययेत् ॥ १९ ॥
अंगमेरण्डतैलेन स्वेदयेत्पृष्ठदेशतः।
विरेके तेन सञ्जाते स्निग्धमुष्णञ्च भोजयेत्।
वातारिसंज्ञको ह्येष रसो निर्वातमेवितः ॥ २० ॥

शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, त्रिफला ३ भाग, चीता ४ भाग, शुद्ध गूगुल ५ भाग ले और कज्जली करके इन सब चीजोंको रेंड़ीके तेलमें घोंटे। घुट जानेपर कर्ष-कर्ष भरकी गोलियें बना ले। प्रातःकालके समय एक गोली खाकर सोंठ और रेंड़की जड़का काढ़ा पिये और रेंड़ीके तेलसे पृष्ठदेशमें स्वेदन करे। ऐसा करनेसे जब विरेचन हो जाय तो स्निग्ध (चिकना) और गरम-गरम भोजन करे। इस रसका वातारि नाम है और निर्वात स्थानमें ही इसका सेवन करना उचित है ॥ १७–२० ॥

अनिलारि रस

रसेन गन्धं द्विगुणं विमर्द्य वातारिनिर्गुण्डिरसैर्दिनैकम्।
निवेशयेत्ताम्रमये पुटे तत्सर्वं मृदावेष्ट्य च बालुकाख्ये ॥२१॥

यन्त्रे पुटेद्गोमयचूर्णवह्नौ स्वभावशीते तु समुद्धरेत्तत्।
निर्गुण्डिकावातहराग्नितोयैः सञ्चूर्ण्य यत्नेन विभावयेत्तु ॥२२॥
रसोऽनिलारिः कथितोऽस्य वल्लमेरण्डतैलेन ससैन्धवेन।
मरीचचूर्णेन ससर्पिषा वा निर्गुण्डिचित्रैश्च कटुत्रिकैर्वा ॥२३॥

शुद्ध पारा १ भाग और शुद्ध गंधक २ भाग दोनों लेकर कज्जली करे। फिर रेंड़की जड़ तथा सँभालूके रसमें दिनभर घोंटे। घुँट जानेपर ताम्रशराव-सम्पुटमें सम्पुटित करके उपलोंके चूर्णकी आगमें भूधरयंत्र द्वारा पुट दे। स्वांगशीतल होनेपर निकाल ले और फिर एक वार खरल करके निर्गुण्डी, रेंड़की जड़ और चीतेके काढ़ेमें भावना दे। फिर छायामें सुखाकर रख ले। यदि डेढ़ रत्ती यह 'अनिलारि रस' रेंड़ीके तेल, सेंधानमक, मिर्चके चूर्ण, घी, सँभालू, चीतेके क्वाथ अथवा त्रिकटु (सोंठ, मिर्च, पिप्पली) के चूर्णमें मिलाकर खाय तो वातव्याधि दूर हो जाती है॥ २१–२३ ॥

वातकण्टक रस

वज्रामृताभ्रहेमार्कतीक्ष्णमुण्डं क्रमोत्तरम्।
मरिचं मर्दयेदम्लवर्गेण दिवसत्रयम् ॥ २४ ॥
द्विक्षारं पञ्चलवणं मर्दितं स्यात्समं समम्।
ततो निर्गुण्डिकाद्रावैर्मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥ २५ ॥
शुष्कमेतद्विचूर्ण्याथ विषञ्चास्याष्टमांशकः।
टङ्कणं विषतुल्यांशं दत्त्वा जम्बीरजैर्द्रवैः ॥ २६ ॥
भावयेद्दिनमेकन्तु रसोऽयं वातकण्टकः।
दातव्यो वातरोगेषु सन्निपाते विशेषतः ॥ २७ ॥
द्विगुञ्जमार्द्रकद्रावैर्घृतैर्वा वातरोगिणे।
निर्गुण्डीमूलचूर्णन्तु महिषाक्षञ्च गुग्गुलम् ॥ २८ ॥
समांशं मर्दयेदाज्ये तद्वटी कर्षसम्मिता।
अनुयोज्या घृतैर्नित्यं स्निग्धमुष्णञ्च भोजयेत् ॥ २९ ॥
मण्डलं नाशयेत्सर्वं वातरोगं विशेषतः।
सन्निपाते पिबेच्चानु तालमूलीकषायकम् ॥ ३० ॥

हीराभस्म १ भाग, शुद्ध पारा २ भाग, स्वर्णभस्म ३ भाग, ताम्रभस्म ४

भाग, तीक्ष्णलौहभस्म ५ भाग, मुण्डलौहभस्म ६ भाग और काली-मिर्चका चूर्ण ७ भाग लेकर सबको एक साथ घोंटे। फिर अम्लवर्गोक्त (द्रष्टव्य पृ० १६ श्लोक १०२–१०३) औषधियोंके रसमें तीन दिन भावना दे। तदनन्तर जवाखार, सज्जी और पाँचों नमक, ये समभाग लेकर इन्हें और उपर्युक्त सभी चीजोंको सँभालूके रसमें तीन दिन घोंटे। सूख जानेपर चूर्ण कर ले और इसमें अष्टमांश शुद्ध विष और अष्टमांश शुद्ध सोहागा डालकर जँभीरी नीबूके रसमें दिनभरकी भावना दे। बस, वातकण्टक रस तैयार हो गया। दो रत्ती यह रस अदरखके रस अथवा घीमें मिलाकर सभी वातरोग और विशेष करके सन्निपातमें दे। अथवा निर्गुण्डीका चूर्ण और महिषाक्ष अर्थात् भैंसागूगुल दोनों समभाग ले और घीसे घोंटकर एक-एक कर्षकी गोलियें बना ले। उपर्युक्त रसको खानेके बाद घीके साथ नित्य एक गोली यह भी खाय और स्निग्ध तथा गरम भोजन करे तो सब तरहके वातविकार दूर हो जाते हैं। सन्निपातमें मुसलीके काढ़ेमें इसका सेवन करे ॥२४–३०॥

लघ्वानन्द रस

पारदो गन्धको लौहमभ्रकं विषमेव च।
समांशं मरिचस्याष्टौ टङ्कणन्तु चतुर्गुणम् ॥ ३१ ॥
भृङ्गराजरसेनैव दातव्याः सप्त भावनाः।
तथा दाडिमतोयेन वटीं कुर्य्यात्समाहितः।
निहन्ति वातजान्रोगान्भ्रमदाहपुरःसरान् ॥ ३२ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौहभस्म, अभ्रकभस्म और शुद्ध विष ये वस्तु समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर इसमें काली मिर्चका चूर्ण ८ भाग तथा शुद्ध सोहागा ४ भाग मिलाकर घोंटे। तदनन्तर भाँगरेके रसमें सात बार भावना दे और अनारके रसमें घोंटकर गोली बना ले। इस रससे भ्रम (चक्कर आना) और दाहयुक्त सभी वातव्याधियें दूर हो जाती हैं ॥३१॥३२॥

चिन्तामणि रस

कर्षैकं रससिन्दूरं तत्समं मृतमभ्रकम्।
तदर्द्धं मृतलौहञ्च स्वर्णं शाणं क्षिपेद्बुधः ॥ ३३ ॥

कन्यारसेन सम्मर्द्य गुञ्जामात्रां वटीं चरेत्।
अनुपानादिकं दद्याद्बुद्ध्वा दोषबलाऽबलम् ॥ ३४ ॥
हन्ति श्लेष्मान्वितं वातं केवलं पित्तसंयुतम्।
हृल्लासमरुचिं दाहं वान्तिं भ्रान्तिं शिरोग्रहम् ॥ ३५ ॥
प्रमेहं कर्णनादञ्च ज्वरगद्गदमूकताम्।
बाधिर्य्यं गर्भिणीरोगमश्मरीं सूतिकाऽऽमयम् ॥ ३६ ॥
प्रदरं सोमरोगञ्च यक्ष्माणं ज्वरमेव च।
बलवर्णाग्निदः सम्यक्कान्तिपुष्टिप्रसाधकः।
चिन्तामणिरसश्चायं चिन्तामणिरिवापरः ॥ ३७ ॥

रससिन्दूर १ कर्ष, अभ्रकभस्म १ कर्ष, लौहभस्म आधा कर्ष और स्वर्ण-भस्म १ शाण, इन चारोंको घीगुवारके रसमें घोंटकर एक-एक रत्तीकी गोली बना ले। दोषका बलाबल देखकर उचित अनुपानमें यदि यह रस सेवन करे तो कफयुक्त वात, केवल वात. पित्तसंयुक्त वात, हृल्लास, अरुचि, दाह, वमन, भ्रम, शिरोग्रह, प्रमेह, कर्णनाद, ज्वर, गद्गदवाणी, गूँगापन, बहरापन, गर्भिणीरोग, अश्मरी, प्रसूतज्वर, प्रदर, सोमरोग, राजयक्ष्मा तथा ज्वर आदि सभी रोग दूर हो जाते हैं। यह रस बल, वर्ण और रसवर्धक है। इससे सौन्दर्य बढ़ता और देह पुष्ट होती है। यह चिन्तामणि रस चिन्तामणिके समान अभीष्टसाधक है ॥ ३३–३७ ॥

चतुर्मुख रस

रसगन्धकलौहाभ्रं समं सूतांघ्रिहेम च।
सर्वं खल्लतले क्षिप्त्वा कन्यास्वरसमर्दितम् ॥ ३८ ॥
एरण्डपत्रैरावेष्ट्य धान्यराशौ दिनत्रयम्।
संस्थाप्य च तदुद्धृत्य त्रिफलारससंयुतम् ॥ ३९ ॥
एतद्रसायनवरं सर्वरोगेषु योजयेत्।
तद्यथाग्निबलं खादेद्वलीपलितनाशनम् ॥ ४० ॥
पौष्टिकं बल्यमायुष्यं पुत्रप्रसवकारकम्।
क्षयमेकादशविधं कासं पञ्चविधं तथा ॥ ४१ ॥

कुष्ठमेकादशविधं पाण्डुरोगान्प्रमेहकान् ।
शूलं श्वासञ्च हिक्काञ्च मन्दाग्निञ्चाम्लपित्तकम् ॥ ४२ ॥
व्रणान्सर्वानाढ्यवातं विसर्पं विद्रधिं तथा ।
अपस्मारं महोन्मादं सर्वाशांसि त्वगामयान् ।
क्रमेण शीलितं हन्ति वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥ ४३ ॥
जगताञ्च हितार्थाय चतुर्मुखमुखोदितः ।
रसश्चतुर्मुखो नाम चतुर्मुख इवापरः ॥ ४४ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौहभस्म, अभ्रकभस्म, ये द्रव्य समभाग और स्वर्णभस्म चौथाई भाग लेकर पारे-गंधककी कजली करे। फिर सबको घीगुवारके रसमें घोंटकर पिण्डी बना ले। इसे रेंड़के पत्तोंमें लपेटकर तीन दिन धानकी राशिमें रखे। फिर निकाले और जलमें घोंटकर गोलियें बना ले। त्रिफलाके रसमें देनेसे यह श्रेष्ठ रस सभी रोगोंपर काम करता है। रोगीका अग्निबल देखकर दिया जाय तो इससे शरीरकी झुरिंया (बली) और पलित (बालोंकी सफेदी) दूर होती है। यह बलदायक, आयुवर्धक और पुत्रप्रसवकारी रस है। यह ग्यारह प्रकारके क्षय, पाँच प्रकारकी खाँसी, ग्यारह तरहके कुष्ठ, पांडु, प्रमेह, शूल, स्वास, हिक्का, मन्दाग्नि, अम्लपित्त, सब व्रण, आढ्यवात, विसर्प, विद्रधि, अपस्मार, महाउन्माद, सभी तरहके अर्श और चर्मरोग ऐसे नष्ट करता है, जैसे बिजली वृक्षोंको ढहा देती है। संसारी जीवोंकी भलाईके लिए स्वयं ब्रह्माजीने इसे बनाया था। इसीसे इसका चतुर्मुख नाम है और गुणोंमें तो यह दूसरा ब्रह्मा ही है॥ ३८—४४ ॥

लक्ष्मीविलास रस

पलं कृष्णाभ्रचूर्णस्य तदर्द्धौ रसगन्धकौ ।
बलानागबलाभीरुविरादरीकन्दमेव च ॥ ४५ ॥
कृष्णधुस्तूरनिचुलं गोक्षुरवृद्धदारयोः ।
वीजं शक्राशनस्यापि जातीकोषफले तथा ॥ ४६ ॥
कर्पूरञ्चैव कर्षांशं श्लक्ष्णचूर्णं पृथक् पृथक् ।
गृहीत्वा चाष्टमांशेन स्वर्णं पर्णरसेन च ॥ ४७ ॥

वटिकां स्विन्नचणकप्रमाणां कारयेद्भिषक्।
रसो लक्ष्मीविलासोऽयं पूर्ववद्गुणकारकः ॥ ४८ ॥

कृष्ण अभ्रकभस्म १ पल, शुद्ध पारा और गंधक आधा-आधा पल लेकर कज्जली करे। फिर इसमें बला, नागबला, शतावर, विदारीकन्द, शुद्ध कृष्ण-धत्तूरबीज, समुद्रफल, गोखरू, विधारेके बीज, भँगके बीज, जायफल, जावित्री और कपूर, इनमेंसे हर एकका चूर्ण एक-एक कर्ष और स्वर्णभस्म एक कर्षका अष्टमांश मिलाकर सबको पानके रसमें घोंट ले और चनेके बराबर गोली बना ले। यह लक्ष्मीविलास रस भी पूर्वोक्त चतुर्मुख रसके ही समान गुण-कारी है ॥ ४५–४८ ॥

रोगेभसिंह रस

सूराद्द्वयो घनवराऽनलवेल्लभार्गी-
तिक्ताकटुत्रयवरैः सवचैः समांशैः।
रोगेभसिंह इति वातकफामयघ्नः
सान्द्रोऽयमल्पपटुतो विहितो द्विगुञ्जा ॥ ४९ ॥

रससिन्दूर दो भाग और लौहभस्म, मोथा, त्रिफला, चीता, वायविडंग, भार्गी, कुटकी, त्रिकटु और वच, ये द्रव्य समभाग ले और सबको एकमें घोंट-कर दो-दो रत्तीकी गोली बना ले। नमकके साथ यदि इस रसका सेवन करे तो सभी वातव्याधियाँ दूर हो जाती हैं ॥ ४६ ॥

श्रीखण्ड वटी

एतैर्गुडप्रमृदितै रसवर्जितैस्तु
श्रीखण्ड नाम गुटिका विहिता द्विगुञ्जा।
शैत्याद्यजीर्णकफवातभवान्विकारान्
हन्त्यार्द्रकेण सहिताप्यथ केवला वा ॥ ५० ॥

यदि पूर्वोक्त रसमेंसे रससिन्दूर त्यागकर बाकी सब चीजें लेकर पुराना गुड़ डाल दे और सबको एकमें पीसकर दो-दो रत्तीकी गोली बना ले तो श्रीखण्ड-वटी तैयार हो जाती है। अदरखके रसमें अथवा अकेले ही इसे खानेसे शीत, अजीर्ण, कफ एवं वायुसे जायमान सब विकार नष्ट हो जाते हैं ॥ ५० ॥

पिण्डी रस

सूतात्पञ्चार्कतश्चैकं कृत्वा पिंडं सगन्धकम् ।
सूतांशं नागवल्ल्याश्च द्रवैः पिष्ट्वा प्रलेपयेत् ॥ ५१ ॥
ताम्रपत्रीं प्रलिप्तां तां रुध्वा गजपुटे पचेत् ।
द्विगुञ्जास्त्र्यूषणेनार्द्धवपुर्वातं सकम्पकम् ।
निहन्ति दाहसन्तापं मूर्च्छापित्तसमन्वितम् ॥ ५२ ॥

शुद्ध पारा पाँच भाग और शुद्ध गंधक पाँच भाग दोनोंकी कज्जली करके पानके पत्तोंके रसमें घोटकर पिण्डी बना ले। इसे एक भाग शुद्ध ताम्रपत्रपर लेप कर दे और सम्पुटमें सम्पुटित करके गजपुटमें फूँके। स्वांगशीतल हो जाने-पर निकाले और चूर्ण करके रख ले। त्रिकटुके चूर्णमें दो रत्ती इस रसका सेवन करे तो अर्धाङ्ग तथा कम्पवात, दाह, सन्ताप, मूर्च्छा और पित्तयुक्त वातरोग शान्त हो जाते हैं ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

कुब्जविनोद रस

रसगन्धौ समौ शुद्धौ चाभयातालकं तथा ।
विषं कटुकिव्योषञ्च बोलजैपालकौ समौ ॥ ५३ ॥
भृङ्गराजरसैर्मर्द्यं स्नुह्यर्कस्वरसैस्तथा ।
गुञ्जाद्वयं भक्षयेच्च हृच्छूलं पार्श्वशूलकम् ॥ ५४ ॥
आमवाताढ्यवाताद्यन्कटिशूलञ्च नाशयेत् ।
अग्निञ्च कुरुते दीप्तं स्थौल्यञ्चाप्यपकर्षति ।
रसः कुब्जविनोदोऽयं गहनानन्दभाषितः ॥ ५५ ॥

पारा, गंधक, हरीतकी, शुद्ध हड़ताल, शुद्ध विष, कुटकी, त्रिकटु, बोल (गन्धरस) और शुद्ध जमालगोटा ये चीजें समभाग लेकर भाँगरा, सेंहुड़ और मदारके स्वरसमें घोटकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। इसको खानेसे हृदयशूल, पसलियोंका शूल, आम तथा आढ्यवात और कटिशूल नष्ट हो हो जाता, अग्नि उद्दीप्त होती और शरीरकी मोटाई कम हो जाती है। इस रसको कुब्जविनोद रस कहते हैं और गहनानन्दने इसे कहा है ॥ ५३-५५ ॥

शीतवातलक्षण

हिमवन्ति हि गात्राणि रोमाणि स्फुरितानि च ।
शिरोऽक्षिवेदनाऽऽलस्यं शीतवातस्य लक्षणम् ॥ ५६ ॥

समस्त शरीरका ठंढा हो जाना, रोंगटे खड़े हो जाना, मस्तक तथा नेत्रमें दर्द और आलस्य होना, ये शीतवातके लक्षण हैं ॥ ५६ ॥

शीतारि रस

रसेन गंधं द्विगुणं प्रगृह्य पुनर्नवाऽग्निस्वरसैर्विभाव्य ।
पक्वार्कपत्रस्य रसेन पश्चाद्विपाचयेदष्टगुणेन यत्नात् ॥५७॥
रसार्द्धभागञ्च विषञ्च दत्त्वा विपाचयेदग्निजले क्षणं तत् ।
शीतारिसंज्ञस्य रसायनस्य वल्लञ्च सार्द्धं मरिचार्द्रकेण ।
मरीचचूर्णेन घृताप्लुतेन सेवेत मांसञ्च घृतञ्च पथ्यम् ॥५८॥

शुद्ध पारा १ भाग और गंधक २ भाग लेकर कज्जली करे । फिर पुनर्नवा तथा चीतेके स्वरस में अलग-अलग भावना देकर कज्जलीके अठगुने पके मदारके पत्तोंका स्वरस मिलाकर एक कुप्पीमें रखे और बालुकायंत्रमें पकावे । पक जानेपर इसमें पारेका आधा भाग शुद्ध विष मिला दे और चीतेके रसमें थोड़ी देर और पकावे । तब उतार ले और चूर्ण करके रख ले । डेढ़ रत्ती इस शीतारि रसायनको यदि अदरखके रस एवं काली मिर्चके चूर्णमें खाय और मांस तथा घृत खाय तो शीतवातरोग नष्ट हो जाता है ॥ ५७ ॥ ५८ ॥

वातविध्वंसन रस

सूतमभ्रकसत्त्वञ्च कांस्यं शुद्धञ्च माक्षिकम् ।
गन्धकं तालकं सर्वं भागोत्तरविवर्द्धितम् ॥ ५९ ॥
कज्जलीकृत्य तत्सर्वं वातारिस्नेहसंयुतम् ।
सप्ताहं मर्दयित्वा तु गोलकीकृत्य यत्नतः ॥ ६० ॥
निम्बद्रुमेण सम्पीड्य तिलकल्केन लेपयेत् ।
अर्द्धाङ्गुलदलेनैव परिशोष्य प्रयत्नतः ॥ ६१ ॥
प्रपचेद्वालुकायन्त्रे द्वादशप्रहरं ततः ।
जठरस्य रुजः सर्वास्तथा च मलविग्रहम् ॥ ६२ ॥
आध्मानकं तथाऽऽनाहं विसूचीं वह्निमान्द्यकम् ।
आमदोषमशेषञ्च गुल्मं छर्दिञ्च दुर्जयाम् ॥ ६३ ॥
ग्रहणीं श्वासकासौ च कृमिरोगं विशेषतः ।
हन्यात्सर्वाङ्गशूलञ्च मन्यास्तम्भं तथैव च ॥ ६४ ॥

ज्वरे चैवातिसारे च शूलरोगे त्रिदोषजे।
पथ्यं रोगानुसारेण देयमस्मिन् भिषग्वरैः।
कथितो नन्दिनाथेन वातविध्वंसनो रसः॥ ६५॥

शुद्ध पारा १ भाग, अभ्रकसत्त्व २ भाग, कांस्यभस्म ३ भाग, स्वर्णमाक्षिक-भस्म ४ भाग, शुद्ध गंधक ५ भाग, हड़ताल ६ भाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सबको एक साथ रेंडीके तेलमें सप्ताह भर घोंटे। तदनन्तर नीबूके रसमें घोंटकर पिण्ड बना ले। उस पिण्डीपर आधा अंगुल तिलका कल्क लीप दे और बारह पहर बालुकायंत्रमें रखकर आँच दे। इससे पेटके सब रोग, कब्ज, आध्मान, आनाह, विसूची, मन्दाग्नि, सब तरहके आमदोष, गुल्म, छर्दि, ग्रहणी, श्वास, कास, कृमिरोग, सर्वाङ्गशूल, मन्यास्तम्भ, ज्वर, अतिसार और त्रिदोषज शूलरोग नष्ट हो जाते हैं। रोगके अनुसार पथ्यकी व्यवस्था करे। इस वातविध्वंसन रसको श्रीनन्दिनाथने कहा है॥ ५६—६५॥

पलाशादि वटी

पलाशबीजोत्थरसेन सूतं गन्धेन युक्तं त्रिदिनं विमर्द्य।
श्लक्ष्णीकृतं तद्विषतिन्दुबीजं संयोजयेदस्य कलाप्रमाणम्।
मासद्वयं निष्कमितं प्रयत्नादर्शांसि हन्त्याशु नियोजनीयम्॥६६॥
वातरक्तं तथा शोथमस्पर्शाख्यानिलामयम्।
वातवत्पित्तरोगेऽपि तत्र पित्तेन भावयेत्।
पलाशादिवटी ख्याता वातरोगकुलान्तिका॥ ६७॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक दोनों समान भाग लेकर कज्जली कर ले। तदनन्तर पलाशबीजके रसमें तीन दिन घोंटे। फिर इसमें पारेका षोडशांश शुद्ध कुचलेका चूर्ण डालकर घोंटे और वटी बना ले। यदि दो मास तक प्रति-दिन एक निष्क यह वटी खाय तो अर्शरोग दूर हो जाता है। इससे वातरक्त, शोथ और शून्यवात रोग नष्ट हो जाते हैं। यदि पित्तरोगपर इसका प्रयोग करना हो तो इस रसको पंचपित्तसे भावित कर ले। इसका नाम पलाशादि वटी है। यह वातरोगसमूहका नाश करती है॥ ६६॥ ६७॥

दशसार वटी

यष्टिं धात्रीं बलां द्राक्षामेलां चन्दनवालकम्।
मधूकपुष्पं खर्जूरं दाडिमं पेषयेत्समम्॥ ६८॥

सर्वतुल्या सिता योज्या पलार्द्धं भक्षयेत्सदा ।
दशसारवटी ख्याता सर्ववातविकारनुत् ॥ ६९ ॥

मुलैठी, आँवला, बला, अदरख, इलायची, लाल चन्दन, सुगंधवाला, महुआ, खजूर और अनार, ये चीजें समभाग लेकर एकसाथ पीसे और सबके बराबर खाँड़ डालकर वटी बना ले। यदि नित्य आधा पल यह दशसार वटी खाय तो सभी तरहके वातविकार दूर हो जाते हैं ॥ ६८ ॥ ६९ ॥

गगनादि वटी

मृतगगनरसार्कं मुण्डतीक्ष्णं सताप्यं
सबलिसममिदं स्याद्यष्टितोयप्रपिष्टम् ।
तदनु सलिलजातैर्वासकैर्गोस्तनीभिः
मृदितमनु विदारीवारिणा घस्रमेकम् ॥ ७० ॥
घृतमधुसहितेयं निष्कमात्रा वटीति
क्षपयति गुरुवातं पित्तरोगं क्षयञ्च ।
भ्रममदकफशोपान्दाहतृष्णासमुत्था-
न्मलयजमिह पेयञ्चानुपानं सचन्द्रम् ॥ ७१ ॥

अभ्रकभस्म, शुद्ध पारा, ताम्रभस्म, मुण्डलौहभस्म, तीक्ष्ण लौहभस्म, स्वर्णमाक्षिकभस्म और शुद्ध गंधक ये चीजें समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर मुलैठीके क्वाथ तथा अडूसा, मुनक्का और विदारीकन्दके रस, इन सबमें एक-एक दिन घोंटकर यदि घी और मधुमें मिलाकर नित्य निष्कभर इस रसको खाय तो भयंकर वातरोग, पित्तरोग, क्षय, भ्रम, मद, कफ, शोथ दाह तथा तृष्णारोग मिट जाते हैं। इसे खानेके बाद अनुपानमें सफेद चन्दन घिस और रसकपूर डालकर पीना चाहिए ॥ ७० ॥ ७१ ॥

सर्वाङ्गसुन्दर रस

शुद्धशूताभ्रताम्रायो हिङ्गुलं कार्षिकं समम् ।
गन्धकश्चैकभागः स्यात्सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥ ७२ ॥
सप्तपर्णार्कस्नुक्क्षीरं वासा वातारिवारिणा ।
त्रिपमुष्टिसमं सर्वं पेष्यं तङ्गोलकीकृतम् ॥ ७३ ॥

विपचेद्वालुकायन्त्रे द्वियामान्ते समुद्धरेत् ।
पिप्पलीविषसंयुक्तो रसः सर्वाङ्गसुन्दरः ।
सर्वावातविकारघ्नः सर्वशूलनिपूदनः ॥ ७४ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, लौहभस्म, शुद्ध सिंगरिफ, ये वस्तुयें एक-एक कर्ष लेकर कज्जली करे। फिर सबको एक साथ छतिवन, मदार तथा सेंहुड़के दूध, वासा और रेंड़के रसमें क्रमशः मर्दन करके सबके बराबर शुद्ध कुचलेका चूर्ण मिलाकर घोंटे और गोला बना ले। इस गोलेको बालुकायंत्रमें रखकर दो पहर तक आँच दे। तब निकालकर फिर पीसे और उसमें समभाग पिप्पली तथा शुद्ध विष मिलाकर चूर्ण कर ले। यह सर्वांग-सुन्दर रस सभी प्रकारके वातविकार एवं शूलरोगोंको निवृत्त करता है ॥७२–७४॥

तालकेश्वर रस

एकभागो रसस्य स्याच्छुद्धस्तालैकभागिकः ।
अष्टौ स्युर्विजयायाश्च गुटिका गुडतश्चरेत् ॥ ७५ ॥
एकैकां भक्षयेत्प्रातश्छायायामुपवेशयेत् ।
तालकेश्वरनामायं रोगश्चास्पर्शनाशनः ॥ ७६ ॥

शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध हड़ताल १ भाग और भाँग ८ भाग, इन तीनोंको एकसाथ घोंटकर इसमें सबके बराबर पुराना गुड़ मिलाकर गोली बना ले। नित्य इस तालकेश्वर रसकी एक गोली खाकर छायामें बैठे तो शून्य (अस्पर्श) वात रोग नष्ट हो जाता है ॥७५॥७६॥

त्रैलोक्यचिन्तामणि रस

हीरं सुवर्णं सुमृतञ्च तारमेषां समं तीक्ष्णरजश्चतुर्णाम् ।
समं मृताभ्रं रससिन्दुरञ्च निष्पिष्टतीक्ष्णस्य तथाऽश्मनो वा ॥७७॥
खल्ले द्रवेणैव कुमारिकाया गुञ्जाप्रमाणां वटिकां प्रकुर्य्यात् ।
त्रैलोक्यचिन्तामणिरेष नाम्ना सम्पूज्य सम्यक् गिरिजां दिनेशम् ॥७८॥
हन्त्यामयान्योगशतैर्विवर्ज्यानथ प्रणाशाय मुनिप्रणीतः ।
अस्य प्रसादेन गदानशेषाञ्जरां विनिर्जित्य सुखं विभाति ॥ ७९॥
स्निग्धे श्लेष्मण्यार्द्रकस्य रसेन पाययेत्सुधीः ।
शुष्के च माक्षिकेणैव पित्तं घृतसितायुतम् ॥८०॥

श्लेष्मणि मारुते सम्यग्दुष्टे च समताङ्गते।
कणाचूर्णं क्षौद्रयुतं प्रमेहे दुग्धसंयुतम् ॥८१॥
बलवर्णाग्निजननः कासघ्नः कफवातजित्।
आयुःपुष्टिकरो वृष्यः सर्वरोगनिषूदनः ॥८२॥

हीराभस्म, सुवर्णभस्म, चाँदीभस्म और तीक्ष्णलौहभस्म, ये द्रव्य समभाग ले तथा अभ्रकभस्म और रससिन्दूर चार भाग लेकर लोहे या पत्थरके खरलमें घोंटे। फिर घीगुवारके रसमें घोंटकर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले। यह त्रैलोक्यचिन्तामणि रस है। यदि भगवती पार्वती तथा सूर्यभगवानकी पूजा करके इस रसका सेवन करे तो वे रोग भी दूर हो जाते हैं, जो सैकड़ों रसोंसे भी निवृत्त नहीं हुए रहते। कठिन रोगोंको नष्ट करनेके लिए ही मुनियोंने इसका निर्माण किया है। इसकी कृपासे रोगीके सब रोग मिट जाते, बुढ़ौती पराजित हो जाती और सब प्रकारका सुख मिलता है। जिस रोगीको स्निग्ध कफ हो उसे अदरखके रसमें, सूखा कफ हो तो मधुमें, पित्तरोग हो तो घी और मिश्रीमें, कफ तथा वायु विकृत हो तो मधु और पिप्पलीके चूर्णमें और प्रमेहमें दूधके साथ इसे दें। यह रस बल, वर्ण तथा अग्निवर्धक, कास, कफ तथा वातनाशक एवं आयु और पुष्टिवर्धक है। इससे सभी रोग दूर होते हैं ॥७७–८२॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे वातव्याधिचिकित्सा समाप्ता।

अथ कफरोगचिकित्सा

श्लेष्मकालानल रस

रसस्य द्विगुणो गन्धो गन्धकाद्द्विगुणं विषम्।
विषात्तु द्विगुणं देयं चूर्णं त्रिकटुसम्भवम् ॥ १ ॥
रसतुल्या प्रदातव्या चाभया सविभीतकी।
धात्रीपुष्करमूलञ्च अजमोदाऽजगन्धिका ॥ २ ॥
विडङ्गं कट्फलं चव्यं पञ्चैव लवणानि च।
लवङ्गं त्रिवृता दन्ती सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥ ३ ॥

भावयेत्सप्तधा रौद्रे स्वरसैः सुरसोद्भवैः ।
हन्ति सर्वं कफोद्भूतं व्याधि कालानलो रसः ॥ ४ ॥

शुद्धपारा १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, शुद्ध विष ४ भाग, त्रिकटुचूर्ण ८ भाग, हर्रा, बहेड़ा, आँवला, पुष्करमूल, अजमोदा, अजगंधा (वनतुलसी) वायविडंग, कायफल, चव्य, पाँचों नमक, लौंग, त्रिवृत्, दन्तीमूल, ये सभी द्रव्य एक-एक भाग ले । पहले पारे-गंधककी कज्जली करे । फिर सबको एकमें घोंटकर तुलसीपत्रके रसमें सात बार भावना दे । यह श्लेष्मकालानल रस सभी कफजनित रोगोंको नष्ट करता है ॥१–४॥

श्लेष्मशैलेन्द्र रस

पारदः गन्धको लौहं त्र्यूषणं जीरकद्वयम् ।
शठी शृङ्गी यमानी च पौष्करं चार्द्रकं तथा ॥ ५ ॥
गैरिकं यावशूकञ्च टङ्कणं गजपिप्पली ।
जातीकोषाऽजमोदा च वरा यासलवङ्गकम् ॥ ६ ॥
कनकारुणबीजानि कट्फलं चव्यकं तथा ।
प्रत्येकं तोलकञ्चैषां श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥ ७ ॥
पाषाणे विमले खल्ले घृष्टं पाषाणमुद्गरैः ।
बिल्वमूलरसं दत्त्वा चार्कचित्रफलत्रिकाः ॥ ८ ॥
निर्गुण्डी गणिकावासा चेन्द्राशनप्रचोदनी ।
धुस्तूरः कृष्णजीरञ्च पिप्पलीपारिभद्रके ॥ ९ ॥
एतेषाञ्च रसैर्मर्द्यमार्द्रकैश्च विभावयेत् ।
उष्णतोयानुपानेन सर्वव्याधिं विनाशयेत् ॥ १० ॥
विंशतिं श्लैष्मिकान् रोगान्सन्निपातभवान्गदान् ।
उदराष्टकदुर्नाममामवातञ्च दारुणम् ॥ ११ ॥
पञ्च पाण्ड्वामयान्दोषान्क्रिमिं स्थौल्यमथो नृणाम् ।
यथा शुष्केन्धने वह्निस्तथैवाग्निविवर्द्धनः ॥ १२ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौहभस्म, त्रिकटु, दोनों जीरा, कचूर (शठी) अजवायन, पुष्करमूल, अदरख, गेरू जवाखार, शुद्ध सोहागा, गजपिप्पली, जावित्री, अजमोदा, त्रिफला, जवासा, लौंग, धतूरेके बीज, कायफल, चव्य,

ये सभी द्रव्य एक-एक तोले ले और कूट-पीसकर महीन चूर्ण कर ले। फिर वेलकी जड़, मदार, चीता, त्रिफला, सँभालू, सफेद जूही, वासा, भँग, कटेरी, धतूरा, काला जीरा, पिप्पली और नीम, इन सभी चीजोंके स्वरस अथवा क्वाथमें घोंटकर अदरखके रसमें भावना दे। यही श्लेष्मशैलेन्द्र रस है। यदि गरम जलके साथ इसका सेवन करे तो सब व्याधियें दूर होती हैं। बीस प्रकारके कफरोग, सन्निपातज रोग, आठों प्रकारके उदररोग, अर्श, भयानक आमवात, पाँच प्रकारके पाण्डु, क्रिमि और तुन्दिलता रोग निवृत्त हो जाते हैं। जैसे सूखे ईंधनपर आग दौड़ती है, उसी तरह इससे उदर्य अग्नि तीव्र होती है॥ ५-१२ ॥

महाश्लेष्मकालानल रस

हिङ्गूलसम्भवं सूतं शिलागन्धकटङ्कणम्।
ताम्रं वङ्गं तथाऽभ्रञ्च स्वर्णमाक्षिकतालकम्॥ १३ ॥
धुस्तूरं सैन्धवं कुष्ठं पिप्पलीहिङ्गुकट्फलम्।
दन्तीबीजं सोमराजी वनराजफलं त्रिवृत्॥ १४ ॥
वज्रीक्षीरेण सम्मर्द्य वटिकां कारयेद्भिषक्।
कलायपरिमाणान्तु खादेदेकां यथाबलम्॥ १५॥
सन्निपातं निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा।
मत्तसिंहो यथारण्ये मृगाणां कुलनाशनः।
तथाऽयं सर्वरोगाणां सद्यो नाशकरो महान्॥ १६ ॥

सिंगरिफका पारा, गन्धक, सोहागा, ताम्रभस्म, वंगभस्म, अभ्रकभस्म, स्वर्णमाक्षिकभस्म, हड़ताल, धतूरा, सेंधानमक, कूठ, पिप्पली, हींग, कायफल, दन्तीके बीज, सोमराजी, अमिलतासके बीज और निसोथ, ये द्रव्य समभाग लेकर खरल करे। फिर सेंहुड़के दूधमें घोंटकर मटर जैसी गोलियें बनाकर रख ले। रोगीका बल देखकर उचित मात्रामें यदि यह रस सेवन करावे तो यह तत्काल सन्निपातको वैसे ही दूर कर देता है, जैसे इन्द्रका वज्र वृक्षको धराशायी कर देता है। अथवा जैसे मस्त सिंह वनमें पशुओंको मार डालता है, उसी प्रकार यह रस सभी रोगोंको तुरन्त नष्ट कर देता है॥ १३-१६ ॥

महालक्ष्मीविलास

पलं वज्राभ्रचूर्णस्य तदर्द्धो गन्धको भवेत् ।
तदर्द्धं वङ्गभस्मापि तदर्द्धः पारदस्तथा ॥ १७ ॥
तत्समं हरितालञ्च तदर्द्धं ताम्रभस्मकम् ।
रसतुल्यञ्च कर्पूरं जातीकोषफले तथा ॥ १८ ॥
वृद्धदारकबीजञ्च बीजं स्वर्णफलस्य च ।
प्रत्येकं कार्षिकं भागं मृतस्वर्णञ्च शाणकम् ॥ १९ ॥
निष्पिष्य वटिका कार्य्या द्विगुञ्जाफलमानतः ।
निहन्ति सन्निपातोत्थान्गदान् घोरान्सुदारुणान् ॥ २० ॥
गलोत्थानन्त्रवृद्धिञ्च तथाऽतीसारमेव च ।
कुष्ठमेकादशविधं प्रमेहान् विंशतिं तथा ॥ २१ ॥
श्लीपदं कफवातोत्थं चिरजं कुलजं तथा ।
नाडीव्रणं व्रणं घोरं गुदामयभगन्दरम् ॥ २२ ॥
कासपीनसयक्ष्मार्शःस्थौल्यदौर्गन्ध्यरक्तनुत् ।
आमवातं सर्वरूपं जिह्वास्तम्भं गलग्रहम् ॥ २३ ॥
उदरं कर्णनासाक्षिमुखवैजात्यमेव च ।
सर्वशूलं शिरःशूलं स्त्रीरोगञ्च विनाशयेत् ॥ २४ ॥
वटिकां प्रातरेकैकां खादेन्नित्यं यथाबलम् ।
अनुपानमिह प्रोक्तं मांसं पिष्टं पयो दधि ॥ २५ ॥
वारिभक्तं सुरा सीधु सेवनात्कामरूपधृक् ।
वृद्धोऽपि तरुणस्पर्द्धी न च शुक्र क्षयो भवेत् ॥ २६ ॥
न च लिङ्गस्य शैथिल्यं न केशा यान्ति पक्वताम् !
नित्यञ्गच्छेच्छतं स्त्रीणां मत्तवारणविक्रमः । २७ ॥
द्विलक्षयोजनी दृष्टिर्जायते पौष्टिकं तथा ।
प्रोक्तः प्रयोगराजोऽयं नारदेन महात्मना ॥ २८ ॥
महालक्ष्मीविलासोऽयं वासुदेवो जगत्पतिः ।
प्रसादादस्य भगवान् लक्षनारीषु वल्लभः ॥ २९ ॥

वज्राभ्रकभस्म १ पल, गंधक अर्ध पल, वंगभस्म चौथाई पल, पारा एक

पलका अष्टमांश (एक तोला), ताम्रभस्म आधा तोला, कपूर, जावित्री और जायफल ये चीजें एक-एक तोला, विधारा और धतूरेके बीज एक-एक कर्ष और सुवर्णभस्म एक शाण ले। सर्वप्रथम कज्जली करे। फिर सब चीजें एक साथ जलसे घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। यह रस दारुण सन्निपात-जनित रोगोंका शमन करता है। गलरोग, अन्त्रवृद्धि, अतिसार, ग्यारहों कुष्ठ, बीसों प्रमेह, कफ-वातजनित प्राचीन और कुलपरम्पराका श्लीपद, नाडी-व्रण, व्रण, भयानक भगन्दर, कास, पीनस, यक्ष्मा, अर्श, तुन्दिलता दौर्गन्ध्य, रक्त, सभी आमवात, जिह्वास्तम्भ, गलग्रह, उदररोग, कान-नासिका तथा नेत्ररोग, मुखरोग, सभी तरहके शूल, सिरदर्द तथा स्त्रीरोग, इन रोगोंको नष्ट करता है। यदि नित्य प्रातःकाल इसकी एक गोली खाकर दूध, दही, चावल, जल, मदिरा और सुराका अनुपान लेवे तो प्राणी कामदेव सदृश सुन्दर हो जाता और वृद्ध हो तो भी तरुण पुरुषोंसे होड़ करता है। इसे खानेसे न वीर्य स्खलित होता और न लिंग ही ढीला पड़ता है। बाल भी नहीं पकते। इसे खानेवाला पुरुष हाथीकी तरह सौ स्त्रियोंसे भोग कर सकता है। उस पुरुषकी दृष्टि लाखों योजन तक देखती है और शरीर पुष्ट होता है। श्रीनारदजीने यह रस लक्ष्मीपति विष्णुभगवानको बताया था। इस रसकी कृपासे ही भगवान कृष्ण लाखों स्त्रियोंके वल्लभ बन सके थे ॥ १७–२९ ॥

कफकेतु रस

टङ्कणं मागधीं शङ्खं वत्सनाभं समं समम्।
आर्द्रकस्य रसेनैव भावयेद्दिवसत्रयम् ॥ ३० ॥
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यमार्द्रकस्य रसेन वै।
पीनसं श्वासकासञ्च गलरोगं गलग्रहम् ॥ ३१ ॥
दन्तरोगं कर्णरोगं नेत्ररोगं सुदारुणम्।
सन्निपातान्निहन्त्याशु कफकेतुरसोत्तमः ॥ ३२ ॥

सोहागा, पिप्पली, शंखभस्म, शुद्ध वत्सनाभ विष, ये चीजें समभाग लेकर अदरखके रसमें तीन दिन भावना दे और फिर खरल करके रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले। अदरखके रसमें मिलाकर इसका सेवन करनेसे पीनस, श्वास,

कास, गलरोग, गलग्रह, दन्तरोग, कर्णरोग, नेत्ररोग और दारुण सन्निपातको भी यह कफकेतु रस निर्मूल कर देता है ॥ ३०—३२ ॥

कफचिन्तामणि रस

हिङ्गुलेन्द्रयवं टङ्कं त्रैलोक्यबीजमेव च।
मरिचञ्च समं सर्वं भस्मसूतं त्रिभागिकम् ॥ ३३ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव मर्दयेद्याममात्रकम्।
चणकाभा वटी कार्या सर्ववातप्रशान्तये।
कफरोगं हिन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥ ३४ ॥

सिंगरिफ, इन्द्रजौ, सोहागा, भाँगके बीज, काली मिर्च, ये चीजें एक-एक भाग और रससिंदूर ३ भाग लेकर अदरखके रसमें पहर भर घोंटे। फिर चनेके बराबर गोलियें बना ले। यह रस सभी वातरोगोंको इस तरह नष्ट करता है, जैसे सूर्यभगवान अन्धकारको नष्ट कर देते हैं ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे 'रसायनी'भाषाटीकायां कफरोगचिकित्सा समाप्ता।

अथ पित्तरोगचिकित्सा।

गुडूच्यादि लौह

गुडूचीसारसंयुक्तं त्रिकत्रययुतं त्वयः।
वातरक्तं निहन्त्याशु सर्ववातहरं परम् ॥ १ ॥

गुरुचका सत, हर्रा, बहेड़ा, आँवला, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, चीता, मोथा और वायविडंग, ये सभी द्रव्य एक-एक भाग और सबके बराबर अर्थात् दस भाग लौहभस्म लेकर खरल कर ले। यह रस वातरक्त तथा सभी वातरोग तुरन्त दूर कर देता है ॥ १ ॥

धात्रीलौह

धात्रीचूर्णस्याष्टौ पलानि चत्वारि लोहचूर्णस्य।
यष्टीमधुकरजश्च द्विपलं दद्यात्पुटे घृष्टम् ॥ २ ॥
अमृतक्काथेनैतद्भाव्यं चूर्णन्तु सप्ताहम्।
चण्डातपे सुशुष्कं भूयः पिष्ट्वा नवे घटे स्थाप्यम् ॥ ३ ॥

घृतेन मधुना युक्तं भोजनाद्यन्तमध्यतः।
त्रीन्वारान्भक्षयेन्नित्यं पथ्यं दोषानुबन्धतः॥ ४ ॥
भक्तस्यादौ नाशयेच्च दोषान्पित्तकृतानपि।
मध्ये चानाहविष्टब्धं तथान्ते चाग्निमान्द्यताम्।
रक्तपित्तसमुद्भूतान् रोगान् हन्ति न संशयः॥ ५ ॥

आँवलेका चूर्ण ८ पल, लौहचूर्ण ४ पल और कपड़छान मुलैठीका चूर्ण २ पल, इन तीनों चूर्णोंको गुरुचके काढ़ेमें सात दिनों तक भावना दे। फिर कड़ी धूपमें सुखा तथा पीसकर नये घड़ेमें रख ले। भोजनके पहले, मध्यमें और बादमें, इस प्रकार दिन भरमें तीन बार घी तथा मधुके साथ सेवन करे। भोजनके पहले इसे खानेसे पित्तकृत दोष, मध्यमें खानेसे आनाह, दस्त एवं कब्ज और भोजनके अन्तमें खानेसे मन्दाग्नि तथा रक्तपित्तजनित सब दोष नष्ट हो जाते हैं॥ २–५॥

पित्तान्तक रस

जातीकोषफले मांसी कुष्टं तालीशपत्रकम्।
माक्षिकं मृतलोहञ्च अभ्रं दिव्यं समांशिकम्॥ ६ ॥
सर्वतुल्यं मृतं तारं समं निष्पिष्य वारिणा।
द्विगुञ्जाभा वटी कार्य्या पित्तरोगविनाशिनी॥ ७ ॥
कोष्ठाश्रितञ्च यत्पित्तं शाखाश्रितमथापि वा।
शूलञ्चैवाम्लपित्तञ्च पाण्डुरोगं हलीमकम्॥ ८ ॥
दुर्नाम भ्रान्तिवान्ती च क्षिप्रमेव विनाशयेत्।
रसः पित्तान्तको ह्येष काशिराजेन भाषितः॥ ९ ॥

जावित्री, जायफल, जटामासी, कूठ, तालीसपत्र, स्वर्णमाक्षिकभस्म, लौहभस्म, अभ्रकभस्म और मैनसिल, ये वस्तुयें समभाग और सबके बराबर चाँदीभस्म ले। सबको एक साथ जलमें पीसकर दो-दो रत्तीकी गोली बना ले। इसे खानेसे पित्तरोग, कोष्ठाश्रित तथा हाथ-पैर आदिमें स्थित पित्त, शूल, अम्लपित्त, पाण्डु, हलीमक, अर्श, वमन तथा भ्रम (चक्कर आना) ये रोग तुरन्त दूर हो जाते हैं। यह रक्तपित्तान्तक रस काशिराजका कहा हुआ है॥ ६–९॥

महापित्तान्तक रस

यद्यत्र माक्षिकं त्यक्त्वा सुवर्णमपि दीयते।
महापित्तान्तको नाम सर्वपित्तविनाशनः ॥ १० ॥

उपर्युक्त रसमें यदि माक्षिकभस्मकी जगह स्वर्णभस्म मिला दिया जाय तो वह सब पित्तरोगोंका नाशक महापित्तान्तक रस हो जायगा ॥ १० ॥

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे पित्तरोगचिकित्सा समाप्ता।

अथ वातरक्तचिकित्सा।

लाङ्गल्याद्य लौह

विशुद्धलाङ्गलीमूलत्रिकटुत्रिफलैस्तथा।
द्राक्षागुग्गुलुभिस्तुल्यं लौहचूर्णं नियोजयेत् ॥ १ ॥
मातुलुङ्गरसेनैव त्रिफलाया रसेन च।
विमृद्य यत्नतः पश्चाद्गुटिकां कोलसम्मिताम् ॥ २ ॥
भक्षयेन्मधुना सार्द्धं करोति शृणु यान्गुणान्।
आजानु स्फुटितं घोरं सर्वाङ्गस्फुटितं तथा।
तत्सर्वं नाशयत्याशु साध्यासाध्यञ्च शोणितम् ॥ ३ ॥

शुद्ध कलिहारीकी जड़, त्रिकटु, त्रिफला, दाख और गूगुल इनमेंसे प्रत्येक वस्तु समभाग और सबके बराबर लौहभस्म ले। फिर सबको पहले बिजौरा नीबूके रसमें और उसके बाद त्रिफलाके काढ़ेमें घोंटे। फिर झरबेरी जैसी गोलियें बना ले। मधुके साथ इसका सेवन करनेसे होनेवाले गुण सुनो—घुटनों तक या सारा शरीर फट गया हो, ऐसे साध्य अथवा असाध्य सभी वातरक्त रोग इससे नष्ट हो जाते हैं ॥ १–३ ॥

वातरक्तान्तक रस

गन्धकं पारदं लौहं शिलां तालं घनं तथा।
शिलाजतु पुरं शुद्धं समभागं विचूर्णयेत् ॥ ४ ॥
श्वेतापराजिता दार्वी वागुजी चित्रकं तथा।
पुनर्नवा देवकाष्ठं त्रिफला व्योषवेल्लकम् ॥ ५ ॥

चूर्णमेषां पृथक्तुल्यं सर्वमेकत्र कारयेत्।
त्रिफला भृङ्गराजस्य रसेनैव त्रिधा त्रिधा॥ ६॥
भावयेद्भक्षयेत्पश्चाच्चणमात्रं दिने दिने।
ततोऽनुपानं निम्बस्य पत्रं पुष्पं त्वचं समम्॥ ७॥
शाणमात्रं घृतैः कुर्य्यात्सर्ववातविकारनुत्।
वातरक्तं महाघोरं गम्भीरं सर्वजञ्च यत्।
सर्वोपद्रवसंयुक्तं साध्यासाध्यं निहन्त्यलम्॥ ८॥

गंधक, पारा, लौहभस्म, मैनसिल, हड़ताल, अभ्रकभस्म, शिलाजीत और गूगुल, ये सभी चीजें समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर विष्णुक्रान्ता, दारुहल्दी, बकुची, चीता, पुनर्नवा, देवदारु, त्रिफला, त्रिकटु और वायविडंग, इन चीजोंका चूर्ण समभाग लेकर उपर्युक्त द्रव्योंमें मिलाकर घोंटे और त्रिफला तथा भृङ्गराजके रसमें तीन-तीन दिन भावना दे। फिर चने जैसी गोलियें बना ले। नीमके फूल, पत्ती तथा छाल समभाग लेकर चूर्ण कर ले और इसी चूर्णमें यदि यह रस सेवन करे तो सभी वातरोग एवं महाघोर, गंभीर, सर्वशरीरगत, सर्वोपद्रवयुक्त, साध्य अथवा असाध्य वातरक्त रोग नष्ट हो जाता है॥ ४—८॥

तालभस्म

हरितालं पलं शुद्धं तथा कर्षं विषस्य च।
श्वेताङ्कोठरसेनैव द्वयमेकत्र खल्लयेत्॥ ९॥
पलाशभस्म द्विपलं निधाय स्थालिकोपरि।
तद्भस्मोपरि तालस्य गोलकं स्थापयेत्सुधीः॥ १०॥
तस्योपरि ह्यपामार्गभस्म दद्यात्पलत्रयम्।
स्थालीमुखे शरावं च दद्याद्यत्नेन लेपयेत्॥ ११॥
लेपयित्वा ततश्चुल्ल्यामहोरात्रं पचेद्भिषक्।
ततस्तु जायते भस्म शुद्धं कर्पूरसन्निभम्॥ १२॥
गुञ्जात्रयं ततो भक्ष्यमनुपानविशेषतः।
वातरक्तञ्च कुष्ठञ्च दद्रुविस्फोटकापचीन्॥ १३॥

विचर्चिकां चर्मदलं वातरक्तञ्च शोणितम्।
रक्तपित्तं तथा शोषं गलत्कुष्ठं विनाशयेत्।
हलीमकं तथा शूलमग्निमान्द्यमरोचकम् ॥ १४ ॥

शुद्ध हड़ताल १ पल और शुद्ध विष १ कर्ष दोनोंको अंकोलके रसमें घोंटकर गोली बना ले। तदनन्तर एक हाँडीमें दो पल ढाककी राख रखकर उसपर यह गोली रख दे। ऊपरसे तीन पल चिचड़ेकी राख रखकर खूब दाब दे। उस हाँड़ीका मुख परईसे ढाँककर कपड़मिट्टीसे सन्धि बन्द कर दे। तब भट्टीपर रखकर २४ घण्टे आँच दे। स्वाङ्गशीतल होनेपर हँड़ियामेंसे कपूर सरीखी उजली हड़तालभस्म निकाल ले। अनुपानविशेषके साथ यदि तीन रत्ती (आजकल २ चावल भर) इस भस्मको खाय तो वातरक्त, कोढ़, दाद, फोड़ा, अपची, विचर्चिका, चर्मदल, रक्तविकार, शोथ, गलित कुष्ठ, हलीमक, शूल, मन्दाग्नि तथा अरुचिरोग दूर हो जाते हैं ॥६–१४॥

महातालेश्वर रस

तथा सिद्धेन तालेन गन्धतुल्येन मेलयेत्।
द्वयोस्तुल्यं जीर्णताम्रं वालुकायन्त्रे पचेत् ॥ १५ ॥
अयं तालेश्वरो नाम रसः परमदुर्लभः।
हन्यात्कुष्ठानि सर्वाणि वातरक्तमथापि वा ॥ १६ ॥
शूलमष्टविधं श्वित्रं रसतालेश्वरो महान् ॥ १७ ॥

पूर्वोक्त रीतिसे सिद्ध हड़तालभस्म और शुद्ध गंधक एक-एक भाग तथा ताम्रभस्म दो भाग एकमें घोंटकर बालुकायंत्रमें पकावे। यह महातालेश्वर रस बड़ी दुर्लभ वस्तु है। यह सभी तरहके कुष्ठ, वातरक्त, आठों प्रकारके शूल और श्वित्ररोग दूर करता है ॥१५–१७॥

विश्वेश्वर रस

रसाद्दश विषात्पञ्च गन्धकाद्दश शोधितात्।
तुत्थाद्दश पलाशस्य वीजेभ्यः पञ्च कारयेत् ॥ १८ ॥
क्षुद्राश्वमारधुस्तूरनीलीतः करहाटकात्।
दशकं दशकं कुर्यात् शोषयित्वा जटात्वचः ॥ १९ ॥
दशकं दशकं दत्त्वा कुचिलाद्दशनूतनात्।
भल्लातकाच्च दशकं चूर्णयित्वा भिषक्ततः ॥ २० ॥

सुदिने च बलिं दत्त्वा वैद्यः पूजापरायणः ।
रक्तिकाद्वितयं दद्यात्सहते यदि वा त्रयम् ॥ २१ ॥
वातरक्तं ज्वरं कुष्ठं खरस्पर्शमसौख्यदम् ।
आजानुस्फुटितं हन्ति विषजं वास्थिनिःसृतम् ॥ २२ ॥
कुष्ठमष्टादशविधमग्निमान्द्यमरोचकम् ।
विश्वेश्वरो रसो नाम विश्वनाथेन भाषितः ॥ २३ ॥

शुद्ध पारा १० भाग, विष ५ भाग, शुद्ध गंधक १० भाग, शुद्ध तूतिया १० भाग, पलाशबीज ५ भाग तथा छोटी कटेरी १० भाग और कनैल, धतूरा, नील तथा करहाटक (हड़जोड़ी) इनकी जड़की छाल १०-१० भाग लेकर शुद्ध कुचला १० भाग और शुद्ध भेलावा १० भाग, ये सब, एकमें पीसकर चूर्ण कर ले । फिर किसी अच्छे दिन बलि देकर पूजामें लगा हुआ वैद्य इस रसकी दो रत्ती और बलवान् रोगीको तीन रत्तीकी मात्रा दे । इससे वातरक्त, ज्वर, कुष्ठ, छूनेमें कठोर, दुखदायी, घुटनों तक फूटे, विषसे जायमान और जिनमें हड्डी तक दीख रही हो, ऐसे वातरक्त रोग भी नष्ट हो जाते हैं । विश्वनाथोक्त इस विश्वेश्वर रसका सेवन करे तो अठारहों प्रकारके कुष्ठ और अरुचिरोग दूर होते जाते हैं ॥१८–२३॥

वक्ष्यते कुष्ठरोगे यदौषधं भिषजां वरैः ।
वातरक्ते प्रयुञ्जीत कुर्य्याच्च रक्तमोक्षणम् ॥ २४ ॥

अच्छे-अच्छे वैद्योंके बताये हुए कुष्ठरोगके जो योग आगे बताये जानेवाले हैं, उन सबको इस वातरक्त रोगमें भी बरतना चाहिये । इसमें शिरामोक्षण (चोंघी आदिसे रुधिर निकालना) भी हितकारक होता है ॥ २४ ॥

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे वातरक्तचिकित्सा समाप्ता ।

अथोरुस्तम्भचिकित्सा ।

गुञ्जाभद्र रस

निष्कत्रयं शुद्धसूतं निष्कद्वादशगन्धकम् ।
गुञ्जाबीजञ्च षण्निष्कं जयन्ती निम्बबीजकम् ॥ १ ॥

प्रत्येकं निष्कमात्रन्तु निष्कं जैपालबीजकम्।
जयाजम्बीरधुस्तूरकाकमाचीद्रवैर्दिनम् ॥ २ ॥
भावयित्वा वटीं कुर्याच्चतुर्गुञ्जाप्रमाणतः।
गुञ्जाभद्ररसो नाम हिङ्गुसैन्धवसंयुतः।
शमयत्युल्बणं दुःखमूरुस्तम्भं सुदारुणम् ॥ ३ ॥
शिलाजतु गुग्गुलं वा पिप्पलीमथ नागरम्।
ऊरुस्तम्भे पिबेन्मूत्रैर्दशमूलीरसेन वा ॥ ४ ॥
प्लीहाधिकारे कथितं रसेन्द्रं वारिशोषणम्।
ऊरुस्तम्भे प्रयुञ्जीत चान्यद्वा योगवाहिकम् ॥ ५ ॥

शुद्ध पारा ३ निष्क, गन्धक १२ निष्क, रत्तीके बीज ६ निष्क, जयन्ती, नीमके बीज और जमालगोटा, ये तीनों एक-एक निष्क लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सबको एकत्र पीसकर भाँग, जँभीरी नीबू, धतूरा तथा मकोयके स्वरसमें क्रमशः एक-एक दिन भावना देकर चार-चार रत्तीकी गोलियें बना ले। यदि हींग और सेंधा नमकके साथ इस रसका सेवन करे तो भयानक और परम दुखदायी ऊरुस्तम्भ रोग नष्ट हो जाता है। इस रोगमें यदि शुद्ध शिलाजीत, गूगुल और पिप्पलीका चूर्ण गोमूत्रके साथ सेवन करे तो लाभ होता है। प्लीहाधिकारमें कहे जानेवाले वारिशोषण रसका भी इस रोगमें उपयोग करे। अन्य योगवाही रसोंका भी सेवन किया जा सकता है ॥ २–५ ॥

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे ऊरुस्तम्भचिकित्सा।

अथ आमवातचिकित्सा।

आमवातारि वटिका

रसगन्धकलौहाभ्रं तुत्थं टङ्कणसैन्धवम्।
समभागं विचूर्ण्याथ चूर्णाद्विगुणगुग्गुलुः ॥ १ ॥
गुग्गुलोः पादिकं देयं त्रिवृतामूलवल्कलम्।
तत्समं चित्रकं देयं घृतेन परिमर्दयेत् ॥ २ ॥
खादेन्माषद्वयञ्चास्य त्रिफलाचूर्णयोगतः।
आमवातारिवटिका पाचिका भेदिका मता ॥ ३ ॥

आमवातं निहन्त्याशु गुल्मशूलोदराणि च।
यकृत्प्लीहोदराष्ठीलां कामलां पाण्ड्वरोचकान्॥ ४॥
ग्रन्थिशूलं शिरःशूलं वातरोगञ्च गृध्रसीम्।
गलगण्डं गण्डमालां क्रिमिकुष्ठभगन्दरान्॥ ५॥
विद्रधिञ्चान्त्रवृद्धिञ्च ह्यर्शांसि गुदजानि च।
आमवातारिवटिका पुरेशानेन चोदिता॥ ६॥

शुद्ध पारा, गंधक, लौहभस्म, तूतिया, सोहागा और सेंधा नमक, ये द्रव्य समभाग लेकर पीसे और सब चूर्णका दूना शुद्ध गूगुलकी चौथाई त्रिवृत्मूलकी छालका चूर्ण और इतना ही चीतेका चूर्ण मिलाकर घीमें घोंट ले। त्रिफलाके चूर्णमें दो मासा यह वटी खानेका विधान है। यह पाचक, भेदक और आमवातनाशिनी वटिका है। इससे गुल्म, शूल, उदररोग, यकृत्, प्लीहा, अष्ठीला, कामला, पाण्डु, अरोचक, ग्रन्थिशूल, शिरःशूल, वातरोग, गृध्रसी, अन्त्रवृद्धि, अर्श, अर्शके मस्से आदि सभी रोग दूर हो जाते हैं। यह वटी ईशानदेवकी बतायी हुई है॥ १–६॥

अन्य आमवातारि वटिका

रसगन्धौ वरावह्नी गुग्गुलुः क्रमवर्धितः।
एतदेरण्डतैलेन मर्दयेदतिचिक्कणम्॥ ७॥
कर्षोऽस्यैरण्डतैलेन हन्त्युष्णजलपायिनः।
आमवातमतीवोग्रं दुग्धं मुद्गादि वर्जयेत्॥ ८॥

शुद्ध पारा १ भाग, गंधक २ भाग, हर्रा ३ भाग, बहेड़ा ४ भाग, आँवला ५ भाग, चीता ६ भाग, शुद्ध गूगुल ७ भाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले फिर सब चीजें एकमें मिलाकर रेंड़ीके तेलमें घोंटे। यदि रेंड़ीके तेलमें एक कर्ष इस वटिकाका सेवन करे और ऊपरसे गरम जल पिये तो अतीव उग्र आमवात भी नष्ट हो जाता है। हाँ, इसका सेवन करते समय दूध और मूँग आदि त्याग देना चाहिये॥ ७॥ ८॥

आमवातेश्वर रस

शुद्धगन्धः पलार्द्धश्च मृतताम्रञ्च तत्समम्।
ताम्रार्द्धः पारदः शुद्धो रसतुल्यं मृतायसम्॥ ९॥

सर्वं पञ्चाङ्गुलेनैव भावयेच्च पुनः पुनः।
सञ्चूर्ण्य पञ्चकोलोत्थैः काथैः सर्वं विभावयेत् ॥ १० ॥
रौद्रे विंशतिवारांश्च गुडूचीनां रसैर्दश।
भृष्टटङ्कणचूर्णेन तुल्येन सह मेलयेत् ॥ ११ ॥
टङ्कणार्द्धं विडं देयं मरिचं विडतुल्यकम्।
तिन्तिडीक्षारतुल्यञ्च सूततुल्यञ्च दन्तिकम् ॥ १२ ॥
त्रिकटु त्रिफलञ्चैव लवङ्गञ्चार्द्धभागिकम्।
आमवातेश्वरो नाम विष्णुना परिकीर्त्तितः ॥ १३ ॥
महाग्निकारको ह्येष आमवातान्तको मतः।
स्थूलानां कर्षणः श्रेष्ठः कृशाणां स्थौल्यकारकः ॥ १४ ॥
अनुपानविशेषेण सर्वरोगविनाशनः।
अनेन सदृशो नास्ति वह्निदीप्तिकरो महान्।
गुल्मार्शोग्रहणीदोषे शोथपाण्डुरुजापहः ॥ १५ ॥

शुद्ध गंधक आधा पल, ताम्रभस्म आधा पल, शुद्ध पारा चौथाई पल और लौहभस्म चौथाई पल लेकर पहले पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर और चीजें मिलाकर एरण्डकी जड़के काढ़ेमें सात बार भावना दे। फिर सबको कूट-पीसकर पञ्चकोलके काढ़ेमें धूपमें रखकर बीस बार भावना दे। तदनंतर गुरुचके स्वरसमें दस बार भावना दे। सूख जानेपर सबके समान भुने सोहागेका चूर्ण, इसका आधा विडलवण, इतना ही मिर्चका चूर्ण और इतना ही इमलीका क्षार तथा सोहागेकी चौथाई दन्तीका चूर्ण डाले। इसके बाद आधा-आधा पल त्रिफला, त्रिकटु और लौंगका चूर्ण मिलावे। यही विष्णुभगवान्का कहा हुआ आमवातेश्वर रस है। यह बड़ा ही अग्निउद्दीपक, आमवातनाशक, स्थूलता-निवारक और कृश प्राणियोंको स्थूलतादायक है। अनुपानविशेषमें उपयोग करनेपर यह सभी रोग नष्ट करता है। इससे बढ़कर अग्निसन्दीपक और कोई भी औषधि नहीं है। इससे गुल्म, अर्श, ग्रहणी, पाण्डु और शोथरोग भी मिटते हैं ॥ ९—१५ ॥

वृद्धदाराद्य लौह

वृद्धदारत्रिवृद्दन्ती गजपिप्पलिमाणकैः।
त्रिकत्रयसमायुक्तैरामवातात्मकं त्वयः।
सर्वानेव गदान् हन्ति केशरी करिणो यथा॥ १६॥

विधारा, त्रिवृत्, दन्ती, गजपिप्पली, मानकन्द, त्रिफला, त्रिकटु, विडंग, चीता और मोथा इन सबका चूर्ण समभाग और सबके बराबर लौहभस्म ले। फिर सबको एकत्र पीसकर रख ले। यह लौह आमवातादि सब रोगोंको ऐसे मार भगाता है, जैसे सिंह हाथियोंको पछाड़ देता है॥ १६॥

शिवागुग्गुल

शिवाविभीतामलकीफलानां प्रत्येकशो मुष्टिचतुष्टयञ्च।
तोयाढके तत्कथितं विधाय पादावशेषे त्ववतारणीयम्॥ १७॥
एरण्डतैलं द्विपलं निधाय पिचुत्रयं गन्धकनामकस्य।
पचेत्पुरस्यात्र पलद्वयञ्च पाकावशेषे च विचूर्ण्य दद्यात्॥ १८॥
रास्ना विडङ्गं मरिचं कणा च दन्तीजटानागरदेवदारु।
प्रत्येकशः कोलमितं तथैषां विचूर्ण्य निक्षिप्य नियोजयेच्च॥ १९॥
आमवाते कटीशूले गृध्रसीक्रोष्टुशीर्षके।
न चान्यदस्ति भैषज्यं यथाऽयं गुग्गुलुः स्मृतः॥ २०॥

हरीतकी, बहेड़ा और आँवला ये तीनों एक-एक शराब (चार मुट्ठी) लेकर कूटे और एक आढक जलमें डालकर पकावे। जब एक चौथाई जल शेष रहे तब उतारकर इस क्वाथमें रेंडीका तेल २ पल, शुद्ध गंधक ६ तोला और शुद्ध गूगुल २ पल डालकर फिरसे पकावे। पक जानेपर इसमें रास्ना, वाय-विडंग, मिर्च, पिप्पली, दन्तीमूल, जटामासी, सोंठ और देवदारु, इन सबका चूर्ण एक-एक कोल डाले। इन सबको एकमें घोंटकर रख छोड़े। आमवात, कटिशूल, गृध्रसी और क्रोष्टुशीर्ष रोगमें इस गूगुलके समान हितकारी औषधि कोई भी नहीं है॥ १७—२०॥

आमवातगजसिंह मोदक

शुण्ठीचूर्णस्य प्रस्थैकं यमान्याश्च पलाष्टकम्।
जीरकस्य पले द्वे च धन्याकस्य पलद्वयम्॥ २१॥

पलैकं शतपुष्पाया लवङ्गस्य पलं तथा।
टङ्कणस्य पलं भृष्टं मरिचस्य पलानि च ॥ २२ ॥
त्रिवृता त्रिफलाक्षारपिप्पलीनां पलं तथा।
शट्येलातेजपत्राणां चविकानां पलं तथा ॥ २३ ॥
अभ्रं लौहं तथा वङ्गं प्रत्येकञ्च पलं पलम्।
एतेषां सर्वचूर्णानां खण्डं दद्याद्गुणत्रयम् ॥ २४ ॥
घृतेन मधुना मिश्रं कर्षमात्रन्तु मोदकम्।
एकैकं भक्षयेत्प्रातर्घृतक्षीरानुपिबेत्पयः ॥ २५ ॥
शूलघ्नो रक्तपित्तघ्नश्चाम्लपित्तविनाशनः।
आमवातकुलध्वंसी केशरी विधिनिर्मितः ॥ २६ ॥
रामबाणरसो देयो योगवाहिरसेन्द्रकः।
आमवाते विधीयन्ते सानुपानैः प्रयत्नतः ॥ २७ ॥

सोंठका चूर्ण १ प्रस्थ, अजवायनका चूर्ण ८ पल, जीरेका चूर्ण २ पल, सौंफ, लौंग, सोहागा, मिर्च, त्रिवृत्, हर्रा, बहेड़ा, आँवला, जवाखार और पिप्पली, इनका चूर्ण एक-एक पल तथा कचूर, इलायची, तेजपात, चव्य, अभ्रकभस्म, लौहभस्म तथा वंगभस्म, ये द्रव्य एक-एक पल लेकर सबको एकमें भलीभाँति घोंटे। फिर जितनी वजन सबकी हो, उसकी तिगुनी चीनी, घी और मधु मिलाकर कर्ष-कर्ष भरका लड्डू बना ले। नित्य प्रातःकाल एक लड्डू खाकर बादमें घी मिला हुआ दूध पिये तो शूल, रक्तपित्त, अम्लपित्त आदि सभी आमवात रोग दूर हो जाते हैं। विभिन्न अनुपानोंके साथ रामबाण रस अथवा अन्य योगवाही रस सेवन करनेसे भी आमवातरोग निवृत्त होता है ॥ २१–२७ ॥

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे आमवातचिकित्सा समाप्ता

अथ शूलरोगचिकित्सा।

सप्तामृत लौह

मधुकं त्रिफलाचूर्णमयोरजःसमं लिहन्।
मधुसर्पिर्युतं सम्यग्गव्यक्षीरं पिबेदनु ॥ १ ॥

छर्दिं सतिमिरं शूलमम्लपित्तं ज्वरारुचिम्।
मूत्रकृच्छ्रं तथा मेहं हन्यादेतन्न संशयः ॥ २ ॥

मुलैठी और त्रिफलाका चूर्ण समभाग लेकर लौहभस्म चार भाग ले। फिर इन सबको पीसकर एकमें रख ले। यदि मधु और घीमें मिलाकर इसे चाटे और ऊपरसे गायका दूध पिये तो यह वमन, तिमिररोग, शूल, अम्लपित्त, ज्वर, अरुचि, मूत्रकृच्छ्र तथा प्रमेहको अवश्य नष्ट कर देता है ॥१॥२॥

त्रिफला लौह

तीक्ष्णायश्चूर्णसंयुक्त त्रिफलाचूर्णमुत्तमम्।
क्षीरेण पाययेद्धीमान्सद्यः शूलनिवारणम् ॥ ३ ॥

तीक्ष्णलौहभस्म तीन भाग और त्रिफलाचूर्ण तीन भाग लेकर सबको एकमें घोंट ले। यदि दूधके साथ इसका सेवन करे तो शूलरोग तत्काल दूर हो जाता है ॥ ३ ॥

चतुःसम लौह

अभ्रं ताम्रं रसं लौहं गन्धकं संस्कृतं पलम्।
सर्वमेतत्समाहृत्य यत्नतः कुशलो भिषक् ॥ ४ ॥
आज्ये पले द्वादशके दुग्धे वत्सरसंख्यके।
पक्त्वा तत्र क्षिपेच्चूर्णं सुपूतं घनवाससा ॥ ५ ॥
विडङ्गत्रिफलावह्नित्रिकटूनां तथैव च।
पिष्ट्वा पलोन्मितानेतानथ संमिश्रितान्नयेत् ॥ ६ ॥
ततः पिष्ट्वा शुभे भाण्डे स्थापयेच्च विचक्षणः।
आत्मनः शोभने चाह्नि पूजयित्वा रविं गुरुम् ॥ ७ ॥
घृतेन मधुनालोड्य भक्षयेन्माषकादिकम्।
अष्टौ माषान्क्रमेणैव वर्द्धयेच्च समाहितः ॥ ८ ॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं नारिकेलजलं पयः।
जीर्णे लोहितशाल्यन्नं मुद्गमांसरसं तथा ॥ ९ ॥
भक्षयेद्घृतसंयुक्तं सद्यः शूलाद्विमुच्यते।
हृच्छूलं पार्श्वशूलं च सामवातं कटीग्रहम्।
गुल्मशूलं शिरःशूलं योगेनानेन नाशयेत् ॥ १० ॥

अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक तथा लौहभस्म ये द्रव्य एक-एक पल लेकर पारे गंधक की कज्जली कर ले। फिर सबको एकत्र घोंटकर गायका घी १२ पल ले और उपर्युक्त सब चीजें डालकर आँच दे। पक जाने-पर मोटे कपड़ेमें छना हुआ वायविडंग, त्रिफला, चीता और त्रिकटुका चूर्ण एक-एक पल डाले। फिर सबको एकमें घोंटकर किसी अच्छे पात्रमें रखे। अपने राशिनामसे बने किसी शुभ दिन सूर्यभगवान् तथा गुरुकी पूजा करके शहदके साथ एक मासेसे आठ मासे तक बढ़ाता हुआ इस लौहका सेवन करे। ऊपर-से नारियलका जल पिये और पच जानेपर लाल चावलका भात, मूँगका रस एवं घृतमिश्रित मांसरस खाय तो शूलरोग तुरन्त छूट जाता है। इसके अति-रिक्त हृदयशूल, पार्श्वशूल, आमवात, कटिग्रह, गुल्मशूल एवं शिरःशूलरोग भी इस योगसे निवृत्त हो जाते हैं॥ ४–१०॥

पंचात्मक रस

मृतसूताभ्रकं चाम्लवेतसं ताम्रगन्धकम्।
विषं फलत्रयाच्चूर्णं तुल्यं मर्द्यं दिनावधि॥ ११॥
जयन्ती मुण्डिरी वासा बृहती च गुडूचिका।
महाराष्ट्री जम्बुरसैस्तथा नीलोत्पलस्य च॥ १२॥
प्रतिद्रावैर्दिनं भाव्यं ततः संशोष्य यत्नतः।
अर्द्धांशं पञ्चलवणं दत्त्वाऽऽर्द्रकरसेन च॥ १३॥
दिनं पेष्यं ततः कुर्याद्वटिकां चणसम्मिताम्।
प्रातर्मध्याह्नरात्रौ च भक्षयेद्वटिकात्रयम्॥ १४॥
माषेक्षुपिष्टगुर्वन्नं गोपयश्च हितं तथा।
सेवेत वातशूलार्त्तो रसं पञ्चात्मकं शुभम्॥ १५॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, अमलवेत, ताम्रभस्म, शुद्ध गंधक, शुद्ध विष और त्रिफलाके चूर्ण, ये द्रव्य समभाग लेकर दिनभर घोंटे। फिर जयन्ती, मुण्डी, वासा, बड़ी कटेरी, गुरुच, ब्रह्मदण्डी, जामुन और नील कमल, इनके स्वरसमें क्रमशः एक-एक दिनकी भावना दे। फिर इसे सुखा ले और सब चूर्णका आधा पाँचो नमक डालकर ऊखके रसमें दिनभरकी भावना दे। गाढ़ा होनेपर चने बराबर गोली बना ले। सवेरे, दोपहरमें और रात्रिके समय इसकी एक

एक गोली खाय। उड़द, ऊँख, पीठी, भारी अन्न और गायका दूध इसमें पथ्य है। वातशूलसे दुखी मनुष्य इस रसका सेवन करे तो अवश्य लाभ होता है॥ ११–१५॥

धात्रीलौह

कुडवं शुद्धमण्डूरं यवञ्च कुडवं तथा।
पाकार्थञ्च जलं प्रस्थं चतुर्भागावशेषितम्॥ १६॥
शतावरीरसस्याष्टावामलक्या रसस्य च।
तथा दधिपयो भूमिकूष्माण्डस्य चतुःपलम्॥ १७॥
चतुःपलमिक्षुरसं दद्यात्तत्र विचक्षणः।
प्रक्षिपेज्जीरकं धान्यं त्रिजातं करिपिप्पलीम्॥ १८॥
मुस्तं हरीतकीञ्चैव अभ्रं लौहं कटुत्रयम्।
रेणुका त्रिफला चैव तालीशं स्वर्णकेशरम्॥ १९॥
कटुकं मधुकं रास्ना चाश्वगन्धा च चन्दनम्।
एतेषां कार्षिकं भागं चूर्णयित्वा विनिक्षिपेत्॥ २०॥
भोजनाद्यवसाने च मध्ये चैव समाहितः।
तोलैकं भक्षयेन्नित्यमनुपानं पयस्तथा॥ २१॥
शूलमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा।
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम्॥ २२॥
परिणामसमुत्थञ्च ह्यन्नद्रवभवं तथा।
द्वन्द्वजानपि शूलांश्च ह्यम्लपित्तं सुदारुणम्।
सर्वशूलहरं श्रेष्ठं धात्रीलौहमिदं शुभम्॥ २३॥

जौ ४ पल लेकर एक प्रस्थ जलमें पकावे। पककर जब चौथाई जल शेष रहे तब उतार ले और उसमें शुद्ध मण्डूर ४ पल, शतावरका स्वरस ८ पल, आँवलेका स्वरस ८ पल, दही, दूध, भुइँकुम्हड़ा और ऊँखका रस, ये चीजें चार-चार पल डालकर पकावे। पाक हो जानेपर इसमें जीरा, धनियाँ, तेजपात, इलायची, दालचीनी, गजपीपल, मोथा, हर्रा, बहेड़ा, आवँला, तालीसपत्र, नागकेसर, कुटकी, मुलैठी, रास्ना, असगंध और लालचन्दन, इनमेंसे सभी चीजोंका चूर्ण एक-एक कर्ष मिलाकर रखे। भोजनके आदि, मध्य और

अन्तमें एक-एक तोला इस रसको खाकर दूध पिये तो साध्य अथवा असाध्य आठों प्रकारके शूल, वातज, पित्तज, श्लैष्मिक, सान्निपातिक, परिणामज, अन्नद्रवसे जायमान और द्वन्द्वज शूल, अतिशय दारुण अम्लपित्त और सब तरहके शूलरोग निवृत्त हो जाते हैं। इसका नाम धात्री लौह है ॥१६-२३॥

शूलराज लौह

कर्षकं कान्तलौहस्य शुद्धमभ्रं पलं तथा।
सितायाश्च पलञ्चैकं मधु सर्पिस्तथैव च ।२४॥
सर्वमेकीकृतं पात्रे लौहदण्डेन मर्दयेत्।
त्रिकटु त्रिफलामुस्तं विडङ्गं चव्यचित्रकम् ॥ २५॥
प्रत्येकं तोलकं मानं चूर्णितं तत्र दापयेत्।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय शिशिराम्ब्वनुपानतः ॥ २६॥
सर्वदोषभवं शूलं कुक्षिशूलञ्च यद्भवेत्।
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च अम्लपित्तञ्च नाशयेत् ॥ २७॥
अर्शांसि ग्रहणीदोष प्रमेहांश्च विसूचिकाम्।
शूलराजमिदं लौह हरेण परिनिर्मितम् ॥ २८॥

कान्तलौहभस्म १ कर्ष, अभ्रकभस्म १ पल, मिश्री १ पल, मधु और घी भी एक ही एक पल लेकर सब एक पात्रमें रखे और लौहदण्डसे घोंटे। फिर त्रिकटु, त्रिफला, मोथा, वायविडंग, चव्य, चीता, इन द्रव्योंका चूर्ण एक-एक तोले मिलाकर रख ले। नित्य सवेरे ठंढे जलके साथ यदि इसे खाय तो सभी तरहके शूल, कुक्षिशूल, हृदयशूल, पार्श्वशूल, अम्लपित्त, अर्श, ग्रहणीदोष, प्रमेह और विसूचिका रोग दूर हो जाता है। इस शूलराज लौहको स्वयं शंकर भगवानने बनाया था ॥ २४—२८ ॥

विद्याधराभ्र

विडङ्गमुस्तत्रिफलागुडूचीदन्तीत्रिवृद्वह्निकटुत्रिकञ्च।
प्रत्येकमेषां पिचुभागचूर्णं पलानि चत्वार्ययसो मलस्य ॥ २९॥
गोमूत्रशुद्धस्य पुरातनस्य यद्वाऽयसस्तानि शिवाटिकायाः।
कृष्णाभ्रचूर्णस्य पलं विशुद्धं निश्चन्द्रकं शुद्धमतीव सूतात् ॥ ३०॥

पादोनकर्षं स्वरसेन खल्ले शिलातले मन्युमणीदलस्य।
सम्मर्द्य पश्चादतिशुद्धगन्धपाषाणचूर्णेन पिचून्मितेन॥ ३१॥
युक्त्वा ततः पूर्वरजांसि दत्त्वा सर्पिर्मधुभ्यामवमर्द्य यत्नात्।
निधापयेत्स्निग्धविशुद्धभाण्डे ततः प्रयोज्यास्य रसायनस्य॥ ३२॥
प्राङ्माषको वाऽप्यथवा द्वितीयो गव्यं पयो वा शिशिरं जलं वा।
पिबेदयं योगवरः प्रभूतकालप्रनष्टानलदीपकश्च॥३३॥
रोगं निहन्यात्परिणामशूलं शूलं तथाऽन्नद्रवसंज्ञकञ्च।
यक्ष्माऽम्लपित्तं ग्रहणीं प्रवृद्धां जीर्णज्वरं लोहितपित्तमुग्रम्।
न सन्ति ये यान्न निहन्ति रोगान् योगोत्तमः सम्यगुपास्यमानः॥३४॥

वायविडंग, मोथा, त्रिफला, गुरुच, दन्ती, निसोथ, चीता, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, इन द्रव्योंका चूर्ण एक-एक कर्ष, पुराना और गोमूत्रमें शोधित मण्डूर-भस्म, लौहभस्म अथवा लोहपत्र चार पल, निश्चन्द्र शुद्ध कृष्णाभ्रकभस्म एक पल, सिंगरिफसे निकाला और मण्डूकपर्णीके रसमें शोधित पारा चार पल और शुद्ध गंधक एक कर्ष लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सब चीजें मिलाकर घी-शहदमें भली-भाँति घोंटे। घुँट जानेपर साफ-सुथरे और चिकने पात्रमें रख ले। रोगीका बल और दोष देखकर एक या दो मासा यह विद्याधराभ्र घी और मधुमें दे और ऊपरसे गोदुग्ध तथा शीतल जल पिये तो यह बहुत दिनोंके पुराने मन्दाग्नि, परिणामशूल, अन्नद्रव शूल, यक्ष्मा, अम्लपित्त, बढ़ी हुई ग्रहणी, जीर्णज्वर और उग्र रक्तपित्त रोग नष्ट हो जाते हैं। संसारमें ऐसा कोई भी रोग नहीं है, जिसे यह विद्याधराभ्र योग न नष्ट कर दे॥ २९—३४॥

बृहद्विद्याधराभ्र

शुद्धसूतं तथा गन्धः फलत्रयकटुत्रयम्।
विडङ्गं मुस्तकं दन्ती त्रिवृता चित्रकं तथा॥ ३५॥
आखुकर्णी ग्रन्थिकञ्च प्रत्येकं कर्षसम्मितम्।
पलं कृष्णाभ्रचूर्णस्य मृतायश्च चतुर्गुणम्॥ ३६॥
घृतेन मधुना पिष्ट्वा वटिकां कोलसम्मिताम्।
एकैकां वटिकां खादेत्प्रातरुत्थाय नित्यशः॥ ३७॥

अनुपानं गवां क्षीरं नीरं वा नारिकेलजम् ।
सर्वशूलं निहन्त्याशु वातपित्तभवं तथा ॥ ३८ ॥
एकजं द्वन्द्वजञ्चैव तथैव सान्निपातिकम् ।
परिणामोद्भवं शूलमामवातोद्भवं तथा ॥ ३९ ॥
कार्श्यं वैवर्ण्यमालस्यं तन्द्राऽरुचिविनाशनम् ।
साध्यासाध्यं निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥ ४० ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, त्रिफला, त्रिकटु, वायविडंग, मोथा, दन्ती, त्रिवृत्, चीता, मूषाकर्णी, पिपरामूल और गठिवन, इन चीजोंका चूर्ण एक-एक कर्ष, कृष्ण अभ्रकचूर्ण एक पल और लौहभस्म चार पल लेकर सबको एक-में पीसें और घी-शहदमें घोंटकर बेर बराबर गोली बना ले। नित्य प्रातःकाल इसकी एक गोली खाकर गायका दूध तथा नारियलका जल पिये तो वातिक, पैत्तिक, एकज, द्वन्द्वज, सन्निपातज, परिणामज तथा आमवातज शूल, शारीरिक विवर्णता, आलस्य, तन्द्रा, अरुचि एवं साध्य तथा असाध्य सब प्रकारके शूलों-को यह ऐसे नष्ट कर देता है, जैसे सूर्यभगवान् अन्धकारको नष्ट कर देते हैं ॥ ३५–४० ॥

सर्वाङ्गसुन्दर रस

शुद्धसूतं तथा ताम्रं शिलामाक्षिकतालकम् ।
रजतं स्वर्णवङ्गञ्च लौहमभ्रं सनागरम् ॥ ४१ ॥
चूर्णयेत्पञ्चलवणं देयं सर्वन्तु तुल्यकम् ।
गन्धकं मिश्रयेत्सर्वं रसैरेषां विभावयेत् ॥ ४२ ।
शुण्ठीजयन्तीविजयामहाराष्ट्रीकधूर्त्तजैः ।
सर्वाङ्गसुन्दरो नाम्ना रसोऽयं विष्णुनिर्मितः ॥ ४३ ॥
खादेदेरण्डशुण्ठीभ्यां माषमात्रं दिने दिने ।
कफवातमयं हन्ति चानुपानं वदाम्यहम् ॥ ४४ ॥
व्योष सौवर्चलं हिङ्गु करञ्जबीजसंयुतम् ।
पिबेदुष्णाम्बुना चानु सर्वशूलनिकृन्तनम् ॥ ४५ ॥

शुद्ध पारा, ताम्रभस्म, मैनसिल, स्वर्णमाक्षिकभस्म, हड़ताल, रौप्यभस्म, स्वर्णभस्म, वंगभस्म, लौहभस्म, अभ्रकभस्म, सोंठ, पाँचों नमक और गन्धक ये

वस्तुयें समभाग लेकर पारा-गन्धककी कज्जली करे। फिर सोंठ, जयन्ती, भाँग, ब्रह्मदण्डी, धतूरा इनके रसोंमें पृथक्-पृथक् भावना दे। यह रस विष्णुभगवानका बनाया हुआ है। यदि नित्य एक मासा यह रस एरण्डके रस और सोंठके चूर्णमें मिलाकर खाय तो सभी कफ-वातज रोग दूर हो जाते हैं। इसे यदि त्रिकटु, सोंचल नोन, हींग और कंजेके बीज, इनके समभाग चूर्णमें मिलाकर खायऔर गरम पानी पिये तो सभी प्रकारके शूलरोग मिट जाते हैं ॥४१–४५॥

शूलवज्रिणी वटिका

रसगंधकलौहानां पलार्द्धेन समन्वितम्।
त्रिफला रामठं शुल्वं शठीत्रिकटुटङ्कणम् ॥ ४६ ॥
पत्रं त्वगेला तालीशजातीफललवङ्गकम्।
यमानी जीरकं धान्यं प्रत्येकं तोलकं मतम् ॥ ४७ ॥
माषैका वटिका कार्य्या छागीदुग्धेन वा पुनः।
एकैका भक्षिता चेयं वटिका शूलवज्रिणी ॥ ४८ ॥
शूलमष्टविधं हन्ति प्लीहगुल्मोदरं तथा।
अम्लपित्तामवातञ्च पाण्डुत्वं कामलां तथा ॥ ४९ ॥
शोथं गलग्रहं वृद्धिं श्लीपदं सभगन्दरम्।
वृद्धबालकरी चैव मन्दाग्नेरपि दीपनी ॥ ५० ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक और लौहभस्म ये तीनों आधा-आधा पल लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर त्रिफला, हींग, ताम्रभस्म, कचूर, त्रिकटु, सोहागा, तेजपत्र, दालचीनी, अजवायन, तालीसपत्र, जायफल, लौंग, जीरा और धनियाँ ये चीजें एक-एक तोला लेकर मिलावे। फिर सबको एकमें घोंटकर मासे-मासे भरकी गोली बना ले। बकरीके दूधमें इस शूलवज्रिणी वटिकाको पिये तो आठों प्रकारके शूल, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, अम्लपित्त, आमवात, पाण्डु, कामला, शोथ, गलग्रह, अन्त्रवृद्धि, श्लीपद तथा भगन्दर रोग निवृत्त होता है। यह वटिका वृद्धको भी बालक बनाती और मन्द अग्निको उद्दीप्त करती है॥४६-५०॥

त्रिपुरभैरव रस

भागो रसस्याश्महेम्नो भागो ग्राह्योऽतियत्नतः।
तयोर्द्वादशभागानि ताम्रपत्राणि लेपयेत् ॥ ५१ ॥

पचेच्छूलहरः सूतो भवेत्त्रिपुरभैरवः ।
माषो मध्वाज्यसंयुक्तो देयोऽस्य परिणामजे ।
अन्ये त्वेरण्डतैलेन हिङ्गुत्रययुतो रसः ॥ ५२ ॥

शुद्ध पारा और गंधक समभाग लेकर कज्जली कर ले । फिर दोनोंका बारहवाँ भाग ताम्रपत्र लेकर उसपर वह कज्जली पोत दे । इसके बाद उसे सम्पुटित करके बालुकायन्त्रमें पकावे । पक जानेपर निकालकर रख ले । शूलरोगका नाशक यही त्रिपुरभैरव रस है । यदि एक मासा यह रस घी और मधुमें खाय तो परिणामशूल नष्ट हो जाता है । बहुतेरे वैद्य रेंड़ीके तेल अथवा हींग, जीरा और सेंधानमकमें भी इसे देते हैं ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

अग्निमुख रस

रसबलिगगनार्कं वेतसाम्लं विषं स्या-
त्सवरमिह पृथक्स्याद्भावयेद्द्रवस्त्वमेतैः ।
कनकभुजगवल्ली कण्टकारी जयाद्भिः
कमलखलिलवासा मुष्टिवज्र्यम्बुपूरैः ॥ ५३ ॥
अरुणसहशपाकैर्मातुलुङ्गैश्च योज्यः
पुटगण इह तुल्यो भावयेदार्द्रकाद्भिः ।
दहनवदननाम्ना वल्लमात्रो निहन्ति
प्रबलसकलशूलं तद्विकारानशेषान् ॥ ५४ ॥

शुद्ध पारा, गंधक, अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, अमलवेत, शुद्ध विष, त्रिफलाका चूर्ण, ये सभी द्रव्य एक-एक भाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे । फिर सब चीजें एकमें मिलाकर घोंटे । घुँट जानेपर धतूरा, पान, कटेरी तथा भाँग, इनके स्वरसमें एक-एक दिन भावना दे । तदनन्तर कमल, सुगंधबाला, अडूसा, शुद्ध कुचला, सेंहुड़का दूध, गूगुल, मातुलुंग नीबूका रस और पाँचों नमक, ये द्रव्य एक-एक भाग लेकर सबको अदरखके रसमें भावना दे । फिर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले । यदि नित्य एक गोली इस अग्निमुख रसका सेवन करे तो सभी प्रकारके प्रबल शूल तथा शूलसम्बन्धी सब विकार दूर हो जाते हैं ॥ ५३ ॥ ५४ ॥

शूलगजकेसरी

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं यामैकं मर्दयेद् दृढम् ।
द्वयोस्तुल्यं शुद्धताम्रं सम्पुटे सन्निवेशयेत् ॥ ५५ ॥
ऊर्ध्वाधो लवणं दत्त्वा मृद्भाण्डे स्थापयेद्भिषक् ।
रुध्वा गजपुटं दत्त्वा स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ ५६ ॥
सम्पुटं चूर्णयेच्छूलद्नं पर्णखण्डे द्विगुञ्जकम् ।
भक्षयेत्सर्वशूलार्त्तः सशुण्ठीहिङ्गुजीरकम् ॥ ५७ ॥
वचामरिचजं चूर्णं कर्षमुष्णजलैः पिबेत् ।
असाध्यं नाशयेत् शूलं श्रीशूलगजकेसरी ॥ ५८ ॥

शुद्ध पारा १ भाग और शुद्ध गंधक २ भाग दोनोंको पहर भर एकमें घोंटकर कज्जली करे । तब इन दोनोंके बराबर ताम्रभस्म मिलाकर घोंटे । फिर इसे शरावसम्पुटमें रखकर संधि बन्द कर दे । यह सम्पुट एक हाँड़ीमें रखकर इसके नीचे-ऊपर नमक भरके हाँड़ीका मुँह बन्द कर दे और गजपुटमें फूँक दे । स्वाङ्गशीतल होनेपर भस्म निकाल ले । यदि दो रत्ती यह रस पानके पत्तेमें रखकर खाय तो सभी प्रकारके शूल दूर हो जाते हैं । इसे खानेके बाद हींग, सोंठ, जीरा, वच और मिर्चका चूर्ण खाकर गरम जल पीना चाहिए । इससे असाध्य शूल भी नष्ट हो जाता है । इसका नाम शूलगजकेसरी रस है ॥ ५५-५८ ॥

त्रिगुणाख्य रस

टङ्कणं हारिणं शृङ्गं स्वर्णं गन्धो मृतं रसम् ।
दिनैकमार्द्रकद्रावैर्मर्द्यं रुध्वा पुटे पचेत् ॥ ५९ ॥
त्रिगुणाख्यो रसो नाम्ना माषैकं मधुसर्पिषा ।
सैन्धवं जीरकं हिङ्गु मध्वाज्याभ्यां लिहेदनु ।
पक्तिशूलहरः ख्यातो याममात्रान्न संशयः ॥ ६० ॥

शुद्ध सोहागा, हिरनकी सींगकी भस्म, स्वर्णभस्म, शुद्ध गंधक और रस-सिन्दूर ये द्रव्य समभाग लेकर अदरखके रसमें दिन भर घोंटे और सम्पुटित करके पुट दे तो त्रिगुणाख्य रस तैयार हो जाता है । यदि एक मासा यह रस घी और मधुके साथ खाय तो पहर भरमें परिणामशूल नष्ट हो जाता है ।

इसका अनुपान सेंधा नमक, हींग, जीरा, मधु और घृत है। इसको घी-मधुमें चाटना चाहिए ॥ ५९ ॥ ६० ॥

शूलहरण योग

हरीतकी त्रिकटुकं कुचिलं हिङ्गु सैन्धवम्।
गन्धकञ्च समं सर्वं वटीं कुर्य्यात्सुखावहाम् ॥ ६१ ॥
लघुकोलप्रमाणान्तु शस्यते प्रातरेव हि।
एकैका वटिका ग्राह्या गुल्मशूलविनाशिनी ॥ ६२ ॥
ग्रहण्यामतिसारे च साजीर्णे मन्दपावके।
योजयेदुष्णपयसा सुखमाप्नोति निश्चितम् ॥ ६३ ॥
सुवर्णञ्च भवेद्देहं सदोत्साहयुतं नृणाम् ॥ ६४ ॥

हरीतकी, त्रिकटु, शुद्ध कुचला, हींग, सेंधानमक और शुद्ध गंधक ये द्रव्य समभाग ले और सबको एक साथ घोंटकर झरवेरी जैसी गोली बना ले। यदि नित्य प्रातःकाल इसकी एक गोली खाय तो गुल्म और शूलरोग मिट जाता है। इसके अतिरिक्त अतिसार, ग्रहणी, अजीर्ण और मन्दाग्निरोगमें यदि गरम जलके साथ इसे खाय तो अवश्य आराम होता है। इससे देह सुवर्ण सदृश देदीप्यमान हो जाती और मनुष्य सदा उत्साहसम्पन्न बना रहता है ॥ ६१—६४ ॥

शर्करा लौह

त्रिफलायास्तथा धात्र्याश्चूर्णं वा काललौहजम्।
शर्कराचूर्णसंयुक्तं सर्वशूलेषु योजयेत् ॥ ६५ ॥

त्रिफला, आँवला और शक्कर इनका चूर्ण समभाग और लौहभस्म पाँच भाग लेकर घोंट ले। इसे खानेसे सभी शूल निवृत्त हो जाते हैं ॥ ६५ ॥

शंखादि चूर्ण

शङ्खचूर्णस्य च पलं पञ्चैव लवणानि च।
क्षारं टङ्कणकं जाती शतपुष्पा यमानिका ॥ ६६ ॥
हिङ्गु त्रिकटुकञ्चैव सर्वमेकत्र चूर्णयेत्।
आमवातं यकृच्छूलं परिणामसमुद्भवम्।
अन्नद्रवकृतं शू शूलञ्चैव त्रिदोषजम् ॥ ६७ ॥

व्यायामं मैथुनं मद्यं लवणादि कटूनि च ।
वेगरोधं शुचं क्रोधं वर्जयेच्छूलवान् नरः ॥ ६८ ॥

शंखका चूर्ण १ पल, पाँचों नमक, जवाखार, शुद्ध सोहागा, जायफल, सौंफ, अजवायन, हींग, सोंठ, मिर्च, पिप्पली इनका चूर्ण सम भाग लेकर एकत्र घोंट ले । इसे खानेसे आमवात, यकृत्शूल, अन्नद्रवकृत शूल और त्रिदोषज शूल दूर होता है । शूलरोगका रोगी व्यायाम, मैथुन, मदिरा, लवणं, कटुपदार्थ, मल-मूत्र आदिका वेगरोध, शोक और क्रोधको त्याग दे ॥६६–६८॥

इति शूलरोगचिकित्सा समाप्ता ।

अथ उदावर्त्तानाहचिकित्सा ।

वैद्यनाथ वटी

पथ्या त्रिकटु सूतञ्च द्विगुणं कानकं तथा ।
मन्युमार्णीरसैरम्ललोणिकाया रसैः कृता ॥ १ ॥
गुटिकोदरगुल्मादिपाण्ड्वामयविनाशिनी ।
क्रिमिकुष्ठगात्रकण्डूपिडकाश्च निहन्ति हि ।
गुटी सिद्धफला चेयं वैद्यनाथेन भाषिता ॥ २ ॥

हरीतकी, त्रिकटु और रससिन्दूर, हर एक वस्तुका चूर्ण समभाग और शुद्ध जमालगोटेके बीज दो भाग लेकर एकमें पीसे और मण्डूकपर्णी तथा चांगेरीके रसमें घोंटकर रत्ती-रत्ती भरकी गोली बना ले । इसे खानेसे उदररोग, गुल्मरोग, पांडुरोग, क्रिमिरोग, कुष्ठ, खुजली तथा पिडका आदि रोग निवृत्त हो जाते हैं । यह वैद्यनाथकी कही हुई सिद्धफला वटिका है ॥१॥२॥

बृहत् इच्छीभेदी रस

शुद्धं पारदटङ्कणं समरिचं गन्धाश्मतुल्यं त्रिवृ-
द्विश्वा च द्विगुणा ततो नवगुणं जैपालचूर्णं क्षिपेत् ।
खल्ले दण्डयुगं विमर्द्य विधिना चार्कस्य पात्रे ततः
स्वेदं गोमयवह्निना च मृदुना स्वेच्छावशाद्भेदकः ॥ ३ ॥

गुञ्जैकप्रमितो रसो हिमजलैः संसेवितो रेचये-
द्यावन्नोष्णजलं पिवेदपि वरं पथ्यञ्च दध्योदनम् ।
आमं सर्वभवं सुजीर्णमुदर गुल्मं विशालं हरे-
द्वह्नेर्दीप्तिकरो बलासहरणः सर्वामयध्वंसनः ॥ ४ ॥

शुद्ध पारा, सोहागा, काली मिर्च, गंधक और त्रिवृत्, ये द्रव्य समभाग तथा सोंठका चूर्ण दो भाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सब चीजें एकमें मिलाकर इसमें नौ भाग जमालगोटेके बीज डाले और खरलमें डालकर दो दण्डतक घोंटे। तदनन्तर उसका गोला बना ले और मदारके पत्तेमें लपेटकर उपलोंके मन्द आँचपर स्वेदन करे। ठंढे जलके साथ यदि एक रत्ती इस रसका सेवन करे तो दस्त आने लगते हैं और वे तब तक आते रहते हैं, जब तक गरम जल न पिया जाय। पथ्यमें दही-भात खाना चाहिए। इससे आम, त्रिदोषजनित उदररोग और वृद्धिको प्राप्त गुल्मरोग नष्ट हो जाता है। यह अग्निको उद्दीप्त करता, कफको मिटाता और सभी रोगोंको नष्ट करता है ॥ ३ ॥ ४ ॥

प्रयोगान्तर

योगवाहिरसान्सर्वान्रेचके कथितानपि ।
प्लीहाधिकारे कथितं रसेन्द्रं वारिशोषणम् ॥ ५ ॥

सभी योगवाही और विरेचनप्रकरणमें कहे हुए तथा प्लीहाधिकारोक्त वारिशोषण रसका उपयोग इस उदावर्तानाह रोगमें भी किया जा सकता है ॥

लौहभस्मप्रयोग

उदावर्त्ते तथाऽऽनाहे प्रयुञ्जीतानुपानतः ॥ ६ ॥
पुटितं भावित लौहं त्रिवृत्क्वाथैरनेकशः ॥ ७ ॥

यदि पुटसिद्ध लौहकी भस्म त्रिवृत्के क्वाथमें सात बार भावित करके बलानुसार मिश्रीके साथ सेवन करे तो उदावर्त रोग दूर हो जाता है ॥ ६॥७ ॥

अन्य रसोंका प्रयोग

उदावर्त्ते प्रयोक्तव्या उदरोक्ता रसाः खलु ॥ ८ ॥

उदररोगचिकित्सामें जितने रस लिखे हैं, वे सब इसमें भी प्रयुक्त हो सकते हैं ॥ ८ ॥ इत्युदावर्तानाहचिकित्सा समाप्ता ।

अथ गुल्मरोगचिकित्सा ।

महानाराच रस

ताम्रं सूतं समं गन्ध जैपालञ्च फलत्रिकम् ।
कटुकं पेषयेत्क्षारैर्निष्कं गुल्महरं पिवेत् ।
उष्णोदकं पिवेच्चानु नाराचोऽयं महारसः ॥ १ ॥

ताम्रभस्म, पारा, गंधक, जमालगोटा, त्रिफला, त्रिकटु, जवाखार, शुद्ध सोहागा और सज्जी, इन सभी द्रव्योंका चूर्ण समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सब वस्तुयें मिलाकर एकमें घोंट ले। यदि एक निष्क यह रस खाकर गरम जल पिये तो गुल्मरोग नष्ट हो जाता है। इसका नाम महानाराच रस है ॥ १ ॥

पञ्चानन रस

पारदं शिखितुत्थञ्च गन्धजैपालपिप्पलीः ।
आरग्वधफलान्मज्जां वज्रीक्षीरेण पेषयेत् ॥ २ ॥
धात्रीरसयुतं खादेद्रक्तगुल्मप्रशान्तये ।
चिञ्चाफलरसञ्चानु पथ्यं दध्योदनं हितम् ॥ ३ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध तूतिया, शुद्ध गंधक, शुद्ध जमालगोटेके बीज, पिप्पलीचूर्ण और अमिलतासके फलका गूदा, ये द्रव्य समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सबको सेंहुड़के दूधमें घोंटकर रत्ती-रत्ती भरकी गोली बना ले। यदि आँवलेके रसमें इसकी एक गोली खाकर ऊपरसे इमलीके फलका रस पिये तो गुल्मरोग निवृत्त हो जाता है। इसमें पथ्य दही-भात है ॥ २ ॥ ३ ॥

गुल्मवज्रिणी वटिका

रसगन्धकताम्रञ्च कांस्यं टंगणतालकम् ।
प्रत्येकं पलिकं ग्राह्यं मर्दयेदतियत्नतः ॥ ४ ॥
तद्यथाऽग्निवलं खादेद्रक्तगुल्मप्रशान्तये ।
निर्मिता नित्यनाथेन वटिका गुल्मवज्रिणी ॥ ५ ॥
गुल्मप्लीहोदराष्ठीलायकृदानाहनाशिनी ।
कामलापाण्डुरोगघ्नी ज्वरशूलविनाशिनी ॥ ६ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, ताम्रभस्म, कांस्यभस्म, शुद्ध सोहागा, शुद्ध हड़-ताल, ये सभी चीजें एक-एक पल लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सबको एक साथ मिलाकर घोंटे और रत्ती-रत्ती भरकी गोली बनाकर रख ले। अग्नि-बलके अनुसार यदि इसका सेवन करे तो रक्तगुल्मरोग निवृत्त हो जाता है। यह गुल्मवज्रिणी गुटिका नित्यनाथकी बनायी हुई है। इससे गुल्म, प्लीहा, उदर-रोग, अष्ठीला, यकृत् रोग, आनाह, कामला, पाण्डु, ज्वर और शूलरोग निवृत्त हो जाते हैं॥ ४—६ ॥

गुल्मकालानल रस

सूतकं लौहकं ताम्रं तालकं गन्धकं समम्।
तोलद्वयमितं भागं यवक्षारञ्च तत्समम्॥ ७॥
मुस्तकं मरिचं शुण्ठीं पिप्पलीं गजपिप्पलीम्।
हरीतकीं वचां कुष्ठं तोलैकं चूर्णयेद्बुधः॥ ८॥
सर्वमेकीकृतं पात्रे क्रियन्ते भावनास्ततः।
पर्पटं मुस्तकं शुण्ठ्यपामार्गं पापचेलिकम्॥ ९॥
तत्पुनश्चूर्णयेत्पश्चात्सर्वगुल्मनिवारणम्।
गुञ्जाचतुष्टयं खादेद्धरीतक्यनुपानतः॥ १०॥
वातिकं पैत्तिकं गुल्मं तथा चैव त्रिदोषजम्।
द्वन्द्वजं श्लैष्मिकं हन्ति वातगुल्मं विशेषतः।
गुल्मकालानलो नाम सर्वगुल्मकुलान्तकृत्॥ ११॥

शुद्ध पारा, लौहभस्म, ताम्रभस्म, शुद्ध हड़ताल और शुद्ध गंधक, ये द्रव्य दो-दो तोले और सबके बराबर अर्थात् दस तोले जवाखार, मोथा, मिर्च, सोंठ, पिप्पली, गजपिप्पली, हरीतकी, वच और कूठ ये चीजें एक-एक तोले लेकर चूर्ण करे। पहले पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सब वस्तुयें एकमें पीसकर पित्तपापड़ा, मोथा, सोंठ, अपामार्ग और पाठा, इनमेंसे हर एकके रसमें सात-सात बार भावना दे। फिर इसे सुखाकर रख ले। यदि हरीतकीके चूर्ण अथवा काढ़ेमें इस रसको खाय तो वातज, पित्तज एवं त्रिदोषज गुल्मरोग निवृत्त हो जाता है। इससे द्वन्द्वज, कफज एवं विशेष करके वातगुल्म रोग

दूर होता है। इसका नाम गुल्मकालानल रस है और यह सभी प्रकारके गुल्मरोग दूर करता है ॥ ७॥११ ॥

वड़वानल रस

पारदं गन्धकं ताप्यं यवक्षारार्कमभ्रकम्।
अग्न्यम्बुनाऽहिपत्रेण संमर्द्याथ द्विगुञ्जकम् ॥ १२ ॥
भक्षयेत्पर्णखण्डेन हिङ्गुसिन्धुसुवर्चलैः।
दाडिमञ्च तथा विल्वं कार्षिकं भृङ्गजैर्द्रवैः ॥ १३ ॥
पिष्ट्वा तु सुरया युक्तं देयं स्यादनुपानकम्।
सर्वगुल्मं निहन्त्याशु शूलञ्च परिणामजम् ॥ १४ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, स्वर्णमाक्षिकभस्म, जवाखार, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, ये द्रव्य समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सबको एकमें घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। पानके पत्ते, हींग, सेंधानमक, काला नमक, अनार तथा बेलकी छाल, इनको समभाग लेकर भाँगके रसमें घोंटकर मदिराके साथ इस रसका सेवन करे तो सब प्रकारके गुल्म और परिमाणशूल रोग दूर हो जाते हैं ॥ १२–१४ ॥

महानाराच रस

सूतटङ्कणतुल्यांशं मरिचं सूततुल्यकम्।
गन्धकं पिप्पलीशुण्ठ्योर्द्वौ द्वौ भागौ विमिश्रयेत् ॥ १५ ॥
सर्वतुल्यं क्षिपेद्दन्तीबीजं निस्तुषमेव च।
द्विगुञ्जं रेचनं सिद्धं नाराचाख्यो महारसः ॥ १६ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध सोहागा और काली मिर्च एक-एक भाग, शुद्ध गंधक, पिप्पलीचूर्ण और सोंठचूर्ण दो-दो भाग तथा दन्तीबीज नौ भाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सब चीजें एकमें घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। यही महानाराच रस है। इसका सेवन करनेसे दस्त आते हैं ॥१५॥१६॥

विद्याधर रस

पारदं गन्धकं तालं ताप्यं स्वर्णं मनःशिलाम्।
कृष्णाक्वाथैः स्नुहीक्षीरैर्दिनैकं मर्दयेत्सुधीः ॥ १७ ॥

निष्कार्द्धं श्लैष्मिकं गुल्मं हन्ति मुद्गानुपानतः।
रसो विद्याधरो नाम गोदुग्धञ्च पिबेदनु ॥ १८ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध हरताल, स्वर्णमाक्षिक भस्म, स्वर्णभस्म और शुद्ध मैनसिल, ये चीजें समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सबको एक साथ पिप्पलीके काढ़े या सेंहुड़के दूधमें घोंटकर रख ले। एक निष्क यह विद्याधर नामक रस गोमूत्रमें सेवन करे तो कफजनित गुल्म रोग दूर होता है। इसे खानेके बाद गायका दूध पीना चाहिये ॥१७॥१८॥

महागुल्मकालानल रस

गन्धकं तालकं ताम्रं तथैव तीक्ष्णलोहकम्।
समांशं मर्दयेद्गाढं कन्यानीरेण यत्नतः ॥ १९ ॥
सम्पुटं कारयेत्पश्चात्सन्धिलेपञ्च कारयेत्।
ततो गजपुटं दत्त्वा स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ २० ॥
द्विगुञ्जां भक्षयेद्गुल्मी शृङ्गबेरानुपानतः।
सर्वगुल्मं निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥ २१ ॥

शुद्ध गन्धक, हरताल, ताम्रभस्म और तीक्ष्ण लौहभस्म, ये द्रव्य समभाग लेकर घीगुवारके रसमें घोंटे। फिर इसकी टिकिया बनाकर शरावसम्पुटमें सम्पुटित करके उसकी सन्धिको कपड़मिट्टीसे बन्द कर दे। तब गजपुटमें रखकर आँच दे और स्वांगशीतल होनेपर निकालकर रख ले। यदि गुल्मरोगी दो निष्क यह रस अदरखके रसमें खाय तो सभी गुल्मरोग इस तरह नष्ट होते हैं, जैसे सूर्यके उदय होनेपर अन्धकार भाग जाता है ॥१९–२१॥

अभया वटी

अभया मरिच कृष्णा टङ्कणञ्च समांशिकम्।
सर्वचूर्णसमञ्चैव दद्यात्कानकजं फलम् ॥ २२ ॥
स्नुहीक्षीरैर्वटी कार्य्या धीरैः स्विन्नकलायवत्।
वटीद्वयं शिवामेकां पिष्ट्वा चोष्णाम्बुना पिबेत् ॥ २३ ॥
उष्णाद्विरेचयेदेषा शीते स्वास्थ्यमुपैति च।
जीर्णज्वरं पाण्डुरोगं प्लीहाष्ठीलोदराणि च।
रक्तपित्ताम्लपित्तादि सर्वाजीर्णञ्च नाशयेत् ॥ २४ ॥

हरीतकी, मिर्च, पिप्पली और सोहागा, ये सभी चीजें एक-एक भाग और शुद्ध धतूरेके बीज चार भाग लेकर थूहरके दूधमें घोंटे और भीगी मटरके बराबर गोली बना ले। यह अभया वटी और एक हरीतकीका चूर्ण दोनोंको एकमें घोंटकर गरम जलके साथ सेवन करे। इसे खाकर गरम जल पीनेसे दस्त आयेंगे और ठंढा पानी पीनेसे बन्द हो जायँगे। इससे जीर्णज्वर, पाण्डु, प्लीहा, अष्ठीला, उदररोग, रक्तपित्त, अम्लपित्त और सब तरहके अजीर्ण रोग दूर हो जाते हैं (कुछ लोग 'कनकजं फलं' को 'जमालगोटा' कहते हैं) ॥२२–२४॥

गोपीजल

जैपालाष्टौ द्विको गन्धः शुण्ठी मरिचचित्रकम्।
एकः सूतः ससौभाग्यो गोपीजल इति स्मृतः ॥ २५ ॥
शूलव्याध्याश्रयान्गुल्मान्कोष्ठादौ दश पैत्तिकान्।
भगन्दरादिहृद्रोगान्नाशयेदेव भक्षणात् ॥ २६ ॥

शुद्ध जमालगोटा ८ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग, सोंठ, मिर्च, चीता, शुद्ध सोहागा, ये सभी चीजें एक-एक भाग लेकर कज्जली करे। फिर सब चीजें एकमें मिलाकर घोंट ले। यही गोपीजल है। इसका सेवन करते ही शूलाश्रित गुल्मरोग, दस प्रकारके कोष्ठाश्रित पित्तरोग, भगन्दरादि गुदारोग और सभी हृदयरोग नष्ट हो जाते हैं ॥ २५ ॥ २६ ॥

काङ्कायन गुटिका

शटीं पुष्करमूलञ्च दन्तीं चित्रकमाढकीम्।
शृङ्गवेरं वचाञ्चैव पलिकानि समाहरेत् ॥ २७ ॥
त्रिवृतायाः पलञ्चैव कुर्य्यात्त्रीणि च हिङ्गुनः।
यवक्षारात्पले द्वे च द्वे पले चाम्लवेतसात् ॥ २८ ॥
यमान्यजाजी मरिचं धान्यकञ्चेति कार्षिकम्।
उपकुञ्च्यजमोदाभ्यां पृथगर्द्धपलं भवेत् ॥ २९ ॥
मातुलुङ्गरसेनैव गुटिकां कारयेद्भिषक्।
तासामेकां पिबेद् द्वे वा तिस्रो वाथ सुखाम्बुना ॥ ३० ॥

अम्लैर्मद्यैश्च यूषैश्च घृतेन पयसाऽथवा।
एषा काङ्कायनेनोक्ता गुटिका गुल्मनाशिनी ॥ ३१ ॥
अर्शोहृद्रोगशमनी क्रिमीणाञ्च विनाशिनी।
गोमूत्रयुक्ता शमयेत्कफगुल्मं चिरोत्थितम् ॥ ३२ ॥
क्षीरेण पित्तगुल्मञ्च मद्यैरम्लैश्च वातिकम्।
त्रिफलारसमूत्रैश्च नियच्छेत्सान्निपातिकम्।
रक्तगुल्मेषु नारीणामुष्ट्रीक्षीरेण पाययेत् ॥ ३३ ॥

कचूर, पुष्करमूल, दन्तीमूल, चीता, अरहर, अदरख और वच, इनमेंसे हरएक वस्तु एक-एक पल लेवे। त्रिवृत् १ पल, हींग ३ पल, जवाखार २ पल, अलमवेत २ पल और अजवायन, जीरा, मिर्च, धनियाँ ये चारों एक-एक कर्ष, काला जीरा और अजमोदा दोनों आधा-आधा पल ले और सब वस्तुयें एक साथ विजौरे नीबूके रसमें घोंटकर गोलियें बना ले। दो या तीन गोली यह गुटिका गरम पानी, कांजी, मदिरा, यूष, घी अथवा दूधके साथ खाय। यह गुल्मनाशिनी गुटिका कांकायन मुनिकी कही हुई है। इससे अर्श, हृदयरोग और क्रिमिरोग दूर होते हैं। गोमूत्रके साथ उपयोग करनेसे यह पुराने कफजनित गुल्मरोगका निवारण करती है। दूधके साथ खानेसे पित्तको, मद्य तथा काँजीके साथ सेवन करनेसे वायुको और त्रिफलाके काढ़े एवं गोमूत्रमें खानेसे यह त्रिदोषजनित गुल्मरोगको नष्ट करती है ॥ २७–३३ ॥

गुल्मशार्दूल रस

रसं गन्धं शुद्धलोहं गुग्गुलोः पिट्टितं पलम्।
त्रिवृता पिप्पली शुण्ठी शठी धान्यकजीरकम् ॥ ३४ ॥
प्रत्येकं पलिकं ग्राह्यं पलार्द्धं कानकं फलम्।
सञ्चूर्ण्य वटिका कार्य्या घृतेन वल्लमानतः ॥ ३५ ॥
वटीद्वयं भक्षयेच्चार्द्रकोष्णाम्बु पिबेदनु।
हन्ति प्लीहयकृद्गुल्मं कामलोदरशोथकम् ॥ ३६ ॥
वातिकं पैत्तिकं गुल्मं श्लैष्मिकं रौधिरं तथा।
गहनानन्दनाथोक्तरसोऽयं गुल्मशार्दूलः ॥ ३७ ॥

पारा, गंधक, लौहभस्म, गूगुल ये द्रव्य एक-एक पल, निसोथ, पिप्पली,

सोंठ, कचूर, धनियाँ, जीरा, इनका चूर्ण एक-एक पल और जमालगोटा आधा पल ले । कज्जली करनेके बाद इनको एक साथ घोंटकर रत्ती-रत्ती भरकी गोली बना ले । अदरखके रसमें इसकी दो गोली खाकर गरमजल पीना चाहिये । यह प्लीहा, यकृत् , गुल्म, कामला, उदररोग, शोथ और वातज, पित्तज, कफज तथा रक्तज गुल्मको नष्ट करनेवाला श्रीगहनानन्दका कहा हुआ गुल्मशार्दूल रस है ॥ ३४–३७ ॥

प्राणवल्लभ रस

लौहं ताम्रं वराटञ्च तुत्थं हिङ्गु फलत्रिकम् ।
स्नुहीमूलं यवक्षारं जैपालं टङ्कणं त्रिवृत् ॥ ३८ ॥
प्रत्येकं पलिकं ग्राह्यं छागीदुग्धेन पेषयेत् ।
चतुर्गुञ्जां वटीं खादेद्वारिणा मधुनाऽपि वा ॥ ३९ ॥
प्राणवल्लभनामाऽयं गहनानन्दभाषितः ।
निहन्ति कामलां पाण्डुं मेहं हिक्कां विशेषतः ॥ ४० ॥
असाध्यं सन्निपातञ्च गुल्मं रुधिरसम्भवम् ।
वातरक्तञ्च कुष्ठञ्च कण्डूविस्फोटकापचीम् ॥ ४१ ॥

लौह, ताम्र और कौड़ी इनकी भस्म, तूतिया, हींग, हरड़, बहेड़ा, आँवला, थूहरकी जड़, जवाखार, जमालगोटा, सोहागा तथा निसोथ, इन सभी द्रव्योंको एक-एक पल ले और बकरीके दूधमें घोंटकर चार-चार रत्तीकी गोली बना ले । मधु या शहदके साथ नित्य एक गोली खाय । यह श्री गहनानन्दका कहा हुआ प्राणवल्लभ रस है । इससे कामला, पाण्डु, प्रमेह, विशेष करके हिक्का, असाध्य सन्निपात, रक्तगुल्म, वातरक्त, कुष्ठ, खुजली, फोड़ा तथा अपची रोग नष्ट हो जाता है ॥ ३८—४१ ॥

सर्वेश्वर रस

ताम्रं दशगुणं स्वर्णात्स्वर्णपादं कटुत्रिकम् ।
त्रिफला त्रिकटोस्तुल्या त्रिफलाऽर्द्धमयो रजः ॥ ४२ ॥
आयसोऽर्द्धं विषञ्चैव सर्वं सम्मर्द्य यत्नतः ।
सर्वेश्वररसो नाम रक्तगुल्मविनाशनः ॥ ४३ ॥

स्वर्णभस्म १ भाग, ताम्रभस्म १० भाग, त्रिकटु तथा त्रिफलाका चूर्ण

चौथाई-चौथाई भाग, लौहभस्म एक भागका अष्टमांश और शुद्ध विष षोडशांश लेकर सबको एक साथ घोंट ले। इसे खानेसे रक्तगुल्म रोग निवृत्त हो जाता है। इसका नाम सर्वेश्वर रस है ॥ ४२॥४३ ॥

इति गुल्मचिकित्सा समाप्ता।

अथ हृद्रोगचिकित्सा।

हृदयार्णव रस

शुद्धसूतसमं गन्धं मृतताम्रं तयोः समम्।
मर्दयेत्त्रिफलाक्वाथैः काकमाचीद्रवैर्दिनम् ॥ १ ॥
चणमात्रां वटीं खादेद्रसोऽयं हृदयार्णवः।
काकमाचीफलं कर्षं त्रिफलाफलसंयुतम् ॥ २ ॥
द्वात्रिंशत्तोलक तोयं क्वाथमष्टावशेषितम्।
अनुपानं पिबेच्चात्र हृद्रोगं च कफोत्थिते ॥ ३ ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक एक-एक भाग तथा ताम्रभस्म ३ भाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर ताम्रभस्म मिलाकर त्रिफलाके क्वाथ अथवा मकोयके स्वरसमें दिन भर खरल करके चने बराबर गोली बना ले। यही हृदयार्णव रस है। एक रत्ती इस रसका सेवन करनेसे कफजनित हृदयरोग दूर होता है। इसे खानेके बाद मकोय और हर्रा, बहेड़ा, आँवला एक-एक कर्ष लेकर बत्तीस तोले जलमें पकावे। जब चार तोला जल शेष रह जाय, तब उतार ले और यही काढ़ा पिये ॥ १–३ ॥

नागार्जुनाभ्र

सहस्रपुटकैः शुद्धं वज्राभ्रमर्जुनत्वचः।
सत्त्वैर्विमर्दितं सप्त दिनं खल्ले विशोषितम् ॥ ४ ॥
छायाशुष्का वटी कार्य्या नाम्नेदमर्जुनाह्वयम्।
हृद्रोगं सर्वशूलार्शोहृल्लासच्छर्द्यरोचकान् ॥ ५ ॥
अतीसारमग्निमान्द्यं रक्तपित्तं क्षतक्षयम्।

शोथोदराम्लपित्तञ्च विषमज्वरमेव च।
हन्त्यन्यान्यपि रोगाणि बल्यं वृष्यं रसायनम्॥ ६॥

हजार आँचकी वज्राभ्रकभस्मको अर्जुनवृक्षकी छालके काढ़ेमें सात दिनतक घोंटे। फिर छायामें सुखाकर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले। यही नागार्जुनाभ्र है। इसे खानेसे हृद्रोग, सब तरहके शूल, अर्श, जीकी मिचलाहट, वमन, अरुचि, अतीसार, मन्दाग्नि, रक्तपित्त, क्षतक्षय, शोथ, उदररोग, अम्लपित्त, विषमज्वर एवं अन्य बहुतेरे रोग शान्त होते हैं। यह बलदायक, वृष्य और रसायन औषधि है॥ ४—६॥

पञ्चानन रस

सूतगन्धौ द्रवैर्धात्र्या मर्दयेद्गोस्तनीद्रवैः।
यष्टिखर्जूरसलिलैर्दिनञ्च परिमर्दयेत्॥ ७॥
धात्रीचूर्णं सिताञ्चानु पिबेद्धृद्रोगशान्तये॥ ८॥

शुद्ध पारा और शुद्धगंधक दोनों समभाग लेकर आँवला, मुनक्का, मुलैठी और खजूरके काढ़ेमें एक-एक दिन घोंटकर रत्ती-रत्ती भरकी गोली बना ले। आवँलाके चूर्ण और मिश्रीमें मिलाकर इसकी एक गोली नित्य खानेसे हृद्रोग दूर हो जाता है॥ ७॥८॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे 'रसायनी' टीकायां हृद्रोगचिकित्सा समाप्ता।

अथ मूत्रकृच्छ्रचिकित्सा।

त्रिनेत्राख्य रस

वङ्गं सूतं गन्धकं भावयित्वा लौहे पात्रे मर्दयेदेकघस्रम्।
दूर्वायष्टीगोक्षुरैः शाल्मलीभिर्मूषामध्ये भूधरे पाचयित्वा॥ १॥
तत्तद्द्रावैर्भावयित्वाऽस्य वल्लं दद्याच्छीत पायस वक्ष्यमाणम्।
दूर्वायष्टीशाल्मलीतोयदुग्धैस्तुल्यैः कुर्यात्पायसं तद्ददीत।
प्रातःकाले शीतपानीयपानान्मूत्रे जाते स्यात्सुखी च क्रमेण॥ २॥

शुद्ध पारा और गंधक दोनों समभाग लेकर कज्जली करे। फिर समभाग बंगभस्म मिलाकर दूबके रस, मुलैठी, गोखरूके काढ़े और सेमरके रसमें क्रमशः

एक-एक दिन घोंटकर गोला बना ले। इस गोलेको मूषामें रखकर भूधरयंत्रमें पकावे। शीतल होनेपर उसे निकाल ले और दूबके रस, मुलैठी तथा गोखरूके काढ़े और सेमरके रसमें एक दिन भावना देकर दो-दो रत्तीकी गोली बना ले। फिर दूब, मुलैठी तथा सेमर समभाग लेकर काढ़ा बनावे और काढ़ेके बराबर दूध डालकर खीर करे। रस खानेके बाद यह खीर खाय। नित्य प्रातःकाल ठण्डा जल पिये। ऐसा करनेसे पेशाब खुलकर आयेगा और मूत्रकृच्छ्र रोग दूर हो जायगा ॥ १ ॥ २ ॥

वरुणाद्य लौह

द्विपलं वरुणं धात्र्यास्तदर्द्धं धात्रिपुष्पिकाम्।
हरीतक्याः पलार्द्धञ्च पृश्निपर्णी तदर्द्धकम् ॥ ३ ॥
कर्षमानञ्च लौहाभ्रं चूर्णमेकत्र कारयेत्।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय शाणमानं विधानवित् ॥ ४ ॥
मूत्राघातं तथा घोरं मूत्रकृच्छ्रञ्च दारुणम्।
अश्मरीं विनिहन्त्याशु प्रमेहं विषमज्वरम् ॥ ५ ॥
बलपुष्टिकरञ्चैव वृष्यमायुष्यमेव च।
वरुणाद्यमिदं लौहं चरकेण विनिर्मितम् ॥ ६ ॥

वरुणवृक्षकी छाल दो पल, आँवला दो पल, धायके फूल एक पल, हरीतकी आधा पल, पृश्निपर्णी चौथाई पल, लौहभस्म १ कर्ष, अभ्रकभस्म १ कर्ष, इन सबको एकमें घोंटकर चूर्ण कर ले। यदि नित्य प्रातःकाल १ शाण (४ मासे) इसे खाय तो घोर मूत्राघात, कठिन मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, प्रमेह और विषमज्वर नष्ट हो जाता है। इससे बल बढ़ता, देह पुष्ट होती और वीर्य तथा उम्र बढ़ती है। इस वारुणाद्य लौहको स्वयं चरक भगवान्‌ने बनाया था ॥ ३–६ ॥

मूत्रकृच्छ्रान्तक योग

अयोरजःश्लक्ष्णपिष्टं मधुना सह योजयेत्।
मूत्राघातं निहन्त्याशु मूत्रकृच्छ्रं सुदारुणम् ॥ ७ ॥

यदि लौहभस्मको भली-भाँति महीन घोंटकर मधुके साथ खाय तो दारुण मूत्राघात एवं मूत्रकृच्छ्र रोग नष्ट हो जाता है ॥ ७ ॥

रसगन्धयवक्षारसितातक्रयुतं पिबेत् ।
मूत्रकृच्छ्राण्यशेषाणि निहन्ति निय ं नृणाम् ॥ ८ ॥

पारा और गंधक समभाग लेकर कज्जली करे । फिर उसमें पारेका समभाग जवाखार मिलाकर चीनी और मंठेके साथ पिये तो सब प्रकारके मूत्रकृच्छ्र रोग अवश्य दूर होते हैं ॥ ८ ॥

भैषज्यैरश्मरीप्रोक्तैर्मूत्रकृच्छ्रमुपाचरेत् ।
योगवाहिरसैर्वापि चानुपानविशेषतः ॥ ९ ॥

अश्मरीरोगके लिए जो औषधियें बतायी जानेवाली हैं, उनका मूत्रकृच्छ्रमें भी उपयोग करे । अनुपानविशेषमें अन्यान्य योगवाही रसोंका भी उपयोग किया जा सकता है ॥ ९ ॥

मूत्रकृच्छ्रान्तक रस

शतावरीरसैः पिष्ट्वा मृतसूतञ्च तालकम् ।
शिखितुत्थञ्च तुल्यांशं दिनैकं मर्द्दयेद्दृढम् ॥ १० ॥
तद्गोलं सार्षपे तैले पाच्यं यामञ्च चूर्णयेत् ।
मूत्रकृच्छ्रान्तकश्चास्य क्षौद्रैर्गुञ्जाचतुष्टयम् ॥ ११ ॥
भक्षणान्नात्र सन्देहो मूत्रकृच्छ्रं निहन्त्यलम् ।
तुलसीतिलपिण्याकं विल्वमूलं तुषाम्बुना ॥
कर्षैकं वाऽनुपानेन सुरया वा सुवर्चलैः ॥ १२ ॥

रससिन्दूर, हड़ताल और तूतिया समभाग लेकर शतावरके रसमें दिन भर घोंटे । उसका गोला बनाकर सरसोंके तेलमें पहर भर पकावे । तब उसमेंसे निकाल कर चूर्ण कर ले । यदि ४ रत्ती यह रस शहदमें मिलाकर खाय तो मूत्रकृच्छ्ररोग अवश्य निवृत्त हो जाता है । इसका अनुपान तुलसी, खली, वेलकी जड़ सब मिलाकर एक कर्ष और काँजी, मदिरा अथवा काला नमक है ॥ १०–१२॥

इति मूत्रकृच्छ्रचिकित्सा समाप्ता ।

अथ मूत्राघातचिकित्सा ।

तारकेश्वर रस

मृतसूताभ्रगन्धञ्च मर्दयेन्मधुना दिनम् ।
तारकेश्वरनामायं गहनानन्दभाषितः ॥ १ ॥
माषमात्रं भजेत्क्षौद्रैर्बहुमूत्रप्रशान्तये ।
औडुम्बरफलं पक्वं चूर्णितं कर्षमात्रकम् ।
संलिह्यान्मधुना सार्द्धमनुपानं सुखावहम् ॥ २ ॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म और शुद्ध गन्धक ये तीनों समभाग लेकर दिन भर मधुमें घोंटकर एक-एक मासेकी गोली बना ले। श्रीगहनानन्दकथित यही तारकेश्वर रस है। शहदके साथ इसकी एक गोलीका सेवन करनेसे बहुमूत्र-रोग निवृत्त हो जाता है। इसे खानेके बाद पकी गूलरके फलका चूर्ण कर्षभर ले और यदि मधुके साथ खाय तो विशेष लाभ हो॥ १ ॥ २ ॥

लघुलोकेश्वर रस

शुद्धसूतस्य भागैकं चतुरः शुद्धगन्धकात् ।
पिष्ट्वा वराटिका पूर्य्या रसपादेन टङ्कणम् ॥ ३ ॥
क्षीरैः पिष्ट्वा मुखं लिप्त्वा भाण्डे रुद्ध्वा पुटे पचेत् ।
स्वांगशीतं विचूर्ण्याथ लघुलोकेश्वरो मतः ॥ ४ ॥
चतुर्गुञ्जाप्रमाणन्तु मरिचेन तथैव च ।
जातीमूलफलैर्युक्तमजाक्षीरेण पाययेत् ॥ ५ ॥
शर्कराभावितञ्चानु पिबेत्कृच्छ्रहरं परम् ॥ ६ ॥

शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध गंधक ४ भाग इन दोनोंकी कज्जली करके कौड़ि-योंमें भर दे। फिर पारेकी चौथाई सोहागेको दूधमें पीसकर उसीसे कौड़ियोंका मुख बन्द कर दे। अब इन्हें एक हाँड़ीमें रख और उसका मुख बन्द करके गजपुटमें पकावे। शीतल होनेपर निकालकर चूर्ण कर ले। यही लघु लोकेश्वर रस है। यदि ४ रत्ती यह रस काली मिर्चके चूर्ण, चमेलीकी जड़के रस एवं त्रिफलाके चूर्णमें खाय और बादमें चीनी मिला हुआ बकरीका दूध पिये तो मूत्रकृच्छ्र रोग अवश्य दूर हो जाता है॥ ३–६ ॥

अनेक क्षुद्रयोग

येनौषधेन मतिमान्मूत्रकृच्छ्रमुपाचरेत्।
तेनौषधेन श्रेष्ठेन मूत्राघातानुपाचरेत्॥ ७॥

बुद्धिमान् वैद्य जिन औषधियोंका मूत्रकृच्छ्र रोगमें उपयोग करे, बहुमूत्रमें भी उन्हींसे काम ले॥ ७॥

लवणाम्लवरायुक्तं घृतञ्चापि पिबेन्नरः।
नश्यन्ति रोगा वेगेन मूत्राघातास्त्रयोदश॥ ८॥

सेंधा नमक और त्रिफलाको काँजीमें पीसकर घीके साथ खाय तो १३ प्रकारके मूत्राघात रोग शीघ्र दूर हो जाते हैं॥ ८॥

सुपक्वं कर्कटाबीजमक्षमात्रं ससैन्धवम्।
धान्याम्लयुक्तं पीत्वैव मूत्राघाताद्विमुच्यते॥ ९॥

पकी ककड़ीके बीज अक्षभर (१ तोला) ले और सेंधा नमक मिलाकर काँजीके साथ पिये तो मूत्राघात रोग निवृत्त हो जाता है॥ ९॥

त्रिकण्टकैरण्डशतावरीभिः सिद्धं पयो वा तृणपञ्चमूलैः।
गुडप्रगाढं सघृतं पयो वा रोगेषु कृच्छ्रादिषु शस्तमेतत्॥ १०॥

गोखरू, रेंड़की जड़, शतावर तथा तृणपंचमूल (कुश, कास, सरकंडा, खस और ऊँखकी जड़) में पकाया हुआ दूध, घी तथा अधिक मात्रामें गुड़ मिलाकर पिये तो मूत्रकृच्छ्र-मूत्राघात आदि रोग निवृत्त हो जाते हैं॥ १०॥

इति मूत्राघातचिकित्सा समाप्ता

अथाश्मरीचिकित्सा।

पाषाणवज्रक रस

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं रसैः श्वेतपुनर्नवैः।
मर्दयित्वा दिनं खल्ले रुध्वा तद्भूधरे पचेत्॥ १॥
दिनान्ते तत्समुद्धृत्य मर्दयेद्गुडसंयुतम्।
अश्मरीं वस्तिशूलञ्च हन्ति पाषाणवज्रकः॥ २॥
गोरक्षकर्कटीमूलक्वाथं कौलत्थकं तथा।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं बुद्ध्वा दोषबलाबलम्॥ ३॥

शुद्ध पारा १ भाग और शुद्ध गन्धक २ भाग लेकर दोनोंकी कज्जली करे। फिर श्वेतपुनर्नवाके रसमें दिनभर घोंटे और सम्पुटित करके भूधरयंत्रमें पकावे। पूरे एक दिन पकाकर शामको निकाल ले और गुड़में मर्दन करके रत्ती-रत्ती भर-की गोली बना ले। अश्मरी (पथरी) तथा बस्तिशूलका नाशक यही पाषाण-वज्रक रस है। दोषका बलाबल देखकर गोरखककड़ीकी जड़ अथवा कुलथीका काढ़ा अनुपानमें देवे ॥ १–३ ॥

त्रिविक्रम रस

मृतताम्रमजाक्षीरैः पाच्यं तुल्य गते द्रवे।
ताम्रं शुद्धसूतञ्च गन्धकञ्च समं समम् ॥ ४ ॥
निर्गुण्डीस्वरसैर्मर्द्यं दिनं तद्गोलकीकृतम्।
यामैकं वालुकायन्त्रे पक्त्वा योज्यं द्विगुञ्जकम् ॥ ५ ॥
बीजपूरस्य मूलञ्च सजलञ्चानुपाययेत्।
रसस्त्रिविक्रमो नाम शर्करामश्मरीं जयेत् ॥ ६ ॥

ताम्रभस्ममें समभाग बकरीका दूध डालकर पकावे। जब दूध जल जाय, तब निकाल ले और ताम्रभस्मके बराबर शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक मिलाकर सँभालूके रसमें दिन भर घोंटे। घुँट जानेपर गोला बनाकर बालुकायंत्रमें पहर भर पकावे। फिर निकालकर चूर्ण कर ले। नींबूकी जड़को जलमें पीसकर उसी-के साथ यदि दो रत्ती यह त्रिविक्रम रस खाय तो शर्करा और पथरी रोग दूर हो जाता है ॥ ४–६ ॥

लौहप्रयोग

अयोरजः श्लक्ष्णपिष्टं मधुना सह योजितम्।
अश्मरीं विनिहन्त्याशु मूत्रकृच्छ्रञ्च दारुणम् ॥ ७ ॥

लौहभस्मको भली भाँति घोंटकर मधुके साथ खाय तो अश्मरी और कठिन मूत्रकृच्छ्र रोग दूर हो जाता है ॥ ७ ॥

क्षुद्रयोग

इन्द्रवारुणिकामूलं मरिचं क्षीरपाचितम्।
पपटीरससंयुक्तं सप्ताहादश्मरीं जयेत् ॥ ८ ॥

इन्द्रायनकी जड़ और काली मिर्चको दूधमें पकाकर रसपर्पटीके साथ खाय तो सप्ताह भरमें अश्मरीरोग भाग जाता है ॥ ८ ॥

गन्धको जीरकं क्षुद्राफलं टङ्कद्वयं सदा ।
अश्मरीं शर्करां मूत्रकृच्छ्रं क्षपयति ध्रुवम् ॥ ९ ॥

गंधक, जीरा, छोटी कटेरीका फल, ये चीजें समभाग लेकर चूर्ण कर ले। यदि नित्य दो टंक यह चूर्ण खाय तो अश्मरी, शर्करा और मूत्रकृच्छ्र रोग अवश्य दूर हो जाते हैं ॥ ९ ॥

इत्यश्मरीचिकित्सा समाप्ता ।

अथ प्रमेहचिकित्सा

हरिशंकर रस

मृतसूताभ्रकं तुल्यं धात्रीफलनिशाद्रवैः ।
सप्ताहं भावयेत्खल्ले योगोऽयं हरिशङ्करः ।
माषमात्रां वटीं खादेत्सर्वमेहप्रशान्तये ॥ १ ॥

रससिन्दूर और अभ्रकभस्म दोनों समभाग ले और खरल करके आँवले तथा कच्ची हल्दीके रसमें सात दिनकी भावना दे। फिर मासे-मासे भरकी गोलियँ बना ले। यही हरिशंकर रस है। इसका सेवन करनेसे सब प्रकारके प्रमेह शान्त हो जाते हैं ॥ १ ॥

इन्द्र वटी

मृतं सूतं मृतं वङ्गमर्जुनस्य त्वचान्वितम् ।
तुल्यांशं मर्दयेत्खल्ले शाल्मल्या मूलजैर्द्रवैः ॥ २ ॥
दिनान्ते वटिका कार्य्या माषमात्रा प्रमेहहा ।
एषा इन्द्रवटीनाम्ना मधुमेहप्रशान्तकृत् ॥ ३ ॥

रससिन्दूर, वंगभस्म और अर्जुन वृक्षकी छाल, ये तीनों समभाग लेकर सेमलकी मुसलीके रसमें दिन भर घोंटे। शामको मासे-मासे भरकी गोली बना ले। यही इन्द्रवटी है। इसका सेवन करनेसे प्रमेह दूर हो जाता है ॥२॥३॥

वङ्गावलेह

वङ्गभस्म द्विवल्लञ्च लेहयेन्मधुना सह।
ततो गुडसमं गन्धं भक्षयेत्कर्षमात्रकम् ॥ ४ ॥
गुडूचीसत्त्वमथवा कर्करासहितं तथा।
सर्वमेहहरो वङ्गावलेहो उत्तमः स्मृतः ॥ ५ ॥

तीन रत्ती वंगभस्मको मधुमें मिलाकर चाटे। फिर शुद्ध गंधक तथा पुराना गुड़ दोनों कर्ष-कर्ष भर खाय अथवा गुरुचका सत्त चीनी मिलाकर सेवन करे तो सब प्रकारके प्रमेह दूर हो जाते हैं। यही वंगावलेह है ॥ ४ ॥ ५ ॥

प्रमेहसेतु रस

सूताभ्रञ्च वटक्षीरैर्मर्दयेत्प्रहरद्वयम्।
विशोष्य पक्वमूषायां सर्वरोगे प्रयोजयेत् ॥ ६ ॥
विशेषान्मेहरोगेषु त्रिफलामधुसंयुतम्।
युञ्जीत वल्लमेकन्तु रसेन्द्रस्यास्य वैद्यराट् ॥ ७ ॥

रससिन्दूर और अभ्रकभस्म दोनों समभाग लेकर बड़के दूधमें दो पहर घोंटे। फिर सुखाकर मूषामें रखे और पुटपाक करे। यही प्रमेहसेतु रस है। सभी रोगोंपर इसका प्रयोग किया जा सकता है। त्रिफला और मधुके साथ एक रत्ती यह रस प्रमेहरोगीको दे ॥ ६ ॥ ७ ॥

विडङ्गाद्य लौह

विडङ्गत्रिफलामुस्तैः कणया नागरेण च।
जीरकाभ्यां युतो हन्ति प्रमेहानतिदारुणान्।
लौहो मूत्रविकारांश्च सर्वानेव विनाशयेत् ॥ ८ ॥

वायविडंग, त्रिफला, मोथा, पिप्पली, सोंठ और जीरा, ये वस्तुयें समभाग और सबके बराबर लौहभस्म खरल करके खाय तो अति दारुण प्रमेह और सभी तरहके मूत्रविकार दूर हो जाते हैं ॥ ८ ॥

हरिशङ्कर रस

रसगन्धकलौहाभ्रं स्वर्णं वङ्गञ्च माक्षिकम्।
समभागन्तु सम्पिष्य वटिकाङ्कारयेद्भिषक ॥ ९ ॥

सप्ताहमामलाद्रावैर्भावितोऽयं रसेश्वरः।
हरिशङ्करनामायं गहनानन्दभाषितः।
प्रमेहान्विंशतिं हन्ति सत्यं सत्यं न संशयः॥ १०॥

पारा, गन्धक, लौहभस्म, सुवर्णभस्म, वंगभस्म तथा स्वर्णमाक्षिकभस्म, ये द्रव्य समभाग लेकर पारे-गन्धककी कज्जली करे। फिर सब चीजें खरल करके आँवलेके रसमें सात दिन भावना देकर गोलियें बना ले। यह श्रीगहनानन्दका कहा हुआ हरिशंकर रस है। इसे खानेसे बीस प्रकारके प्रमेहरोग अवश्य-अवश्य शान्त हो जाते हैं॥ ९॥ १०॥

आनन्दभैरव रस

वङ्गभस्म मृतं स्वर्णं रसं क्षौद्रैर्विमर्दयेत्॥ ११॥
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं हन्ति मेहं चिरोद्भवम्।
गुञ्जामूलं तथा क्षौद्रैरनुपानं प्रशस्यते॥ १२॥

वंगभस्म, स्वर्णभस्म, रससिन्दूर, ये तीनों समभाग ले और मधुमें घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। यदि नित्य इसकी एक गोली रत्तीकी बेलकी जड़के रस और मधुमें मिलाकर खाय तो पुराना प्रमेह रोग भी मिट जाता है॥ ११॥ १२॥

विद्यावागीश रस

मृतसूताभ्रनागञ्च स्वर्णं तुल्यं प्रकल्पयेत्।
महानिम्बस्य चूर्णन्तु चतुर्भिः सममाहरेत्॥ १३॥
मधुना लेहयेन्माषं लालामेहप्रशान्तये।
सक्षौद्रं रजनीचूर्णं लेह्यं निष्कद्वयं तथा।
असाध्यं नाशयेन्मेहं विद्यावागीशको रसः॥ १४॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, सीसाभस्म और स्वर्णभस्म, ये चारों समभाग और सबके बराबर बकायनकी छालका चूर्ण लेकर खरल करे। यदि उड़दभर यह रस शहदके साथ खाय तो लालामेह दूर होता है। इसे खानेके बाद ही निष्क भर हल्दीका चूर्ण मधुमें मिलाकर खाना चाहिए। यह विद्यावागीश रस असाध्य प्रमेहरोगको भी निवृत्त कर देता है॥ १३॥ १४॥

मेहमुद्गर रस

रसाञ्जनं विडं दारु विल्वगोक्षुरदाडिमम् ।
भूनिम्बः पिप्पलीमूलन्त्रिकटुस्त्रिफला त्रिवृत् ॥ १५ ॥
प्रत्येकं तोलकं देयं लौहचूर्णन्तु तत्समम् ।
पलैकं गुग्गुलं दत्त्वा घृतेन वटिकाङ्कुरु ॥ १६ ॥
माषैका निर्मिता चेयं मेहमुद्गरसंज्ञिनी ।
श्रीमद्गहननाथेन लोकनिस्तारकारिणा ॥ १७ ॥
अनुपानं प्रकर्त्तव्यं छागीदुग्धं जलञ्च वा ।
विंशन्मेहं निहन्त्याशु मूत्रकृच्छ्रं हलीमकम् ॥ १८ ॥
अश्मरीं कामलां पाण्डुं मूत्राघातमरोचकम् ।
अर्शांसि व्रणकुष्ठञ्च वातरक्तं भगन्दरम् ॥ १९ ॥

रसौत, विडलवण दारुहल्दी, वेलका गूदा, गोखरू, अनारके दाने, चिरायता, पिप्पलीमूल, त्रिकटु, त्रिफला और निसोथ, ये सभी चीजें एक-एक तोला और सबके बराबर लौहभस्म ले। फिर एक पल शुद्ध गूगुल डालकर घोंटे और घी मिलाकर मासे-मासे भरकी गोली बना ले। श्रीगहनानन्दनाथने लोगोंका कष्ट दूर करनेके लिये इस रसका आविष्कार किया था। इसका अनुपान बकरीका दूध अथवा जल है। इसका सेवन करनेसे बीसों प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, हलीमक, पथरी, कामला, पाण्डु, मूत्राघात, अरुचि, अर्श, व्रण, कुष्ठ, वातरक्त तथा भगन्दररोग दूर होता है॥ १५–१९ ॥

मेघनाद रस

भस्मसूतं समं कान्यमभ्रकन्तु शिलाजतु ।
शुद्धताप्यं शिलाव्योषं त्रिफलाऽङ्कोठजीरकम् ॥ २० ॥
कार्पासबीजं रजनीचूर्णं भाव्यञ्च वह्निना ॥ २१ ॥
विंशद्वारं विशोष्याथ लिह्याच्च मधुना सह ।
माषमात्रो हरेन्मेहं मेघनादरसो महान् ॥ २२ ॥

रससिन्दूर, कान्तलौहभस्म, अभ्रकभस्म, शुद्ध शिलाजीत, स्वर्णमाक्षिकभस्म, मैनसिल, त्रिकटु, त्रिफला, अंकोल, जीरा, बिनौला और हल्दी, ये सभी चीजें समभाग ले और एकमें पीसकर चीतेके रसमें बीस बार भावना दे। फिर मासे

मासे भरकी गोली बनाकर रख ले। यदि मधुके साथ इस मेघनाद रसकी एक गोली नित्य खाय तो प्रमेहरोग दूर हो जाता है ॥ २०—२२ ॥

चन्द्रप्रभा वटिका

मृतसूताभ्रकं लौहं ना' वङ्गं समं समम्।
एलाबीजं लवङ्गञ्च जातीकोषफलं तथा ॥ २३ ॥
मधुकं मधु यष्टीञ्च धात्रीञ्च समशर्कराम्।
कर्पूरं खादिरं सारं शताह्वां कण्टकारिकाम् ॥ २४ ॥
अम्लबेतसकं तुल्यं दिनैकं लाङ्गलीद्रवैः।
भावयेन्मेषदुग्धेन नागवल्ल्या रसैर्दिनम् ॥ २५ ॥
वटिका वदरास्थ्याभा कार्य्या चन्द्रप्रभा परा।
भक्षयेद्वटिकामेकां सर्वमेहकुलान्तिकाम् ॥ २६ ॥
धात्रीपटोलपत्राणां कषायं वाऽमृतायुतम्।
सक्षौद्रं भक्षयेच्चानु सर्वमेहप्रशान्तये ॥ २७ ॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, लौहभस्म, सीसाभस्म, वंगभस्म, इलायचीके दाने, लौंग, जावित्री, जायफल, महुआ, मुलैटी, आँवला, शक्कर, कपूर, खैरसार, सौंफ, कटेरी और अमलवेत, ये द्रव्य समभाग लेकर एकमें पीसे। फिर एक दिन कलिहारीके रसमें और एक ही एक दिन भेड़ीके दूध तथा पानके रसमें भावना दे। इसके बाद बेलकी गुठली जैसी गोली बना ले। यदि यह चन्द्रप्रभावटी प्रति दिन एक गोली खानेके बाद आँवला-परवल अथवा इसमें गिलोय भी मिलाकर काढ़ा बनावे और पिये तो सभी तरहके प्रमेहरोग शान्त हो जाते है ॥ २३—२७ ॥

इक्षुमेहपर वंगेश्वर रस

रसभस्मसमायुक्तं वङ्गभस्म प्रकल्पयेत्।
अस्य माषद्वयं हन्ति मेहान्क्षौद्रसमन्वितान् ॥ २८ ॥

रससिन्दूर और वङ्गभस्म, इन दोनोंको समभाग लेकर यदि दो उड़द भर यह रस शहदके साथ चाटे तो सब प्रकारके मेहरोग नष्ट हो जाते हैं ॥२८॥

बृहद्वंगेश्वर रस

वङ्गभस्म रसं गन्धां रौप्यं कर्पूरमभ्रकम्।
कर्षं कर्षं मानमेषां सूतांग्रिहेममौक्तिकम् ॥ २९ ॥

केशराजरसैर्भाव्यं द्विगुञ्जाफलमानतः ।
प्रमेहान्विंशतिञ्चैव साध्यासाध्यमथापि वा ॥ ३० ॥
मूत्रकृच्छ्रं तथा पाण्डुं धातुस्थञ्च ज्वरं जयेत् ।
हलीमकं रक्तपित्तं वातपित्तकफोद्भवम् ॥ ३१ ॥
ग्रहणीमामदोषञ्च मन्दाग्नित्वमरोचकम् ।
एतान्सर्वान्निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥ ३२ ॥
बृहद्वङ्गेश्वरो नाम सोमरोगं निहन्त्यलम् ।
बहुमूत्रं बहुविधं मूत्रमेहं सुदारुणम् ॥ ३३ ॥
मूत्रातिसारं कृच्छ्रञ्च क्षीणानां पुष्टिवर्द्धनः ।
ओजस्तेजस्करो नित्यं स्त्रीषु सम्यग्वृषायते ।
बलवर्णकरो रुच्यः शुक्रसंजननः परः ॥ ३४ ॥
छागं वा यदि वा गव्यं पयो वा दधि निर्मलम् ।
अनुपानं प्रयुञ्जीत बुद्ध्वा दोषगतिं भिषक् ॥ ३५ ॥
दद्याच्च बाले प्रौढे च सेवनार्थं रसायनम् ॥ ३६ ॥

वंगभस्म, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, चाँदीभस्म, कपूर, अभ्रकभस्म, ये द्रव्य एक-एक कर्ष और स्वर्ण तथा मौक्तिकभस्म चौथाई-चौथाई कर्ष लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सबको एकमें घोंटकर केशराजके रसमें भावना देकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। इसका सेवन करनेसे साध्य और असाध्य बीसों प्रकारके प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, पाण्डु, धातुगत ज्वर, हलीमक, रक्तपित्त, वात-कफजनित सभी रोग, ग्रहणी, आमदोष, मन्दाग्नि, अरुचि, ये रोग ऐसे दूर होते हैं, जैसे बिजली गिरनेसे वृक्ष ढह जाते हैं। यह बृहद्वंगेश्वर रस सोमरोग, बहुमूत्र, दारुण मूत्रमेह, मूत्रातिसार तथा मूत्रकृच्छ्रको परास्त करता है। यह क्षीणकाय प्राणियोंको पुष्टि देता और उनका ओज तथा तेज बढ़ाता है। यह पुरुषोंको वह बल देता है कि जिससे वे नित्य अनेक रमणियोंके साथ रमण करके भी म्लान नहीं होते। यह बल, कान्ति, रुचि और वीर्यवर्द्धक रस है। दोषका बलाबल देखकर इसे खानेके बाद बकरी तथा गायका दूध या दही खाना चाहिए। यह रसायन बालक, वृद्ध तथा प्रौढ़ सबके काम आता है ॥ २९—३६ ॥

वंगादि योग

वङ्गाभ्रमथ नागाभ्रं नागं वङ्गञ्च केवलम् ।
मेहरोगे प्रयोक्तव्यं शिलाजतुसमन्वितम् ॥ ३७ ॥

वंगभस्म और अभ्रकभस्म अथवा नागभस्म और अभ्रकभस्म या कि केवल नागभस्म तथा केवल वंगभस्म एवं केवल शुद्ध शिलाजीतको यदि मधु-के साथ सेवन करे तो मेहरोग आराम होता है ॥ ३७ ॥

कस्तूरीमोदक

कस्तूरी वनिता क्षुद्रा त्रिफला जीरकद्वयम् ।
एलाबीजं त्वचं यष्टिमधुकं मिषिबालकम् ॥ ३८ ॥
शतपुष्पोत्पलं धात्री मुस्तकं भद्रसंज्ञकम् ।
खर्जूरं कृष्णतिलकं सुपक्वं कदलीफलम् ॥ ३९ ॥
कोकिलाक्षस्य बीजञ्च माषमात्रं समं समम् ।
यावन्त्येतानि चूर्णानि द्विगुणा सितशर्करा ॥ ४० ॥
धात्रीरसेन पयसा कूष्माण्डस्वरसेन च ।
विपचेत्पाकविद्वैद्यो मन्दमन्देन वह्निना ॥ ४१ ॥
अवतार्य सुशीते च यथालाभं विनिक्षिपेत् ।
अक्षमात्रं प्रयुञ्जीत सर्वमेहप्रशान्तये ॥ ४२ ॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
सोमरोगं बहुविधं मूत्रातीसारमुल्बणम् ॥ ४३ ॥
मूत्रकृच्छ्रं निहन्त्याशु मूत्राघातं तथाश्मरीम् ।
ग्रहणीं पाण्डुरोगञ्च कामलां कुम्भकामलाम् ॥ ४४ ॥
वृष्यो बलकरो हृद्यः शुक्रवृद्धिकरः परः ।
कस्तुरीमोदकश्चाय चरकेण च भाषितः ॥ ४५ ॥
भस्मसूतं मृतं कान्तलौहभस्म शिलाजतु ।

कस्तूरी, प्रियंगु (मेंहदी), छोटी कटेरी, आँवला, हर्रा, बहेड़ा, स्याह और सफेद दोनों जीरा, इलायचीके दाने, दालचीनी, मुलैठी, सौंफ, सुगन्ध-बाला, सोया, नीलकमल, आँवला, नागरमोथा, खजूर, काला तिल, पके हुए केलेके फल, कोकिलाक्ष (तालमखाने) के बीज, इनमेंसे प्रत्येक वस्तु एक-एक

मासे लेकर कस्तूरीको छोड़कर बाकी सब चीजें एकमें पीसे। इन सबका जो वजन हो, उसका दूना सफेद चीनी मिलावे। फिर आँवला तथा पेठाका रस अथवा दूध उपर्युक्त द्रव्योंके चूर्णसे चौगुना डालकर सबको आगपर चढ़ा दे और आँचमें पकावे। पककर जब गाढ़ा हो जाय तब उतार ले और ठंढा हो जानेपर एक मासा कस्तूरी मिला दे। तदनन्तर एक-एक अक्षकी गोली बनाकर रख ले। इसे खानेसे सब तरहके प्रमेह एवं वातज, पित्तज, श्लेष्मज तथा सान्निपातिक प्रमेह, विविध प्रकारके सोमरोग, भयानक मूत्रातिसार, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, अश्मरी, ग्रहणी, पाण्डुरोग, कामला और कुम्भकामला रोग नष्ट हो जाते हैं। महामुनि चरकका बनाया हुआ यह कस्तूरी-मोदक वृष्य, बलकारी, हृदयग्राही और वीर्यवर्द्धक है ॥ ३८–४५ ॥

मेहवज्र रस

भस्मसूतं मृतं कान्तलौहभस्म शिलजतु।
शुद्धताप्यं शिलाव्योषं त्रिफलाविल्वजीरकम् ॥ ४६ ॥
कपित्थं रजनीचूर्णं भृङ्गराजेन भावयेत्।
त्रिंशद्वारं विशोष्याथ लिह्याच्च मधुना सह।
निष्कमात्रं हरेन्मेहान्मूत्रकृच्छ्रं सुदारुणम् ॥ ४७ ॥
महानिम्बस्य वीजञ्च षण्निष्कं पेषितञ्च यत्।
पलतण्डुलतोयेन घृतनिष्कद्वयेन च।
एकीकृत्य पिबेच्चानु हन्ति मेहं चिरोत्थितम् ॥ ४८ ॥

रससिन्दूर, कान्तलौहभस्म, शुद्ध शिलाजीत, स्वर्णमाक्षिकभस्म, शुद्ध मैनसिल, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, आँवला, हर्रा, बहेड़ा, बेलका गूदा, जीरा, कैथा और हल्दीका चूर्ण, प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर एकमें पीसे। फिर भाँगके रसमें ३० बार भावना दे और सुखाकर चूर्ण कर ले। केवल एक निष्क इस रसको खानेसे सब प्रकारके प्रमेह और दारुण मूत्रकृच्छ्ररोग दूर होते हैं। इसे खानेके बाद छ निष्क (तीन तोले) बकायनके बीजका चूर्ण पलभर चावलके धोवनमें एक तोला घी डालकर पिये तो पुराना प्रमेह भी नष्ट हो जाता है ॥ ४६–४८ ॥

कुमारिका योग

कुमारी केवला देया चेपल्लवणसंयुता।
प्रमेहं हन्ति सकलं सप्ताहात्परतो नृणाम् ॥ ४९ ॥

यदि केवल घीगुवारको तनिक-सा सेंधा नमक डालकर खाय तो सप्ताह भरमें सभी प्रकारके प्रमेह दूर हो जाते हैं ॥४९॥

मेहकेसरी रस

मृतं वङ्गं सुवर्णञ्च कान्तलौहञ्च पारदम्।
मुक्तां गुडत्वचञ्चैव सूक्ष्मैलानागकेशरम् ॥ ५० ॥
समभागं विचूर्ण्याथ कन्यानीरेण भावयेत्।
द्विमाषां वटिकां खादेद्दुग्धान्नं प्रपिबेत्ततः ॥ ५१ ॥
प्रमेहं नाशयत्याशु केशरी करिणं यथा।
शुक्रप्रवाहं शमयेत्त्रिरात्रान्नात्र संशयः।
चिरजातं प्रवाहञ्च मधुमेहं च नाशयेत् ॥ ५२ ॥

वंगभस्म, सुवर्णभस्म, कान्तलौहभस्म, शुद्ध पारा, मोतीभस्म, दालचीनी, छोटी इलायची और नागकेसर, प्रत्येक वस्तु समभाग लेकर चूर्ण करे और घीगुवारके रसमें भावना देकर दो-दो मासेकी गोली बना ले। यदि नित्य एक गोली यह रस खाकर दुग्धमिश्रित अन्नका भोजन करे तो प्रमेह वैसे ही दूर होता है जैसे सिंहको देखकर हाथी भाग जाते हैं। केवल तीन रातमें वीर्यका प्रवाह रुक जाता है। इससे पुराना प्रमेह और मधुमेह भी दूर हो जाता है ॥५०—५२॥

योगेश्वर रस

सूतकं गंधको लौहः नागं चापि वराटिका।
ताम्रकं वङ्गभस्मापि व्योमकं च समांशिकम् ॥ ५३ ॥
सूक्ष्मैलापत्रमुस्तं च विडङ्गं नागकेशरम्।
रेणुकाऽऽमलकं चैव पिप्पलीमूलमेव च ॥ ५४ ॥
एषाञ्च द्विगुणं भागं मर्दयित्वा प्रयत्नतः।
भावना तत्र दातव्या धात्रीफलरसेन च ॥ ५५ ॥
मात्रा चणकतुल्या च गुटिकेयं प्रकीर्त्तिता।
प्रमेहं बहुमूत्रञ्च अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रकम् ॥ ५६ ॥

व्रणं हन्ति महाकुष्ठं ह्यर्शांसि च भगन्दरम् ।
योगेश्वरो रसो नाम महादेवेन भाषितः ॥ ५७ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, सीसाभस्म, कौड़ीभस्म, ताम्रभस्म, वंगभस्म और अभ्रकभस्म ये चीजें एक-एक भाग लेकर पहले पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर छोटी इलायची, तेजपत्र, मोथा, वायविडंग, नागकेसर, रेणुका, आँवला और पिपरामूल, ये द्रव्य दो-दो भाग तथा उपर्युक्त सभी चीजें एकमें मिलाकर पीसे और आँवलेके रसमें भावना देकर चने बराबर गोलियें बना ले। यह रस प्रमेह, बहुमूत्र, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, व्रण, महाकुष्ठ, अर्श तथा भगन्दर रोगको दूर करता है। इस योगेश्वर रसको स्वयं शंकर भगवानने कहा है ॥५३–५७॥

इति प्रमेहचिकित्सा समाप्ता ।

अथ सोमरोगचिकित्सा ।

तालकेश्वर रस

तालं सूतं समं गन्धं मृतलौहाभ्रवङ्गकम् ।
मर्दयेन्मधुना चैव रसोऽयं तालकेश्वरः ॥ १ ॥
माषमात्रं भजेत्क्षौद्रैर्बहुमूत्रप्रशान्तये ।
उडुम्बरफलं पक्वं चूर्णितः कर्षमात्रतः ।
संलेह्यं मधुना सार्धमनुपानं सुखाहम् ॥ २ ॥

शुद्ध हड़ताल, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौहभस्म, अभ्रकभस्म, वंगभस्म ये चीजें समभाग लेकर पारा-गन्धककी कज्जली करे। फिर अन्य द्रव्य मिला और शहदमें घोंटकर गोली बना ले। एक मासा यह रस शहदसे चाटकर अनुपान-में पकी गूलरके एक कर्ष चूर्ण तथा शहद मिलाकर खाय तो बहुमूत्र रोग दूर हो जाता है ॥१–३॥

गगनादि लौह

गगनं त्रिफला लौहं कुटजं कटुकत्रयम् ।
पारदो गन्धकश्चैव विषटङ्कणसर्जिकाः ॥ ३ ॥

त्वगेला तेजपत्रञ्च वङ्ग जीरकयुग्मकम् ।
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥ ४ ॥
तदर्द्धं चैत्रकं चूर्णं कर्षैकं मधुना लिहेत् ।
अवश्यं विनिहन्त्याशु मूत्रातीसारसोमकम् ॥ ५ ॥

अभ्रकभस्म, हर्रा, बहेड़ा, आँवला, लौहभस्म कुटजकी छाल, सोंठ, मिर्च, पीपरि, शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध विष शुद्ध सोहागा, सज्जी, दालचीनी, इलायची, तेजपत्र, वंगभस्म, सफेद जीरा, काला जीरा ये द्रव्य समभाग लेकर पहले पारा-गन्धककी कज्जली करे। फिर अन्य सब द्रव्य मिलाकर चूर्ण करे और सब चूर्णका आधा चीतेका चूर्ण मिला ले। यदि एक कर्ष यह रस शहदके साथ खाय तो मूत्रातिसार और सोमरोग शीघ्र नष्ट हो जाते हैं ॥३-५॥

सोमनाथ रस

कर्षं जारितलौहञ्च तदर्द्धं रसगन्धकम् ।
पलमात्रं निशायुग्मं जम्बुवीरणगोक्षुरम् ॥ ६ ॥
विडङ्गं जीरकं पाठा धात्रीदाडिमटङ्कणम् ।
चन्दनं गुग्गुलुर्लोध्रं शालार्जुनरसाञ्जनम् ॥ ७ ॥
छागीदुग्धेन वटिकां कारयेद्दशरक्तिकाम् ।
निर्मितो नित्यनाथेन सोमनाथरसस्त्वयम् ॥ ८ ॥
सोमरोगं बहुविधं प्रदरं हन्ति दुर्जयम् ।
योनिशूल मेढ्रशूलं सर्वजं चिरकालजम् ॥ ९ ॥

लौहभस्म दो भाग, शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, इलायची, तेजपात, हल्दी, दारुहल्दी, जामुनकी गुठली, खस, गोखरू, वायविडंग, जीरा, पाठा, आँवला, अनारका छिलका, सुहागा, लालचन्दन, गूगुल, लोध, साल, अर्जुन, रसौत, प्रत्येक द्रव्य एक-एक भाग लेकर घोंटे और बकरीके दूधसे पीसकर दस-दस रत्तीकी गोली बना ले। यह सोमनाथ रस नित्यनाथका बनाया हुआ है। इससे अनेक प्रकारके सोमरोग, घोर प्रदर, योनिशूल, त्रिदोषजनित तथा पुराने और दुर्जय बहुमूत्ररोग विशेष करके नष्ट होते हैं ॥ ६-९ ॥

बृहत्सोमनाथ रस

बहुमूत्रं विशेषेण दुर्जयं हन्त्यसंशयम् ॥ १० ॥

हिङ्गुलसम्भवं सूतं पालिधारसमर्दितम्।
रण्डाशोधितगन्धञ्च तेनैव कज्जलीकृतम् ॥ ११ ॥
तद्द्वयोर्द्विगुणं लौहं कन्यारसविमर्दितम्।
अभ्रकं वङ्गकं रौप्यं खर्परं माक्षिकं तथा ॥ १२ ॥
सुवर्णञ्च समं सर्वं प्रत्येकञ्च रसार्द्धकम्।
तत्सर्वं कन्यकाद्रावैर्मर्दयेद्भावयेत्ततः ॥ १३ ॥
भेकपर्णीरसेनैव गुञ्जाद्वयवटीं ततः।
मधुना भक्षयेच्चापि सोमरोगनिवृत्तये ॥ १४ ॥
प्रमेहान्विंशतिं हन्ति बहुमूत्रञ्च सोमकम्।
मूत्रातिसारं कृच्छ्रञ्च मूत्राघातं सुदारुणम् ॥ १५ ॥
बहुदोषं बहुविधं प्रमेहं बहुसंज्ञकम्।
हस्तिमेहमिक्षुमेहं लालामेहं विनाशयेत् ॥ १६ ॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सोमसंज्ञकम्।
नाशयेद्बहुमूत्रञ्च प्रमेहसविकल्पतः ॥ १७ ॥

हिंगुलसे निकाला हुआ पारा लेकर नीमके रसमें घोंटे। फिर मूषाकर्णीके रससे शोधित गन्धक समभाग लेकर कज्जली करे। तब घीकुवारके रससे मर्दित लौहभस्म चार भाग, अभ्रकभस्म, वंगभस्म, चाँदीभस्म, खर्परभस्म, स्वर्णमाक्षिक-भस्म तथा स्वर्णभस्म प्रत्येक वस्तु आधा-आधा भाग लेकर इन सबको घृतकुमारी-के रससे घोंटे तथा घीकुवारके ही रसमें भावना दे। फिर मण्डूकपर्णीके रसमें घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोली बना ले। इसे शहदके साथ खाय तो सोमरोग नष्ट हो जाता है। बीस प्रमेह, बहुमूत्र, सोमरोग, मूत्रातिसार, मूत्रकृच्छ्र, दारुण मूत्राघात, बहुतेरे दोषोंसे दूषित अनेक प्रकारके मधुमेह, हस्तिमेह, इक्षुमेह, लालामेह, वातिक, पैत्तिक तथा श्लैष्मिक प्रमेह, सोमरोग और बहुमूत्र ये सब रोग अवश्य नष्ट हो जाते हैं ॥ १०–१७ ॥

सोमेश्वर रस

शालार्जुनं लोध्रकञ्च कदम्बागुरुचन्दनम्।
अग्निमन्थो निशायुग्मं धात्रीदाडिमगोक्षुरम् ॥ १८ ॥

जम्बुवीरणमूलञ्च भागमेषां पलार्द्धकम्।
रसगन्धकधान्याब्दमेलापत्रं तथाऽभ्रकम् ॥ १९ ॥
लोहं रसाञ्जनं पाठा विडङ्गं टङ्कजीरकम्।
प्रत्येकं पलिकं भागं पलार्द्धं गुग्गुलोरपि ॥ २० ॥
घृतेन वटिकां कृत्वा खादेत्षोडशरक्तिकाम्।
गहनानन्दनाथेन रसो यत्नेन निर्मितः ॥ २१ ॥
सोमेश्वरो महातेजाः सोमरोगं निहन्त्यलम् ॥ २२ ॥
एकजं द्वन्द्वजञ्चैव सन्निपातसमुद्भवम्।
मूत्राघातं मूत्रकृच्छ्रं कामलाञ्च हलीमकम् ॥ २३ ॥
भगन्दरोपदंशौ च विविधान्पिडकान्व्रणान्।
विस्फोटार्बुदकण्डूश्च सर्वमेहं विनाशयेत् ॥ २४ ॥

शालवृक्षका भीतरी भाग, अर्जुनकी छाल, लोध, कदम्बकी छाल, अगुरु, लाल चन्दन, गनियारी, हल्दी, दारुहल्दी, आँवला, अनारकी छाल, गोखरू, जामुनकी गुठली, खस, इनका चूर्ण आधा-आधा पल और शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, धनियाँ, नागरमोथा, इलायची, तेजपात, अभ्रकभस्म, लौहभस्म, रसौत, पाढ़ा, वायविडंग, सोहागा, जीरा, इनका चूर्ण एक-एक पल लेकर पहले पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सब एकमें मिलाकर खरल करे। इसमें गूगुल आधा पल मिलाकर घोंटे और घी मिलाकर सोलह-सोलह रत्तीकी गोली बना ले। एक गोली नित्य खाय तो सोमरोग दूर होता है। यह गहनानन्दका बनाया हुआ सोमेश्वर रस महातेजस्वी है। इससे एकदोषज, द्वन्द्वज, त्रिदोषज एवं सब प्रकारके प्रमेह, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, कामला, हलीमक, भगंदर, उपदंश, विविध प्रकारकी पीड़ा देनेवाले व्रण, विस्फोटक, अर्बुद और खुजली ये सब रोग दूर हो जाते हैं ॥ १८–२४ ॥ इति रसेन्द्रसारसंग्रहे सोमरोगचिकित्सा समाप्ता।

अथ स्थौल्यचिकित्सा।

त्र्यूषणादि लौह

त्र्यूषणं विजया चव्यं चित्रकं विडमौद्भिदम्।
वागुजी सैन्धवञ्चैव सौवर्चलसमन्वितम् ॥ १ ॥

अयश्चूर्णेन संयुक्तं भक्षयेन्मधुसर्पिषा ।
स्थौल्यापकर्षणं श्रेष्ठं बलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥ २ ॥
मेहघ्नं कुष्ठशमनं सर्वव्याधिहरं परम् ॥ ३ ॥
नाहारे मन्त्रणा कार्या न विहारे तथैव च ।
त्र्यूषणाद्यमिदं लौह रसायनवरोत्तमम् ॥ ४ ॥

लवण, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, भाँग, चव्य, चीता, विड् लवण, औद्भिद नमक, बावची, सेंधानमक, सोंचल नमक, इनमेंसे प्रत्येक द्रव्यका चूर्ण समभाग और लौहभस्म सबके बराबर लेकर इन सबको एकत्र पीसकर रखे। शहद और घी-के साथ इसे खानेसे स्थूलता कम हो जाती है। इससे बल, वर्ण और अग्नि ती है। यह प्रमेहनाशक, कुष्ठनाशक और सर्वव्याधिनाशक रस है। इसका सेवन करते समय आहार-विहारसम्बन्धी कुछ भी परहेज नहीं है। यह त्र्यूषणादि लौह एक उत्तम रसायन है ॥ १-४ ॥

वड़वाग्नि लौह

सूतभस्म सतालञ्च लौहं ताम्रं समं समम् ।
मर्दयेत्सूर्य्यपत्रेण चास्य वल्लं प्रयोजयेत् ॥ ५ ॥
मधुना स्थूलरोगे च शोथे शूले तथैव च ।
मध्वाज्यमनुपानञ्च देयं वाऽपि कफोल्बणे ॥ ६ ॥

रससिन्दूर, हड़ताल, लौहभस्म, ताम्रभस्म, ये द्रव्य समभाग ले और सबको एकमें पीसकर मदारके पत्तोंके रससे घोंटकर डेढ़-डेढ़ रत्तीकी गोली बना ले। इसे शहदके साथ खाय तो स्थूलता, शोथ एवं शूलरोग नष्ट हो जाते हैं। यदि कफ बढ़ा हुआ हो तो शहद तथा घी मिलाकर अनुपान देना चाहिये ॥५॥६॥

वड़वाग्नि रस

शुद्धं सूतं समो गन्धस्ताम्रं तालं समं समम् ॥ ७ ॥
अर्कक्षीरैर्दिनं मर्द्यं क्षौद्रैर्लेह्यं त्रिगुञ्जकम् ।
वडवाग्निरसो नाम्ना स्थौल्यमाशु नियच्छति ॥ ८ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, ताम्रभस्म, शुद्ध हड़ताल, ये सभी चीजें समभाग लेकर पारा-गन्धककी कज्जली करे। फिर सब वस्तुयें एकमें मिलाकर मदारके

दूधमें दिन भर घोंटे और तीन-तीन रत्तीकी गोली बनाकर रख ले। मधुमें मिलाकर इसे चाटे तो स्थूलता शीघ्र दूर हो जाती है ।। ७ ।। ८ ।।

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे स्थौल्यचिकित्सा ।

अथ उदररोगचिकित्सा

त्रैलोक्यसुन्दर रस

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं ताम्राभ्रं सैन्धवं विषम् ।
कृष्णजीरं विडङ्गञ्च गुडूचीसत्त्वचित्रकम् ।। १ ।।
उग्रगन्धा यवक्षारं प्रत्येकं कर्षमात्रकम् ।
निर्गुण्डिकाद्रवैरग्निवीजपूरद्रवैर्दिनम् ।। २ ।।
मर्दयेच्छोपयेत्सोऽयं रसस्त्रैलोक्यसुन्दरः ।
गुञ्जाद्वयं घृतैर्लेह्यं वातोदरकुलान्तकम् ।। ३ ।।
वह्निचूर्णं यवक्षारं प्रत्येकञ्च पलद्वयम् ।
घृतप्रस्थं विपक्तव्यं गोमूत्रैश्च चतुर्गुणैः ।
घृतावशेषं कर्त्तव्यं कर्षमात्रं पिबेदनु ।। ४ ।।

शुद्ध पारा, एक कर्ष, शुद्ध गन्धक दो कर्ष, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, सेंधा-नमक, शुद्ध विष, काला जीरा, विडंग, गिलोयका सत, चीता, अजवायन, जवा-खार, इन सबका चूर्ण एक-एक कर्ष लेकर कज्जली करे। फिर सबको मिलाकर सम्भालू, चीता तथा बिजौरेके रसमें दिन भर घोटकर सुखा ले। यही त्रैलो-क्यसुन्दर रस है। दो रत्ती यह रस यदि घीके साथ खाय तो वातोदर रोग दूर हो जाता है। चीतेका चूर्ण और जवाखार दोनों दो-दो पल पीसकर कल्क बना ले और एक प्रस्थ घीमें डालकर चार प्रस्थ गोमूत्रमें पकावे। जब घीमात्र शेष रह जाय, तब उतारकर छान ले। कर्ष भर यह घी पूर्वोक्त रस खानेके बाद अनुपानमें पिये ।। १–४ ।।

वैश्वानरी वटी

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं मृतार्कायःशिलाजतु ।
रसमानं प्रदातव्यं रसस्य द्विगुणं विषम् ।। ५ ।।

त्रिकटुं चित्रकं वीरा निर्गुण्डीमूपलीरजः।
अजमोदा विषांशेन प्रत्येकञ्च नियोजयेत्॥ ६ ॥
निम्बपञ्चांगुलक्वाथैर्भावना चैकविंशतिः।
भृङ्गराजरसैः सप्त दत्त्वा क्षौद्रैर्विलोडयेत्॥ ७ ॥
भक्षयेद्बदरास्थ्याभां वटिकां तां दिवा निशि।
श्लेष्मोदरं निहन्त्याशु नाम्ना वैश्वानरी वटी॥ ८ ॥
देवदारुवह्निमूलकल्कं क्षीरेण पाययेत्।
भोजनं मेषदुग्धेन कुलत्थानां रसेन तु॥ ९ ॥

शुद्ध पारा एक भाग, शुद्ध गन्धक दो भाग, ताम्रभस्म, लौहभस्म और शिलाजीत एक-एक भाग, शुद्ध विष दो भाग, सोंठ, मिर्च, पीपरि, चीता, काकोली, निर्गुण्डी, मूसली तथा अजमोदा, इन सबका चूर्ण एक-एक भाग ले। पारा-गंधककी कज्जली करके सब द्रव्य एकमें मिलाकर घोंटे। फिर नीम और एरण्डकी जड़के क्वाथमें इक्कीस बार और भँगरेके रसमें सात बार भावना देकर शहदसे बेरकी गुठली जैसी गोली बना ले। इसे दिनमें और रातको खाय तो श्लेष्मोदर रोग शीघ्र नष्ट होता है। यही वैश्वानरी वटी है। इसे खाकर देवदारु तथा चीतेकी जड़ ये दोनों समभाग लेकर दूधमें घोंटकर पिये और भेड़के दूध या कुलथीके रसके साथ भोजन करे॥ ५–९ ॥

जलोदरारि रस

पिप्पली मरिचं ताम्रं रजनीचूर्णसंयुतम्।
स्नुहीक्षीरैर्दिनं मर्द्यं तुल्यं जैपालबीजकम्॥ १० ॥
निष्कं खादेद्विरेकः स्यात्सद्यो हन्ति जलोदरम्।
रेचनानाञ्च सर्वेषां दध्यन्नं स्तम्भने हितम्।
दिनान्ते च प्रदातव्यमन्नं वा मुद्गयूषकम्॥ ११ ॥

पिप्पली, मिर्च, ताम्रभस्म, हल्दीका चूर्ण, प्रत्येक द्रव्य समभाग ले और पीसकर थूहरके दूधमें एक दिनकी भावना दे। फिर सब चूर्णके बराबर शुद्ध जमालगोटेका चूर्ण मिला और घोंटकर निष्क भर खाय तो विरेचन होकर शीघ्र जलोदर रोग नष्ट हो जाता है। विरेचनको बन्द करनेके लिए दही-भात खाना चाहिए। शामको अन्न या मूँगका जूस दे॥ १० ॥ ११ ॥

महावह्नि रस

चतुः सूतस्य गन्धाष्टौ रजनीत्रिफलाशिलाः।
प्रत्येकञ्च द्विभागं स्यात्त्रिवृज्जैपालचित्रकम्॥ १२॥
प्रत्येकञ्च त्रिभागं स्याद्दन्तीत्र्यूषणजीरकम्।
प्रत्येकमष्टभागं स्यादेकीकृत्य विचूर्णयेत्॥ १३॥
जयन्तीस्नुक्पयोभृङ्गीवह्निवातारितैलकैः।
प्रत्येकेन क्रमाद्भाव्यं सप्तवारं पृथक् पृथक्॥ १४॥
महावह्निरसो नाम्ना निष्कमुष्णजलैः पिबेत्।
विरेचनं भवेत्तेन तक्रं भुक्तं ससैन्धवम्॥ १५॥
दिनान्ते दापयेत्पथ्यं वर्जयेच्छीतलं जलम्।
सर्वोदरहरः प्रोक्तः श्लेष्मवातहरः परः॥ १६॥

शुद्ध पारा ४ भाग और शुद्ध गन्धक ८ भाग लेकर कज्जली करे। फिर हल्दी, हरड़, बहेड़ा, आँवला, शुद्ध मैनसिल, इनमेंसे हर एकका चूर्ण दो-दो भाग लेकर निसोथ, शुद्ध जमालगोटा, चीता, हर एकका चूर्ण आठ-आठ भाग ले। सबको पीसकर एक साथ जयन्तीके रस, सेंहुड़के दूध, भाँगरा तथा चीताके रस एवं रेंड़ीके तेलमें क्रमशः सात बार भावना दे। यही महावह्नि रस है। निष्क भर यह रस गरम जलके साथ खाय तो विरेचन होता है। शामको मंठेमें सेंधानमक डालकर पिये। शीतल जल त्याग दे। यह रस सब उदर सम्बन्धी रोगों तथा श्लेष्मवातको दूर कर देता है॥ १२–१६॥

त्रैलोक्योडुम्बर रस

द्वौ भागौ शिवबीजस्य गन्धकस्य चतुष्टयम्।
अभ्रवह्निविडङ्गानां गुडूचीसत्त्वनागयोः॥ १७॥
कृष्णजीरकटूनाञ्च लवणक्षारयोरपि।
प्रत्येकं भागमादाय मर्दयेत्सुरसाद्रवैः॥ १८॥
बीजपूररसैर्भूयो मर्दयित्वा विशोषयेत्।
त्रैलोक्योडुम्बरो नाम वातोदरकुलान्तकः॥ १९॥
गुञ्जाद्वयं ततश्चास्य ददीत घृतसंयुतम्।
भोजयेत्स्निग्धमुष्णञ्च पायसञ्च विवर्जयेत्॥ २०॥

शुद्ध पारा २ भाग, शुद्ध गन्धक ४ भाग, अभ्रकभस्म, चीता, विडंग, गिलोयका सत, काला जीरा, सोंठ, मिर्च, पीपरि, सेंधानमक, जवाखार प्रत्येक द्रव्यका चूर्ण एक-एक भाग ले और कज्जली करके तुलसीके रसमें घोंटे। फिर बिजौरे नींबूके रससे मर्दन करके खा ले। यह त्रैलोक्योडुम्बर रस वातोदर रोग नष्ट करता है। दो रत्ती भर यह रस घीके साथ खाय और स्निग्ध तथा गरम भोजन करे। दूध तथा खीर न खाय॥ १७–२०॥

इच्छाभेदी रस

शुण्ठीमरिचसंयुक्तं रसगन्धकटंगणम्।
जैपालो द्विगुणः प्रोक्तः सर्वमेकत्र चूर्णयेत्॥ २१॥
इच्छाभेदी द्विगुञ्जः स्यात् सितया सह दापयेत्।
पिबेत्तु चुल्लकान्यावत्तावद्वारान्विरेचयेत्।
तक्रौदनञ्च दातव्यं पथ्यमत्र विजानता॥ २२॥

सोंठ, मिर्च, पारा, गन्धक और सुहागा, ये द्रव्य एक-एक भाग और सब-का दुगुना शुद्ध जमालगोटा लेकर पारा-गंधककी कज्जली करे। फिर सब चीजें मिलाकर घोंटे और दो-दो रत्तीकी गोली बनाकर रख ले। मिश्रीके साथ इसे खानेके बाद जितने चुल्लू पानी पिये, उतनी ही बार दस्त होता है। पथ्यमें मंठा-भात खाय॥ २१–२२॥

पिप्पल्याद्य लौह

पिप्पलीमूलचित्राभ्रत्रिकत्रयेन्दुसैन्धवम्।
सर्वचूर्णसमं लौहं हन्ति सर्वोदरामयम्॥ २३॥

पिप्पलीमूल, चीता, अभ्रकभस्म, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, हरड़, बहेड़ा, आँवला, वायविडंग, चीता, मोथा, कपूर और सेंधानमक ये सभी द्रव्य सम-भाग और सबके बराबर लौहभस्म मिलाकर खरल कर ले। इसे खानेसे सब प्रकारके उदररोग दूर होते हैं॥ २३॥

उदरारि रस

पारदं शिखितुत्थञ्च जैपालं पिप्पलीसमम्।
आरग्वधफलान्मज्जा वज्रीक्षीरेण मर्दयेत्॥ २४॥

माषमात्रां वटीं खादेत्स्त्रीणां जलोदरं जयेत् ।
चिञ्चाफलरसञ्चानु पथ्यं दध्योदनं हितम् ।
दकोदरहरञ्चैव तीव्रेण रेचनेन च ॥ २५ ॥

रससिन्दूर, तूतिया, जमालगोटा, पिप्पली, अमिलतासका गूदा, ये द्रव्य समभाग लेकर थूहरके दूधमें घोंटकर मासा-मासा भरकी गोली बनाकर खाय तो स्त्रियोंका जलोदर रोग नष्ट होता है। अनुपान इमलीके फलका रस और पथ्य दही-भात है। तीव्र विरेचन होनेके कारण इससे दकोदर रोग भी दूर होता है ॥२४॥२५॥

वङ्गेश्वर रस

सूतभस्म वङ्गभस्म भागैकं सम्प्रकल्पयेत् ।
गन्धकं मृतताम्रञ्च प्रत्येकञ्च चतुःपलम् ॥ २६ ॥
अर्कक्षीरैर्दिनं मर्द्यं सर्वं तद्गोलकीकृतम् ।
रुद्ध्वा तद्भूधरे पक्त्वा पुटकेन समुद्धरेत् ॥ २७ ॥
एष वङ्गेश्वरो नाम प्लीहगुल्मोदरान् जयेत् ।
घृतैर्गुञ्जाद्वयं लेह्यं निष्कां श्वेतपुनर्नवाम् ॥ २८ ॥
गवां मूत्रैः पिबेच्चानु रजनीं वा गवां जलैः ॥ २९ ॥

रससिन्दूर और वंगभस्म एक-एक पल, शुद्ध गंधक तथा ताम्रभस्म चार-चार पल ले और सबको पीसकर मदारके दूधमें दिनभर घोंटे और गोला बना तथा सम्पुटमें रखकर भूधरयन्त्रमें पकावे। स्वांगशीतल होनेपर निकालकर रख ले। इस वङ्गेश्वर रसको खानेसे प्लीहा, गुल्म और उदररोग दूर होते हैं। इसकी मात्रा दो रत्ती है। घीके साथ इसे खाकर गोमूत्रमें निष्क भर श्वेत पुनर्नवाका चूर्ण अथवा हल्दीका गोमूत्रके साथ खाय ॥२६—२९ ॥

अथ प्लीहरोगचिकित्सा ।

रोहितक लौह

रोहितकसमायुक्तं त्रिकत्रययुतं त्वयः ।
प्लीहानमग्रमांसञ्च यकृतञ्च विनाशयेत् ॥ १ ॥

रोहनवृक्षकी छाल, हरड़, बहेड़ा, आँवला, सोंठ, मिर्च, पीपरि, विडंग, मोथा, चीता, इनमेंसे प्रत्येक द्रव्यका चूर्ण समभाग और सबके बराबर लौह-भस्म मिलावे । इसे खानेसे प्लीहा, यकृत् तथा अग्रमांस रोग दूर होता है ॥१॥

लोकनाथ रस

पारदं गन्धकञ्चैव समभागं विमर्दयेत् ।
मृताभ्रं रसतुल्यञ्च पुनस्तत्रैव मर्दयेत् ॥ २ ॥
रसाद्द्विगुणलौहञ्च लौहतुल्यञ्च ताम्रकम् ।
भस्म वराटिकायाश्च ताम्रतस्त्रिगुणं कुरु ॥ ३ ॥
नागवल्लीरसेनैव मर्दयेत्ततो भिषक् ।
पुटेद्गजपुटे विद्वान् स्वाङ्गशीत समुद्धरेत् ॥ ४ ॥
यकृत्प्लीहोदरं गुल्मं श्वयथुञ्च विनाशयेत् ।
पिप्पलीमधुसंयुक्तां सगुडां वा हरीतकीम् ।
गोमूत्रञ्च पिबेच्चानु गुडं वा जीरकान्वितम् ॥ ५ ॥

शुद्ध पारा एक भाग शुद्ध गंधक एक भाग, अभ्रकभस्म एक भाग, लौहभस्म दो भाग, ताम्रभस्म दो भाग और कौड़ीभस्म छ भाग इन सबको एकत्र करके पारा-गंधककी कज्जली करे और पानके रसमें घोंटकर गजपुटमें फूँक दे । स्वांगशीतल होनेपर निकाल ले और पीसकर रखे । इससे यकृत्, प्लीहा, उदर, गुल्म और सूजन नष्ट होती है । इसे खाकर पिप्पली, शहद, हरड़, गुड़, गोमूत्र, जीराका चूर्ण और गुड़ खाय ॥ २–५ ॥

बृहल्लोकनाथ रस

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं खल्ले कृत्वा तु कज्जलम् ।
सूततुल्यं जारिताभ्रं मर्दयेत्कन्यकाम्बुना ॥ ६ ॥
ततो द्विगुणितं दद्यात्ताम्रं लौहं प्रयत्नतः ।
काकमाचीरसेनैव सर्वं तत्परिमर्दयेत् ॥ ७ ॥
सूतान्नवगुणं दद्याद्वराटीसम्भवं रजः ।
पिष्ट्वा जम्बीरनीरेण मूषायुग्मं प्रकल्पयेत् ॥ ८ ॥
तन्मध्ये गोलकं क्षिप्त्वा यत्नेनाच्छादयेद्भिषक् ।
शरावसम्पुटं कृत्वा मृद्भस्मलवणाम्बुभिः ॥ ९ ॥

शरावसन्धिमालिप्य चातपे शोषयेत्क्षणम्।
ततो गजपुटं दत्त्वा स्वांगशीतं समुद्धरेत्॥ १०॥
पिष्ट्वा तु सर्वमेकत्र स्थापयेद्भाजने शुभे।
खादेद्वल्लद्वयञ्चास्य मूत्रञ्चानुपिबेन्नरः॥ ११॥
मधुना पिप्पलीचूर्णं सगुडां वा हरीतकीम्।
अजाजीं वा गुडेनैव भक्षयेत्तुल्ययोगतः॥ १२॥
यकृत्प्लीहोदरोग्रञ्च श्वयथुञ्च विनाशयेत्।
वाताष्ठीलाञ्च कमठीं प्रत्यष्ठीलां तथैव च॥ १३॥
कांस्यक्रोडाग्रमांसञ्च शूलञ्चैव भगन्दरम्।
वह्निमान्द्यञ्च कासञ्च लोकनाथरसोत्तमः॥ १४॥

शुद्ध पारा एक भाग और गंधक दो भाग लेकर कज्जली करे। फिर एक भाग अभ्रकभस्म मिलाकर सबको घीगुवारके रसमें घोंटे। तदनन्तर ताम्रभस्म दो भाग, लौहभस्म दो भाग ले। उसीमें मिलाकर सबको मकोयके स्वरससे मर्दन करे। फिर गंधक दो भाग और कौड़ीभस्म दो भाग मिलाकर सबको जम्बीरी नीबूके रसमें घोंटकर सम्पुटमें रख और मिट्टी, राल, नमक तथा पानी मिलाकर सन्धि बन्द कर दे। फिर इसे कुछ देर धूपमें सुखाकर गजपुटमें फूँक दे। स्वांगशीतल होनेपर निकालकर पीसे और सम्हालकर रखे। तीन रत्ती यह रस खाकर ऊपरसे गोमूत्र पिये। अनुपानमें पीपरि. शहद, हरड़, गुड़ तथा जीरेका चूर्ण खाय। इससे यकृत्, प्लीहा, उग्र उदररोग, सूजन, वाताष्ठीला, कमठी, प्रत्यष्ठीला, कांस्यक्रोड, अग्रमांस, शूल, भगन्दर, अग्निमांद्य एवं खाँसी ये सब रोग नष्ट हो जाते हैं। यही बृहल्लोकनाथ रस है ॥ ६–१४ ॥

ताम्रेश्वर वटी

हिङ्गु त्रिकटुकञ्चैवापामार्गस्य च पत्रकम्।
अर्कपत्रं स्नुहीपत्रं तथा च समभागिकम्॥ १५॥
सैन्धवं तत्समं ग्राह्यं लौहं ताम्रञ्च तत्समम्।
प्लीहानं यकृतं गुल्ममामवातं सुदारुणम्॥ १६॥

अर्शांसि घोरमुदरं मूर्छापाण्डुं हलीमकम् ।
ग्रहणीमतिसारञ्च यक्ष्माणं शोथमेव च ॥ १७ ॥

हींग, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, अपामार्ग, मदार और सेंहुड़ प्रत्येक द्रव्य एक-एक तोला लेकर सेंधानमक, लौहभस्म तथा ताम्रभस्म प्रत्येक द्रव्य सात-सात तोले ले और सबको पीसकर रख ले। इसे खानेसे प्लीहा, यकृत्, गुल्म, दारुण आमवात, बवासीर, घोर उदररोग, मूर्छा, पाण्डुरोग, हलीमक, ग्रहणी, अतीसार, यक्ष्मारोग तथा शोथरोग दूर होते हैं। आजकल इसमें आदीके क्षार डालनेकी प्रणाली चल पड़ी है ॥ १५–१७ ॥

अग्निकुमार लौह

तुत्थरामठटंगानि सैन्धवं धान्यजीरकम् ।
यमानी मरिचं शुण्ठी लवंगैला विडंगकम् ॥ १८ ॥
प्रत्येकं तोलकं चूर्णं लौहचूर्णन्तु तत्समम् ।
रसस्य गन्धकस्यापि पलैकं कज्जलीकृतम् ॥ १९ ॥
घृतेन मधुना खाद्यं लौहमग्निकुमारकम् ।
यकृत्प्लीहोदरहरं गुल्मञ्चापि हलीमकम् ॥ २० ॥
बलवर्णाग्निजननं कान्तिपुष्टिविवर्द्धनम् ।
श्रीमद्गहननाथेन निर्मितं विश्वसम्पदे ॥ २१ ॥

तूतिया, हींग, अपामार्ग, थूहर सुहागा, सेंधानमक, धनियाँ, जीरा, अजवायन, मिर्च, सोंठ, लौंग, इलायची, वायविडंग, इन द्रव्योंका चूर्ण एक-एक भाग लेकर लौहभस्म बारह भाग मिलावे। शुद्ध पारा आधा पल तथा शुद्ध गंधक आधा पल लेकर दोनोंकी कज्जली करे। फिर सबको एकमें पीसकर रखे। घी तथा शहदके साथ इसे खाय तो यह अग्निकुमार लौह यकृत्, प्लीहा, उदररोग, गुल्म तथा हलीमक रोगको नष्ट करता एवं बल, वर्ण और अग्निकी वृद्धि करता है। यह कान्ति तथा पुष्टि भी देता है। श्रीगहननाथने लोकोपकारार्थ इसे बनाया था ॥ १८–२१ ॥

प्राणवल्लभ रस

लौहं ताम्रं वराटञ्च तुत्थं हिङ्गुफलत्रिकम् ।
स्नुहीमूलं यवक्षारः जैपालं टङ्कणं त्रिवृत् ॥ २२ ॥

प्रत्येकञ्च पलं ग्राह्यं छागीदुग्धेन पेषितम्।
चतुर्गुञ्जां वटीं खादेद्वारिणा मधुनाऽपि वा ॥ २३ ॥
प्राणवल्लभनामाऽयं गहनानन्दभाषितः।
दोषं रोगञ्च संवीक्ष्य युक्त्या वा त्रुटिवर्द्धनम् ॥ २४ ॥
निहन्ति कामलां पाण्डुमानाह श्लीपदार्बुदम्।
गलगण्डं गण्डमालां व्रणानि च हलीमकम् ॥ २५ ॥
अपचीं वातरक्तञ्च कण्डूं विस्फोटकुष्ठकम्।
नातः परतरः श्रेष्ठः कामलार्त्तिभयेष्वपि ॥ २६ ॥

लौहभस्म, ताम्रभस्म, कौड़ीभस्म, शुद्ध तूतिया, हींग, हड़, बहेड़ा, आँवला, सेंहुड़की जड़, जवाखार, शुद्ध जमालगोटा, शुद्ध सुहागा और निसोथ इन द्रव्योंका चूर्ण एक-एक पल ले अ र सबको बकरीके दूधमें घोंटकर चार-चार रत्तीकी गोलियें बना ले। इसे शहद या जलके साथ खाय। गहनानंदने यह प्राणवल्लभ रस कहा था। रोग तथा दोषको देखकर मात्रामें कमी या अधिकता भी कर सकते हैं। इससे कामला, पाण्डु, आनाह, श्लीपद, अर्बुद, गलगंड, गंडमाला, व्रण, हलीमक, अपची, वातरक्त, कण्डू, विस्फोट तथा कुष्ठ ये सभी रोग निवृत्त होते हैं। कामलारोगके लिये तो इससे बढ़कर और कोई योग ही नहीं है ॥ २२-२६ ॥

यकृदरि लौह

द्विकर्षं लौहचूर्णस्य चाभ्रकस्य पलार्द्धकम्।
कर्षं शुद्धं मृतं ताम्रं लिम्पाकांत्रित्वचं पलम् ॥ २७ ॥
मृगाजिनभस्मपलं सर्वमेकत्र कारयेत्।
नवगुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ २८ ॥
यावत्प्लीहोदरञ्चैव कामलाञ्च हलीमकम्।
कासं श्वासं ज्वरं हन्याद्बलवर्णाग्निकारकम् ॥
यकृदरि त्विदं लौह वातगुल्मविनाशनम् ॥ २९ ॥

लौहभस्म दो कर्ष, अभ्रकभस्म आधा पल, ताम्रभस्म एक कर्ष, त्रिजौरा नीबूकी जड़की छाल एक पल और मृगचर्मकी भस्म एक पल ले और सबको एकत्र पीसे। फिर नौ-नौ रत्तीकी गोली बना ले। इससे प्लीहोदर, कामला,

हलीमक, श्वास तथा ज्वर नष्ट होते और बल, वर्ण तथा अग्निकी वृद्धि होती है। यह यकृदरि लौह वातगुल्मका नाशक है ॥ २७–२९ ॥

मृत्युञ्जय लौह

शुद्धसूतं समं गन्धं जारिताभ्रं समं समम्।
गन्धकाद्‌द्विगुणं लौहं मृतताम्रं चतुर्गुणम् ॥ ३० ॥
द्विक्षारं टङ्कणविडं वराटमथ शंखकम्।
चित्रकं कुनटी तालं कटुकी रामठं तथा ॥ ३१ ॥
रोहितकं त्रिवृच्चिञ्चा विशालाधवलाङ्कठम्।
अपामार्गः तालखण्डमम्लिका च निशायुगम् ॥ ३२ ॥
कानकं तुत्थकञ्चैव यकृन्मर्दं रसाञ्जनम्।
एतानि समभागानि चूर्णयित्वा विभावयेत् ॥ ३३ ॥
आर्द्रकस्वरसेनैव गुडूच्याः स्वरसेन च।
मधुनः कुडवैर्भाव्यं वटिका माषमात्रतः ॥ ३४ ॥
अनुपानं प्रदातव्यं बुद्‌ध्वा दोषानुसारतः।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय सर्वरोगकुलान्तकम् ॥ ३५ ॥
प्लीहानं ज्वरमुग्रञ्च कासञ्च विषमज्वरम्।
चिरजं कुलजञ्चैव श्लीपदं हन्ति दारुणम् ॥ ३६ ॥
रोगानीकविनाशाय धन्वन्तरिकृतं पुरा।
मृत्युञ्जयमिदं लौहं सिद्धिदं शुभदं नृणाम् ॥ ३७ ॥

शुद्ध पारा, गन्धक तथा अभ्रकभस्म ये तीनों एक-एक भाग लेकर पारे-गन्धककी कज्जली करे। फिर लौहभस्म दो भाग, ताम्रभस्म ४ भाग, जवाखार, सज्जी, सुहागा, विडलवण, शंखभस्म, चीता, शुद्ध मैनसिल, शुद्ध हड़ताल, कुटकी, हींग, रोंहेड़ेकी छाल, निसोथ, इमलीकी छाल, इन्द्रायणकी जड़, श्वेत अंकोल, अपामार्ग, तालजटाभस्म, अम्लवेत, हल्दी, दारुहल्दी, जमालगोटेके बीज, शुद्ध तूतिया, लाल रोहेड़ेकी छाल तथा रसौत, प्रत्येक द्रव्यका चूर्ण एक-एक भाग ले और सबको एकमें पीसकर अदरखके स्वरस तथा गिलोयके स्वरस-में भावना दे। फिर इसे एक कुडव शहदमें भावित करके मासे-मासे भरकी गोली बनावे। नित्य प्रातःकाल दोषानुसार अनुपानमें इसे खाय तो सब रोग

नष्ट होते हैं। प्लीहा, उग्र ज्वर, खाँसी, विषम ज्वर, पुराना तथा कुलक्रमागत श्लीपद रोग ये सब नष्ट हो जाते हैं। धन्वन्तरिजीका बनाया हुआ यह मृत्युञ्जय लौह अनेक रोगोंको नष्ट करता तथा सिद्धि और शुभ देता है॥३०-३७॥

प्लीहार्णव रस

हिंगलं गन्धकः टङ्कमभ्रकं विषमेव च।
प्रत्येकं पलिक भागं चूर्णयेदतिचिक्कणम्॥ ३८॥
पिप्पलीमरिचञ्चैव प्रत्येकञ्च पलार्द्धकम्।
मर्दयित्वा वटीं कुर्याद्वल्लमात्रां प्रयत्नतः॥ ३९॥
सेव्या शेफालिदलजैर्वटी माक्षिकसंयुता।
प्लीहानं षट्प्रकारं च हन्ति शीघ्रं न संशयः॥ ४०॥
ज्वरं मन्दानलं चैव कासं श्वासं वमिं भ्रमिम्।
प्लीहार्णव इति ख्यातो गहनानन्दभाषितः॥ ४१॥

शुद्ध सिंगरिफ, शुद्ध गन्धक, शुद्ध सुहागा, अभ्रकभस्म और शुद्ध विष ये द्रव्य एक एक पल ले और सबको पीसकर बहुत महीन करे। फिर पिप्पली तथा मिर्चका चूर्ण आधा-आधा पल मिला और घोंटकर डेढ़-डेढ़ रत्तीकी बोली बना ले। इसे यदि हरसिंगारके रस तथा शहदमें सेवन करे तो छहों प्रकारकी तिल्ली शीघ्र दूर हो जाती है। इससे ज्वर, मन्दाग्नि, खाँसी, श्वास, वमन तथा भ्रमरोग दूर हो जाते हैं। श्रीगहनानन्दका कहा हुआ यह प्लीहार्णव रस है॥ ३८-४१॥

प्लीहशार्दूल रस

सूतकं गन्धकं व्योषं समभागं पृथक् पृथक्।
एभिः समं ताम्रभस्म योजयेच्चैव बुद्धिमान्॥ ४२॥
मनःशिला वराट च तुत्थ रामठलौहकम्।
जयन्ती रोहितं चैव क्षारटङ्कणसैन्धवम्॥ ४३॥
विडं चित्रं कानकं च रसतुल्यं पृथक् पृथक्।
भावयेत्त्रिदिनं यावत् त्रिवृच्चित्रकणार्द्रकैः॥ ४४॥
गुञ्जामात्रां वटीं खादेत्सद्यः प्लीहविनाशिनीम्।
पिप्पलीमधुसंयुक्तां द्विगुञ्जां वा प्रयोजयेत्॥ ४५॥

प्लीहानमग्रमांसं च यकृद्गुल्मं सुदुस्तरम् ।
आमाशयेषु सर्वेषु चोदरे शोथविद्रधौ ॥ ४६ ॥
अग्निमान्द्ये ज्वरे चैव प्लीह्नि सर्वज्वरेषु च ।
प्लीहशार्दूलनामायं गहनानन्दभाषितः ॥ ४७ ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक एक-एक भाग लेकर दोनोंकी कज्जली करे। फिर सोंठ, मिर्च तथा पिप्पलीका चूर्ण एक-एक भाग, ताम्रभस्म पाँच भाग, शुद्ध मैनशिल, कौड़ीभस्म, शुद्ध तूतिया, हींग, लौहभस्म, जयन्ती, रोहेड़ेकी छाल, जवाखार, सोहागा, सेंधानमक, विड्नमक, चीता तथा शुद्ध जमालगोटा, इन द्रव्योंका चूर्ण एक-एक भाग ले और सबको एकत्र मिलाकर निसोथ, चीता, पिप्पली तथा अदरखके क्राथमें तीन-तीन दिन भावना दे। फिर इसकी रत्ती-रत्ती भरकी गोली बना ले। इसे यदि एक या दो रत्ती भर शहद तथा पिप्पलीके चूर्णमें मिलाकर खाय तो प्लीहा, अग्रमांस, यकृत्, गुल्म, आमाशयके सब रोग, उदररोग, शोथ, विद्रधि, अग्निमान्द्य, ज्वर एवं प्लीहायुक्त सभी प्रकारके ज्वर नष्ट हो जाते हैं। यह श्रीगहनानन्दका कहा हुआ प्लीहशार्दूल रस है ॥ ४२–४७ ॥

प्लीहारि रस

द्विकर्षं लौहभस्मापि कर्षं ताम्रं प्रदापयेत् ।
शुद्धसूतं तथा गन्धं कर्षमानं भिषग्वरः ॥ ४८ ॥
मृगाजिनभस्मपलं लिम्पाकांघ्रित्वचः पलम् ।
एवं भागक्रमेणैव कुर्य्यात्प्लीहारिकां वटीम् ॥ ४९ ॥
नवगुञ्जामितां खादेच्चाथ नित्यं हि पूतवाक् ।
प्लीहानं यकृतं गुल्मं हन्त्यवश्यं न संशयः ॥ ५० ॥

लौहभस्म दो कर्ष, ताम्रभस्म एक कर्ष, शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक एक-एक कर्ष, मृगचर्मकी भस्म तथा बिजौरे नीबूकी जड़की छाल ये दोनों एक एक पल ले। पहले पारा गन्धक की कज्जली करे। तब अन्य द्रव्य मिलाकर नौ-नौ रत्तीकी गोली बनाकर रख ले। इसे नित्य खाय तो प्लीहा, यकृत् तथा गुल्मरोग अवश्य नष्ट हो जाते हैं ॥ ४८–५० ॥

प्लीहारि रसः

कर्षैकं तालचूर्णस्य तत्पादांशं सुवर्णकम्।
पलार्द्धं मृतताम्रञ्च तत्समं शुद्धमभ्रकम्॥ ५१॥
मृगाजिनस्य भस्मापि कर्षमत्र प्रदापयेत्।
लिम्पाकांघ्रित्वचस्तद्वत्सर्वमेकत्र कारयेत्॥ ५२॥
रसगुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेत्ततः।
मधुना वह्निचूर्णेन खादेन्नित्यं यथाबलम्॥ ५३॥
असाध्यमपि प्लीहानं हन्त्यवश्यं न संशयः।
यकृतं पाण्डुरोगञ्च गुल्मादिकभगन्दरान्॥ ५४॥

शुद्ध हड़तालका चूर्ण एक कर्ष स्वर्णभस्म चौथाई कर्ष, ताम्रभस्म आधा पल, अभ्रकभस्म आधा पल, मृगचर्मकी भस्म एक कर्ष और बिजौरा नीबूकी जड़की छाल एक कर्ष ले और सबको एकत्र घोंटकर छ-छ रत्तीकी गोली बना ले। अपने बलके अनुसार इसे यदि शहद और चीताके चूर्णमें नित्य खाय तो असाध्य प्लीहा भी अवश्य नष्ट हो जाता है। यकृत्, पाण्डु, गुल्म तथा भगन्दरादि रोग भी इससे नष्ट होते हैं॥ ५१–५४॥

लौहमृत्युञ्जय रस

रसगन्धकलौहाभ्रं कुनटी मृतताम्रकम्।
विषमुष्टिवराटञ्च तुत्थं शङ्खं रसाञ्जनम्॥ ५५॥
जातीफलञ्च कटुकी द्विक्षारं कानकं तथा।
व्योषं हिंगु सैन्धवञ्च प्रत्येकं सूततुल्यकम्॥ ५६॥
श्लक्ष्णचूर्णीकृतं सर्वमेकत्र भावयेत्ततः।
सूर्य्यावर्त्तरसेनैव बिल्वपत्ररसेन च।
सूर्यावर्त्तेन मतिमान् वटिकां कारयेत् ततः॥ ५७॥
प्लीहानं यकृतं गुल्ममष्ठीलाञ्च विनाशयेत्।
अग्रमांसं तथा शोथं तथा सर्वोदराणि च॥
वातरक्तञ्च कमठं चान्तर्विद्रधिमेव च॥ ५८॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक, दोनों एक-एक भाग लेकर कजली करे। फिर लौहभस्म, अभ्रकभस्म, शुद्ध मैनसिल, ताम्रभस्म, शुद्ध कुचला, कौड़ीभस्म,

शुद्ध तूतिया, शंखभस्म, रसौत. जायफल, कुटकी, जवा-ार, सज्जी, शुद्ध जमाल-गोटा सोंठ, मिर्च, पिप्पली, हींग तथा सेंधा नमक, इनमेंसे प्रत्येक द्रव्यका चूर्ण एक-एक भाग लेकर सबको एकमें पीसे। फिर सूर्यमुखी तथा बेलके पत्तोंके रसमें भावना दे। तदनन्तर सूर्यमुखीके रसमें घोंटकर गोली बना ले। इसके सेवनसे प्लीहा, गुल्म, अष्ठीला, अग्रमांस, शोथ, सभी उदररोग, वातरक्त, कमठ तथा अन्तर्विद्रधि रोग नष्ट हो जाते हैं ॥५५–५८॥

महामृत्युञ्जय रस

रसगन्धकलौहाभ्रं कुनटीतुत्थताम्रकम्।
सैन्धवञ्च वराटञ्च वागुजी विडशङ्खकम् ॥ ५९ ॥
चित्रकं हिंगु कटुकी द्विक्षारं कट्फल तथा।
रसाञ्जनं जयन्ती च टङ्कणं समभागिकम् ॥ ६० ॥
एतत्सर्वं विचूर्ण्याथ दिनमेकं विभावयेत्!
आर्द्रकस्वरसेनैव गुडूच्याः स्वरसेन च ॥ ६१ ॥
गुञ्जामात्रां वटीं कृत्वा भक्षयेन्मधुना सह।
नानारोगप्रशमनो यकृद्गुल्मोदराणि च ॥ ६२ ॥
अग्रमांसं तथा प्लीहामग्निमान्द्यमरोचकम्।
एतान्सर्वान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा।
महामृत्युञ्जयो नाम महेशेन प्रकाशितः ॥ ६३ ॥

शुद्ध पारा तथा शुद्ध गन्धक दोनों एक-एक तोला लेकर कज्जली करे। फिर लौहभस्म, अभ्रकभस्म, शुद्ध मैनसिल, शुद्ध तूतिया, ताम्रभस्म, सेंधानमक कौड़ीभस्म; बावची, विड्नमक, शंखभस्म, चीता, हींग, कुटकी, जवाखार, सज्जी, कायफर. रसौत, जयन्ती और शुद्ध सोहागा, प्रत्येक द्रव्यका चूर्ण एक-एक तोला लेकर सबको पीसे और अदरख तथा गिलोयके स्वरसमें एक-एक दिन भावना दे और एक-एक रत्तीक गोली बना ले। इसे यदि शहद मिलाकर खाय तो नाना प्रकारके रोग दूर होते हैं। यकृत्, गुल्म, उदर, अग्रमांस, प्लीहा, अग्निमांद्य तथा अरुचि इनको यह महामृत्युञ्जय रस ऐसे दूर करता है, जैसे सूर्य अन्धकारको नष्ट करते हैं। यह रस श्रीशिवजीने प्रकाशित किया है ॥ ५९–६३॥

बृहद्गुडपिप्पली

विडङ्गं त्र्यूषणं हिंगु कुष्ठं लवणपञ्चकम् ।
त्रिक्षारं फेनकं चव्यं श्रेयसी कृष्णजीरकम् ॥ ६४ ॥
तालपुष्पोद्भव क्षारं नाड्यः कूष्माण्डकस्य च ।
अपामार्गोद्भवं क्षारं चिञ्चायाश्चित्रकं तथा ॥ ६५ ॥
एतानि समभागानि पुराणो द्विगुणो गुडः ।
गुडतुल्यं प्रदातव्यं चूर्णञ्चैव कणोद्भवम् ॥ ६६ ॥
मर्दयित्वा दृढे पात्रे मोदकानुपकल्पयेत् ।
भक्षयेद्वर्द्धयेन्नित्यं प्लीहानं हन्ति दुस्तरम् ॥ ६७ ॥
प्रमेहं पाण्डुरोगञ्च कामलां वह्निमान्द्यकम् ।
यकृतं पञ्चगुल्मञ्च तूदरं सर्वरूपकम् ॥ ६८ ॥
जीर्णज्वरं तथा शोथं कासं पञ्चविधं तथा ।
अश्विभ्यां निर्मिता ह्येषा सुबृद्गुडपिप्पली ॥ ६९ ॥

विडंग सोंठ, मिर्च, हींग, कूठ, पाँचों नमक, जवाखार, सोहागा, सज्जी, समुद्रफेन, चव्य. गजपीपल, काला जीरा, तालके फूलोंकी क्षार, पेठेकी बेलकी क्षार, अपामार्गकी क्षार, इमलीकी क्षार और चीता प्रत्येक द्रव्यका चूर्ण सम-भाग और सारे चूर्णोंका दुगुना गुड तथा गुडके बराबर पिप्पलीचूर्ण ले । इन सबको घोंटकर छोटे-छोटे लड्डू बना ले । इसे क्रमशः नित्य बढ़ाता हुआ खाय तो अत्यन्त बढ़ी हुई तिल्ली, प्रमेह, पांडु, कामला, अग्निमांद्य, यकृत् , पाँचों गुल्म, सब प्रकारके उदररोग, जीर्णज्वर, शोथ तथा पांचों प्रकारकी खाँसी दूर हो जाती है । यह बृहद्गुड पिप्पली अश्विनीकुमारोंने बनायी थी ॥६४—६९॥

ताम्रकल्प

अक्षपारदगन्धञ्च कर्षद्वयमितं पृथक् ।
सर्वैः समं भवेत्ताम्रं जम्बीराम्लेन मर्दयेत् ॥ ७० ॥
सूर्यावर्त्तरसैः पश्चात्कणामोचरसेन च ।
योजयेत्तीव्रघर्मे तु यावत्सर्वन्तु जीर्यति ॥ ७१ ॥
जम्बीरस्य रसैर्भूयो रसं दण्डेन चालयेत् ।
दृढे शिलामये पात्रे चूर्णयेदतिशोभनम् ॥ ७२ ॥

रक्तिद्वयक्रमेणैव योज्यं माषद्वयावधि ।
ह्रासयेच्च क्रमेणैव तथा चैव विवर्द्धयेत् ॥ ७३ ॥
जीर्णे भुञ्जीत शाल्यन्नं क्षीरं घृतसमन्वितम् ।
हन्त्यम्लपि विविधां ग्रहणीं विषमज्वरम् ॥ ७४ ॥
चिरज्वरं प्लीहगदं यकृद्रोगं सुदुस्तरम् ।
अग्रमांसं तथा शोथं कांस्यक्राडं सुदुर्जयम् ॥ ७५ ॥
कमठञ्च तथा शोथमौदरञ्च सुदारुणम् ।
धातुवृद्धिकरं वृष्यं बलवर्णकरं शुभम् ॥ ७६ ॥
सद्यो वह्निकरञ्चैव सर्वरोगहरं परम् ॥ ७७ ॥
मुखशुद्धिर्विधातव्या पर्णैश्चूतसमन्वितैः ।
ताम्रकल्पमिदं नाम्ना सर्वरोगप्रशान्तये ॥ ७८ ॥

काला नमक या बहेड़ेका चूर्ण, शुद्ध पारा तथा शुद्ध गन्धक ये द्रव्य दो-दो कर्ष लेकर ताम्रभस्म छः कर्ष ले। पारा-गन्धककी कज्जली करनेके बाद जम्बीरीके रससे घोंटकर सुखावे। फिर इसे सूर्यमुखीके रस तथा पिप्पली और मोचरसके क्राथमें घोंटे। तदनन्तर सूर्यमुखीके रस, पिप्पली और मोचरसके क्राथमें घोंटे। फिर तीव्र धूपमें सुखा ले और जब सब गल या पच जायें तो फिरसे जम्बीरी नीबूका रस बार-बार डालकर घोंटे और चूर्ण करके रख ले। दो रत्तीसे आरंभ करके क्रमशः दो मासे तक बढ़ावे और इसी क्रमसे घटाता हुआ खाय। इसके पच जानेके बाद शालि चावलका भात, घी तथा दूध मिलाकर खाय तो अम्लपित्त, विविध भाँतिकी ग्रहणी, विषमज्वर, पुराना ज्वर, तिल्ली, दारुण यकृत्‌रोग, अग्रमांस, शोथ, कांस्यक्रोड, कच्छपरोग, शोथ तथा दारुण उदररोग नष्ट होते हैं। यह धातुवर्धक, वृष्य, बल-वर्णवर्धक, अग्नि-वर्धक और सर्वरोगहारी है। इसे खानेके बाद मुखशुद्धिके लिये चूना लगा हुआ पान खाय। यह ताम्रकल्प सभी रोगोंको दूर करता है ॥ ७०–७८ ॥

दारुभस्म

दारुसैन्धवगन्धञ्च भस्मीकृत्य प्रयत्नतः ।
प्लीहानमग्रमांसञ्च यकृतञ्च विनाशयेत् ॥ ७९ ॥

शुद्ध संखिया, सेंधा नमक तथा शुद्ध गन्धक ये तीनों समभाग ले और घोंट

तथा सम्पुटमें रखकर भस्म करे। समुचित मात्रामें इसे खाय तो प्लीहा, अग्रमांस तथा यकृत् ये रोग दूर होते हैं ॥ ७९ ॥

वज्रक्षार

समुद्रं सैन्धवं काचं यवक्षारं सुवर्चलम्।
टङ्कणं सर्जिकाक्षारं तुल्यं सर्वं विचूर्णयेत् ॥ ८० ॥
अर्कक्षीरैः स्नुहीक्षीरैरातपे भावयेत्त्र्यहम्।
तेन लिप्त्वाऽर्कपत्रञ्च रुद्ध्वा चान्तःपुटे पचेत् ॥ ८१ ॥
तत्क्षारं चूर्णयेत्पश्चात्त्र्यूषणं त्रिफलारजः।
जीरकं रजनीवह्निर्नवभागं समं समम् ॥ ८२ ॥
क्षारार्द्धमेव सर्वञ्च एकीकृत्य प्रयोजयेत्।
वज्रक्षारमिदं सिद्धं स्वयं प्रोक्तं पिनाकिना ॥ ८३ ॥
सर्वोदरेषु गुल्मेषु शूलदोषेषु याजयेत्।
अग्निमान्द्येऽप्यजीर्णेऽपि भक्ष्यं निष्कद्वयं द्वयम् ॥ ८४ ॥
वाताधिक्ये जले कोष्णं घृतं वा पैत्तिके हितम्।
कफे गोमूत्रसंयुक्तमारनालं त्रिदोषजे ॥ ८५ ॥

सामुद्र लवण, सेंधानमक, काचनमक, जवाखार, काला नमक, सुहागा और सज्जीक्षार, ये द्रव्य समभाग ले। फिर मदार तथा थूहरके दूधमें धूपमें रखकर तीन-तीन दिन भावना दे तथा पीसकर शुद्ध ताम्रपत्रपर लेप और सम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूँके। स्वांगशीतल होनेपर निकाल ले और ताम्रसहित चूर्ण करे। फिर जितना यह चूर्ण हो, उसका आधा सोंठ, मिर्च, पिप्पली, हरड़, बहेड़ा, आँवला, जीरा, हल्दी तथा चीता, ये नौ द्रव्य समभाग ले और इन सबका बारीक चूर्ण मिला करके दे। यही वज्रक्षार कहलाता है। यह साक्षात् शंकरभगवान्का कहा हुआ क्षार है। इसे खानेसे सब उदररोग, गुल्म, शूल, अग्निमान्द्य तथा अजीर्ण दूर होता है। वातदोषमें गरम जल, पित्तदोषमें घी, कफदोषमें गोमूत्र तथा त्रिदोषमें कांजीके साथ दो निष्क यह क्षार सेवन करे ॥ ८०–८५ ॥

उदरामयकुम्भिकेसरी रस

रसगन्धकभस्मशुल्वकं कटुकक्षारयुगं सटङ्कणम्।
कणामूलकचव्यचित्रकं लवणान्येव यमानिरामठम् ॥ ८६ ॥

समभागमिदं विभावयेत्खरतापे त्वथ जम्भवारिणा।
उदरामयकुम्भिकेसरीरस एष प्रथितोऽस्य माषकः॥ ८७॥
सुरवार्य्यनुदापयेद्भिषक्प्रसभं हन्ति च सव्रण गदम्।
यकृतं कृमिमग्रमांसकं कमठं प्लीहजलोदराह्वयम्।
जठरामयपञ्चगुल्मकं पवनं साममथाम्लपित्तकम्॥ ८८॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक लेकर कज्जली करे। फिर उसमें ताम्रभस्म, कुटकी, जवाखार, सज्जी सोहागा, पिप्पलीमूल, चव्य, चीता, पाँचों नमक, अजवायन तथा हींग, ये द्रव्य समभाग लेकर अन्य द्रव्य मिलावे और जँभीरी नींबूके रसमें घोंटकर धूपमें सुखा ले। यही उदरामय-कुम्भिकेसरी रस है। मासाभर यह रस सुरा अथवा जलके साथ खाय तो व्रणरोग, यकृत्, कृमि, अग्रमांस, कमठ, प्लीहा, जलोदर, उदररोग, पाँचों गुल्म, आमवात तथा अम्लपित्त आदि सब रोग दूर हो जाते हैं॥ ८५-८८॥

वारिशोषण रस

चतुर्विंशति भागाः स्युर्गन्धाद्वङ्गं तदर्द्धकम्।
वङ्गभागाद्भवेदर्द्धः पारदः कृष्णमभ्रकम्॥ ८९॥
चतुर्दशविभागं स्यान्मृतं तद्दीयते पुनः।
मृतलौहमष्टभागं मृतताम्रं नवात्र तत्॥ ९०॥
मृतहेम द्वयं तत्र मृतरूप्यञ्च सप्तकम्।
अतिशुद्धमतिस्थूलं मृतं हीरं त्रयोदश॥ ९१॥
भागा ग्राह्या माक्षिकस्य विशुद्धस्यात्र षोडश।
अष्टादशमितं ग्राह्यं नवकाशीशकं पुनः॥ ९२॥
तुत्थकञ्च षडेवात्र नवीनं ग्राह्यमेव च।
तालकञ्च चतुर्भागं शिला योज्यास्त्रयो बुधैः॥ ९३॥
शैलेयं पञ्च दातव्यं सर्वमेकत्र नूतनम्।
मृतमौक्तिकभागैकं सौभाग्यं द्वयमेव च॥ ९४॥
कुट्टयित्वा विचूर्ण्याथ जम्बीरस्य रसेन वै।
भावयेत्सप्तधा गाढं गुटिकां तस्य कारयेत्॥ ९५॥

पानकद्वितये कृत्वा मुद्रयेत्पानकद्वयम् ।
घटमध्ये निवेश्याथ दत्त्वा पूर्वञ्च वालुकाम् ॥ ९६ ॥
ऊर्ध्वञ्च तां पुनर्दत्त्वा वालुकां मुद्रयेन्मुखम् ।
अहोरात्रं दहेदग्नौ स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ ९७ ॥
वकुलस्य च वीजेन कण्टकारीद्वयेन च ।
गुडूचीत्रिफलावारा भावयेत्सप्तसप्ततः ॥ ९८ ॥
वृद्धदाररसेनापि तथा देयास्तु भावनाः ।
गिरिकर्ण्या रसेनापि मत्स्यरोहितपित्ततः ॥ ९९ ॥
एवं सिद्धो भवेत्सम्यक् रसोऽसौ वारिशोषणः ।
देवान् गुरून्समभ्यर्च्य यतिनो ब्राह्मणाँस्तथा ॥ १०० ॥
रक्तिकाद्वितयं देयं सन्निपाते समुच्छ्रये ।
मरिचेन समं देयं तेन जागर्ति मानवः ॥ १०१ ॥
श्लैष्मिके च गदे देयं ग्रहण्यामग्निमान्द्यके ।
प्लीह्नि पाण्डौ प्रयोक्तव्यं त्रिकटुत्रिफलाम्भसा ॥ १०२ ॥
शूलरोगे प्रयोक्तव्यमुदावर्ते विशेषतः ।
कुष्ठे सदुष्टे देयोऽयं काकोडुम्वरिकाऽम्भसा ॥ १०३ ॥
अतिवह्निकरः श्रीदो वलवर्णाग्निवर्द्धनः ।
धन्वन्तरिकृतः सद्यो रसः परमदुर्लभः ।
सर्वरोगे प्रयोक्तव्यो निःसन्देहं भिषग्वरैः ॥ १०४ ॥

शुद्ध गंधक २४ भाग, वंगभस्म १५ भाग, शुद्ध पारा ६ भाग, अभ्रकभस्म १४ भाग, लौहभस्म ८ भाग, ताम्रभस्म ६ भाग, स्वर्णभस्म २ भाग, चाँदीभस्म ७ भाग, अतिशुद्ध तथा अतिस्थूल हीरेकी भस्म १३ भाग, विशुद्ध स्वर्णमाक्षिक-भस्म १६ भाग, नया तथा शुद्ध काशीश १८ भाग, नया शुद्ध नीलाथोथा ६ भाग, शुद्ध हड़ताल ४ भाग, शुद्ध मैनसिल ३ भाग, शुद्ध शिलाजीत ५ भाग, मोतीभस्म १ भाग, शुद्ध सोहागा २ भाग, ये द्रव्य लेकर पहले पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर वाकी चीजें मिलाकर वारीक चूर्ण करे और जम्वीरी नीबूके रसमें सात भावना दे। फिर इस कल्कका गोला वनाकर गोलेको दो शरावोंमें रखकर सम्पुटित कर दे। तब एक हँडीमें वालू भरके मध्यमें इस शराव-

सम्पुटको रखे और ऊपरसे भी बालू भरके हाँड़ीका मुँह बन्द कर दे। इसके नीचेसे एक दिन-रात आँच दे। स्वांगशीतल होनेपर इसे निकाल ले और मौलसिरीके बीज, छोटी कटेरी, बड़ी कटेरी, गिलोय तथा त्रिफला, इनमेंसे प्रत्येकके स्वरस तथा क्काथमें सात-सात बार भावना दे। फिर विधारेके स्वरस, अपराजिताके रस तथा रोहू मछलीके पित्तमें क्रमशः सात-सात बार भावना दे। ऐसा करनेसे वारिशोषण रस सिद्ध हो जाता है। देवता गुरु, संन्यासी तथा ब्राह्मणोंका पूजन करके मिर्चके चूर्णमें इसकी दो रत्तीकी मात्रा दे तो घोर सन्निपातसे मूर्छित मनुष्य भी चैतन्य हो उठता है। कफके सभी रोगों ग्रहणी, अग्निमान्द्य तथा तिल्लीरोगमें भी इसे दे। पाण्डुरोगमें त्रिकटु तथा त्रिफलाके क्काथमें इसे दे सकते हैं। शूलरोग और विशेष करके उदावर्त्तरोगमें तथा महाभयंकर एवं दुष्ट कुष्ठरोगमें कठूमरके रसमें इसे दे। यह अग्नि बढ़ाता, शोभा देता और बल, वर्ण तथा भूख बढ़ाता है। यह साक्षात् धन्वन्तरिभगवानका बनाया हुआ अति दुर्लभ रस है। वैद्यजन कुछ भी सन्देह न करके सर्वत्र इसका उपयोग करें ॥ ८६—१०४ ॥

सर्वतोभद्र रस

सूतं गन्धं तपनगगनं कान्तलौहस्य चूर्णं
कृत्वैकध्यं दृषदि मथितं शृङ्गवेरस्य वारा ।
युञ्ज्याद्रोगे यकृति गुदजे प्लीह्नि सर्वज्वरेषु
शोथे पाण्डौ क्रिमिकृतगदे सर्वतः कामलायाम् ॥ १०५ ॥
कासे श्वासे च मेहे जलजठरगदे सर्वदोषप्रसूते ।
ख्यातो योगः सुरमणिकृतः सर्वतोभद्रनामा ॥ १०६ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म तथा कान्तलौहभस्म, ये द्रव्य समभाग लेकर पहले पारा-गंधककी कज्जली करे। तदनन्तर अन्य द्रव्य मिला तथा अदरखका रस डालकर पत्थरके खरलमें भलीभाँति घोंटे। फिर सुखाकर चूर्ण कर ले। उचित मात्रामें इस रसका सेवन करनेसे यकृत्, बवासीर, तिल्ली, सर्वज्वर, शोथ, पांडु, क्रिमिजनित रोग, कामला, कास, श्वास, प्रमेह,

जलोदर तथा सर्वदोषज उदररोग नष्ट हो जाते हैं। यह सर्वतोभद्रनामक योग सुरमणि अर्थात् स्वयं इन्द्रने बनाया था ॥ १०५॥१०६ ॥

इति प्लीहारोगचिकित्सा समाप्ता ।

अथ शोथरोगचिकित्सा।

त्रिकट्वाद्य लौह

त्रिकटु त्रिफला दन्तीमार्गत्रिमदशुण्ठकैः।
पुनर्नवासमायुक्तं शोथं हन्ति सुदुस्तरम्।
लौहं शोथोदरस्थौल्यजलोदरनिवारणम् ॥ १ ॥

सोंठ मिर्च, पिप्पली, हरड़, बहेड़ा, आँवला, दन्ती, अपामार्ग, चीता, मोथा, वायविडंग, सूखी मूली तथा पुनर्नवा इनमेंसे प्रत्येक द्रव्यका चूर्ण समभाग और सबके समान लौहभस्म लेकर घोंटे। इसे खानेसे दुस्तर शोथरोग नष्ट हो जाता है। यह त्रिकट्वाद्य उदररोग, स्थूलता तथा जलोदर रोगको भी निवृत्त करता है ॥ १ ॥

कटुकाद्य लौह

कटुकी त्र्यूषणं दन्ती विडङ्गं त्रिफला तथा।
चित्रको देवकाष्ठञ्च त्रिवृद्वारणपिप्पली ॥ २ ॥
तुल्यान्येतानि चूर्णानि द्विगुणं स्यादयोरजः।
क्षीरेण पीतमेतत्तु श्रेष्ठं श्वयथुनाशनम् ॥ ३ ॥

कुटकी, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, दन्तीमूल, वायविडंग, हरड़, बहेड़ा, आँवला, चीता, देवदारु, निसोथ तथा गजपीपल, इन द्रव्योंका चूर्ण समभाग और सबकी दुगुनी लौहभस्म ये पदार्थ एकत्र करके घोट ले। इस कटुकाद्य लौहको यदि दूधसे खाय तो सूजन नष्ट होती है ॥ २ ॥ ३ ॥

त्र्यूषणाद्य लौह

अयोरजस्त्र्यूषणयावशूकचूर्णञ्च पीतं त्रिफलारसेन।
शोथं निहन्यात्सहसा नरस्य यथाऽशनिर्वृक्षमुदीर्णवेगः ॥ ४ ॥

सोंठ, मिर्च, पिप्पली, जवाखार ये सभी चीजें समभाग और सबके बराबर

लौहभस्म घोंटकर रखे। त्रिफलाके रससे इस त्र्यूषणाद्य लौहको खाय तो शीघ्र ही सूजन ऐसे नष्ट होती है, जैसे प्रवल विजली वृक्षको उखाड़ डालती है ॥४॥

सुवर्चलाद्य लौह

सुवर्चला व्याघ्रनखं चित्रकं कटुरोहिणी ॥ ५ ॥
चव्यञ्च देवकाष्ठञ्च दीप्यकं लौहमेव च।
शोथं पाण्डुं तथा कासमुदराणि निहन्ति च ॥ ६ ॥

सूर्यमुखी, बघनखी, चीता, कटुकी, चव्य, देवदारु और अजवायन, ये सभी द्रव्य समभाग और सबके समान लौहभस्म मिलाकर रखे। इसे खानेसे शोथ, पाण्डु, कास तथा उदररोग नष्ट हो जाते हैं ॥ ५ ॥ ६ ॥

क्षारगुटिका

क्षारद्वयं स्याल्लवणानि पञ्च चत्वार्य्ययोव्योषफलत्रिकञ्च।
सपिप्पलीमूलविडङ्गसारं मुस्ताऽजमोदाऽमरदारुविल्वम् ॥ ७ ॥
कलिङ्गकश्चित्रकमूलपाठा यष्ट्याह्वयं सातिविषं पलाशम्।
सहिङ्गुकर्षं त्वतिसूक्ष्मचूर्णं द्रोणं तथा मूलकशुण्डकानाम् ॥ ८ ॥
स्याद्भस्मनस्तत्सलिलेन साध्यमालोड्य यावद्घनमप्यदग्धम्।
स्त्यानं ततः कोलसमाञ्च मात्रां कृत्वा तु शुष्कां विधिना प्रयुञ्ज्यात् ॥९॥
प्लीहोदरं श्वित्रहलीमकार्शःपाण्ड्वामयारोचकशोथशोषान्।
विसूचिकागुल्मगराश्मरीश्च सश्वासकासान्प्रणुदेत्सकुष्ठान् ॥१०॥
सौवर्चलं सैन्धवञ्च विडमौद्भिदमेव च।
सामुद्रलवणञ्चैव जलमष्टगुणं भजेत् ॥ ११ ॥

जवाखार, सज्जीखार, पाँचों नमक तथा चारों तरहके लौह (वज्र, पाण्ड्य, तीक्ष्ण और कांत) की भस्म, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, हरड़, बहेड़ा, आँवला, पिप्पलीमूल, वायविडंग, मोथा, अजमोदा, देवदारु, वेल, इन्द्रजौ, चीता, पाठा, मुलैठी, अतीस, पलाश और हींग इनमेंसे प्रत्येक द्रव्यका चूर्ण एक-एक कर्ष ले। सूखी मूलीकी भस्म एक द्रोण (३२ सेर) जलमें घोल दे और उसे छानकर आगपर चढ़ा दे। जब पकते-पकते गाढ़ा हो जाय तो उसमें उपर्युक्त यवक्षारादि द्रव्य मिलाकर वेर जैसी गोली बना ले। इसे विधिपूर्वक एक मासा खाय तो प्लीहोदर, श्वित्र, हलीमक, अर्श, पाण्डुरोग, अरुचि, शोष, विसूचिका,

गुल्म, विष, पथरी, श्वास, कास तथा कुष्ठ ये सब रोग नष्ट हो जाते हैं। मतान्तर—इस गुटिकामें सौंचल, सेंधा, विड्, औद्भिद तथा सामुद्र, ये पांच नमक तथा भस्मसे अठगुना जल ले, यह कुछ वैद्योंका मत है ॥ ७–११ ॥

इति शोथचिकित्सा

अथ अर्बुदरोगचिकित्सा।

रौद्ररस

शुद्धसूतं समं गन्धं मर्द्यं यामचतुष्टयम्।
नागवल्लीरसैर्युक्तं मेघनादपुनर्नवैः ॥ १ ॥
लिह्यात्क्षौद्रे रसो रौद्रो गुञ्जामात्रोऽर्बुदं जयेत्।
गोमूत्रपिप्पलीयुक्तं मर्द्यं रुध्वा पुटेल्लघु ॥ २ ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक दोनों समभाग लेकर चार पहर तक घोंटकर कज्जली करे। फिर पानके रस चौराईके रस, पुनर्नवाके रस, गोमूत्र तथा पिप्पलीके क्वाथमें घोंटे। फिर उसे सुखा और सम्पुटित करके लघुपुट दे। फिर इसे निकालकर पीस ले। यदि एक रत्ती यह रस शहदमें मिलाकर चाटे तो अर्बुदरोग दूर होता है ॥ १ ॥ २ ॥

उपचारान्तर

रामबाणादिकान्योगवाहिनोऽत्र प्रयोजयेत् ॥ ३ ॥

अर्बुदरोगमें रामबाण आदि अन्य योगवाही रस भी देना चाहिए ॥३॥

इति अर्बुदरोगचिकित्सा

अथ श्लीपदरोगचिकित्सा।

नित्यानन्द रस

हिंगुलात्सम्भवं सूतं गन्धको मृतताम्रकम्।
वङ्गं तालञ्च तुत्थञ्च शङ्खं कांस्यं वराटकम् ॥ १ ॥
त्रिकटु त्रिफलालौहं विडङ्गं पटुपञ्चकम्।
चविकापिप्पलीमूलं हवुषा च वचा तथा ॥ २ ॥

शठी पाठा देवदारु एला च वृद्धदारकम् ।
एतानि समभागानि सञ्चूर्ण्य वटिकां कुरु ॥ ३ ॥
हरीतकीरसं दत्त्वा पञ्चगुञ्जामितां शुभाम् ।
एकैकां भक्षयेन्नित्यं शीतं वारि पिबेदनु ॥ ४ ॥
श्लीपदं कफवातोत्थं रक्तमांसगतञ्च यत् ।
मेदोगतं धातुगतं हन्त्यवश्यं न संशयः ॥ ५ ॥
श्रीमद्गहननाथेन निर्मितो विश्वसम्पदे ।
नित्यानन्दरसश्चायं यत्नतः श्लीपदे गदे ॥ ६ ॥

हिंगुलनिःसृत पारा और शुद्ध गन्धक दोनों समभाग ले । फिर ताम्रभस्म, वंगभस्म, शुद्ध हड़ताल, शुद्ध तूतिया, शंखभस्म, कांस्यभस्म, कौड़ीभस्म, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, हरड़, बहेड़ा, आँवला, लौहभस्म, वायविडंग, पांचों लवण, पिप्पलीमूल, हवुषा (हाऊवेर) वच, कपूर, पाठा, देवदारु, इलायची तथा विधारा प्रत्येक द्रव्यका चूर्ण पारेके समानभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे । फिर सबको एकमें मिला और हरड़के क्वाथमें सबको पीसकर पाँच-पाँच रत्तीकी गोली बनावे । इसकी एक गोली खाकर शीतल जल पिये तो कफ-वात-जनित श्लीपदरोग नष्ट हो जाता है । रक्त, मांस, मेद और धातुगत श्लीपदरोगको यह रस अवश्य नष्ट कर देता है । श्रीमान् गहननाथने इसे संसारके कल्याणार्थ बनाया था । श्लीपदरोग (फीलपाँव)के लिए यह परमोत्तम रस है ॥ १–६ ॥

कणादि वटी

कणा वचादारुपुनर्नवानां चूर्णं सबिल्वं समवृद्धदारम् ।
सम्मर्द्य चैतस्य निहन्ति वल्लः सकाञ्जिकः श्लीपदमुग्रवेगम् ॥ ७ ॥

पिप्पली, वच, देवदारु, पुनर्नवा, बेल, विधारा, इनमेंसे प्रत्येक द्रव्य सम-भाग लेकर यत्नसे घोंटे और घुँट जानेपर डेढ़ रत्ती यह रस काँजीसे खाय तो प्रबल श्लीपद भी दूर हो जाता है ॥ ७ ॥

इति श्लीपदचिकित्सा ।

अथ भगन्दररोगचिकित्सा।

रवितांडव रस

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं कुमारीरसमर्दितम्।
त्र्यहान्ते गोलकं कृत्वा ततस्तेन प्रलेपयेत् ॥ १ ॥
तयोः समं ताम्रपत्रं हण्डिकान्तर्निवेशयेत्।
तद्भाण्डं भस्मनाऽपूर्य्य चुल्ल्यां तीव्राग्निना पचेत् ॥२॥
द्वियामान्ते समुद्धृत्य चूर्णयेत्स्वाङ्गशीतलम्।
जम्बीरस्य रसैः पिष्ट्वा रुध्वा सप्तपुटे पचेत् ॥ ३ ॥
गुञ्जैकं मधुनाऽऽज्येन लिह्याद्धन्ति भगन्दरम्।
मूषलीलवणञ्चानु ह्यारनालयुतं पिबेत् ॥ ४ ॥
भुञ्जीत मधुराहारं दिवास्वापञ्च मैथुनम्।
वर्जयेच्छीतलाहारं रसेऽस्मिन्रवितांडवे ॥ ५ ॥

शुद्ध पारा एक भाग १ तथा शुद्ध गन्धक दो भाग ले और दोनोंकी कज्जली करके घीगुवारके रससे तीन दिन तक घोंटे। फिर उस कल्कको इसके समभाग महीन ताम्रपत्रपर पोत दे। इस पत्रको एक हाँड़ीमें रखकर उसे एक परईसे ढाँककर सन्धि बन्द कर दे। ऊपरसे हाँड़ीमें राख भरके नीचेसे तीव्र आँच देवे। दोपहरके बाद स्वांगशीतल होनेपर निकाल ले और चूर्ण करके जम्बीरी नीबूके रसमें घोंटकर पुट दे। इसी तरह जम्भीरीके रससे घोंट-घोंटकर सात बार पुट दे। फिर इसे चूर्ण करके शीशीमें रख ले। एक रत्ती यह रस घी और शहदमें मिलाकर खाय तो भगन्दररोग नष्ट हो जाता है। दवा खानेके बाद नमक मिली कांजीमें मूसलीका चूर्ण डालकर पिये। मीठा भोजन करे। दिनमें न सोवे। मैथुन त्याग दे। ठंढी रसोई न खाय। यह रवितांडव रस है॥ १–५॥

भगन्दरहर रस

सूतस्य द्विगुणेन शुद्धबलिना कन्यापयोभिस्त्र्यहं।
शुद्धं ताम्रमयः समस्ततुलितं पात्रे निधायोपरि।
स्वेद्यं यामयुगञ्च भस्मपिठरे निम्बूजलैः सप्तधा
साकं तत्पुटयेद्भगन्दरहरो गुञ्जोन्मितः स्यादिति ॥ ६ ॥

शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग ले और कज्जली करके सबके बराबर ताम्र तथा लौहभस्म मिलावे। इन सबको घोंट और गोला बनाकर एक शरावसम्पुटमें सम्पुटित करे। फिर एक हाँड़ीको राखसे भरके उसमें शराव-सम्पुटको रख दे और दो पहर तक स्वेदन करे। तदनन्तर उसमेंसे निकालकर नीबूके रसमें सात बार घोंट-घोंटकर पुट दे। यह भगन्दरहर रस एक रत्ती नित्य खानेसे भगन्दररोग नष्ट हो जाता है ॥६॥

इति भगन्दरचिकित्सा।

अथोपदंशचिकित्सा

उपदंश निवारणकी साधारण विधि

स्निग्धस्विन्नशरीरस्य ध्वजमध्ये शिराव्यधः।
जलौकःपातनं वा स्यादूर्ध्वाधः शोधनं तथा ॥ १ ॥
सद्यो निर्जितदोषस्य रुक्शोथावुपशाम्यतः।
पाको रक्ष्यः प्रयत्नेन शिश्नक्षयकरो हि सः ॥ २ ॥

उपदंशरोगीके लिए स्नेहन तथा स्वेदन करानेके बाद लिङ्गके मध्यकी शिरा बींधने अथवा जोंक लगाकर दुष्ट रक्त निकलवानेका उपाय करना चाहिये। वमन और विरेचनादिसे दोषोंको निकलवाये हुए उपदंशरोगी-की पीड़ा तथा सूजन शीघ्र शान्त हो जाती है। लिंगपर उत्पन्न फुंसियोंको पकनेसे बचाये। क्योंकि उनका पकना लिंगके लिए घातक होता है ॥१॥२॥

धावनकषाय

त्रिफलायाः कषायेण भृङ्गराजरसेन वा।
व्रणप्रक्षालनं कुर्य्यादुपदंशप्रशांतये ॥ ३ ॥

त्रिफलाके काढ़े अथवा भँगरेके रससे उपदंशका घाव धोनेसे रोग शीघ्र शान्त हो जाता है ॥३॥

लेप

दहेत्कटाहे त्रिफलां समांशां मधुसंयुताम्।
उपदंशे प्रलेपोऽयं सद्यो रोपयति व्रणम् ॥ ४ ॥

एक लोहेकी कड़ाहीमें त्रिफला डालकर नीचेसे आँच दे। जब त्रिफला जलकर कोयला हो जाय, तब शहदमें घोंटकर मरहम बना ले। इसे लगानेसे उपदंशकी फुंसीके घाव जल्द भर जाते हैं ॥ ४ ॥

भैरव रस

शुद्धसूतं ग्रहीतव्यं रक्तिकाशतमात्रकम्।
त्रिगुणां शर्करां लौहे निम्बदण्डेन मर्दयेत् ॥ ५ ॥
याममात्रं ततो दद्यात् श्वेतं खदिरचूर्णकम्।
सूततुल्यं ततः कुर्य्यान्मर्दनात्कज्जलोपमम् ॥ ६ ॥
विंशतिर्वटिकाः कार्य्याः स्थाप्या गोधूमचूर्णके।
निःशेषनिःसृता ज्ञात्वा पिडकास्ताः कलेवरे ॥ ७ ॥
भैरवं देवमभ्यर्च्य बलिं तस्मै प्रदाय च।
विधाय योगिनीपूजां दुर्गामभ्यर्च्य यत्नतः ॥ ८ ॥
वटिकास्ताः प्रयोक्तव्या भिषजा जानता क्रियाम्।
दिवसत्रितयं दद्यात्तिस्रस्तिस्रो विजानता ॥ ९ ॥
चतुर्थाच्च समारभ्य एकामेकां प्रयोजयेत्।
एवं चतुर्दशदिने नीरोगो जायते नरः ॥ १० ॥
पथ्यं शर्करया सार्द्धमुष्णान्नं घृतगन्धि च।
कुर्य्यात्साकांक्षमुत्थानं सकृद्भोजनमिष्यते ॥ ११ ॥
जलपानं जलस्पर्शं न कदाचन कारयेत्।
दुःसहायान्तु तृष्णायामिक्षुदाडिमकादिकम् ॥ १२ ॥
शौचकार्य्येऽप्युष्णवारि वाससा प्रोञ्छनं द्रुतम्।
वातातपाग्निसम्पर्कं दूरतः परिवर्जयेत् ॥ १३ ॥
मेघागमे वा शीते वा कार्य्यमेतद्विजानता।
मुखरोगे तु सञ्जाते मुखरोगहरी क्रिया ॥ १४ ॥
श्रमाध्वभाराध्ययनं स्वप्नालस्यानि वर्जयेत्।
ताम्बूलं भक्षयेन्नित्यं कर्पूरादि सुवासितम् ॥ १५ ॥
क्रिया श्लेष्महरी युक्ता वातपित्तविरोधिनी।
लवणं वर्जयेदम्लं दिवानिद्रां तथैव च ॥ १६ ॥

रात्रौ जागरणञ्चैव स्त्रीमुखालोकनं तथा ।
सप्ताहद्वयमुत्क्रम्य स्नानमुष्णाम्बुना चरेत् ॥ १७ ॥
पथ्यं कुर्य्याद्धितमितं जाङ्गलानां रसादिभिः ।
व्यायामाद्यं वर्जनीयं यावन्न प्रकृतिर्भवेत् ॥ १८ ॥
एवं कृतविधानस्तु यः करोत्येतदौषधम् ।
स एव पापरोगस्य पारं याति जितेन्द्रियः ॥ १९ ॥
पिडका विलयं यान्ति बलं तेजश्च वर्द्धते ।
रुजा च प्रशमं याति ग्रन्थिशोथश्च शाम्यति ॥ २० ॥
अस्थ्नां भवति दार्ढ्यञ्च आमवातश्च शाम्यति ।
भैरवेन समाख्यातो रसोऽयं भैरवाख्यकः । २१ ॥

शुद्ध पारा सौ रत्ती और तीन सौ रत्ती चीनी एकमें मिलाकर लोहेकी खरलमें डाले और नीमके सोंटेसे पहर भर घोंटे । फिर उसमें सौ रत्ती सफेद कत्थेका चूर्ण डालकर इस प्रकार घोंटे कि वह मिलकर काजलके सदृश काला हो जाय । तब इसकी २० गोलियें बनाकर गेहूँके पिसानमें रखे । वैद्य जब समझ ले कि रोगीकी गुप्त इन्द्रियमें पूरे तौरसे फुंसियें निकल आयी हैं, तब भगवान भैरवकी पूजा करे तथा बलि दे । तदनन्तर चौसठों योगिनियों तथा भगवती दुर्गाका विधिवत् पूजन करके क्रियानिपुण वैद्य इस औषधिका उपयोग करे । पहले तीन दिन तक रोज तीन-तीन गोलियाँ दे और उसके बाद एक गोली नित्य खिलावे । ऐसा प्रयोग करनेसे रोगी १४ दिनमें नीरोग हो जाता है । पथ्यमें घी शक्कर मिलाकर अन्न खाय, किंतु उतना ही भोजन करे कि जिससे कुछ भूख बनी रहे । दिनमें केवल एकबार खाय और पानी एक दम न पिये । यदि प्यास असह्य हो जाय तो गन्नेका रस अथवा अनारका शर्बत पिये । शौचादिके समय भी गरम पानी काममें लावे और उसे भी गमछेसे तत्काल पोंछ दिया करे । हवा, धूप तथा अग्निसे दूर रहे । बरसात और जाड़ेमें ही यह चिकित्सा करे । यदि मुँहमें सूजन या घाव हो जाय तो मुखरोग दूर करनेके उपचार करे । अधिक मेहनत, पैदल चलना, बोझ उठाना, पढ़ना, दिनमें सोना तथा आलस्यको सर्वथा त्याग दे । कपूर आदिसे सुवासित पान नित्य खाय । ऐसी क्रियायें करे, जिससे कफ-पित्तका नाश हो । वे क्रियायें ऐसी हों कि

जिनसे वात और पित्त न उभड़ सकें। नमक खाना और दिनमें सोना भी छोड़ दे। रातमें जागना और स्त्रीका मुख देखना भी अनुचित समझे। पूरे दो सप्ताह इस विधिसे रहे और गरम पानीसे नहाय। पथ्यमें उन्हीं चीजोंको ले, जो अनुकूल हों। जैसे—जंगली पशुओंका मांस और जूस आदि। जब तक रोगी प्रकृतिस्थ न हो जाय, तब तक व्यायाम आदि न करे। इस प्रकारके कठोर नियमोंका पालन करता हुआ जो जितेन्द्रिय प्राणी यह रस खाता है, वही इस पापरोगको पार करता है। प्रकृतिस्थ होनेपर लिंगकी फुंसियाँ गायब हो जातीं, बल एवं तेज बढ़ता, पीड़ा दूर हो जाती और ग्रन्थिशोथ नष्ट हो जाता है। इससे हड्डियाँ पोढ़ी हो जातीं और आमवात रोग भी शान्त हो जाता है। इस भैरव रसको स्वयं भैरवभगवानने कहा था॥ ५-२१॥

रसशेखर

पारदञ्चाहिफेनञ्च द्विद्वांदशकरक्तिकम्।
अयःपात्रे निम्बकाष्ठं मर्दयेत्तुलसीद्रवैः॥ २२॥
तस्मिन् सम्मूर्च्छिते दद्याद्दरदं रससम्मितम्।
मर्दयेच्च तुलस्यैव ततश्चैतानि दापयेत्॥ २३॥
जातीकोषफले चैव पारसीययमानिकाम्।
आकारकरभञ्चैव द्वात्रिंशद्रक्तिकाम्प्रति॥ २४॥
मर्दयेत्तुलसीतोयैरेतेषां द्विगुणं शुभम्।
दद्यात्खदिरसत्त्वञ्च वटिका चणकप्रभा॥ २५॥
सायं द्वे द्वे प्रयोज्ये च लवणाम्लञ्च वर्जयेत्।
गलकुष्ठं तथा स्फोटान् दुष्टान् गर्दभिकामपि॥ २६॥
ये स्युर्व्रणा नृणामन्ये उपदंशपुरःसराः।
तान्सर्वान्नाशयत्याशु सिद्धोऽयं रसशेखरः॥ २७॥

शुद्ध पारा और शुद्ध अफीम दोनों चौबीस-चौबीस रत्ती ले और लोहेकी खरलमें डालकर तुलसीके रसमें नीमके सोंटेसे घोटे। जब दोनों मिलकर मूर्छित हो जायँ तब शुद्ध सिंगरिफ २४ रत्ती डाल दे और पुनः तुलसीका स्वरस देकर घोंटे। इसके भी मिल जानेपर बत्तीस-बत्तीस रत्ती जावित्री, जायफल तथा खुरासानी अजवायनका चूर्ण और अकरकरहा ये सभी चीजें और तुलसीका रस

डालकर घोंटे। गाढ़ा हो जानेपर सबसे दूना सफेद कत्थाका चूर्ण डालकर चनेके बराबर गोलियें बना ले। यही रसशेखर है। प्रतिदिन सायंकाल दो-दो गोलियोंका सेवन करे और नमक तथा खटाई त्याग दे तो गलित कुष्ठ, दुष्ट फोड़े, गर्दभिका और उपदंश (गर्मी) आदिके सभी व्रण अच्छे हो जाते हैं। यह रस सिद्धफल माना जाता है॥ २२–२७॥

प्रक्रियान्तर

योगवाहिरसान् सर्वान् सर्वरोगोदितानपि।
उपदंशे प्रयुञ्जीत तथा शोणितशोधनम्॥ २८॥

सभी रोगोंके लिए कथित रामबाण आदि योगवाही रसों तथा शोणितशोधन (फस्त खोलवाने) आदिका उपचार इसमें भी करना चाहिए॥ २८॥

इति उपदंशचिकित्सा समाप्ता।

अथ कुष्ठरोगचिकित्सा।

कुष्ठरोगनाशनमहिमा

कन्याकोटिप्रदानेन गङ्गायां पितृतर्पणे।
विश्वेश्वरपुरीवासे तत्फलं कुष्ठनाशने॥ १॥
गवां कोटिप्रदानेन चाश्वमेधशतेन च।
वृषोत्सर्गे च यत्पुण्यं तत्पुण्यं कुष्ठनाशने॥ २॥

करोड़ों कुमारी कन्याओंका दान, गयामें पितृतर्पण और काशीवासका जो फल है, वही फल कोढ़ीका कुष्ठरोग दूर करनेसे भी उपलब्ध होता है। करोड़ों गौवें दान करने, सैकड़ों अश्वमेध यज्ञ करने तथा वृषोत्सर्ग (साँड़ छोड़ने) से जो पुण्य होता है, वही फल कुष्ठनाशनसे भी मिलता है॥ १॥ २॥

गलत्कुष्ठारि रस

रसो बलिस्ताम्रमयःपुरोऽग्निः शिलाजतु स्याद्विषतिन्दुकञ्च।
वरा च तुल्यं गगनञ्च सर्वैः करञ्जबीजं सचतुष्टयञ्च॥ ३॥
सम्मर्द्य सर्वं मधुना घृतेन वृतस्य पात्रे निहितं प्रयत्नात्।
कर्षं भजेत्प्रत्यहमस्य पथ्यं शाल्योदनं दुग्धमधुत्रयञ्च॥ ४॥

विशीर्णकर्णाङ्गुलिनासिकोऽपि भवेदनेन स्मरतुल्यमूर्त्तिः।
दारापरित्याग इह प्रदिष्टो जलौदनं तत्र निवद्धमूले॥ ५॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, ताम्रभस्म, लौहभस्म, गूगुल, चीता, शिलाजीत, शुद्ध कुचला और त्रिफला, इनमेंसे प्रत्येक द्रव्य एक-एक भाग. अभ्रकभस्म ११ भाग और कंजेके बीज लेकर पहले पारे-गन्धककी कज्जली करे। फिर उपर्युक्त और चीजोंका चूर्ण तथा घी और शहद डालकर खूब घोंटे और घुँट जानेपर एक-एक कर्षकी गोलियें बनाकर घी चुपड़े हुए पात्रमें रखे। नित्य रसका सेवन करे। पथ्यमें शाली चावलका भात, दूध और शहद खाय। इस इसका सेवन करनेसे वह कुष्ठरोगी भी कामदेवके समान सुन्दर हो जाता है कि जिसके कान, उँगलियें तथा नाक गलकर गिर गयी हों। इस रसका सेवन करते समय स्त्रीप्रसंग एक दम त्याग दे। यदि कुष्ठ बहुत जोर पकड़ गया हो तो पथ्यमें केवल बिना पसाया हुआ भात खाय॥ ३–५॥

उदयभास्कर रस

गन्धकेन मृतं ताम्रं दशभागं समुद्धरेत्।
ऊषणं पञ्चभागं स्यादमृतञ्च द्विभागिकम्॥ ६॥
श्लक्ष्णचूर्णीकृतं सर्वं रक्तिकैकप्रमाणतः।
दातव्यं कुष्ठिने सम्यगनुपानस्य योगतः॥ ७॥
गलिते स्फुटिते चैव विपुले मण्डले तथा।
विचर्चिकादद्रूपामाकुष्ठरोगप्रशान्तये॥ ८॥

गन्धकके द्वारा मारी हुई ताम्रभस्म १० भाग, काली मिर्चका चूर्ण ५ भाग और शुद्ध विष २ भाग लेकर तीनोंको एकमें दिन भर घोंटे। यदि उपर्युक्त अनुपानमें एक रत्ती यह रस दे तो गलत्कुष्ठ, फूटे अंगोंका कुष्ठ, विपुलमंडल-कुष्ठ, विचर्चिका, पामा तथा दाद आदि सभी कुष्ठरोग निवृत्त हो जाते हैं॥६–८॥

तालकेश्वर रस

धात्रीटङ्कणतालानां दशभागं समुद्धरेत्।
धात्र्या रसैर्मर्दयित्वा शिखरीमूलवारिणा।
सर्वकुष्ठहरः सेव्यः सर्वदा भोजनप्रियः॥ ९॥

आमला, सोहागा और शोधित हड़ताल, ये सभी द्रव्य दस-दस भाग

लेकर आँवलेके रसमें घोंटकर गोली बना ले। इसे खानेसे सब प्रकारके कुष्ठ-रोग दूर होते हैं और भोजनमें रुचि बढ़ती है ॥ ९ ॥

ब्रह्मरस

भागैकं मूर्च्छितं सूतं गन्धकं त्वग्निवागुजी।
चूर्णन्तु ब्रह्मबीजानां प्रतिद्वादशभागिकम् ॥ १० ॥
त्रिंशद्भागं गुडस्यापि क्षौद्रेण गुटिका कृता।
अयं ब्रह्मरसो नाम्ना ब्रह्महत्याविनाशनः ॥ ११ ॥
द्विनिष्कं भक्षणाद्धन्ति प्रसुप्तिकुष्ठमण्डलम्।
पातालगारुड़ीमूलं जलैः पिष्ट्वा पिबेदनु ॥ १२ ॥

मूर्छित पारा १ भाग, गंधक, चीता, बावची और ढाकके बीज, ये सभी द्रव्य बारह बारह भाग और पुराना गुड़ तीस भाग लेकर सब एकमें घोंटे। फिर इसमें शहद डालकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। नित्य इसकी एक-एक गोलीका सेवन करनेसे ब्रह्महत्या-जनित कुष्ठ, प्रसुप्ति (स्पर्शज्ञानहीनता) कुष्ठ तथा मण्डलकुष्ठ नष्ट हो जाता है। इसे खानेके बाद अनुपानमें पातालगारुडी (कड़वी लौकी) की जड़ पीसकर पीना चाहिए ॥ १०–१२ ॥

चन्द्रानन रस

सूतव्योमाग्नयस्तुल्यास्त्रिभागा गन्धकस्य च।
काकोडुम्बरिकाक्षीरैः सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥ १३ ॥
माषमात्रां गुटीं कृत्वा कुष्ठरोगे प्रयोजयेत् ॥ १४ ॥
देहशुद्धिं पुरा कृत्वा सर्वकुष्ठानि नाशयेत्।
एष चन्द्राननो नाम साक्षाच्छ्रीभैरवोदितः ॥ १५ ॥

शुद्ध पारा, अभ्रकभस्म तथा चीता ये तीनों समभाग और शुद्ध गंधक तीन भाग लेकर पारे-गन्धककी कज्जली करे। फिर सबको मिलाकर काकोदुम्बरिका (कठूमर) के दूधमें घोंटकर मासे-मासे भरकी गोली बना ले। सभी तरहके कुष्ठरोगपर इसका प्रयोग करे। देहशुद्धि करनेके बाद इसे खाय तो सब प्रकारके कुष्ठ निवृत्त होते हैं। यह चन्द्रानन रस स्वयं भैरव भगवानने आविष्कृत किया है ॥ १३–१५ ॥

कुष्ठकालानल रस

रसं बलिं टङ्कणताम्रलौहं भस्मीकृतं मागधिकासमेतम् ॥ १६ ॥
पञ्चाङ्गनिम्बेन फलत्रिकेण विभावितं राजतरोस्तथैव।
नियोजयेद्वल्लकयुग्ममानं कुष्ठेषु सर्वेषु च रोगसंघे ॥ १७ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध सोहागा, ताम्रभस्म, लौहभस्म तथा पिप्पलीका चूर्ण ये द्रव्य समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सबको एकमें घोंट-कर नीमके पंचांग (पत्ती, फूल, छाल, लता तथा जड़) के काढ़ेमें और इसके बाद त्रिफला और अमिलतासके काढ़ेमें भावना देकर तीन-तीन रत्तीकी गोली बनाकर रख ले। इसका सेवन करनेसे सब प्रकारके कुष्ठ एवं अन्य रोग भी दूर होते हैं ॥ १६ ॥ १७ ॥

वज्रवटी

शुद्धसूताग्निमरिचं सूताद्द्विगुणगन्धकम्।
काकोडुम्बरिकाक्षीरैर्दिनं मर्द्यं प्रयत्नतः ॥ १८ ॥
वराव्योषकषायेण वटीञ्चास्य समाचरेत्।
लिह्याद्वज्रवटी ह्येषा पामारोगविनाशिनी ॥ १९ ॥

शुद्ध पारा, चीताकी जड़ और काली मिर्च, ये द्रव्य समभाग और पारेकी दूनी शुद्ध गंधक लेकर कज्जली करे। फिर सबको कठूमरके दूधमें दिनभर भली-भाँति घोंटे। तदनन्तर त्रिफला और त्रिकटुके काढ़ेमें मर्दन करके गोलियें बना ले। इस वज्रवटीके सेवनसे पामारोग दूर हो जाता है ॥१८॥१९॥

चन्द्रकांति रस

पलत्रयं मृतं ताम्रं सूतमेकं द्विगन्धकम्।
त्रिकटुत्रिफलाचूर्णं प्रत्येकञ्च पलं पलम् ॥ २० ॥
निर्गुण्ड्याश्चार्द्रकद्रावैर्वह्निद्रावैर्विमर्दयेत् ।
दिनैकं तद्विशोष्याथ तुषाग्नौ स्वेदयेद्दिनम् ॥ २१ ॥
समुद्धृत्य विचूर्ण्याथ वागुजीतैलमर्दितम्।
त्रिदिनं भावयेत्तेन निष्कैकं भक्षयेत्सदा ॥ २२ ॥
चन्द्रकान्तिरसो नाम्ना कुष्ठं हन्ति न संशयः।
तैलं करञ्जबीजोत्थं वह्निगन्धकसैन्धवैः।
अनुपानं प्रकर्त्तव्यं कल्कं वा वागुजीभवम् ॥ २३ ॥

ताम्रभस्म ३ पल, शुद्ध पारा १ पल, शुद्ध गन्धक २ पल, त्रिकटु और त्रिफला, इनमेंसे प्रत्येक द्रव्य एक-एक पल लेकर कज्जली करे। इसके बाद सब चीजें मिलाकर क्रमशः एक-एक दिन सँभालू, अदरखके रस तथा चीताके काढ़ेमें भलीभाँति घोंटकर सुखा ले। इसके बाद दिन भर धानकी भूसीमें आगपर रखकर स्वेदन करे। फिर इसका चूर्ण करके तीन दिन बावचीके तेलमें घोंटे और उसी तेलमें भावना दे। यदि नित्य एक निष्क इस चन्द्रकान्ति रसका सेवन करे तो कुष्ठरोग अवश्य निवृत्त हो जाता है। कंजेके बीजका तेल, चीता, गंधक तथा सेंधानमक समभाग लेकर अनुपान करे। अथवा सोमराजीको पीसकर इसके कल्कको ही उपर्युक्त रस खानेके बाद खाय ॥ २०—२३ ॥

संकोच रस

मृतताम्राभ्रकं तुल्यं तयोः सूतं चतुर्गुणम्।
शुद्धं तन्मर्दयेत्खल्ले गोलकं कारयेत्ततः ॥ २४ ॥
त्रिभिस्तुल्यं शुद्धगन्ध लौहपात्रे क्षण पचेत्।
तन्मध्ये गोलक पाच्य यावज्जीर्णन्तु गन्धकम् ॥ २५ ॥
एतन्मृद्वग्निना तावत्समुद्धृत्य विचूर्णयेत्।
गुग्गुलुर्निम्बपञ्चांगं त्रिफला चामृता विषम् ॥ २६ ॥
पटोलं खादिरं सारं व्याधिघातं समं समम्।
चूर्णितं मधुना लेह्यं निष्कमौडुम्बरापहम् ॥ २७ ॥
रसः संकोचनामाऽयं कुष्ठे परमदुर्लभः। २८ ॥

ताम्रभस्म और अभ्रकभस्म दोनों एक-एक भाग और शुद्ध पारा ८ भाग ले। सबको एकमें घोंटकर गोला बना ले। फिर एक लोहेके पात्रमें सबकी तिगुनी यानी १० भाग शुद्ध गन्धक डालकर क्षणभर गरम करे। फिर उसमें यह गोला रखकर मन्द-मन्द आँचमें तब तक पकावे. जबतक गंधक एकदम जीर्ण न हो जाय। फिर उसे पात्रसे निकालकर घोंटे और शुद्ध गूगुल, नीमका पंचांग, त्रिफला, गुरुच, शुद्ध विष, परवलकी पत्ती, कत्था और अमिलतासका गूदा, इनमेंसे हर एक द्रव्य एक-एक भाग डाले और सबको एकमें पीसकर रख ले। यदि निष्कभर यह रस शहदमें मिलाकर चाटे तो उडुम्बर नामका

कुष्ठरोग दूर हो जाता है। यह संकोच रस कुष्ठरोगके लिए बड़ी दुर्लभ औषधि है ॥२४-२८॥

अमृतांकुर लौह

हुताशमुखसशुद्धं पलमेकं रसस्य वै।
पलं लौहस्य ताम्रस्य पलं भल्लातकस्य च ॥ २९ ॥
अभ्रकस्य पलञ्चैकं गन्धकस्य चतुःपलम्।
हरीतकीविभीतक्योश्चूर्णं कर्षद्वयं द्वयोः ॥ ३० ॥
अष्टमाषाधिकं तत्र धात्र्याः पाणितलानि षट्।
घृतञ्चाष्टगुणं लौहाद्द्वात्रिंशत्त्रिफलाजलम् ॥ ३१ ॥
एकीकृत्य पचेत्पात्रे लौहे च विधिपूर्वकम्।
पाकमेवास्य जानीयाच्छास्त्रज्ञो लौहपाकवत् ॥ ३२ ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय गुरुदेवद्विजार्च्चकः।
रक्तिकादिक्रमेणैव घृतभ्रामरमर्दितम् ॥ ३३ ॥
लौहे च लौहदण्डेन कुर्य्यादेतद्रसायनम्।
अनुपानञ्च कुर्वीत नारिकेलजलं पयः ॥ ३४ ॥
सर्वकुष्ठहरं श्रेष्ठं वलीपलितनाशनम्।
अग्निदीप्तिकरं हृद्यं कान्त्यायुर्बलवर्द्धनम् ॥ ३५ ॥
सेव्यो रसो जाङ्गललावकानां वर्ज्यं हि शाकाम्लमपि क्षारञ्च।
शाल्योदनं षष्टिकमाज्यमुद्ग क्षौद्र गुडं क्षीरमिह क्रियायाम् ॥ ३६ ॥

रससिन्दूर एक पल, लौह तथा ताम्रभस्म एक-एक पल, भेलावा एक पल, अभ्रकभस्म एक पल, शुद्ध गंधक चार पल, हर्रा और बहेड़ेका चूर्ण दो-दो कर्ष, आमलेका चूर्ण छ कर्ष आठ मासा और घी आठ पल ले। फिर त्रिफलाका क्वाथ बत्तीस पल लेकर लोहेकी कड़ाहीमें डाले और इसके साथ और सब द्रव्योंको डालकर शास्त्रज्ञ वैद्य लौहपाककी विधिसे इसका पाक करे। वह जब पककर गाढ़ा हो जाय, तब उतारकर उपर्युक्त परिमाणमें एकत्रित त्रिफला-का चूर्ण इसमें मिलाकर रख ले। तदनन्तर, गुरु, देवता तथा ब्राह्मणोंका पूजक रोगी घी और शहदमें लौहदण्डसे घोंटकर एक रत्तीसे प्रारम्भ करके अपनी सामर्थ्यभर बढ़ता हुआ सेवन करे और रोग निवृत्त होनेपर फिर उसी क्रमसे

घटावे। इस लौहका अनुपान नारियलका जल अथवा दूध है। यह अमृतांकुर लौह सभी कुष्ठोंको हरनेमें श्रेष्ठ बली (झुरियाँ) पलित (बालोंकी सफेदी) नाशक, अग्निवर्धक, हृद्य, कान्ति, आयु तथा बलदायक है। इसका सेवन करते समय जंगली पशुओं तथा बटेरके मांसका रस खाय। सभी तरहके शाक, खटाई और स्त्रीसंग सर्वथा त्याग दे। शाली और साठी चावल, घी, मूँग, शहद, गुड़ और दूध इसमें हितकारी है॥ २६–३६॥

माणिक्य रस

पलं तालं पलं गन्धः शिलायाश्च पलार्द्धकम्।
चपलः शुद्धसीसञ्च ताम्रमभ्रमयोरजः॥ ३७॥
एतेषां कोलभागञ्च वटक्षीरेण मर्दयेत्।
ततो दिनत्रयं घर्मे निम्बक्वाथेन भावयेत्॥ ३८॥
गुडूचीवालहिन्तालवानरीनीलझिण्टिकाः।
शोभाञ्जनमुराऽजाजी निर्गुण्डीहयमारकम्॥ ३९॥
एषां शाणमितं चूर्णमेकीकृत्य सरित्तटे।
मृत्पात्रे कठिने कृत्वा मृदम्बरयुते दृढे॥ ४०॥
एकाकी पाकविद्वैद्यो नग्नः शिथिलकुन्तलः।
पचेदवहितो रात्रौ यत्नात्संयतमानसः॥ ४१॥
शनैर्मध्यमवेगेन वह्निना प्रहरद्वयम्।
प्रातः सम्पूज्य मार्त्तण्डं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्॥ ४२॥
यदि भाग्यवशादेतन्माणिक्याभं शुभं भवेत्।
तद्विजानीहि भैषज्यं सर्वकुष्ठविनाशनम्।
सर्पिषा मधुना लौहपात्रे तद्दण्डमर्दितम्॥ ४३॥
द्विगुञ्जं सर्वकुष्ठानां नाशनं बलवर्द्धनम्।
शीतलं सरसं तोयं दुग्धं वा पाकशीतलम्॥ ४४॥
आनीतं तत्क्षणादाज्ञमनुपानं सुखावहम्।
वातरक्तं शीतपित्तं हिक्काञ्च दारुणां जयेत्॥ ४५॥
ज्वरान्सर्वान्वातरोगान् पाण्डुं कण्डूञ्च कामलाम्।
श्रीमद्गहननाथेन निर्मितो बहुयत्नतः॥ ४६॥

शुद्ध हड़ताल १ पल, शुद्ध गंधक १ पल मैनसिल आधा पल, शुद्ध पारा, सीसा, ताम्र, अभ्रक तथा लौह, प्रत्येककी भस्म एक-एक कर्ष लेकर पहले पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सबको एकत्रित करके बरगदके दूधमें घोंटे। घुँट जानेपर गोला बना ले और नीमके काढ़ेमें तीन दिन तक भावना दे। फिर उसमें गुरुच, सुगंधबाला, हिन्ताल, कौंच, नीलझिण्टी, सहिंजन, मुरामांसी, जीरा, सँभालू तथा कनेर, इन सबका चूर्ण एक-एक कर्ष मिलावे। अब एक मजबूत हाँड़ी ले और उसकी पेंदीमें कपड़मिट्टी कर दे। इसी हाँड़ीमें यह दवा रखे और परईसे ढाँक तथा कपड़मिट्टी करके उसका मुँह बन्द कर दे। पाकशास्त्रका विज्ञ वैद्य रात्रिके समय अकेला, एकदम नंगा और केश खोले हुए वह पात्र लेकर घरसे निकले और किसी नदीके तटपर जाकर मनको वशमें रखे हुए इसका पाक करे। दो पहर तक मध्यम आँच दे। प्रातःकालके समय मार्तण्ड (सूर्य भगवान) की पूजा करके उस स्वांगशीतल पात्रको खोले। भाग्यवश यदि पाक उत्तम होगा तो दवा माणिकके सदृश चमकीली तैयार मिलेगी। यह सभी कुष्ठोंको नष्ट करनेवाला होगा। अब उसे घी और शहदके साथ फिर लोहेके पात्रमें डाल तथा लौहदण्डसे घोंटकर रख ले। केवल दो रत्ती इस रसका सेवन करनेसे सब प्रकारके कुष्ठ निवृत्त होते और बल बढ़ता है। तालाबका ठंढा जल उबाल-कर ठंढा किया हुआ दूध अथवा तत्काल दुहा भया बकरीका दूध, ये ही इसके अनुपान हैं। यह वातरक्त, शीतपित्त, दारुण हिक्का, सब प्रकारके ज्वर, वात-रोग, पाण्डु और कामलाको नष्ट करता है। श्रीमान् गहननाथजीने बड़े यत्नके साथ इस रसका निर्माण किया था॥ ३७–४६॥

कुष्ठकुठार रस

भस्मसूतसमो गन्धो मृतायस्ताम्रगुग्गुलू।
त्रिफला च महानिम्बश्चित्रकश्च शिलाजतु॥ ४७॥
इत्येतच्चूर्णितं कुर्य्यात्प्रत्येकं शाणषोडशम्।
चतुःषष्टिकरञ्जस्य बीजचूर्णं प्रकल्पयेत्॥ ४८॥
चतुःषष्टि मृतञ्चाभ्रं मध्वाज्याभ्यां विलोडयेत्।
स्निग्धभाण्डे स्थितं खादेद्‌द्विनिष्कं सर्वकुष्ठनुत्॥ ४९॥

रसः कुष्ठकुठारोऽयं गलत्कुष्ठविनाशनः ॥ ५० ॥

रससिन्दूर, गंधक, लौह, ताम्रभस्म, शुद्ध गूगुल, त्रिफला, बकायन, चीता. शुद्ध शिलाजीत, ये सभी द्रव्य सोलह-सोलह शाण, कंजेके बीजका चूर्ण ६४ शाण और चौंसठ ही शाण अभ्रकभस्म लेकर मधु और घीमें घोंटकर किसी चिकने वर्तनमें रख ले। यदि दो निष्क इस कुष्ठकुठार रसका सेवन करे तो सब प्रकारके कुष्ठ और विशेष करके गलित कुष्ठरोग नष्ट हो जाता है ॥ ४८—५० ॥

तालेश्वर रस

गुञ्जाशंखकरञ्जचूर्णरजनीभल्लातकाचिंःशिखा
कन्यासूर्यपयः पुनर्नवरजो गन्धस्तथा सूतकम् ।
गोमूत्रे पचितं विडङ्गमरिचैः क्षौद्रञ्च तत्तुल्यक
हन्यादाशु विचर्चिकारुजमिदं कण्डूं तथा कैटिमम् ॥५१॥

शुद्ध और श्वेत गुञ्जाका चूर्ण, शंखभस्म, कंजेके बीजका चूर्ण. हल्दी, शोधित भेलावा, चीता, अपामार्ग, घीगुवार, मदारका दूध, पुनर्नवा, शुद्ध गंधक और शुद्ध पारा, ये द्रव्य समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सब चीजें एकमें मिला तथा सबसे अठगुने गोमूत्रमें डालकर पाक करे। पक जानेपर उतार ले और वायविडंग, काली मिर्च तथा पाकपदार्थके वरावर शहद मिलाकर रख ले.। उचित मात्रामें इसका सेवन करनेसे विचर्चिका, खुजली और किटिम रोग दूर हो जाता है ॥ ५१ ॥

राजतालेश्वर

नागस्य भस्म शाणैकं तोलकं गन्धकस्य च ।
द्विनिष्कं शुद्धतालस्य सर्वमेतद्गवां जलैः ॥ ५२ ॥
विपचेत्षोडशगुणैः पात्रे ताम्रमये शनैः ।
घर्मे द्विघस्रं जम्भीरकुमारीवज्रकन्दजैः ॥ ५३ ॥
रसैर्भृङ्गस्य चाम्भोभिर्युतं वल्लद्वय भयेत् ।
कुष्ठे चास्थिगते चापि शाखानासाविभुग्नके ।
स्वरभङ्गे क्षतक्षीणे मण्डलेपु महत्स्वपि । ५४ ॥
औडुम्बरं हन्ति शिवामधुभ्यां कृच्छ्रञ्च कुष्ठं त्रिफलाजलेन ।
गुडार्द्रकाभ्यां. गजचर्मसिध्मविचर्चिकास्फोटविसर्पकण्डूम् ॥५५॥

निहन्ति पाण्डुं विविधां विपादीं सरक्तपित्तां कटुकासिताभ्याम्।
खादेद्द्विजीरं त्वमृतायुतञ्च समुद्गयूषं सघृतञ्च दद्यात्। ५६।

रोहितकजटाकाथमनुपानं प्रयच्छति।
चतुर्दशदिनस्यान्ते कुष्ठं शुष्यति यत्नतः॥ ५७॥
क्षुद्बोधो जायतेऽत्यर्थमत्यर्थं सुभगं वपुः।
अत्यर्थं पच्यते भुक्तमत्यर्थं सुखमाप्नुयात्॥ ५८॥
वरुणौडुम्बरं कुष्ठमृष्यजिह्वां कपालिकाम्।
पुण्डरीकं काकणञ्च दद्रुकुष्ठं सुदुस्तरम्॥ ५९॥
स्फुटरूपं सर्वकुष्ठं महाकुष्ठं सुदारुणम्।
तथा चर्मदलं हन्याद्विसर्पं परिसर्पकम्॥ ६०॥
सिध्मं विचर्चिकां गाढां किटिमञ्च विशेषतः।
पामाञ्चालसकञ्चैव किलासञ्च विनाशयेत्।
वर्जयेत्सततं कुष्ठी मत्स्यमांसादिभोजनम्॥ ६१॥

सीसाभस्म १ शाण, शुद्ध गंधक और शुद्ध हड़ताल एक-एक तोला लेकर किसी ताम्रपात्रमें सोलहगुना गोमूत्र डालकर इन्हें पकावे। फिर जम्भीरी नीबू तथा घीगुवारका रस सेंहुड़का दूध, मानकन्दके रस और भँगरेके रस, इनमेंसे हर एकमें क्रमशः दो-दो दिन धूपमें रखकर भावना दे। गाढ़ा होनेपर तीन-तीन रत्तीकी गोलियें वना ले। नित्य एक गोलीका सेवन करनेसे हड्डी तक पहुँचा हुआ कुष्ठ, हाथ-पैर आदिका शाखागत कुष्ठ, नाक टेढ़ी कर देनेवाला कुष्ठ, स्वरभंग, क्षतक्षीण और अतिशय विस्तृत मण्डलकुष्ठ आदि रोग दूर हो जाते हैं। हड़के चूर्ण तथा शहदके साथ इस रसका सेवन करनेसे औदुम्बर कुष्ठ, त्रिफलाके काढ़ेमें खानेसे कृच्छ्रसाध्य कुष्ठ, गुड़ और आदीमें खानेसे हस्तिचर्म कुष्ठ, सिध्म, विचर्चिका, फोड़े, विसर्प तथा कण्डू, कुटकीके चूर्ण तथा चीनीमें मिलाकर इसे खानेसे पाण्डु, विपादिका एवं रक्तपित्त रोग निवृत्त होता है। सफेद जीरा, स्याह जीरा, गुरुच तथा मूँगके यूषमें इसे खाय और रोहेड़ेकी जड़के काढ़ेका अनुपान करे तो चौदह दिनोंमें ही कुष्ठ सूख जाता है। इससे भूख खूब लगती और कोढ़ीका शरीर सुन्दर हो जाता है। खाया हुआ अन्न अच्छी तरह हजम होता और रोगीको बहुत आराम मिलता है। इस रसका

सेवन करनेसे अरुण कुष्ठ, महाकुष्ठ, औदुम्बर कुष्ठ, ऋष्यजिह्व कुष्ठ, कपाल कुष्ठ, पुण्डरीक कुष्ठ, काकण कुष्ठ, दाद, फोड़े, ग्रन्थिल कुष्ठ, चर्मदल कुष्ठ, विसर्प, परिसर्प, सिध्म, विचर्चिका, किटिम कुष्ठ, पामा, अलसक तथा किलास दूर हो जाता है। इस दवाको करते समय रोगी मांस-मछलीको सर्वथा त्याग दे ॥ ५९–६१ ॥

कुष्ठहरितालेश्वर रस

हरितालं भवेद्भागं द्वादशात्र विशुद्धिमत्।
गन्धकोऽपि तथा ग्राह्यो रसः सप्ताऽत्र दीयते ॥ ६२ ॥
कृष्णाभ्रकमपि श्लक्ष्णं खल्ले कृत्वा विमर्दयेत्।
अङ्कोठमूलनीरेण सेहुण्डीपयसाऽथवा ॥ ६३ ॥
अर्कदुग्धेन सम्पिष्य करवीरजलेन च।
काकोदुम्बरनीरेण पेषणीयो रसो भृशम् ॥ ६४ ॥
शुद्धे ताम्रकोटरे च क्षेपणीयो रसेश्वरः।
विधिवत्पच्यते यामं षट्कञ्चायं रसेश्वरः ॥ ६५ ॥
पञ्चगुञ्जाप्रमाणेन काकोदुम्बरवारिणा।
कुष्ठाष्टादशसंख्येषु देय एष भिषग्वरैः ॥ ६६ ॥
अचिरेणैव कालेन विनाशं यान्ति निश्चयः।
पथ्यसेवा विधातव्या प्रणतिः सूर्यपादयोः ॥ ६७ ॥
साधकेन तथा सेव्यो रसो रोगौघनाशनः।
पिप्पलीभिः समं दद्यात्कुष्ठरोगे रसेश्वरम् ॥ ६८ ॥

शुद्ध हड़ताल १२ भाग, शुद्ध गंधक १२ भाग, शुद्ध पारा ७ भाग, कृष्णाभ्रकभस्म ७ भाग, इन्हें एकत्र करके पारे-गन्धककी कज्जली करे। फिर सबको अंकोलकी जड़के रस, सेंहुड़के दूध, मदारके दूध, कनेरके क्वाथ तथा कठूमरके रसमें खूब घोंटे। घुँट जानेपर गोला बना ले और तामेकी दो कटोरियोंमें सम्पुटित करके पुटपाककी विधिसे छ पहर तक आँच दे। स्वांगशीतल होनेपर निकाले और चूर्ण करके रख ले। यदि कठूमरके रसमें पाँच रत्ती यह रस नित्य खाय तो थोड़े ही दिनोंमें अठारह प्रकारके कुष्ठ नष्ट हो जाते है। सदा पथ्यसे

रहे और सूर्यभगवानकी आराधना करे। यह रस अनेक रोगोंको नष्ट करता है। कुष्ठरोगमें इसे पिप्पलीचूर्णके साथ खाय ॥ ६२-६८ ॥

राजराजेश्वर रस

आतपे मर्दयेत्सूत गन्धकं मृतताम्रकम्।
सुहस्तमर्दितं तालं यावत्तत्र विलीयते ॥ ६९ ॥
भृङ्गराजद्रवं दत्त्वा दिनमात्रं विमर्दयेत्।
त्रिफला खादिरं सारममृता वागुजीफलम् ॥ ७० ॥
प्रत्येकं सूततुल्यं स्याच्चूर्णीकृत्य विमर्दयेत्।
मध्वाज्याभ्यां लौहपात्रे कर्षाभ्यां भक्षयेत्ततः ॥ ७१ ॥
दद्रूकिट्टिमकुष्ठानि मण्डलानि विनाशयेत्।
द्विगुञ्जेन निहन्त्याशु राजराजेश्वरो रसः ॥ ७२ ॥

शुद्ध पारा शुद्ध गंधक, ताम्रभस्म, शुद्ध हड़ताल, सभी चीजें समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सबको एकमें घोंटे और जब सब एक-दिल हो जाय, तब दिन भर भँगरेके रसमें घोंटे। फिर त्रिफला, खैर, गुरुच तथा बावची, इनमेंसे प्रत्येक वस्तु पारेका समभाग ले और चूर्ण करके इसमें मिला दे। यदि दो रत्ती यह रस दो कर्ष मधु तथा घीके साथ लोहेके पात्रमें घोंटकर खाय तो दाद, किटिमकुष्ठ तथा मण्डलकुष्ठ रोग दूर हो जाते हैं। इसका नाम राजराजेश्वर रस है ॥ ६९-७२ ॥

पारिभद्र रस

मूर्छितं सूतकं धात्रीफलं निम्बस्य चाहरेत् ॥ ७३ ॥
तुल्यांशं खादिरैः क्वाथैर्दिनं मर्द्यञ्च भक्षयेत्।
निष्कैकं दद्रुकुष्ठघ्नः पारिभद्राह्वयो रसः ॥ ७४ ॥

मूर्छित पारा (रससिन्दूर) आँवला और नीमके फल, ये चीजें समभाग लेकर खरल करे और खैरके काढ़ेमें दिन भर घोंटे। यदि एक निष्क यह रस खाय तो दाद तथा सभी प्रकारके कुष्ठ निवृत्त हो जाते हैं। इसका नाम है—पारिभद्र रस ॥ ७३ ॥ ७४ ॥

प्रलेप

गन्धकं मूलकक्षारमार्द्रकस्य रसैर्दिनम्।
मर्दितं हन्ति लेपेन सिध्मन्तु दिनमेकतः ॥ ७५ ॥

कृष्णधुस्तूरजं मूलं गन्धतुल्यं विचूर्णयेत्।
मर्द्यं जम्वीरनीरेण लेपनं सिध्मनाशनम् ॥ ७६ ॥
अपामार्गस्य पञ्चांगं कदलीद्रवसंयुतम्।
पुटदग्धञ्च गोमूत्रैर्लेपनं दद्रुनाशनम् ॥ ७७ ॥
चक्रमर्दस्य वीजञ्च दुग्धे पिष्ट्वा विमर्दयेत्।
गन्धर्वतैलसंयुक्तं मर्दनात्सर्वकुष्ठजित् ॥ ७८ ॥

गन्धक और मूलीका क्षार दोनों समभाग लेकर दिन भर अदरखके रसमें घोंटकर लेप करे तो सिध्मकुष्ठ एक ही दिनमें लुप्त हो जाता है। काले धतूरेके बीज तथा गंधक दोनों समभाग ले और जँभीरी नीवूके रसमें घोंटकर रख ले। इसका लेप करनेसे भी सिध्मरोग निवृत्त होता है। अपामार्गका पंचांग (पत्र-पुष्प-फल-लता तथा जड़) केलेके रसमें घोंट तथा पुट देकर रख ले। गोमूत्रमें मिलाकर इसका लेप करनेसे दाद दूर हो जाती है। चकवनके बीज दूधमें पीस तथा रेंड़ीके तेलमें मिलाकर लेप करनेसे सब तरहके कुष्ठ निवृत्त हो जाते हैं ॥ ७५—७८ ॥

लंकेश्वर रस

भस्मसूताभ्रशुल्वानि गन्धं तालं शिलाजतु।
अम्लवेतसतुल्यांशं त्र्यहं दत्त्वा विमर्दयेत् ॥ ७९ ॥
मध्वाज्याभ्यां वटीं कुर्य्याद्द्विगुञ्जां भक्षयेत्सदा।
कुष्ठं हन्ति गजं सिंहो रसो लङ्केश्वरो महान् ॥ ८० ॥
त्रिफलानिम्बमञ्जिष्ठावचापाटलमूलकम्।
कटुकारजनीक्वाथं चानुपानं प्रयोजयेत् ॥ ८१ ॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, शुद्ध गंधक शुद्ध हड़ताल, शुद्ध शिलाजीत और अमलवेत, ये द्रव्य समभाग लेकर तीन दिन घोंटे। फिर मधु तथा घी मिलाकर दो दो रत्तीकी गोलियें वना ले। यदि नित्य इसका सेवन करे तो कुष्ठरोग ऐसे भागता है, जैसे सिंहको देखकर हाथी भागते हैं। इसका नाम है—लंकेश्वर रस। नित्य यह रस खानेके वाद त्रिफला, नीम, मंजीठ, वच, पाटलकी जड़, कुटकी और हल्दी, ये चीजें समभाग ले और काढ़ा वनाकर इसका अनुपान करना चाहिये ॥७९—८१ ॥

भूतभैरव रस

शुद्धाः पञ्चदशात्र तालकमिताः शुद्धाश्च षड्गन्धकाः
सप्ताष्टौ नव तिन्तिडीयकफलात्काठिल्लकानां दश।
सेहुण्ड्यर्कपयोभिरेव सततं सञ्चूर्ण्य तद्भाव्यते
रोहीतस्य जटारसेन मृदितं श्लक्ष्णं ततः खल्लितम् ॥८२॥
एकीकृत्य समस्तमेतदपि तट्टङ्कैकमेतज्जये-
त्पश्चाद्वासविशुद्धवारिसहितं किञ्चिच्च तत्पीयते।
ताम्बूलं शशिखण्डमण्डितवटीं मिश्रं ततः स्वापयेत्
शय्यायां मृगलोचनापरिवृतः कर्माणि सम्पादयेत् ॥८३॥
देहं वीक्ष्य सुखं मुखं न विरसं विज्ञाय सम्यक्सुधीः
छागीदुग्धमिहापि तं ननु दिनं तक्रञ्च तत्पाययेत्।
नित्यं शान्तमिदं करोति नियतं सर्वौषधैर्वर्जितं
सामग्रामसमग्रसंभ्रमितरं नीलञ्च पीतारुणम् ॥ ८४ ॥
श्वेतं स्फीतमनल्पकं भृशमिति प्रायः क्रिमिव्याकुलं
गन्धालिप्रतिमं खटीकसदृशं कुष्ठञ्च चोत्सादयेत्।
कुष्ठाष्टादश भूतभैरव इति ख्यातः क्षितौ हन्ति च
वातव्याधिनिकृन्तनः कफकृतान्कुष्ठान्विशेषानयम् ॥८५॥
हन्तीति ज्वरमुग्ररूपमधिकं दाहादिकञ्चामयं।
कुर्य्याद्रूपमनङ्गरङ्गगुणभृद्भृङ्गास्पदं विग्रहम् ॥ ८६ ॥
एवं स मासात्कुरुते समासात्पथ्यञ्च तथ्यं सकलं करोति।
भुञ्जीत भक्तं सततं प्रयुक्तं घृतं शृतं वा विकृतं तदेव ॥८७॥
स्वच्छन्ददुग्धेन सुखेन जग्ध पथ्यान्नमेतत्प्रवदन्ति सन्तः।
कुष्ठस्य दुष्टस्य निराकरोति गात्रञ्च कुर्य्याच्छुभगन्धयुक्तम् ॥८८॥

शुद्ध हड़ताल १५ भाग, शुद्ध गंधक ६ भाग, नयी इमली १५ भाग, करैला १० भाग, इन सबको एकमें पीसकर मदार और सेंहुड़के दूधमें घोंटे। इसके बाद रोहेड़ेके रसमें घोंटकर रख ले। एक टंक (४ माशे) यह रस कपड़ेमें छान तथा शुद्ध जलमें मिलाकर पिये और कपूर पड़ा हुआ पान खाय। फिर मृगनयनी सुन्दरियोंसे घिरी हुई शय्यापर सोवे। तत्पश्चात् जब शरीर

सुखी रहे और मुख विरस न हो, तब रोगी बकरीका दूध और मंठा पिये। यह रस नित्य शान्ति देता है। विविध औषधियोंसे भी जो रोग न छूटा हो, आमवातयुक्त, सबसे प्रबल, नील, पीत, रक्त, श्वेत, अधिक सूजनयुक्त, अधिक स्थानव्यापी, क्रिमियोंयुक्त, गंधप्रसारिणीके पत्र सदृश गंधवाला, स्फटिक सदृश आदि अठारह प्रकारके कुष्ठोंको यह रस नष्ट कर देता है। यह रस 'भूतभैरव' इस नामसे संसारमें प्रसिद्ध है। यह वातव्याधि और विशेष करके कफजनित कुष्ठ रोगोंका शमन करता है। इससे उग्र ज्वर और दाहादि व्याधियें भी दूर होती हैं। इसके प्रतापसे शरीर कामदेव सरीखा सुन्दर और कमल सदृश कोमल हो जाता है। पथ्यमें सर्वदा घृतमिश्रित अन्न, खौलाया भया दूध अथवा रुचे तो दूधके बने पदार्थ ही खाय। ऐसा करनेसे कुष्ठरोग निवृत्त हो जाता और शरीरसे सुगन्धि निकलने लगती है॥ ८२—८८॥

अर्केश्वर रस

पलानीशस्य चत्वारि बलेर्द्वादश तावती।
ताम्रस्य चक्रिका देया तस्याप्यूर्ध्वं शरावकम्॥ ८९॥
दत्त्वा विबद्धभाण्डस्थं पूरयेद्भस्मना दृढम्।
अग्निं प्रज्वालयेद्यामद्वयं शीतं विचूर्णयेत्॥ ९०॥
पुटेद्द्वादशधा सूर्यदुग्धेनालोडितं पुनः।
वरापावकभृङ्गाणां त्रिभिर्द्रावैर्विभावयेत्॥ ९१॥
अयमर्केश्वरो नाम्ना रक्तमण्डलकुष्ठजित्॥ ९२॥

शुद्ध पारा ४ पल और शुद्ध गंधक १२ पल लेकर कज्जली करे। फिर १२ पल ताम्रपत्र लेकर एक हाँड़ीमें रखे। उसीपर यह कज्जली बिछाकर एक कसोरेसे ढाँक दे। हाड़ीके भीतरकी बाकी जगहमें राख भर दे। अब इसे चूल्हेपर चढ़ाकर नीचेसे दो पहर आँच दे। शीतल होनेपर रसको उसमेंसे निकालकर चूर्ण कर ले और मदारके दूधमें घोंट-घोंटकर बारह बार पुट दे। तदनन्तर त्रिफलाके क्वाथ, चीते तथा भाँगके रसमें एक-एक भावना दे। यही अर्केश्वर रस है और इसका सेवन करनेसे मण्डलकुष्ठ रोग निवृत्त हो जाता है॥ ८९–९२॥

महातालेश्वर रस

तालताप्यशिलासूतं शुद्धं टङ्कणसैन्धवम् ।
समं सञ्चूर्णयेत्खल्ले सूताद्द्विगुणगन्धकम् ।
गन्धाद्द्विगुणलौहञ्च जम्बीराम्लेन मर्दयेत् ॥ ९३ ॥
ततो लघुपुटे पाच्यं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
त्रिंशदंशं विषञ्चात्र क्षिप्त्वा सर्वं विचूर्णयेत् ॥ ९४ ॥
माहिषाज्येन संमिश्रं निष्कार्धं भक्षयेत्सदा ॥ ९५ ॥
मध्वाज्यैर्वागुजीचूर्णं कर्षं लिह्यात्ततः परम् ।
सर्वान्कुष्ठान्निहन्त्याशु महातालेश्वरो रसः ॥ ९६ ॥

शुद्ध हड़ताल, स्वर्णमाक्षिकभस्म, शुद्ध मैनसिल, शुद्ध पारा, शुद्ध सोहागा, सेंधानमक, ये सभी चीजें समभाग लेकर शुद्ध गंधक दो और लौहभस्म चार भाग ले । सर्वप्रथम पारे-गंधककी कज्जली करे । फिर सबको एक साथ जँभीरी नीबूके रसमें घोंटकर लघुपुटपाककी विधिसे पकावे । स्वांगशीतल होनेपर निकाल ले और सबका तीसवाँ अंश शुद्ध विष मिला तथा खरल करके रख ले । नित्य आधा निष्क (दो मासा) यह रस भैंसके घीमें मिलाकर खाय और बादमें एक कर्ष वागुजी (सोमराजी) का चूर्ण मधु तथा घीमें मिलाकर चाटे । यह महातालेश्वर रस सब प्रकारके कुष्ठरोगोंको मार भगाता है ॥ ९३–९६ ॥

विजयभैरव रस

सप्तकञ्चुकनिर्मुक्तमूर्ध्वं शुद्धरसेन्द्रकम् ।
मृत्कटाहान्तरे तत्तु स्थापयेच्च समन्त्रकम् ॥ ९७ ॥
सूताद्द्विगुणितं तालं कूष्माण्डद्रवशोधितम् ।
दोलायन्त्रेण तैलादौ सप्तधा परिशोधितम् ॥ ९८ ॥
दत्त्वाऽऽप्लाव्य द्रवैर्झिण्ट्याः किञ्चिदाप्लाव्य युक्तितः ।
तयोर्द्विगुणं भस्म पलाशस्य परिक्षिपेत् ॥ ९९ ॥
पुनर्झिण्टीद्रवेणैव सर्वमाप्लाव्य यत्नतः ।
खाखसाकैरसैर्भूयः परिप्लाव्य च पाकवित् ॥ १०० ॥

पचेदवहितो वैद्यः शालाङ्गारेण यत्नतः ।
चतुर्विंशतियामन्तु पक्त्वा शीतलतां नयेत् ॥ १०१ ॥
अवतार्य्य काचपात्रे विधाय तदनन्तरम् ।
प्रयत्नेन कृतप्रायश्चित्तः शोधितदेहकः ॥ १०२ ॥
सिताहरीतकीयुक्तं खादेद्रक्तिचतुष्टयम् ।
रक्तिकैकक्रमेणैव वर्द्धयेद्दिनसप्तकम् ॥ १०३ ॥
मधूदकं पिबेच्चानु नारिकेलजलञ्च वा ।
जिङ्गिनीसम्भवं क्वाथमथवा क्षौद्रनागरम् ॥ १०४ ॥
अभ्यङ्गं सुरभितैलैः कुर्य्यात्ताम्बूलचर्वणम् ।
पवनानलसूर्यांशुमत्स्यमांसदधीनि च ॥ १०५ ॥
शाकं ककारपूर्वञ्च वर्जयेन्मतिमान्नरः ।
वातरक्तमामसिश्रमामञ्चपि सुदारुणम् ॥ १०६ ॥
सर्वकुष्ठञ्चाम्लपित्तं विस्फोटञ्च मसूरिकाम् ।
विजयाख्यो रसो नाम्ना हन्ति दोषानसृग्दरान् ॥ १०७ ॥

सप्त कंचुकहीन और ऊर्ध्वपातन विधिसे उड़ाया हुआ पारा १ भाग लेकर मंत्रोच्चारणपूर्वक एक मिट्टीकी कड़ाहीमें डाले। फिर सफेद कुम्हड़ेके जलसे शोधित और तैल आदिमें डालकर दोलायन्त्र द्वारा सात बार शोधित हड़ताल २ भाग ले। ऊपरसे नीलझिण्टीका रस डालकर उसे तर कर दे और पारा तथा हड़तालकी दुगुनी पलासकी भस्म और फिर थोड़ा-सा नीलझिण्टीका रस डालकर उसे भिगो दे। उसके ऊपरसे पोस्तेके दाने तथा मदारके रससे पात्र-को भर दे। अब पाकविद्यामें निपुण वैद्य इस पात्रको साखू लकड़ीके कोयलोंकी आँचपर रखकर पकावे। इस तरह पूरे २४ घण्टे आँच देकर उतारे और शीतल होनेपर रसको निकालकर काँचकी शीशियोंमें रख ले। इसके बाद रोगी प्रयत्नपूर्वक प्रायश्चित्त करे और देहशुद्धि करके मिश्री और हरीतकीके चूर्णमें चार रत्ती विजयभैरव मिलाकर खाय। सात दिनतक क्रमशः एक-एक रत्ती बढ़ाता जाय। दवा खाकर मधुमिश्रित जल, नारियलका पानी, मंजीठका क्वाथ अथवा शहदमें सोंठ और काली मिर्च मिलाकर उसीका अनुपान करे। नित्य शरीरमें तेल लगाकर मालिश कराये। हवा, आग, दूध, मछली, मांस, दही,

शाक और ककड़ी आदि ककारादि पदार्थ त्याग दे। इसे खानेसे वातरक्त, आमदोष युक्त कुष्ठ, आमदोष, सब तरहके कुष्ठ, अम्लपित्त, फोड़ा-फुन्सी तथा प्रदररोग दूर हो जाता है! इसका नाम है—विजयभैरव रस ॥९७—१०७॥

कुष्ठारि रस

काकोदुम्बरिकाचूर्णं ब्रह्मदण्डी बलात्रयम्।
प्रत्यहं मधुना लीढं वातरक्तापहं नृणाम्॥ १०८॥
क्षरद्रक्तं चलन्मांसं मासमात्रेण सर्वथा।
गलत्पूयं पतत्कीटं त्रिटङ्कं सेव्यमीरितम्॥ १०९॥

कठूमरका चूर्ण, ब्रह्मदण्डी, तीनों बला (बला, अतिबला और नागबला) प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर खरल करे और तीन टंक (१२ मासे) यह रस शहद मिलाकर खाय तो एक महीनेमें वातरक्त, रक्त बहाता, मांस गलाता, पीब बहाता हुआ कुष्ट और जिसमें कीड़े पड़ गये हों, वह कुष्ठ भी दूर हो जाता है॥ १०८॥१०९॥

षडानन गुटिका

विषोषणं टङ्कणपारदञ्च सगन्धचूर्णञ्च समांशयुक्तम्।
जैपालचूर्णं द्विगुणं गुडाक्तं संमर्द्य सर्वं गुटिका विधेया ॥११०॥
विरेचनी सर्वविकारहन्त्री लघ्वी हिता दीपनपाचनीया।
कुष्ठे हिता तीव्रतरे हि शूले चामाशये चाश्मगते विकारे।
संशोधनी शीतजलेन सम्यक्संग्राहिणी चोष्णजलेन युक्ता ॥१११॥

शुद्ध विष, मिर्च, सोहागा, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक तथा शुद्ध जमालगोटा, ये चीजें समभाग लेकर पारे-गन्धककी कज्जली करे। फिर सबका दूना पुराना गुड़ मिला और खरल करके दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। यह गोली विरेचनी, सब विकार हरनेवाली, लघु, दीपन, पाचन तथा कुष्ठरोगमें हित करनेवाली है। यह तीव्रतर शूलका शमन करती और आमाशयके दोष तथा पथरीके रोगीको भी लाभ पहुँचाती है। यदि शीतल जलके साथ खायँ तो संशोधन करती और गरम जलके साथ खानेपर मलका संग्रह करती है॥ ११०॥ १११॥

कुष्ठनाशन रस

चिरबिल्वपत्रं पथ्या शिरीषञ्च बिभीतकम् ।
काकोदुम्बरिकामूलं मूत्रैरालोड्य फेनितम् ॥ ११२ ॥
कर्षमात्रं पिबेद्रोगी गोस्तन्या सह टङ्कणम् ।
सप्तसप्तकपर्य्यन्तं सर्वकुष्ठविनाशनम् ॥ ११३ ॥

कंजेकी पत्ती, हरीतकी, सिरसकी छाल, बहेड़ा और कठूमर, इनका चूर्ण लेकर एकमें पीस ले । एक कर्ष यह चूर्ण गोमूत्रमें घोले और जब उसमेंसे झाग निकलने लगे, तब पी जाय । इसके बाद भुना सोहागा और मुनक्का खाय । सात सप्ताह यह औषधि खानेसे सभी प्रकारके कुष्ठ अच्छे हो जाते हैं ॥ ११२ ॥ ११३ ॥

श्वित्रचिकित्सा

अथ श्वित्रस्य वक्ष्यामि नाशनोपायमुत्तमम् ॥ ११४ ॥

अब श्वित्र (श्वेत) कुष्ठको नष्ट करनेवाले उपाय बताये जायँगे ॥११४॥

विजयानन्द र

शुद्धसूतस्य भागैकं द्विभा शुद्धतालकम् ।
मृत्कटाहान्तरे पूर्वं स्थापयेच्च समन्त्रकम् ॥ ११५ ॥
द्वयोः समं पलाशस्य भस्म तस्योपरि क्षिपेत् ।
वक्त्रं मृत्कर्पटैर्लिप्त्वा शोषयेच्च खरातपे ॥ ११६ ॥
चतुर्विंशतियामन्तु पक्त्वा शीतलतां नयेत् ।
अवतार्य काचपात्रे स्थापयेदतियत्नतः ॥ ११७ ॥
विधिवत्सेवितश्चासौ हन्ति श्वित्रं चिरन्तनम् ।
सर्वकुष्ठं निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥ ११८ ॥
रसोऽयं श्वित्रनाशाय ब्रह्मणा निर्मितः पुरा ।
विजयानन्दनामाऽयं प्रसिद्धः क्षितिमण्डले ॥ ११९ ॥

शुद्ध पारा १ भाग और शुद्ध हड़ताल २ भाग, इन दोनोंको मन्त्रोच्चारण-पूर्वक एक मिट्टीकी हाँड़ीमें रखे । उसके ऊपरसे दोनोंके बराबर पलाशकी भस्म डाल दे । फिर हाँड़ीका मुख बन्दकर मजबूत कपड़मिट्टी करके कड़ी धूपमें सुखा ले । फिर हाँड़ीको भट्टीपर चढ़ावे और २४ घण्टेकी आँच देकर उतार ले

शीतल होनेपर उसमेंसे रस निकाल और घोंटकर काँचकी शीशियोंमें भर दे। यदि इसका विधिवत् सेवन किया जाय तो यह पुरानेसे पुराने श्वित्रकुष्ठ-को भी दूर कर देता है। यह सब प्रकारके कुष्ठरोगोंको ऐसे दूर करता है, जैसे सूर्यदेव अन्धकारराशिको नष्ट कर देते हैं। श्वित्ररोगको दूर करनेके लिए स्वयं ब्रह्माजीने यह रस बनाया था। संसारमें यह 'विजयानन्द' रस नामसे विख्यात है॥ ११५–११९॥

श्वित्रदद्रुपाटल लेप

अश्वहा रजनी हेम प्रत्यक्पुष्पीं प्रदाह्य च।
चूर्णञ्च स्वर्जिकाक्षारं नीरं दत्त्वा प्रपेषयेत्॥ १२०॥
प्रच्छयित्वा ततः स्थानं मण्डलाग्रेण लिम्पति।
पाटलानि पतन्त्यङ्गे विस्फोटाश्चातिदारुणाः॥ १२१॥
सम्भवन्ति तिला रक्ताः कृष्णवर्णा भवन्ति ते।
मिलन्ति स्वशरीरे च दिव्यरूपो भवेन्नरः॥ १२२॥

कनेर, हल्दी, धतूरा और अपामार्ग, इनका क्षार और सज्जी, ये चीजें समभाग लेकर एकमें पीस ले। जहाँ रोग हो, उस जगह उपलेके टुकड़ेसे खुजलाकर सलाईसे यह दवा लगा दे। इससे श्वित्रके पटल तथा दारुण स्फोट फटकर गिर जाते हैं। रोगकी जगह काले-काले तिल निकलकर कुछ दिनों बाद शरीरके रंगमें मिल जाते हैं, जिससे रोगी प्राणीका शरीर सुन्दर हो जाता है॥ १२०–१२२॥

श्वित्रहर लेप

सैन्धवं रविदुग्धेन पेषयित्वाऽथ मण्डलम्।
प्रच्छयित्वा प्रलेपोऽयं श्वित्रकुष्ठविनाशनः॥ १२३॥

सेंधानमकको यदि मदारके दूधमें पीस और मण्डलको खुजलाकर लेप कर दे तो श्वेतकुष्ठ दूर हो जाता है॥ १२३॥

मुखश्वित्रहर लेप

मुखे श्वेते च सञ्जाते कुर्याच्चेमां प्रतिक्रियाम्।
गन्धकं चित्रकाशीशं हरितालं फलत्रयम्॥ १२४॥
मुखे लिम्पेद्दिनैकेन वर्णनाशो भविष्यति॥ १२५॥

यदि मुख श्वेत हो जाय तो यह उपाय करे—गंधक, चीता, कसीस, हड़ताल तथा त्रिफला ये वस्तुयें समभाग लेकर जल से पीस ले और मुखपर लेप करे तो एक दिनमें मुँहकी सफेदी लुप्त हो जाती है ॥ १२४ ॥ १२५ ॥

अन्य लेप

गुञ्जाफलाग्निचूर्णस्य लेपनं श्वेतकुष्ठजित् ।
शिलाऽपामार्गभस्मापि लिप्त्वा श्वित्रं विनाशयेत् ॥ १२६ ॥

गुञ्जाके फल और चीता, इन दोनोंको अथवा मैनसिल और अपमार्गकी भस्मको जलसे पीसकर लेप करे तो श्वेतकुष्ठ दूर हो जाता है ॥ १२६ ॥

रसमाणिक्य

तालकं वंशपत्राख्यं कूष्माण्डसलिले क्षिपेत् ।
सप्तधा च त्रिधा वापि दध्नाम्लेन तथैव च ॥ १२७ ॥
शोधयित्वा पुनः शुष्कं चूर्णयेत्तण्डुलाकृति ।
ततः शरावके पात्रे स्थापयेत्कुशलो भिषक् ॥ १२८ ॥
वदरीपत्रकल्केन सन्धिलेपञ्च कारयेत् ।
अरुणाभं ह्यधः पात्रं तावज्ज्वाला प्रदीयते ॥ १२९ ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य माणिक्याभं हरेद्रसम् ।
तद्रक्तिद्वितयं खादेद् घृतभ्रामरमर्दितम् ॥ १३० ॥
सम्पूज्य देवदेवेशं कुष्ठरोगाद्विमुच्यते ।
स्फुटितं वलितं कुष्ठं वातरक्तं भगन्दरम् ॥ १३१ ॥
नाडीव्रणं व्रणं दुष्टमुपदंशं विचर्चिकाम् ।
नासाऽस्यसम्भवान् रोगान् क्षतान् हन्ति सुदारुणान् ।
पुण्डरीकं चर्मदलं विस्फोटं मण्डलं तथा ॥ १३२ ॥

वंशपत्र (तबकिया) हड़तालको सफेद कुम्हड़ेके पानी और खट्टी दही इन दोनोंमें डालकर सात-सात या तीन-तीन दिनकी भावना दे । इस प्रकार संशोधन करके सुखा ले । फिर कूटकर चावल जैसा महीन करके एक कसोरेमें रखे और दूसरे कसोरेसे ढाँककर वेरकी पत्तीके कल्कसे संधियें बन्द करके सुखा ले । सूख जानेपर आगमें रखकर पकावे और तबतक आँच देता रहे, जबतक कि शरावका निचला भाग अंगारेकी तरह एकदम लाल न हो जाय । स्वांग-

शीतल होनेपर सम्पुट खोले तो उसमेंसे माणिककी तरह रस निकलेगा। देवदेव विष्णुभगवानका पूजन करके दो रत्ती इस रसको यदि घी और शहदमें घोंटकर खाय तो रोगी कुष्ठरोगसे मुक्त हो जाता है। इससे फूटे हुए कुष्ठ, गलित कुष्ठ, वातरक्त, भगन्दर, नाडीव्रण, दुष्टव्रण, उपदंश, विचर्चिका, नाक और मुखके रोग, भयंकर घाव, पुण्डरीक कुष्ठ, चर्मदल कुष्ठ, विस्फोट तथा मण्डलकुष्ठ सर्वथा नष्ट हो जाता है ॥ १२७–१३२ ॥

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे 'रसायनी' भाषाटीकायां कुष्ठरोगचिकित्सा समाप्ता।

अथ शीतपित्तोदर्द-कोठरोग-चिकित्सा।

क्षुद्रयोग

यमानीगुडसंमिश्रः सूतभस्मद्विवल्लकः।
शीतपित्तं निहन्त्याशु कटुतैलविलेपनम् ॥ १ ॥

अजवायन और पुराने गुड़में दो रत्ती रससिन्दूरका सेवन करनेसे शीतपित्तरोग दूर होता है। शरीरमें कड़ुए तेलसे मालिश भी कराना चाहिए ॥१॥

सिद्धार्थरजनीकल्कं प्रपुन्नाडतिलैः सह।
कटुतैलंन सम्मिश्रमेतदुद्वर्त्तनं हितम् ॥ २ ॥

सफेद सरसों, सिलपर पिसी हल्दी, चकवनके बीज तथा काले तिल, ये चीजें समभाग ले और जलसे पीसकर शरीरमें उबटन लगावे तो शीतपित्त (जुड़पित्ती) दूर होता है ॥ २ ॥

दूर्वानिशायुतो लेपः कण्डूपामाविनाशनः।
क्रिमिदद्रूहरश्चैव शीतपित्तहरः परः ॥ ३ ॥

दूब तथा हल्दी इन दोनोंको पीसकर लेप करनेसे कण्डू, पामा, क्रिमि, दाद और शीतपित्त रोगका शमन होता है ॥ ३ ॥

कुष्ठोक्ताञ्च क्रियां कुर्यात्सर्वां युक्त्या चिकित्सकः।
शीतपित्ते तथोदर्दे कोठे चैव समासतः ॥ ४ ॥

कुष्ठरोगका निवारण करनेके लिए जो युक्तियाँ बतायी गयी हैं, शीतपित्त,

उदर्द और कोठरोगमें भी सावधानीके साथ उनका उपयोग करना चाहिए ॥ ४ ॥

इति शीतपित्तोदर्दकोठरोगचिकित्सा ।

अम्लपित्तचिकित्सा ।

अम्लपित्तान्तान्तक रस

मृतसूताभ्रलौहानां तुल्यां पथ्यां विमर्दयेत् ।
माषमात्रं लिहेत्क्षौद्रैरम्लपित्तप्रशान्तये ॥ १ ॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म और लौहभस्म, इन तीनों चीजोंको समान भाग ले और सबके बराबर हर्रेका चूर्ण लेकर एकमें मर्दन करे। यदि मासाभर यह रस शहदमें मिलाकर खाय तो अम्लपित्तरोग शान्त हो जाता है ॥ १ ॥

लीलाविलास रस

रसं बलिर्व्योम रविश्च लौहं धात्र्यक्षनीरैस्त्रिदिनं विमर्द्य ।
तदल्पघृष्टं मृदुमार्कवेण सम्मर्दयेदस्य च वल्लयुग्मम् ॥ २ ॥
हन्त्यम्लपित्तं मधुनावलीढं लीलाविलासो रसराज एषः ।
छर्दिं सशूलं हृदयस्य दाहं निवारयेदेष न संशयोऽस्ति ॥ ३ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, अभ्रक, ताम्र और लौहभस्म, ये द्रव्य समभाग लेकर पारे-गन्धककी कज्जली कर ले। इसके बाद आमला तथा बहेड़ेके रसमें तीन दिन घोंटे। फिर भाँगरेके रसमें साधारणरीतिसे खरल करके तीन-तीन रत्तीकी गोलियें बना ले। मधुमें मिलाकर इसे चाटे तो यह रसराज लीलाविलास छर्दि, शूल और हृदयकी दाहको अवश्य दूर कर देता है ॥२॥३॥

पानीयभक्तवटिका

त्रिवृता मुस्तकञ्चैव त्रिफला त्र्यूषणं तथा ।
प्रत्येकन्तु पलं भागं तदर्द्धौ रसगन्धकौ ॥ ४ ॥
लौहाभ्रकविडङ्गानां प्रत्येकञ्च पलद्वयम् ।
एतत्सकलमादाय चूर्णयित्वा विचक्षणः ॥ ५ ॥

त्रिफलायाः कषायेण वटिकां कारयेद्भिषक् ।
एकैकां भक्षयेत्प्रातस्तक्रञ्चापि पिबेदनु ॥ ६ ॥
हन्ति शूलं पार्श्वशूलं कुक्षिबस्तिगुदे रुजम् ।
श्वासं कासं तथा कुष्ठं ग्रहणीदोषनाशिनी ॥ ७ ॥

त्रिवृता (निसोथ) मोथा, हड़, बहेड़ा, आँवला, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, ये प्रत्येक द्रव्य एक-एक पल, शुद्ध पारा चार तोला और शुद्ध गंधक भी चार ही तोला ले । लौहभस्म, अभ्रकभस्म तथा वायविडंग ये तीनों दो-दो पल ले । सर्वप्रथम पारे-गंधककी कज्जली करे । फिर इन सबको एक साथ पीसकर चूर्ण करे और त्रिफलाके काढ़ेमें घोंटकर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले । नित्य प्रातःकाल एक गोली खाकर ऊपरसे मंठा पिये तो पार्श्वशूल, उदरशूल, वस्तिशूल, गुदाशूल, श्वास, कास, कुष्ठ और ग्रहणीरोग दूर हो जाता है॥४-७॥

क्षुधावती गुटिका

आशुभक्तोदकैः पिष्टमभ्रकं तत्र संस्थितम् ।
कन्दमाणास्थिसंहारखण्डकर्णरसैरथ ॥ ८ ॥
तण्डुलीयकशालिञ्चकाकमारिषजेन च ।
वृश्चीरबृहतीभृङ्गलक्ष्मणाकेशराजकैः ॥ ९ ॥
पेषणं भावनं कुर्य्यात्पुटञ्चानेकशो भिषक् ।
यावन्निश्चन्द्रकं तत्स्याच्छुद्धिरेवं विहायसः ॥ १० ॥

कृष्ण अभ्रकके चूर्णको लेकर शीघ्र तैयार होनेवाले धानकी काँजीमें रात-भर रखे और सुबह उसी काँजीमें पीसे । फिर मानकन्द, हड़जोड़ी, खण्डकर्ण (खारकोन) चौराई, शालिंचशाक, काले पत्तोंका मरसा, श्वेत पुनर्नवा, बड़ी कटेरी, भाँगरा, लक्ष्मणा तथा केशराज, इनके रसमें पीसे और इन्हींके रसमें भावना देकर अनेक बार पुट दे । जबतक अभ्रककी निश्चन्द्र भस्म न तैयार हो जाय, तबतक इसी तरह शुद्धि करता रहे । अभ्रकको शोधने और भस्म करनेकी यही विधि है ॥ ८-१० ॥

लौहशुद्धि

स्वर्णमाक्षिकशालिञ्चध्मातं निर्वापितं जले ।
त्रैफलेऽथ विचूर्ण्यैवं लौहं कान्तादिकं पुनः ॥ ११ ॥

बृहत्पत्रकरीकर्णत्रिफलावृद्धदारजैः ।
माणकन्दास्थिसंहारशृङ्गवेरभवै रसैः ॥ १२ ॥
दशमूलीमुण्डतिकातालमूलीसमुद्भवैः ।
पुटितं साधु यत्नेन शुद्धिमेवमयो व्रजेत् ॥ १३ ॥

कान्त आदि उत्तम लौहका चूर्ण ले और स्वर्णमाक्षिक तथा शालिंचशाक-के रसमें पीस और आगमें तपाकर त्रिफलाके काढ़ेमें बुझावे। फिर पठानीलोध, हस्तिकर्णी, त्रिफला, विधारा, मानकन्द, हड़जोड़ी, अदरख, दशमूल, मुण्डी तथा मुसली इनके रस तथा काढ़ेमें क्रमशः एक-एक बार घोंट तथा गजपुटमें रखकर फूँके। यत्नपूर्वक यह विधि करनेसे लौह शुद्ध होकर भस्म हो जाता है ॥ ११-१३ ॥

मण्डूरशोधनविधि

वशिरं श्वेतवाट्यालं मधुपर्णी मयूरकम् ।
तण्डुलीयञ्च वर्षाह्वं दत्त्वाधश्चोर्ध्वमेव च ॥ १४ ॥
पाक्यं सुजीर्णमण्डूरं गोमूत्रेण दिनत्रयम् ।
यथान्तर्बाष्पदग्धं स्यात्तथा स्थाप्यं दिनत्रयम् ।
एवं विशोधितं लौहकिट्टं ग्राह्यं विचूर्णितम् ॥ १५ ॥

हुरहुर, श्वेत बरियारा, गिलोय, अपामार्ग, चौराई तथा पुनर्नवा इनकी जड़, पत्ते तथा छाल एक हाँड़ीमें बिछा दे और इसके ऊपरसे सौ या अस्सी सालका पुराना मण्डूर (लौहकीट) रखकर उपरोक्त जड़, छाल तथा पत्तोंसे ढाँक दे। अब इस पात्रमें इस अन्दाजसे गोमूत्र भरके हाड़ीका मुँह परईसे ढाँककर बन्द कर दे कि तीन दिनतककी आँच पाकर भीतरके सभी द्रव्य एकदम जल जायँ। ऐसा करनेपर जब भलीभाँति पाक हो जाय तब निकालकर कूट डाले और काम पड़नेपर उपयोग मे लावे ॥ १४ ॥ १५ ॥

पारदशोधनविधि

जयन्त्या वर्द्धमानस्य आर्द्रकस्य रसेन तु ।
वायस्याश्चानुपूर्व्यैवं मर्दनं रसशोधनम् ॥ १६ ॥

जयन्ती (अरणी) वर्धमान (रेंड़) अदरख तथा मकोयके रसमें क्रमशः एक-एक बार घोंटनेसे पारा शुद्ध हो जाता है ॥ १६ ॥

गन्धकशोधनविधि

गन्धकं नवनीताख्यं चुद्रितं लौहभाजने।
त्रिधा चण्डातपे शुष्कं भृङ्गराजरसाप्लुतम्॥ १७॥
ततो वह्नौ द्रवीभूतं त्वरितं वस्त्रगालितम्।
यत्नाद्भृङ्गरसे क्षिप्तं पुनः शुष्कं विशुद्धयति॥ १८॥

आमलासार गंधकको चूर्ण करके एक लौहपात्र में रखे तथा भाँगरेके रसमें भिगो-भिगोकर सुखावे। तदनन्तर एक बर्तनमें भाँगरेका रस भरकर उस पात्रके मुखपर घीसे तर किया हुआ कपड़ा बाँध दे। इसके बाद गंधकको आँचमें पघलाकर इसी कपड़ेपर डाल दे। ऐसा करनेसे गंधक छनकर रसमें चली जायगी। उसे निकालकर सुखा ले। गंधक शोधनेकी यही विधि है॥१७॥१८॥

क्षुधावती गुटिकाकी निर्माणविधि

गगनाद्द्विपलं चूर्णं लौहस्य पलमात्रकम्।
लौहकिट्टपलार्धञ्च सर्वमेकत्र संस्थितम्॥ १९॥
मण्डूकपर्णीवशिरतालमूलीरसैः पुनः।
वरीभृङ्गकेशराजकालमारिषजैरथ॥ २०॥
त्रिफलाभद्रमुस्ताभिः स्थालीपाकाद्विचूर्णितम्।
रसगन्धकयोः कर्षं प्रत्येकं ग्राह्यमेकतः।
तन्मसृणे शिलाखल्ले यत्नतः कज्जलीकृतम्॥ २१॥
वचा चव्यं यमानी च जीरके शतपुष्पिका।
व्योषं मुस्तं विडङ्गञ्च ग्रन्थिकं खरमञ्जरी॥ २२॥
त्रिवृता चित्रको दन्ती सूर्यावर्त्तः सितस्तथा।
भृङ्गमाणककन्दाश्च खण्डकर्णक एव च॥ २३॥
दण्डोत्पला केशराजकाला कर्कटकोऽपि च।
एषामर्धपलं ग्राह्यं पटघृष्टं सुचूर्णितम्॥ २४॥
प्रत्येकं त्रिफलायाश्च पलार्धं पलमेव च।
एतत्सर्वं समालोड्य लौहपात्रे तु भावयेत्॥ २५॥
आतपे दण्डसंघृष्टमार्द्रकस्य रसैस्त्रिधा।
तद्रसेन शिलापिष्टं गुटिकां कारयेद्भिषक्॥ २६॥

बदरास्थिनिभां शुष्कां सुगुप्ताञ्च निधापयेत् ।
तत्प्रातर्भोजनादौ तु सेवितं गुटिकात्रयम् ॥ २७ ॥
अम्लोदकानुपानञ्च हितं मधुरवर्जितम् ।
दुग्धञ्च नारिकेलञ्च वर्जनीयं विशेषतः ॥ २८ ॥
भोज्यं यथेष्टमिष्टञ्च वारिभक्ताम्लकाञ्जिकम् ।
हन्त्यम्लपित्तं विविधं शूलञ्च परिणामजम् ॥ २९ ॥
पाण्डुरोगञ्च गुल्मञ्च शोथोदरगुदामयान् ।
यक्ष्माणं पञ्चकासाँश्च मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥ ३० ॥
प्लीहानं श्वासमानाहमामवातं सुदारुणम् ।
गुडी क्षुधावती सेयं विख्याता रोगनाशिनी ॥ ३१ ॥

उपर्युक्त ढंगसे शोधित अभ्रक २ पल, लौह १ पल और मण्डूर आधा पल ले। इन तीनोंको एक हाँड़ीमें रखे और मण्डूकपर्णी, हुरहुर तथा तालमूली इनका रस डालकर स्थालीपाक करे। फिर शतावर तथा मरसाका रस डालकर पाक करे। इसके बाद त्रिफला तथा मोथाका क्वाथ डालकर तीसरी वार स्थालीपाक करके सबको एकमें पीसकर चूर्ण कर ले। तब उपर्युक्त विधिसे शोधित पारा और गंधक दोनों आधा-आधा कर्ष लेकर कज्जली करे। तदनन्तर उसमें वच, चव्य, अजवायन, काला जीरा, सोंठ, काली मिर्च, पिप्पली, मोथा, वायविडंग, पिपरामूल, अपामार्ग, निसोथ, चीता, दन्ती, सफेद हुरहुर, भाँगरा, मानकन्द, खण्डकर्ण (सूरन) पीतकमल, केशराज, कलियाकड़ाकी जड़, काकड़ासिंगी, इनमेंसे प्रत्येक द्रव्यका कपड़छान चूर्ण आधा-आधा पल तथा त्रिफलाका चूर्ण डेढ़ पल ले। अब उपर्युक्त अभ्रक आदि, कज्जली एवं इन चूर्णोंको एक लौहपात्रमें डाले और अदरखका रस देकर घोंटे तथा अदरखके ही रसमें धूपमें रखकर भावना दे। इस प्रकार तीन वार घोंट-घोंटकर भावना देवे। इसके बाद फिर खरलमें डालकर अदरखके रससे मर्दन करके बेर जैसी गोलियें बना ले। सूख जानेपर सम्हालकर रख ले। नित्य प्रातःकाल भोजन करनेके पहले एक गोली खाकर काँजी पिये। इसका सेवन करते समय मीठा दूध और नारियल न खाय तो अच्छा हो। बाकी सभी चीजें खाय। चावल, खटाई तथा काँजीका विशेष उपयोग करे। इससे अम्लपित्त, विविध

भाँतिके शूल, परिणामशूल, पाण्डु, गुल्म, शोथ, उदररोग, राजयक्ष्मा, पाँचों प्रकारकी खाँसी, मन्दाग्नि, अरुचि, प्लीहा, श्वास, आनाह तथा भयंकर आमवात रोग शान्त हो जाता है। सब रोगोंको नष्ट करनेवाली यही क्षुधावती गुटिका है॥ १९–३१॥

अविपत्तिकर चूर्ण

त्रिकटु त्रिफलामुस्तं विडञ्चैव विडङ्गकम्।
एलापत्रञ्च सर्वञ्च समभागं विचूर्णयेत्॥ ३२॥
यावन्त्येतानि चूर्णानि लवङ्गं तत्समं भवेत्।
सर्वचूर्णाद् द्विगुणितं त्रिवृच्चूर्णं प्रदापयेत्॥ ३३॥
सर्वमेकीकृतं यावत्तावच्छर्करयाऽन्वितम्।
सर्वमेकीकृतं तत्तु स्निग्धभाण्डे निधापयेत्॥ ३४॥
भोजनादौ ततोऽन्ते च मध्वाज्याभ्यामिदं शुभम्।
शीततोयानुपानञ्च नारिकेलोदकं तथा॥ ३५॥
ततो यथेष्टमाहारं कुर्य्यात्क्षीररसाशनः।
अम्लपित्तं निहन्त्याशु विबद्धमलमूत्रकम्॥ ३६॥
अग्निमान्द्यभवान् रोगान् नाशयेच्चाविकल्पतः।
बलपुष्टिकरञ्चैव शूलदुर्नामनाशनम्॥ ३७॥
प्रमेहान् विंशतिञ्चैव मूत्राघातान् तथाऽश्मरीम्।
अविपत्तिकरं चूर्णमगस्त्यमुनिभाषितम्॥ ३८॥

सोंठ, मिर्च, पिप्पली, मोथा, विडलवण, वायविडंग, इलायची और तेजपात, ये द्रव्य समभाग ले और जितनी वजन इन सबकी हो, उतनी ही लौंग डाल और सबको एकमें कूटकर चूर्ण करे। सब चूर्णोंका दूना निसोथका चूर्ण उसमें मिलावे। सब इकट्ठा करनेपर जितना हो, उतनी ही शक्कर डालकर किसी चिकने पात्रमें रख दे। भोजनके आदि और अन्तमें घी और शहदके साथ इसे खाय और ऊपरसे ठंढा पानी या नारियलका जल पिये। दूध अथवा मांसरस युक्त आहार करे तो अम्लपित्त शीघ्र दूर हो जाता तथा मल-मूत्रकी रुकावट दूर हो जाती है। इससे बल बढ़ता और देह पुष्ट होती है। शूल

और अर्शरोग भी इससे निवृत्त होता है। अगस्त्यमुनिकथित यह अवि-पत्तिकर चूर्ण मूत्राघात तथा अश्मरीरोगको भी शान्त करता है ॥३२-३८॥

इत्यम्लपित्तचिकित्सा समाप्ता।

अथ विसर्प-विस्फोट-तन्तुकरोग-चिकित्सा।

कालाग्निरुद्र रस

सूताभ्रकान्तलौहानां भस्म गन्धकमाक्षिकम्।
वन्यकर्कोटकद्रावैस्तुल्यं मर्द्यं दिनावधि ॥ १ ॥
वन्यकर्कोटिकाकन्दे क्षिप्त्वा लिप्त्वा मृदा बहिः।
भूधराख्ये पुटे पश्चाद्दिनैकं तद्विपाचयेत् ॥ २ ॥
दशमांशं विषं योज्यं माषमात्रन्तु भक्षयेत्।
रसः कालाग्निरुद्रोऽयं दशाहेन विसर्पनुत् ॥ ३ ॥
पिप्पलीमधुसंयुक्तमनुपानं प्रकल्पयेत् ॥ ४ ॥

शुद्ध पारा, अभ्रकभस्म, कान्तलौहभस्म, शुद्ध गंधक और स्वर्णमाक्षिक भस्म, ये द्रव्य समभाग लेकर वनैले ककोड़ेके कन्दके रसमें दिनभर घोंटकर गोला बना ले। इस गोलेको जंगली ककोड़ेके कन्दमें गड़हा करके उसीमें रखकर उसके ऊपरसे दो अंगुल मोटी मिट्टीका लेप करके सुखा ले। अब उसे भूधरयंत्रमें रखकर दिन भर पकावे। पाक हो जानेपर निकालकर चूर्ण कर ले और चूर्णका दशमांश शुद्ध विष मिलाकर रख ले। यदि मधु तथा पिप्पली-के चूर्णमें मिलाकर एक मासा (आजकल २ रत्ती) यह रस खाय तो दस दिनमें विसर्परोग दूर हो जाता है ॥ १-४ ॥

अन्य विधि

पित्तनाशकभैषज्यं योगवाहिरसं सुधीः।
कुष्ठोद्दिष्टक्रियां सर्वामपि कुर्याद्भिषग्वरः ॥ ५ ॥

पहले पित्तनाशक, योगवाही तथा कुष्ठको नष्ट करनेके लिए जो दवायें बतायी गयी हैं, कुशल वैद्य उनका इस विसर्परोगमें भी उपयोग करे ॥ ५ ॥

वस्फोटकारि रस

गुडूचीनिम्बजैः क्वाथैः खदिरेन्द्रयवाम्बुना ।
कर्पूरत्रिसुगन्धिभ्यां युक्तं सूतं द्विवल्लकम् ।
विस्फोटं त्वरितं हन्याद्वायुर्जलधरानिव ॥ ६ ॥

गुरुच, नीम, खैर और इन्द्रजौके काढ़ेके साथ कपूर, तज, तेजपात तथा इलायचीके चूर्णमें दो वल्ल (तीन रत्ती) रससिन्दूर मिलाकर खाय तो फोड़े इस तरह नष्ट होते हैं, जैसे वायुके झोंकेसे बादल उड़ जाते हैं ॥ ६ ॥

स्नायुकारि योग

गव्यं सर्पिस्त्र्यहं पीत्वा निर्गुण्डीस्वरसं त्र्यहम् ।
विविधं स्नायुकक्षोभं हन्त्यवश्यं न संशयः ॥ ७ ॥

तीन दिन गायका घी पीकर यदि तीन ही दिन निर्गुण्डीका स्वरस पिये तो विविध प्रकारके स्नायुक रोग दूर हो जाते हैं ॥ ७ ॥

तन्तुकारि योग

सप्तपर्णशिफाकल्कपानाद्वा लेपनात्तथा ।
मुषलीमूलपानात्तु तन्तुकाख्यो विनश्यति ॥ ८ ॥

छतिवनकी जड़को पीसकर पिये या इसके कल्कका लेप करे अथवा मूसली-की जड़को पीसकर पिये तो तन्तुक (नहरुवा) रोग निवृत्त हो जाता है ॥ ८ ॥

इति विसर्प-विस्फोट-तन्तुकरोगचिकित्सा समाप्ता ।

अथ मसूरिकारोगचिकित्सा ।

दुर्लभ रस

अथ शुद्धस्य सूतस्य मूर्छितस्य मृतस्य च ।
द्विबला पिप्पली धात्री रुद्राक्षघृतमाक्षिकैः ॥ १ ॥
पापरोगान्तको योगः पृथिव्यामेव दुर्लभः ॥ २ ॥

शुद्ध पारेकी भस्म (रससिन्दूर), बला, श्वेतपुष्पवाली बला, पिप्पली, आँवला और रुद्राक्ष, ये द्रव्य समभाग लेकर चूर्ण कर ले । यदि घी और शहद

में चार रत्ती यह रस मिलाकर सेवन करे तो यह पापरोगान्तक योग मसूरिका रोगको दूर कर देता है। इस रोगको दूर करनेके निमित्त इसके टक्करकी और औषधि पृथिवीतलपर मिलना सर्वथा दुर्लभ है॥ १॥

इति मसूरिकारोगचिकित्सा समाप्ता।

अथ क्षुद्ररोगचिकित्सा।

क्षुद्ररोगनाशके उपाय

क्षुद्ररोगेषु मतिमाँस्तत्तदौषधयोगतः।
भस्मसूतं प्रयुञ्जीत तथाऽत्र योगवाहिकम्॥ १॥

बुद्धिमान् वैद्योंको चाहिए कि विविध रोगोंको नष्ट करनेवाली औषधियोंमें-से जिस किसीका उपयोग करना हो, उसमें रससिन्दूर भी मिलावे। इसके अतिरिक्त अन्य योगवाही रसोंका भी उपयोग करे॥ १॥

इतिं क्षुद्ररोगचिकित्सा।

अथ मुखरोगचिकित्सा।

चतुर्मुख रस

मृतं सूतं मृतं स्वर्णं द्वाभ्यां तुल्यां मनःशिलाम्।
विमर्दयेच्च तैलेन चातसीसम्भवेन च॥ १॥
तद्गोलं वस्त्रता बद्ध्वा लेपयेच्च समन्ततः।
अतसीफलकल्केन दोलायंत्रे त्र्यहं पचेत्।
उद्धृत्य धारयेद्वक्त्रे जिह्वादन्तास्यरोगनुत्॥ २॥

रससिंदूर और स्वर्णभस्म समभाग तथा दोनोंके बराबर शुद्ध मैनसिल लेकर सबको तीसीके तेलमें घोंटकर गोला बना ले। उस गोलेपर कपड़ा लपेट-कर उसके चारों ओर तीसी पीसकर लेप कर दे। फिर उसे दोलायन्त्रमें तीसीका काढ़ा डालकर तीन दिनोंतक आँच दे। इसके बाद निकालकर आधी-आधी रत्तीकी गोली बना ले। इसे मुखमें रखे तो जीभ, दाँत और मुखके सब रोग निवृत्त हो जाते हैं॥ १॥ २॥

पार्वती रस

पार्वतीकाशिसम्भूतो दरदो मधुपुष्पकम्।
गुडूची शाल्मली द्राक्षा धान्यभूनिम्बमार्कवम्॥ ३॥
तिलमुद्गपटोलञ्च कूष्माण्डं लवणद्वयम्।
यष्टिका धान्यकं भस्म चान्तर्दग्धं समं समम्॥ ४॥
मुखरोगं निहंत्याशु पार्वतीरस उत्तमः।
पित्तज्वरं चिरं हन्ति तिमिरञ्च तृषामपि॥ ५॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध सिंगरिफ, महुआ, गुरुच, सेमरकी जड़, मुनक्का, धनियाँ, चिरायता, भाँगरा, तिल, मूँग, परवल, सफेद कुम्हड़ा, सेंधा-नमक, सोंचल नमक, मुलैठी और धनियाँकी अन्तर्दग्ध भस्म ये सब द्रव्य सम-भाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सबको एकमें मिलाकर पीस डाले। यह रस खानेसे मुखरोग, तिमिर तथा तृष्णारोग दूर हो जाता है ॥३–५॥

मुखरोगहरी गुटिका

रसगन्धौ समौ ताभ्यां द्विगुणञ्च शिलाजतु।
गोमूत्रेण विमर्द्याथ सप्तधाऽऽर्द्रद्रवेण च॥ ६॥
जातीनिम्बमहाराष्ट्रीरसैः सिद्ध्यति पाकहा।
कणा मधुयुता हन्ति मुखरोगं सुदारुणम्॥ ७॥
गुञ्जाष्टकमिता तालुगलौष्ठदन्तरागनुत्।

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक दोनों समभाग लेकर कज्जली करे। फिर इस कज्जलीका दूना शुद्धशिलाजीत मिलाकर पहले गोमूत्र और उसके बाद अदरख-के रसमें घोंटे। तदनन्तर चमेली, नीम तथा जलपिप्पलीके रसमें घोंटकर चार-चार रत्तीकी गोली बना ले। पिप्पलीके चूर्ण और शहदके साथ यदि इसे खाय तो कठिन मुखरोग भी दूर हो जाते हैं। आठ रत्ती यह दवा खानेसे गला, ओंठ तथा दाँतके सब रोग भाग जाते हैं॥ ६–७॥

महाराष्ट्र्यादि प्रतिसारण

महाराष्ट्र्यश्वगन्धाभ्यां मुखञ्च प्रतिसारयेत्॥ ८॥
धारणात्सेवनाच्चैव हन्ति सर्वान् मुखामयान्॥ ९॥

महाराष्ट्री (जलपिप्पली) तथा असगन्ध दोनों समभाग लेकर चूर्ण करे

और अँगुलीसे इस चूर्णको मुख तथा जीभपर रगड़े तो मुखरोग मिट जाता है। मुखमें इसे रखे या खाय तो भी सब तरहके मुखरोग दूर हो जाते हैं ॥८॥९॥

प्रयोगान्तर

सर्वास्यामयजित्सेव्यो मधुना पर्पटीरसः ॥ १० ॥

यदि मधुमें मिलाकर रसपर्पटीका सेवन करे तो सब तरहके मुखरोग नष्ट हो जाते हैं ॥ १० ॥

पथ्या वटी

पथ्या वालककुष्ठञ्च गोमूत्रेण प्रसाधयेत्।
एषा च वटिका हन्ति मुखदौर्गन्ध्यसन्ततिम् ॥ ११ ॥

हरीतकी, सुगन्धवाला और कूठ ये द्रव्य समभाग लेकर चूर्ण करे और सबको अठगुने गोमूत्रमें डालकर पकावे। जब पककर गाढ़ा हो जाय तब दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। यदि यह गोली मुखमें रखकर चूसे तो मुखके विविध दुर्गन्ध नष्ट हो जाते हैं ॥ ११ ॥

इति मुखरोगचिकित्सा समाप्ता।

अथ कर्णरोगचिकित्सा।

कफकेतु रस

व्योषमिज्जलबीजञ्च शङ्खभस्म विषान्वितम्।
मरीचसदृशं खादेत्कफकेतुं महारसम् ॥ १ ॥

सोंठ, मिर्च, पिप्पली, जलबीज (समुद्रसोख), शंखभस्म और शोधित विष ये द्रव्य समभाग लेकर पीसे और मिर्चके बराबर गोली बना ले। यदि इस कफकेतु महारसका सेवन करे तो कर्णरोग दूर होते हैं ॥ १ ॥

भैरव रस

सूतं गन्धो विषञ्चैव टङ्कणं सकपर्दकम्।
मरिचेन समायुक्तञ्चार्द्रतोयेन भावितम् ॥ २ ॥
वह्निमान्द्यं चामरोगं श्लेष्माणं ग्रहणीगदम्।
सन्निपातं तथा शोथं हन्ति श्रोत्रोद्भवं गदम् ॥ ३ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शोधित विष, शुद्ध सोहागा, कौड़ीभस्म और काली मिर्च, ये द्रव्य समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सबको एकमें पीसकर अदरखके रसमें भावना दे। इसके बाद रत्ती-रत्ती भरकी गोली बना ले। इसे खानेसे मन्दाग्नि, आमरोग, कफ, ग्रहणी, सन्निपात, शोथ और कर्णरोग दूर हो जाते हैं ॥ २ ॥ ३ ॥

अन्य उपाय

योगवाहिरसाः सर्वे प्रयोक्तव्या भिषग्वरैः।
कर्णरोगेषु सर्वेषु पीनसादिषु नित्यशः ॥ ४ ॥

कर्णरोग तथा पीनस आदि रोगोंपर वैद्य लोग सभी योगवाही रसोंका युक्तिपूर्वक उपयोग करें ॥ ४ ॥

इति कर्णरोगचिकित्सा।

अथ नासारोगचिकित्सा।

पञ्चामृत रस

शुद्धसूतं समादाय गन्धभागद्वयं ततः।
त्रिभा टङ्कणञ्चापि विषं भागचतुष्टयम् ॥ १ ॥
पञ्चभागं तथा देयं मरिचस्य प्रयत्नतः।
शृङ्गवेररसैः पिष्ट्वा गुटिका पञ्चरक्तिका ॥ २ ॥
अनुपानं हितं योज्यं सर्वरोगप्रशान्तये।
जलदोषोद्भवे रोगे महत्युग्रे जलोदरे ॥ ३ ॥
सन्निपातेषु रोगेषु नासाव्याधौ सपीनसे।
व्रणशोथे व्रणे चैव उपदंशे भगन्दरे ॥ ४ ॥
नाडीव्रणे ज्वरे चैव नखदन्तविषातुरे।
पञ्चामृतरसो योज्यः सर्वरोगप्रशान्तये ॥ ५ ॥

शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, शुद्ध सोहागा ३ भाग, शुद्ध विष ४ भाग और काली मिर्च ५ भाग लेकर पहले पारे-गन्धककी कज्जली करे

फिर सब द्रव्य एकमें मिला और अदरखके रसमें घोंटकर पाँच-पाँच रत्तीकी गोलियें बना ले। यदि उपयोगी अनुपानके साथ इसका सेवन करे तो सभी रोग शान्त हो जाते हैं। जलदोषसे जायमान रोग, अतिशय उग्र जलोदर, सन्निपात, नासिकारोग, पीनसरोग, व्रणशोथ, व्रण, उपदंश. भगन्दर, नाडीव्रण (नासूर) ज्वर, नाखून और दन्तविषसे जायमान सभी रोग इस पंचामृत रसका उपयोग करनेसे शान्त हो जाते हैं ॥१–५॥

अथ नेत्ररोगचिकित्सा।

नेत्राशनि रस

अभ्रं ताम्रं तथा लौहं माक्षिकञ्च रसाञ्जनम्।
पातनायन्त्रसंशुद्धं गन्धकं नवनीतकम् ॥ १ ॥
पलप्रमाणं प्रत्येकं गृह्णीयाच्च विधानवित्।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं वैद्यैः कुशलकर्मभिः ॥ २ ॥
ततस्तु भावना कार्या त्रिफलाभृङ्गराजकैः।
ततः प्रक्षिप्य चूर्णञ्च पिप्पलीमूलयष्टिका ॥ ३ ॥
एला पुनर्नवा दारु पाठा भृङ्गं शटी वचा।
उत्पलं चन्दनञ्चैषां श्लक्ष्णचूर्णं प्रदापयेत् ॥ ४ ॥
माषमेकं प्रदातव्यं घृतश्रीमधुमर्दितम्।
मर्दनं लौहदंडेन पात्रे लौहमये दृढे ॥ ५ ॥
उष्णोदकञ्चानुपानं प्रयोक्तव्यं सुखावहम्।
यावतो नेत्ररोगांश्च पानादेव विनाशयेत् ॥ ६ ॥
सरक्ते रक्तपित्ते च रक्ते चक्षुःस्रुतेऽपि च।
नक्तान्ध्ये तिमिरे काचे नीलिकापटलार्बुदे ॥ ७ ॥
अभिष्यन्देऽधिमन्थे च पिष्टे चैव चिरन्तने।
नेत्ररोगेषु सर्वेषु वातपित्तकफेषु च।
युञ्जीत तान्न निहन्त्येव वृत्रमिन्द्राशनिर्यथा ॥ ८ ॥

अभ्रक, ताम्रभस्म, लौहभस्म, स्वर्णमाक्षिकभस्म, रसौत, पातनयंत्रसे संशोधित आमलासार गंधक, ये द्रव्य एक-एक पल लेकर सबको एकमें पीस डाले। फिर त्रिफलाके क्वाथ तथा भाँगरेके रसमें भावना दे। फिर इसमें पिप्पलीमूल, मुलैठी. इलायची, पुनर्नवा, देवदारु, पाठा, भँगरा, कचूर, वच, नीलकमल तथा चन्दन, इनमेंसे हर एक वस्तुका महीन चूर्ण मासा-मासा भर मिलावे। तत्पश्चात् इनको लोहेकी खरलमें डालकर घी और पद्ममधु डाल तथा लौहदण्डसे घोंटकर रख ले। यदि उचित मात्रामें यह रस गरम जलके साथ सेवन करे तो नेत्ररोग तुरन्त नष्ट हो जाते हैं। आँखकी लाली, रक्तपित्त, नेत्रसे जलका बहना, रतौंधी, तिमिररोग, काच, नीलिका, पटल, अर्बुद, नेत्राभिष्यन्द, अधिमन्थ, पुराना पिष्टरोग, वात, पित्त तथा कफजनित सभी तरहके नेत्ररोग इससे ऐसे नष्ट होते हैं, जैसे इन्द्रका वज्र वृक्षोंको नष्ट कर देता है॥ १–८॥

नयनामृत लौह

त्रिकटु त्रिकला शृङ्गी शटी रास्ना महौषधम्।
द्राक्षा नीलोत्पलं चैव काकोलीमधुयष्टिकम्॥ ९॥
वाट्यालं केशराजञ्च कण्टकारीद्वयं पलम्।
लौहाभ्रयोः पलं दत्त्वा वक्ष्यमाणेन भावयेत्॥ १०॥
त्रिफलायाश्च तोयेन भृङ्गराजरसेन वा।
भावयित्वा वटी कार्य्या वदरास्थिनिभा शुभा।
यावतो नेत्ररोगांश्च निहन्यान्नात्र संशयः॥ ११॥

त्रिकटु (सोंठ-मिर्च-पिप्पली) त्रिफला, काकड़ासिंगी, कचूर, रास्ना, सोंठ, दाख, नीलोफर, काकोली, मुलेठी, श्वेत बरियारा, केशराज और छोटी-बड़ी कटेरी, ये द्रव्य एक-एक पल लेकर लौह और अभ्रकभस्म भी एक-एक पल मिलावे। इन सबको कूटकर महीन चूर्ण करे। फिर त्रिफला तथा भाँगराके रसमें भावना देकर बेरकी गुठली जैसी गोलियें बना ले। इसका सेवन करनेसे सभी प्रकारके नेत्ररोग दूर हो जाते हैं—इसमें सन्देह नहीं है॥ ९–११॥

क्षतशुक्लहर गुग्गुल

अयः सयष्टीत्रिफलाकणानां चूर्णानि तुल्यानि पुरेण नित्यम्।
सर्पिर्मधुभ्यां सह भक्षितानि शुक्लानि काचानि निहन्ति शीघ्रम्॥१२॥

लौहभस्म, मुलैठी, त्रिफला और पिप्पलीका चूर्ण ये द्रव्य समभाग ले और सबके बराबर शुद्ध गूगुल मिलाकर रख ले। यदि मधुके साथ इसका सेवन करे तो घावकी सफेदी युक्त काचरोग दूर हो जाते हैं ॥ १२ ॥

तिमिहर लौह

त्रिफलापद्मयष्ट्याह्वयुक्तं सायं निषेवितम्।
लौहं तिमिरकं हन्ति सुधांशुस्तिमिरं यथा ॥ १३ ॥

त्रिफला, कमल और मुलैठी प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर चूर्ण करे और सबके बराबर लौहभस्म मिला ले। नित्य सायंकालके समय इसे खाय तो तिमिररोग ऐसे दूर होता है, जैसे चन्द्रमाके उदय होनेपर अन्धकार नष्ट हो जाता है ॥ १३ ॥

इति नेत्ररोगचिकित्सा

अथ शिरोरोगचिकित्सा।

रसचन्द्रिका वटी

त्रैलोक्यविजयावीजं वीजमुन्मत्तकस्य च।
कण्टकारीवीजकञ्च ऐञ्जलं बीजमेव च ॥ १ ॥
बीजञ्च वृद्धदारस्य समौ गन्धकपारदौ।
आर्द्रकैर्वटिका कार्य्या कलायपरिमाणतः ॥ २ ॥
एषा तोयानुपानेन प्रातः खाद्या हिताशिना।
चिरजं सर्वजञ्चैव शिरोरोगं सुदारुणम् ॥ ३ ॥
आमवातं श्लेष्मरोगं मन्यास्तम्भं गलग्रहम्।
ग्रहणीं श्लीपदं हन्ति ह्यन्त्रवृद्धिं भगन्दरम् ॥ ४ ॥
कामलां शोथपाण्डुत्वं पीनसार्शोगुदामयान्।
वासुदेवेन कथिता वटिका रसचन्द्रिका ॥ ५ ॥

धतूराके बीज, भँगके बीज, कटेरीके बीज, समन्दरफल, विधारेके बीज, शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक ये द्रव्य समभाग लेकर पारे-गन्धककी कज्जली करे। फिर सब चीजोंको अदरखके रसमें घोटकर मटर जैसी गोलियें बना ले। नित्य

प्रातःकाल ठंढे जलके साथ इसे खाय और पथ्यसे रहे तो पुराना और वात-पित्तादि किसी भी दोषसे जायमान दारुण शिरोरोग दूर हो जाता है। इसके सिवाय आमवात, कफके रोग, मन्यास्तम्भ, गलग्रह, ग्रहणी, श्लीपद (पीलपाँव) अन्त्रवृद्धि, भगन्दर, कामला, शोथ, पांडु, पीनस, ववासीर और गुदाके अन्य रोग भी दूर होते हैं। वैद्यवर वासुदेवकी कही हुई यह रसचन्द्रिका वटी है ॥ १–५ ॥

शिरोवज्र रस

पलं सूतं पलं गन्धः पलं लौहं पलं रवेः।
गुग्गुलोः पलचत्वारि तदर्द्धं त्रिफलारजः ॥ ६ ॥
यष्टीमधु कणा शुण्ठी गोक्षुरं क्रिमिनाशनम्।
तोलकं दशमूलञ्च प्रत्येकं परिकल्पयेत् ॥ ७ ॥
क्वाथेन दशमूल्याश्च यथास्वं परिभावयेत्।
घृतयोगेन कर्त्तव्या माषैकप्रमिता वटी ॥ ८ ॥
छागीदुग्धेन वा सेव्या मधुना पयसाऽथवा।
वातिकीं पैत्तिकीञ्चैव श्लैष्मिकीं सान्निपातिकीम् ॥ ९ ॥
शिरोऽर्तिं नाशयत्याशु वज्रमुक्तमिवासुरम्।
शिरोवज्ररसो नाम चन्द्रनाथेन भाषितः ॥ १० ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौहभस्म, ताम्रभस्म, ये चीजें एक-एक पल, त्रिफलाका चूर्ण दो पल, गूगुल चार पल, मुलैठी, पिप्पली, सोंठ, गोखरू, वायविडंग और दशमूल ये प्रत्येक द्रव्य एक एक तोला लेकर पारे-गंधककी कजली करे। फिर सबको एकमें मिलाकर दशमूलके रसमें भावना देकर घीके सहारे मासे-मासे भरकी गोलियें बना ले। यदि इसे बकरीके दूध, मधु अथवा जलके साथ खाय तो वातज, पित्तज, श्लेष्मज तथा सन्निपातज शिरोरोग इस तरह नष्ट हो जाते हैं, जैसे इन्द्रके हाथसे छूटे वज्रसे असुरोंका नाश हुआ था। इस शिरोवज्र रसको श्रीचन्द्रनाथजीने कहा है ॥ ६–१० ॥

चन्द्रकान्त रस

मृतसूताभ्रकं तीक्ष्णं ताम्रं गन्धं समं समम्।
स्नुहीक्षीरैर्दिनं मर्द्यं ततस्तु माषमात्रकम् ॥ ११ ॥

मधुना मर्दितं सेव्यं लौहपात्रे दिने दिने।
सूर्य्यावर्त्तादिकान् तूर्णं शिरोरोगान् विनाशयेत्॥ १२॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, लौहभस्म, ताम्रभस्म और शुद्ध गन्धक, ये द्रव्य समभाग लेकर कज्जली करे। फिर सबको एक साथ सेंहुड़के दूधमें घोंटकर मासे-मासे भरकी गोली बना ले। यदि नित्य एक गोली शहदके साथ लौहपात्रमें घोंटकर खाय तो तुरन्त सूर्यावर्त आदि शिरोरोग नष्ट हो जाते हैं॥ ११॥ १२॥

महालक्ष्मीविलास रस

लौहमभ्रं विषं मुस्तं मलत्रयकटुत्रयम्।
धुस्तूरं वृद्धदारं च बीजमिन्द्राशनस्य च॥ १३॥
द्वयं गोक्षुरकञ्चैव पिप्पलीमूलमेव च।
एतत् सर्वं समं ग्राह्यं रसे धुस्तूरकस्य च॥ १४॥
भावयित्वा वटी कार्य्या द्विगुञ्जाफलमानतः।
महालक्ष्मीविलासोऽयं सन्निपातनिवारकः॥ १५॥

इति शिरोरोगचिकित्सा।

लौहभस्म, अभ्रकभस्म, शुद्ध विष, मोथा, हर्रा, बहेड़ा, आँवला, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, धतूरेके बीज, विधारेके बीज, भाँगके बीज, बड़े और छोटे दोनों तरहके गोखरू तथा पिप्पलीमूल, ये सभी द्रव्य समभाग लेकर चूर्ण करे और धतूरेके रसकी भावना देकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। यह महालक्ष्मीविलास रस सन्निपातरोगका नाशक है॥ १३—१५॥

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे 'रसायनी' भाषाटीकायां द्वितीयोऽध्यायः॥ २॥

अथ तृतीयोऽध्यायः।

अथ प्रदररोगचिकित्सा।

प्रदरान्तक लौह

हरितालं लौहताम्रे वङ्गमभ्रं वराटिका।
त्रिकटु त्रिफला चित्रं विडङ्गं पटुपञ्चकम्॥ १॥
चविका पिप्पली शङ्खं वचा हवुषपाकलम्।
शटी पाठा देवदारु एला च वृद्धदारकम्॥ २॥
एतानि समभागानि सञ्चूर्ण्य वटिकां कुरु।
शर्करामधुसंयुक्तां घृतेन भक्षयेत्पुनः॥ ३॥
रक्तं श्वेतं हन्ति पीतं नीलं प्रदरदुस्तरम्।
कुक्षिशूलं कटीशूलं योनिशूलञ्च सर्वजम्॥ ४॥
मन्दाग्निमरुचिं पाण्डुं कृच्छ्रश्वासञ्च कासनुत्।
आयुःपुष्टिकरं बल्यं रजोवर्णप्रसादनम्॥ ५॥

शुद्ध हड़ताल, लौहभस्म, ताम्रभस्म, वंगभस्म, अभ्रकभस्म, कौड़ीभस्म, सोंठ, काली मिर्च, पिप्पली, हर्रा, बहेड़ा, आमला, चीता, वायविडंग, पाँचों नमक, चव, पिप्पली, शंखभस्म, बच, हाउवेर, कूठ, कचूर, पाठा, देवदारु, इलायची और विधारा, ये चीजें समभाग लेकर चूर्ण करे और जलमें घोंटकर गोली बना ले। इसे यदि शक्कर, घी और शहदमें मिलाकर खाय तो रक्त, श्वेत, पीत और नील प्रदर तथा कुक्षिशूल, कटिशूल, सब तरहके योनिशूल, मन्दाग्नि, अरुचि, पाण्डु, दारुण श्वास तथा कासरोग नष्ट होता, आयु बढ़ती, देह पुष्ट होती तथा रज और वर्णमें प्रसन्नता आती है॥ १-५॥

प्रदरान्तक रस

शुद्धसूतं तथा गन्धः गन्धतुल्यञ्च रूप्यकम्।
खर्परञ्च वराटञ्च शाणमानं पृथक् पृथक्॥ ६॥
तोलकत्रितयञ्चैव लौहचूर्णं क्षिपेत्सुधीः।
दिनैकं कन्यकानीरैर्मर्दयेच्च भिषग्वरः॥ ७॥

असाध्यं प्रदरं हन्ति भक्षणान्नात्र संशयः ॥ ८ ॥

शुद्ध पारा, गंधक, चाँदीभस्म, शुद्ध खपरिया तथा कौड़ीभस्म, इनमेंसे प्रत्येक द्रव्य एक-एक शाण और लौहभस्म तीन तोले लेकर पारे-गंधककी कजली करे। फिर सब चीजें एकमें मिलाकर घीगुवारके रसमें घोंटकर गोलियें बना ले। इसका सेवन करनेसे असाध्य प्रदररोग भी दूर हो जाता है। इसमें कोई संशय नहीं है ॥ ६-८ ॥

मधुकादि चूर्ण

यष्टीमधुनिशाचूर्णतोलकेन समन्वितम्।
वङ्गभस्मार्कपत्रस्य रसेनाप्लाव्य पीयते ॥ ९ ॥
रसाञ्जनं शुभा शृंगी चित्रकं मधुयष्टिकम्।
प्रातः प्रातः प्रतिदिनं प्रदरं हन्ति दुस्तरम् ॥ १० ॥

मुलैठी और हल्दी इन दोनोंका चूर्ण दोनों मिलाकर एक तोला ले और उसमें रत्ती भर वंगभस्म मिलाकर मदारके पत्तोंके रसमें नित्य प्रातःकाल खाय तो दुस्तर प्रदररोग भी दूर हो जाता है ॥ ९ ॥ १० ॥

पुष्कर लेह।

रसाञ्जनं शुभा शृङ्गी चित्रकं मधुयष्टिकम्।
धान्यतालीशगायत्री द्विजीरं त्रिवृता वला ॥ ११ ॥
दन्तीत्र्यूषणकञ्चापि पलार्द्धञ्च शिलाजतु।
चतुःपलं माक्षिकस्यामलस्य च क्षिपेत्ततः ॥ १२ ॥
जातीकोपलवङ्गञ्च कक्कोलं मृद्विकाऽपि च।
चातुर्जातकखर्जूरं कर्षमेकं पृथक् पृथक् ॥ १३ ॥
प्रक्षिप्य मर्दयित्वा च स्निग्धभाण्डे निधापयेत्।
एष लेहवरः श्रीदः सर्वरोगकुलान्तकः ॥ १४ ॥
यत्र यत्र प्रयोज्यः स्यात्तत्तदामयनाशनः ॥ १५ ॥
अनुपा प्रयोक्तव्यं देशकालानुसारतः।
सर्वोपद्रवसंयुक्तं प्रदरं सर्वसम्भवम् ॥ १६ ॥
द्वन्द्वजं चिरजञ्चैव रक्तपित्तं विनाशयेत्।
कासश्वासाम्लपित्तञ्च क्षयरोगमथापि वा ॥ १७ ॥

सर्वरोगप्रशमनो बलवर्णाग्निवर्द्धनः।
पुष्कराख्यो लेहवरः सर्वत्रैवोपयुज्यते ॥ १८ ॥

रसाञ्जन, वंसलोचन, काकड़ासिंगी, चीता, मुलैठी, धनियाँ, तालीसपत्र, कत्था, सफेद तथा स्याह दोनों जीरा, निसोथ, बला, दन्ती, सोंठ, मिर्च, पिप्पली और शिलाजीत ये प्रत्येक द्रव्य आधा-आधा पल, शहद, स्वर्णमाक्षिकभस्म तथा आँवला दोनों ४–४ पल, जावित्री, लौंग काकोली, दाख, तज, तेजपात, इलायची, नागकेसर एवं खजूर इनमेंसे प्रत्येक वस्तु एक-एक कर्ष लेकर एकमें घोंटे और घुँट जानेपर किसी चिकने बर्तनमें रख ले। यह श्रेष्ठ लेह शोभादायक और सभी रोगोंका नाशक है। इसे जिस किसी भी रोगमें दें, सबका विनाश करता है। इसमें अनुपान देश-कालका विचार करके देना चाहिये। सब उपद्रवोंसे युक्त और किसी भी दोषसे उत्पन्न प्रदर तथा द्वन्द्वज और पुराना रक्तपित्त भी इस लेहसे शान्त हो जाता है। कास, श्वास, अम्लपित्त तथा क्षयरोगको भी यह नष्ट कर देता है। सभी रोगोंका विनाशक, बलवर्ण एवं अग्निवर्धक यह पुष्करलेह सर्वत्र काम करता है ॥११–१८॥

धात्र्यादि चूर्ण।

धात्री च पथ्या च रसाञ्जनञ्च विचूर्ण्य सर्वं सजलं निपीतम्।
अनन्तरक्तस्रवमुग्रवेगं निवारयेत्सेतुरिवाम्बुवेगम् ॥ १९ ॥

आँवला, हरीतकी और रसौत, ये चीजें समभाग लेकर चूर्ण करे और यदि जलके साथ इसका सेवन करे तो रक्तस्राव वैसे ही बन्द हो जाता है, जैसे बाँध पानीके वेगको रोक देता है ॥१९॥

रक्तपित्तहरं सर्वं प्रदरे नूतने तथा।
रक्तातीसारकथितं सर्वमत्र प्रयोजयेत् ॥ २० ॥

नूतन रक्तप्रदरमें रक्तपित्तको नष्ट करनेवाले तथा रक्तातिसारमें कथित सभी रसोंको काममें लाना चाहिए ॥२०॥

इति प्रदरचिकित्सा समाप्ता।

अथ योनिव्यापच्चिकित्सा ।

वातहर चिकित्साका संकेत ।

समस्तं वातजित्कर्म योनिव्यापत्सु शस्यते ।
क्षालनस्वेदलेपाँश्च वरानीरेण कारयेत् ॥ १ ॥

योनिव्यापत् रोगमें वायुविनाशक सभी चिकित्साओंको काममें लावे और नित्य योनिको त्रिफलाके जलसे धोवे, उसीसे स्वेदन करे (वफारा ले) और उसीको पीसकर योनिपर लेप करे ॥ १ ॥

पथ्यादिक्षालन प्रयोग ।

प्रक्षालयेद्भगं नित्यं पथ्यामलकवल्कलैः ।
वृद्धाऽपि कामिनी नित्यं बालावत्कुरुते रतिम् ॥ २ ॥

यदि नित्य हर्रा, वहेड़ा और आँवलाके जलसे योनिको धोवे तो वृद्धा स्त्री भी षोडशी युवतीके समान रति करके सुखका उपभोग कर सकती है ॥ २ ॥

इति योनिव्यापच्चिकित्सा ।

अथ सूतिकारोगचिकित्सा ।

सूतिकारि रस ।

रसगन्धककृष्णाभ्रं तदर्द्धं मृतताम्रकम् ।
चूर्णितं मर्दयेद्यत्नाद्भेकपर्णीरसेन च ॥ १ ॥
छायाशुष्का वटी कार्या गुञ्जाफलमानतः ।
क्षीरत्रिकटुना युक्ता सूतिकाऽऽतङ्कनाशिनी ॥ २ ॥
ज्वरं तृष्णारुचिश्वासं शोथं हन्ति न संशयः ॥ ३ ॥

शुद्ध पारा, गन्धक, कृष्णाभ्रकभस्म ये तीनों एक-एक भाग तथा ताम्रभस्म आधा भाग लेकर पारे-गन्धककी कज्जली करे। फिर सब वस्तुयें एकमें मिलाकर मण्डूकपर्णीके रसमें घोंटे। घुँट जानेपर दो दो रत्तीकी गोलियें बनाकर छायामें सुखा ले। इसे यदि त्रिकटुके चूर्ण तथा दूधके साथ खाय तो सूतिकारोग, ज्वर, प्यास, अरुचि, श्वास एवं शोथरोग सर्वथा निवृत्त हो जाता है ॥१–३॥

सूतिकाविनोद रस ।

रसगन्धकतुत्थञ्च त्र्यहं जम्बीरमर्दितम् ।
गर्भिण्याः शूलविष्टम्भज्वराजीर्णेषु योजयेत् ॥ ४ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक और शुद्ध तूतिया, ये द्रव्य समभाग लेकर पारे-गन्धककी कज्जली करे। फिर सबको एक साथ जँभीरी नीबूके रसमें तीन दिन तक घोंटे। इसके बाद त्रिकुटाके काढ़ेमें तीन बार भावना देकर चार-चार रत्तीकी गोलियें बना ले। इसका सेवन करनेसे गर्भिणी स्त्रीके शूल, विष्टम्भ, ज्वर तथा अजीर्णरोग दूर हो जाते हैं ॥ ४ ॥

गर्भचिन्तामणि रस ।

चिन्तामणिरसे देयं तुत्थस्थाने सुवर्णकम् ॥ ५ ॥

उपर्युक्त सूतिकाविनोद रसमें यदि तूतियाके स्थानमें स्वर्णभस्म मिलाया जाय तो वही गर्भचिन्तामणि रस हो जायगा, जो उससे अधिक उपयोगी सिद्ध होगा ॥ ५ ॥

वृहत्सूतिकाविनोद रस

शुण्ठ्या भागो भवेदेको द्वौ भागौ मरिचस्य च ।
पिप्पल्याश्च त्रिभागं स्यादर्द्धभागञ्च व्योमकम् ॥ ६ ॥
जातीकोषस्य भागौ द्वौ द्वौ भागौ तुत्थकस्य च ।
सिन्धुवारजलेनैव मर्दयेदेकयामतः ।
मधुना सह भोक्तव्यः सूतिकाऽऽतङ्कनाशनः ॥ ७ ॥

सोंठका चूर्ण १ भाग, काली मिर्चका चूर्ण २ भाग, पिप्पलीचूर्ण ३ भाग, अभ्रकभस्म आधा भाग, जावित्रीचूर्ण २ भाग तथा शुद्ध तूतिया दो भाग, ये द्रव्य एकत्रित करके निर्गुण्डीके रसमें पहर भर घोंटे। घुँट जानेपर गोलियें बना-कर रख ले। यदि मधुके साथ इसका सेवन किया जाय तो सूतिकारोग निवृत्त हो जाता है ॥ ६ ॥ ७ ॥

अन्य सूतिकारि रस ।

टङ्कणं मूर्च्छितं सूतं गन्धकं हेम तारकम् ।
जातीफलं तथा कोषं लवङ्गैले च धातकी ॥ ८ ॥

वत्सकेन्द्रयवं पाठा शृङ्गी विश्वाऽजमोदिकाः ।
गुटी प्रसारणीनीरैश्चतुर्गुञ्जाप्रमाणतः ॥ ९ ॥
भक्षयेत्तद्रसैः प्रातः सूतिकाऽऽतङ्कशान्तये ।
जीर्णज्वरं हन्ति शोथं ग्रहणीप्लीहकासनुत् ॥ १० ॥

शुद्ध सोहागा, मूर्छित पारा, शुद्ध गंधक, स्वर्णभस्म, चाँदीभस्म, जायफल, जावित्री, लौंग, इलायची, धायके फूल, कुड़ेकी छाल, इन्द्रजौ, पाढ़, काकड़ासिंगी, सोंठ तथा अजमोदा, ये सभी द्रव्य समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सब चीजें एकमें मिलाकर प्रसारणीके रसमें घोंटे और चार-चार (आजकल दो-दो) रत्तीकी गोलियें बना ले। यदि नित्य प्रातःकाल इसे प्रसारणीके स्वरसके साथ खाय तो सूतिकारोग, जीर्णज्वर, शोथ, ग्रहणी, प्लीहा तथा कासरोग निवृत्त हो जाता है ॥ ८–१० ॥

सूतिकाघ्न रस

रसगन्धकलौहाभ्रं जातीकोषं सुवर्णकम् ।
समांशं मर्दयेत्खल्ले छागीदुग्धेन पेषयेत् ॥ ११ ॥
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन वटिकां कुरु यत्नतः ।
ज्वरातीसाररोगघ्नः सूतिकाऽऽतङ्कनाशनः ॥ १२ ॥
सूतिकाघ्नो रसो नाम ब्रह्मणा परिकीर्तितः ॥ १३ ॥

शुद्ध पारा, गंधक, लौहभस्म, अभ्रकभस्म, जावित्री तथा स्वर्णभस्म, ये द्रव्य समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सबको खरलमें डालकर बकरीके दूधमें पीसे। पिस जानेपर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। इसका सेवन करनेसे ज्वरातिसार और सूतिकारोग नष्ट हो जाते हैं। इस सूतिकाघ्न रसको स्वयं ब्रह्माजीने बताया था ॥ ११–१३ ॥

सूतिकान्तक रस

रसाभ्रगन्धकव्योषं सुवर्णमाक्षिकं विषम् ।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं खादेद्रक्तिचतुष्टयम् ॥ १४ ॥
सूतिकाग्रहणीरोगं वह्निमान्द्यञ्च नाशयेत् ।
अतिसारञ्च शमयेदपि वैद्यविवर्जितम् ।
कासश्वासातिसारघ्नो वाजीकरण उत्तमः ॥ १५ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, अभ्रकभस्म, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, स्वर्णमाक्षिक-भस्म और शुद्ध विष, ये द्रव्य समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सबको एकमें पीस तथा चूर्ण करके रख ले। यदि चार रत्ती इस रसका सेवन करे तो सूतिकारोग, मन्दाग्नि, कास, श्वास तथा अतिसार रोग निवृत्त हो जाता है। अनेक वैद्यों द्वारा परित्यक्त अतिसार रोग भी इससे दूर हो जाता है। यह रस उच्च कोटिका वाजीकरण भी है ॥ १४ ॥ १५ ॥

गर्भचिन्तामणि रस

जातीफलं टङ्गणञ्च व्योषं दैत्येन्द्ररक्तकम्।
तच्चूर्णं समभागेन मर्दितं प्रहरद्वयम् ॥ १६ ॥
जम्बीररसयोगेन वटीं कुर्य्याद्विचक्षणः।
गुञ्जाद्वयप्रमाणान्तु खलु वैद्यः प्रयत्नतः ॥ १७ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव भक्षयेदुष्णवारिणा।
निहन्ति सर्वरोगञ्च भास्करस्तिमिरं यथा ॥ १८ ॥

जायफल, भुना सोहागा, त्रिकटु, शुद्ध गंधक और शुद्ध सिंगरिफ, ये वस्तुयें समभाग लेकर जँभीरी नींबूके रसमें दो पहर तक घोंटे। घुँट जानेपर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। यदि अदरखके रसमें इसे खाकर गरम जल पिये तो सब रोग इस तरह भाग जाते हैं, जैसे सूर्यके उदय होनेपर अन्धकार नष्ट हो जाता है ॥ १६–१८ ॥

अपर गर्भचिन्तामणि रस

रसं तारं तथा लौहं प्रत्येकं कर्षमानतः।
कर्षत्रयं तथा चाभ्रं कर्पूरं वङ्गताम्रकम् ॥ १९ ॥
जातीफलं तथा कोषं गोक्षुरञ्च शतावरी।
बलाऽतिबलयोर्मूलं प्रत्येकं तोलकं शुभम् ॥ २० ॥
वारिणा वटिका कार्य्या द्विगुञ्जाफलमानतः।
सन्निपातं निहन्त्याशु स्त्रीणाञ्चैव विशेषतः ॥ २१ ॥
गर्भिण्या ज्वरदाहञ्च प्रदरं सूतिकाऽऽमयम् ॥ २२ ॥

शुद्ध पारा, चाँदीभस्म और लौहभस्म, ये प्रत्येक द्रव्य एक-एक कर्ष, अभ्रकभस्म तीन कर्ष, कपूर, वंगभस्म, ताम्रभस्म, जायफल, जावित्री, गोखरू,

शतावर, बला, अतिबला, ये वस्तुयें एक-एक तोला लेकर चूर्ण करे। फि सबको जलमें घोंटकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। इसका सेवन करनेसे सन्निपात और विशेष करके स्त्रियोंका सन्निपात, गर्भिणीका ज्वर, दाह, प्रदर तथा सूतिकारोग दूर होता है॥ १९–२२ ॥

बृहद्गर्भचिन्तामणि रस

सूतं गन्धस्तथा स्वर्णं लौहं रजतमाक्षिके।
हरितालं वङ्गभस्माप्यभ्रकं समभागिकम् ॥ २३ ॥
भावना खलु दातव्या रसैरेषां पृथक् पृथक्।
ब्राह्मीवासाभृंगराजपर्पटीदशमूलकैः ॥ २४ ॥
सप्तधा भावयेद्वैद्यो गुञ्जामानां वटीं चरेत्।
गर्भचिन्तामणिरयं पूर्ववद् गुणकारकः ॥ २५ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, स्वर्णभस्म, लौहभस्म, रौप्यभस्म, स्वर्णमाक्षिकभस्म, शुद्ध हड़ताल बंगभस्म तथा अभ्रकभस्म ये वस्तुयें समभाग लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सबको एकमें घोंटकर ब्राह्मी, अडूसा, भाँगरा, पित्तपापड़ा तथा दशमूल प्रत्येकके रस अथवा काढ़ेमें अलग-अलग सात-सात वार भावना देकर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले। यह बृहद्गर्भचिन्तामणि रस भी पूर्ववत् गर्भचिन्तामणिके समान ही गुणदायक है ॥ २३–२५ ॥

गर्भविनोद रस।

देयं त्रिभागं त्रिकटु चतुर्भागञ्च हिङ्गुलम्।
जातीकोषं लवङ्गञ्च प्रत्येकञ्च त्रिकार्षिकम् ॥ २६ ॥
सुवर्णमाक्षिकस्यापि पलार्द्धं प्रक्षिपेद् बुधः।
जलेन मर्दयित्वाऽथ चणमात्रा वटी कृता।
निहन्ति गर्भिणीरोगं भास्करस्तिमिरं यथा ॥ २७ ॥

त्रिकटु तीन कर्ष, शुद्ध सिंगरिफ ४ कर्ष, जावित्री तथा लौंग तीन-तीन कर्ष, स्वर्णमाक्षिकभस्म आधा पल, ये वस्तुयें एकत्रित करके जलमें घोंटकर चने बराबर गोलियें बना ले। यह गर्भिणीके रोगोंको ऐसे नष्ट करता है, जैसे सूर्य अन्धकारको नष्ट करता है ॥२६॥२७॥

सूतिकाहर रस।

लवङ्गं रसगन्धौ च यवक्षारं तथाऽभ्रकम्।
लौहं ताम्रं सीसकञ्च पलमानं समाहरेत्॥ २८॥
जातीफलं केशराजं भृङ्गलामुस्तकं वरा।
धातकीन्द्रयवं पाठा शृङ्गी बिल्वञ्च बालकम्॥ २९॥
कर्षमानञ्च सञ्चूर्ण्य सर्वमेकत्र कारयेत्।
बदरास्थिप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक्॥ ३०॥
गन्धालिकापत्ररसैरनुपानं प्रदापयेत्।
सर्वातीसारशमनः सर्वशूलनिवारणः॥ ३१॥
सूतिकाशोथपाण्डुत्वसर्वज्वरविनाशनः।
सूतिकाहरनामाऽयं रसः परमदुर्लभः॥ ३२॥

लौंग, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, जवाखार, अभ्रकभस्म, लौहभस्म, ताम्रभस्म, सीसाभस्म, ये प्रत्येक द्रव्य एक-एक पल, जायफल, केशराज, भाँगरा, मोथा, त्रिफला, धायके फूल, इन्द्रजौ, पाढ़, काकड़ासिंगी, वेलका गूदा, सुगंधवाला ये वस्तुयें एक-एक कर्ष (दो-दो तोला) लेकर चूर्ण करे और सबको जलमें घोंट-कर वेरकी गुठली सरीखी गोलियें बना ले। यदि गंधप्रसारणीके रसमें मिला-कर इसका सेवन करे तो यह सभी प्रकारके अतिसार, सब तरहके शूल, सूतिका-रोग, शोथ, पाण्डु और सब ज्वरोंको नष्ट कर देता है। यह अतिशय दुर्लभ सूतिकाहर रस है॥२८-३२॥

महाअभ्र वटी।

अभ्रकं पुटितं ताम्रं लौहं गन्धकपारदम्।
कुनटी टङ्कणं क्षारं त्रिफला च पलं पलम्॥ ३३॥
गरलञ्च तथा माषचतुष्कञ्चैव चूर्णितम्।
तत्सर्वं भावयेदेषां रसैः प्रत्येकशः पलैः॥ ३४॥
भीष्मसुन्दरकस्याटरूषकस्य क्रमेण तु।
रसैस्ताम्बूलवल्ल्याश्च दलोत्थैर्भावितं पृथक्॥ ३५॥
द्रवे किञ्चित् स्थिते चूर्णं मरिचस्य पलं क्षिपेत्।
सर्वातीसारशमनं सर्वशूलनिवारणम्॥ ३६॥

सूतिकाशोथपाण्डुत्वसर्वज्वरविनाशनम् ।
नाशयेत्सूतिकाऽऽतङ्कं वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥ ३७ ॥

अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, लौहभस्म, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध मैनसिल, शुद्ध सोहागा, जवाखार और त्रिफला, इनमेंसे प्रत्येक वस्तु एक-एक पल और शुद्ध विष ४ मासा लेकर सबको एकमें पीसकर ग्रीष्मसुन्दर, अडूसा तथा पान, इनमेंसे प्रत्येकके एक-एक पल स्वरसमें पृथक् पृथक् भावना दे। जब कि उसमें जलका कुछ अंश अवशिष्ट रहे, तभी एक पल मिर्चका चूर्ण डालकर सुखा लेवे। इसका सेवन करनेसे सब तरहका शूल, अतिसार, शोथ, सूतिका-रोग, पांडु और ज्वर ऐसे निवृत्त हो जाते हैं, जैसे बिजली गिरनेसे वृक्ष ढह जाते हैं ॥३३-३७॥

अपर महाअभ्र वटी ।

मृतमभ्रञ्च लौहञ्च कुनटी ताम्रकं तथा ।
रसगन्धकटङ्कञ्च यवक्षारफलत्रिकम् ॥ ३८ ॥
प्रत्येकं तोलकं ग्राह्यमूषणं पञ्चतोलकम् ।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं प्रत्येकेन विभावयेत् ॥ ३९ ॥
ग्रीष्मसुन्दरसिंहास्यनागवल्ल्या रसेन च ।
चतुर्गुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ ४० ॥
योजयेत्सर्वथा वैद्यः सूतिकारोगशान्तये ॥ ४१ ॥

अभ्रकभस्म, लौहभस्म, शुद्ध मैनसिल, ताम्रभस्म, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, सोहागा, जवाखार और त्रिफला, इनमेंसे प्रत्येक वस्तु एक-एक तोला और मिर्चका चूर्ण ५ तोला लेकर पारे-गंधककी कज्जली करे। फिर सब वस्तुयें एकमें पीसकर ग्रीष्मसुन्दर, अडूसा तथा पान, इनमेंसे प्रत्येकके रसमें अलग-अलग भावना देकर चार-चार रत्तीकी गोलियें बना ले। सूतिकारोगको दूर करनेके लिए वैद्य लोग सर्वथा इसका उपयोग करें ॥३८-४१॥

रसशार्दूल ।

अभ्रं ताम्रं तथा लौहं राजपट्टं रसं तथा ।
गन्धटङ्गमरीचञ्च यवक्षारं समांशकम् ॥ ४२ ॥

तथाऽत्र तालकञ्चैव त्रिफलायाश्च तोलकम्।
तोलकञ्चामृतञ्चैव षड्गुञ्जाप्रमिता वटी॥ ४३॥
ग्रीष्मसुन्दरकस्यापि नागवल्लीरसेन च।
भावयेत्सप्तधा हन्ति ज्वरं कासाङ्गसंग्रहम्॥ ४४॥

अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, लौहभस्म, कान्तपाषाण, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध सोहागा, मिर्च, जवाखार, हड़ताल, त्रिफला तथा शोधित विष ये द्रव्य एक-एक तोला लेकर चूर्ण करे। फिर ग्रीष्मसुन्दर तथा पानके रसमें सात-सात वार भावना देकर छ-छ रत्तीकी गोलियें बना ले। इससे ज्वर, कास, अंगोंका जकड़ना, सूतिकारोग, शोथ तथा स्त्रियोंके अन्य रोग दूर हो जाते हैं॥४२-४४॥

महारसशार्दूल।

सूतिकाऽऽतङ्कशोथादि स्त्रीरोगञ्च विनाशयेत्॥ ४५॥
अभ्रकं पुटितं ताम्रं स्वर्णं गन्धञ्च पारदः।
शिला टङ्कं यवक्षारस्त्रिफलायाः पलं पलम्॥ ४६॥
गरलस्य तथा ग्राह्यमर्द्धतोलकसम्मितम्।
त्वगेलापत्रकञ्च व जातीकोषलवङ्गकम्॥ ४७॥
मांसी तालीशपत्रञ्च माक्षिकञ्च रसाञ्जनम्।
एषां द्विकार्षिकं भागं देयञ्चापि विचक्षणैः॥ ४८॥
द्रवे किंचित् स्थिते चूर्णं मरिचस्य पलं क्षिपेत्।
भावना च प्रदातव्या पूर्वोक्तेन रसेन च॥ ४९॥
निहन्ति विविधान् रोगान् ज्वरान् दाहान् वमिं भ्रमिम्॥५०॥
तथाऽतिसारकञ्चैव वह्निमान्द्यमरोचकम्।
विशेषाद्गर्भिणीरोगं नाशयेदचिरेण च॥ ५१॥

अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, शुद्ध गंधक, शुद्ध पारा, शुद्ध मैनसिल, शुद्ध सोहागा, जवाखार और त्रिफला, ये चीजें एक-एक पल, शोधित विष आधा तोला, तज, इलायची, तेजपात, जावित्री, लौंग, जटामासी, तालीसपत्र, स्वर्ण-माक्षिकभस्म और रसौत इनमेंसे प्रत्येक द्रव्य दो-दो कर्ष लेकर पारा-गंधककी कज्जली करे। फिर सबको एकमें मिलाकर चूर्ण करे और गूमा तथा पानके रसमें भावना दे। जब वह कुछ गीला रहे, तभी उसमें एक पल मिर्चका चूर्ण डाल

और सुखाकर रख ले। इससे ज्वर, दाह, वमन, भ्रम, अतिसार, मन्दाग्नि, अरुचि तथा विशेष करके गर्भिणीके सब रोग नष्ट हो जाते हैं ॥४५–५१॥

बृहत् रसशार्दूल

रसस्य द्विगुणं गन्धं शुद्धं सम्मर्दयेद्दिनम्।
प्रतिलौहं सूततुल्यमष्टलौहं मृतं क्षिपेत् ॥ ५२ ॥
ब्राह्मी जयन्ती निर्गुण्डी यष्टी मधु पुनर्नवा।
नलिका गिरिकर्ण्यर्ककृष्णधूर्त्तदुरालभाः ॥ ५३ ॥
आटरूषः काकमाची द्रवैरेषां विमर्दयेत्।
गुञ्जात्रयं चतुर्गुञ्जं सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ ५४ ॥
रोगोक्तमनुपानं वा कवोष्णं वा जलं पिवेत् ॥ ५५ ॥

शुद्ध पारा १ भाग और शुद्ध गंधक २ भाग ले तथा दिन भर घोंटकर कज्जली करे। फिर उसमें लौह, स्वर्ण, चाँदी, ताम्र, कांस्य, पित्तल, नाग तथा वंग, इन आठों लौहोंकी भस्म एक-एक तोला डाले और ब्राह्मी, जयन्ती, निगुण्डी, मुलेठी, पुनर्नवा, नलिका (नारीशाक) अपराजिता, मदार, काला धतूरा, दुरालभा, अडूसा और मकोय, इनमेंसे प्रत्येकके स्वरसमें सात-सात बार भावना देकर तीन-तीन या चार-चार रत्तीकी गोली बना ले। रोगोक्त अनुपान अथवा गुनगुने जलके साथ इसका सेवन करे तो गर्भिणी स्त्रीके सब रोग दूर हो जाते हैं॥ ५२–५५ ॥

अष्टलौह

सुवर्णं रजतं ताम्रं कांस्यं पित्तलमेव च।
नागं वङ्गं तथा लौहं धातवोऽष्टौ प्रकीर्त्तिताः ॥ ५६ ॥

सुवर्ण, चाँदी, ताम्र, कांस्य, पीतल, सीसा, राँगा और लोहा, ये ही अष्ट-लौह कहे जाते हैं ॥ ५६ ॥

इति सूतिकारोगचिकित्सा।

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे 'रसायनी' भाषाटीकायां तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अथ चतुर्थोऽध्यायः ।

अथ बालरोगचिकित्सा ।

बाल रस

पलं शुद्धस्य सूतस्य गन्धकस्य पलं तथा ।
सुवर्णमाक्षिकस्यापि भागार्द्धं संप्रकल्पयेत् ॥ १ ॥
ततः कज्जलिकां कृत्वा पात्रे लौहमये दृढे ।
केशराजस्य भृङ्गस्य निर्गुण्ड्याः स्वरसेन च ॥ २ ॥
शुभे शिलामये पात्रे लौहदण्डेन मर्दयेत् ।
राजिकासदृशीञ्चैव वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ ३ ॥
एकैकां वटिकां खादेन्नागवल्लीदलद्रवैः ।
हन्ति त्रिदोषसम्भूतं ज्वरञ्चैव सुदारुणम् ॥ ४ ॥
चिरज्वरञ्च कासञ्च शूलं सर्वभवं तथा ।
शिशूनां रोगनाशाय शिवेन परिकीर्त्तितः ॥ ५ ॥

शुद्ध पारा तथा शुद्ध गन्धक दोनों एक-एक पल लेकर कज्जली करे । फिर उसमें आधा पल स्वर्णमाक्षिकभस्म मिलावे और केशराज, भँगरा तथा निर्गुण्डीका रस डालकर लौहदण्डसे घोंटे । घुँट जानेपर राई बराबर गोलियें बना ले । पानके रसमें यदि इसकी एक-एक गोली बच्चोंको खिलायी जाय तो त्रिदोषजनित दारुणज्वर, पुराना ज्वर, खाँसी और किसी भी तरहका शूलरोग निवृत्त हो जाता है । बच्चोंका रोग दूर करनेके लिए स्वयं शंकरभगवान्ने इस रसका निर्माण किया था ॥ १—५ ॥

बालरोगान्तक रस

पलं शुद्धस्य सूतस्य गन्धकस्य च तत्समम् ।
सुवर्णमाक्षिकस्यापि चार्द्धभागं नियोजयेत् ॥ ६ ॥
ततः कज्जलिकां कृत्वा पात्रे लौहमये दृढे ।
केशराजस्य भृङ्गस्य निर्गुण्ड्याः पर्णसम्भवम् ॥ ७ ॥

स्वरस काकमाच्याश्च ग्रीष्मसुन्दरकस्य च।
सूर्यावर्त्तकवर्षाभूभेकपर्णीरसैस्तथा ॥ ८॥
श्वेतापराजितायाश्च रसं दद्याद्विचक्षणः।
देयं रसार्द्धभागेन चूर्णं मरिचसम्भवम् ॥ ९॥
शुभे शिलामये पात्रे यामं दण्डेन मर्दयेत्।
शुष्कमातपसंयोगाद्गुटिकां कारयेद्भिषक् ॥ १०॥
प्रमाणं सर्षपाकारं बालानाञ्च प्रयोजयेत्।
हन्ति त्रिदोषसम्भूतं ज्वरञ्चैव सुदारुणम् ॥ ११॥
कासं पञ्चविधञ्चापि सर्वरोगं निहन्ति च।
शिशूनां रोगनाशाय निर्मितोऽयं महारसः॥ १२॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक दोनों एक-एक पल लेकर दृढ़ लौहपात्रमें कज्जली करे। फिर आधा पल स्वर्णमाक्षिक भस्म ले और पत्थरके खरलमें डालकर केशराज, भँगरा, निर्गुण्डी, पान, मकोय, ग्रीष्मसुन्दर (गूमा), सूर्यमुखी, पुनर्नवा, मण्डूकपर्णी तथा श्वेत अपराजिताके स्वरस दे-देकर लौहदण्डसे घोंटे। फिर इसमें आधा पल मिर्चका चूर्ण डालकर पहर भर मर्दन करे। तदनन्तर धूपमें सुखाकर सरसोंके समान गोलियें बनाकर रख ले। यदि उचित अनुपानके साथ इसे बच्चोंको खिलावे तो त्रिदोषजनित दारुण ज्वर, पाँच प्रकारकी खाँसी और सभी भाँतिके रोग भाग जाते हैं। खास करके बच्चोंका रोग नष्ट करनेके लिए ही इस महारसका निर्माण किया गया है॥ ६–१२॥

इति बालरोगचिकित्सा समाप्ता।

अथ विषचिकित्सा।

विषवज्रपात रस

निशां सटङ्कञ्च सजातिकोषं तुत्थं समांशं कुरु देवदाल्याः।
रसेन पिष्ट्वा विषवज्रपातो रसो भवेत्सर्वविषाहिहन्ता ॥ १ ॥
निष्कोऽस्य संजीवयति प्रयुक्तो नृमूत्रयोगेन च कालदष्टम्।
जटाविषेणाकुलितं तथाऽन्यैर्विषैर्नरञ्चाशु तथाऽऽतुरञ्च ॥ २ ॥

हल्दीका चूर्ण, शुद्ध सोहागा, जावित्री तथा शुद्ध तूतिया, ये द्रव्य सम-भाग लेकर देवदालीके स्वरसमें घोंटे और चार-चार मासेकी गोलियें बनाकर रख ले। यदि मनुष्यके मूत्रमें मिलाकर इसका उपयोग करे तो कालरूपी सर्पका काटा हुआ मनुष्य भी जी जाता है। इससे जटाविष (मूल विष) तथा अन्यान्य विष खाया हुआ व्याकुल मनुष्य भी तत्काल चेतना लाभ कर लेता है॥१॥२॥

भीमरुद्र रस

सूतराजस्य तोलैकं गन्धकस्य तथैव च।
अभ्रात्कर्षं ततो देयं तोलैकं कान्तलौहकम्॥ ३॥
परोक्तेनौषधेनैव भावयेच्च पृथक् पृथक्।
त्रिशालावृहतीब्राह्मीसौगन्धिकसुदाडिमैः ॥ ४॥
मार्कण्ड्याश्चात्मगुप्तायाः स्वरसेन पृथक् पृथक्।
एकरक्तिकमानेन वटिकां कारयेद्भिषक्॥ ५॥
वटीमेकां भक्षयित्वा पिबेच्छीतजलं ततः।
भीमरुद्रो रसो नाम चासाध्यमपि साधयेत्॥ ६॥
कुक्कुरस्य शृगालस्य विषं हन्ति सुदुस्तरम्॥ ७॥

शुद्ध पारा तथा शुद्ध गंधक दोनों एक-एक तोला लेकर कज्जली कर ले। फिर अभ्रकभस्म एक कर्ष, कान्तलौहभस्म एक तोला, इन्द्रायण, बड़ी कटेरी, ब्राह्मी, नीलकमल, अनार, अपामार्ग और केवाँच, इन सबके रसमें अलग-अलग भावना देकर रत्ती-रत्ती भरकी गोलियें बना ले। इस रसकी एक गोली खाकर ठंढा पानी पीना चाहिए। इस भीमरुद्र रसका उपयोग करनेसे असाध्य विष भी दूर हो जाते हैं। कुत्ते और सियारका भयानक विष भी इससे दूर भागता है॥ ३–७॥

इति विषचिकित्सा समाप्ता।

इति श्रीरसेन्द्रसारसंग्रहे 'रसायनी' भाषाटीकायां चतुर्थोऽध्यायः॥४॥

अथ पञ्चमोऽध्यायः ।

अथ रसायनवाजीकरणाधिकारः ।

रसायनके लक्षण

स्वस्थस्यौजस्करं किञ्चित्किञ्चिदार्त्तस्य रोगनुत् ।
यज्जराव्याधिविध्वंसि भेषजं तद्रसायनम् ॥ १ ॥

जो योग स्वस्थ प्राणीका ओज (लावण्य) बढ़ाता, रोगीका रोग दूर करता और बुढ़ौतीरूपी रोगको लुप्त करता है, उसे रसायन औषधि कहते हैं ॥ १ ॥

श्रीमन्मथ रस

रसगन्धकयोर्ग्राह्यं कर्षमेकं सुशोधितम् ।
अभ्रं निश्चन्द्रकं दद्यात्पलार्द्धं सुविचक्षणः ॥ २ ॥
कर्पूरं शाणकं दद्याद्वङ्गञ्च कोलसम्मितम् ।
ताम्रं कोलार्द्धकं तत्र निःशेषं मारितं क्षिपेत् ॥ ३ ॥
लौहं कर्षं सुजीर्णञ्च वृद्धदारकबीजकम् ।
विदारी शतमूली च क्षुरबीजं बला तथा ॥ ४ ॥
मर्कट्यतिबला चैव जातीकोषफले तथा ।
लवङ्गं विजयाबीजं श्वेतसर्जं यमानिका ॥ ५ ॥
एतेषां चूर्णमादाय प्रक्षिपेच्छाणसम्मितम् ।
गुञ्जाद्वयञ्च भोक्तव्यं कोष्णं क्षीरं पिबेदनु ॥ ६ ॥
गृहे यस्य शतं स्त्रीणां विद्यतेऽतिव्यवायिनः ।
न तस्य लिङ्गशैथिल्यमौषधस्यास्य सेवनात् ॥ ७ ॥
न च शुक्रं क्षयं याति न बलं ह्रासतां व्रजेत् ।
कामरूपी भवेद्दिव्यो वृद्धः षोडशवर्षवत् ॥ ८ ॥
रसायनवरो बल्यो वाजीकरण उत्तमः ।
रसः श्रीमन्मथो नाम महेशेन प्रकाशितः ॥ ९ ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक दोनों एक-एक कर्ष, निश्चन्द्र अभ्रकभस्म आधा पल, कपूर एक शाण, वंगभस्म एक कोल, ताम्रभस्म आधा कोल,

लौहभस्म एक कर्ष, विधाराके पुराने बीज, विदारीकन्द, शतावर, तालमखाना, बरियारा, कौंचबीज, अतिबला, जावित्री, जायफल, लौंग, भाँगके बीज, सफेद राल तथा अजवायन, ये प्रत्येक द्रव्य एक-एक शाण लेकर पहले पारे-गंधककी कज्जली कर ले। फिर सबको एकमें मिला और पानीसे पीसकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। इसकी एक गोली खाकर गुनगुना दूध पीना चाहिए। जिस विषयी पुरुषके घरमें सौ स्त्रियाँ हों, और वह इस रसका सेवन करके यदि उन सबके साथ संभोग करे, फिर भी न उसका लिंग ढीला होगा, न वीर्यपात होगा और न बल ही घटेगा। वृद्ध पुरुष भी इसका सेवन करके सोलह वर्षका नवयुवक और कामदेवके सदृश सुन्दर हो जाता है। यह एक उत्तम रसायन और वाजीकरण रस है। इस मन्मथ रसका स्वयं शंकर भगवानने आविष्कार किया था ॥ २–६ ॥

माहेश्वर रस

रसं भस्मीकृतं कोलं गन्धकं शोधितं समम्।
लौहं कर्षद्वयं ताम्रमर्द्धकोलकसम्मितम् ॥ १० ॥
सुवर्णं जारितं दद्याच्छाणार्द्धं सुविचक्षणः।
अभ्रं कर्षद्वयं दद्याच्छाणार्द्धं चन्द्रचूर्णकम् ॥ ११ ॥
श्यामाबीजं वरीञ्चैव बलामतिबलां तथा।
एलाञ्च शङ्खपुष्पञ्च शाणमानं विनिक्षिपेत् ॥ १२ ॥
जलेन वटिकां कृत्वा गुञ्जामात्रां प्रदापयेत्।
सेवनादस्य कन्दर्परूपो भवति मानवः ॥ १३ ॥
सहस्रं याति नारीणामुत्साहो जायतेऽधिकः।
नित्यं स्त्रीसेवनाद्यस्तु क्षीणशुक्रो भवेन्नरः ॥ १४ ॥
महाशुक्रो भवेत्सोऽपि सेवनादस्य नान्यथा।
महाबलो महाबुद्धिर्जायते नात्र संशयः ॥ १५ ॥
स्थूलानां कर्षकः श्रेष्ठः कृशानां पुष्टिकारकः।
रसो विनाशयेद्रोगान् सप्तसप्ताहभक्षणात् ॥ १६ ॥

रससिंदूर एक कोल, शोधित गंधक एक कोल, लौहभस्म दो कर्ष, ताम्रभस्म आधा कोल, स्वर्णभस्म आधा शाण, अभ्रकभस्म दो कर्ष,

कपूर दो मासा, विधारेके बीज, शतावर, बला (बरियारा) अतिबला (ककही), इलायची तथा शंखपुष्पी, ये प्रत्येक द्रव्य एक-एक शाण लेकर खरलमें डाले और पानीसे घोंटकर रत्ती-रत्ती भरकी गोली बना ले। इसका सेवन करनेसे मनुष्य कामदेवके सदृश सुन्दर हो जाता और एक सहस्र स्त्रियोंके साथ सहवास कर सकता है। इससे उत्साहकी वृद्धि होती जाती है। अत्यधिक स्त्रीप्रसंग करनेसे जिसका वीर्य क्षीण हो गया हो, वह भी महावीर्यवान् हो जाता है। इसका उपयोग करनेसे बल और बुद्धि बढ़ती है। यह मोटे मनुष्यको पतला करके पुष्ट और ठोस बना देता है। ४६ दिन तक इसका सेवन किया जाय तो यह सभी रोगोंको मार भगाता है ॥ १०—१६ ॥

पूर्णचन्द्र रस

सूताभ्रलौहं सशिलाजतु स्याद्विडङ्गताप्ये मधुना घृतेन।
सम्मर्द्य सर्वं खलु पूर्णचन्द्रो माषोऽस्य वृष्यो भवति प्रयुक्तः ॥१७॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, लौहभस्म, शुद्ध शिलाजीत, वायविडंग और स्वर्णमाक्षिकभस्म ये द्रव्य समभाग ले और एकमें पीसकर रख ले। यदि एक मासा यह रस घी और मधुमें मिलाकर खाय तो वीर्य बढ़ता है ॥ १७ ॥

कार्श्यहर लौह

श्वेता पुनर्नवा दन्ती वाजिगन्धा त्रिकत्रयैः।
शतमूली बलायुक्तैरेभिर्लौहं प्रसाधितम् ॥ १८ ॥
हिनस्ति नियतं कार्श्यमपि भृङ्गरसैः सह।
नास्त्यनेन समं लौहं सर्वरोगान्तकं मतम्।
दीपनं बलवर्णाग्नेर्वृष्यदञ्चोत्तमोत्तमम् ॥ १९ ॥

वंसलोचन, पुनर्नवा, दन्ती, असगंध, त्रिफला, त्रिकटु, मोथा, चीता, वाय-विडंग, शतावर और बला, इनमेंसे प्रत्येक द्रव्यका चूर्ण समभाग और सबके बराबर लौहभस्म मिला तथा घोंटकर रख ले। भाँगरेके रसमें यदि इसकी उप-युक्त मात्राका सेवन किया जाय तो कृशता अवश्य दूर हो जाती है। यह बल, वर्ण और अग्नि बढ़ानेवाला एक उत्तम वाजीकरण रस है। सभी रोगोंपर एक साथ प्रहार करनेवाला इससे बढ़कर लौह और कोई भी नहीं है ॥१८॥१९॥

नारदीय लक्ष्मीविलास रस

पलं कृष्णाभ्रचूर्णस्य तदर्द्धौ रसगन्धकौ ॥ २० ॥
कर्पूरस्य तदर्द्धञ्च जातीकोषफले तथा ॥ २१ ॥
वृद्धदारकबीजञ्च बीजमुन्मत्तकस्य च ।
त्रैलोक्यविजयाबीजं विदारीमूलमेव च ॥ २२ ॥
नारायणी तथा नागबला चातिबला तथा ।
बीजं गोक्षुरकस्यापि नैचुलं बीजमेव च ॥ २३ ॥
एतेषां कार्षिकं चूर्णं पर्णपत्ररसेन च ।
निष्पेष्य वटिका कार्य्या त्रिगुञ्जाफलमानतः ॥ २४ ॥
निहन्ति सन्निपातोत्थान् गदान् घोरान् सुदारुणान् ।
वातोत्थानपि पित्तोत्थान् नास्त्यत्र नियमः क्वचित् ॥ २५ ॥
कुष्ठमष्टादशविधं प्रमेहान् विंशतिं तथा ।
नाड़ीव्रणं व्रणं घोरं गुदामयभगन्दरम् ॥ २६ ॥
श्लीपदं कफवातोत्थं चिरजं कुलसम्भवम् ।
गलशोथमन्त्रवृद्धिमतीसारं सुदारुणम् ॥ २७ ॥
कासपीनसयक्ष्मार्शःस्थौल्यं दौर्गन्ध्यमेव च ।
आमवातं सर्वरूपं जिह्वास्पन्दं गलग्रहम् ॥ २८ ॥
अर्दितं गलगण्डञ्च वातशोणितमेव च ।
उदरं कर्णनासाक्षिमुखवैरस्यमेव च ॥ २९ ॥
सर्वशूलं शिरःशूलं स्त्रीणां गदनिषूदनम् ।
वटिकां प्रातरेकैकां खादेन्नित्यं यथाबलम् ॥ ३० ॥
अनुपानमिह प्रोक्तं मांसं पिष्टं पयो दधि ।
वारिभक्तसुरासीधुसेवनात्कामरूपधृक् ॥ ३१ ॥
वृद्धोऽपि तरुणस्पर्द्धी न च शुक्रस्य संक्षयः ।
न च लिङ्गस्य शैथिल्यं न केशा यान्ति पक्वताम् ॥ ३२ ॥
नित्यं स्त्रीणां शतं गच्छेन्मत्तवारणविक्रमः ।
द्विलक्षयोजनी दृष्टिर्जायते पौष्टिकः परः ॥ ३३ ॥

प्रोक्तः प्रयोगराजोऽयं नारदेन महात्मना ।
रसो लक्ष्मीविलासोऽयं वासुदेवो जगत्पतिः ।
अभ्यासादस्य भगवान् लक्षनारीषु वल्लभः ॥ ३४ ॥

कृष्ण अभ्रकभस्म १ पल. शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक तथा कपूर आधा-आधा पल, जावित्री, जायफल, विधारेके बीज, धतूरेके बीज, विदारीकन्द, शतावर, नागबला (गँगरेन), अतिबला (ककहिया), गोखरू, समन्दरफल इनमेंसे प्रत्येक द्रव्यका चूर्ण एक-एक कर्ष लेकर पारे-गंधककी कज्जली कर ले। तब बाकी सब चीजोंको एकमें पीसकर मिला ले और पानके रसमें घोंटे। घुँट जानेपर तीन-तीन रत्तीकी गोलियें बना ले। इसका सेवन करनेसे सन्निपातज, वातज तथा पित्तज दारुण और भयानक रोग नष्ट हो जाते हैं। इस रसमें किसी प्रकार-का कोई नियम नहीं है। यह अठारहों प्रकारके कुष्ठ, बीस प्रकारके प्रमेह, नाड़ीव्रण (नासूर), व्रण, घोर गुदारोग, भगन्दर, कफ-वातजनित प्राचीन तथा कुलपरम्परासे होनेवाला पीलपावँ, गलशोथ, अन्त्रवृद्धि, दारुण अतिसार, कास, पीनस, यक्ष्मा, बवासीर, तुन्दिलता, दुर्बलता, सब प्रकारका आमवात, जिह्वा-स्तम्भ, गलग्रह, अर्दित, गलगण्ड, वातशोणित, उदर, कान, नासिका, नेत्र तथा मुखकी विरसता, सब तरहके शूल, शिरःशूल और स्त्रियोंके सब रोग दूर हो जाते हैं। अपना बल देखकर नित्य प्रातःकाल इसकी एक गोली खाय। मांस, पीठीके बने पदार्थ, दूध, दही, जल, भात, मदिरा और सुरा आदि पदार्थ इसके अनुपान हैं। इस रसका सेवन करनेवाला प्राणी कामदेवके सदृश सुन्दर हो जाता है। बूढ़ा मनुष्य भी इस रसका सेवन करके जवानोंसे टक्कर लेता है। उस मनुष्यका न तो वीर्य क्षीण होता और न लिंग ही शिथिल होता है। उस पुरुषके केश भी नहीं पकते और वह मस्त हाथीकी तरह बलवान् होकर प्रतिदिन सौ स्त्रियोंको भोग सकता है। वह पुरुष दो लाख योजन तक देख सकता है। यह बड़ा ही पुष्टिदायक रस है। यह प्रयोगराज रस नारदजीने भगवान कृष्णको बतलाया था। इसका सेवन करके ही वे हजारों स्त्रियोंके प्रिय पति बन सके थे। इसका नाम है—लक्ष्मी-विलास रस ॥२०–३४॥

श्रीकामदेव रस।

पारदं पलमेकं स्याद्द्विपलं शुद्धगन्धकम्।
रक्तकार्पासतोयेन घृष्ट्वा काचस्य कूप्यतः॥ ३५॥
निक्षिप्य टङ्कणेनैव मुखं तस्य निरोधयेत्।
वालुकायन्त्रमध्यस्थं कूप्यञ्च कुरु तद् दृढम्॥ ३६॥
अहोरात्रं पचेदग्नौ शास्त्रवित्कुशलो भिषक्।
शीते चादाय पात्रस्थं कूपिकान्तरलम्बितम्॥ ३७॥
दरदेन समं रक्तं सोज्ज्वलं भस्म यद्भवेत्।
भक्षयेन्माषमेकञ्च घृतेन मधुना सह॥ ३८॥
पश्चाद्दुग्धं गुडञ्चाज्यं कृष्णेक्षुमपि शर्कराम्।
द्राक्षाखर्जूरमधुकप्रभृतीनथ भक्षयेत्॥ ३९॥
त्रिफलामधुना शान्तिं याति पित्तं चिरोत्थितम्।
निर्गुण्डिकारसेनात्र दुर्वारा वातवेदना॥ ४०॥
प्रशमं याति वेगेन नूतनञ्च वपुर्भवेत्॥ ४१॥
अर्द्धाऽऽवर्त्तितदुग्धेन गृह्यते यद्ययं रसः।
वन्ध्याऽपि च भवत्येव जीवद्वत्सा सपुत्रिका॥ ४२॥
कामदेवमथो सूतः कामिनां कामदः सदा।
यस्य प्रभावतो वल्यो रम्यश्च रमते स्त्रियम्॥ ४३॥

शुद्ध पारा १ पल, शुद्ध गन्धक २ पल लेकर इन दोनोंकी कज्जली करे। फिर लाल कपासके रसमें इसे घोंटकर कपड़मिट्टीसे आवेष्टित एक मोटे दल-वाली काँचकी शीशीमें रखे और सोहागेके चूर्णसे उसका मुख बन्द कर दे। अब उस शीशीको वालुकायन्त्रमें रखकर विद्वान् वैद्य चौबीस घण्टे आँच दे। स्वांगशीतल होनेपर उस शीशीमेंसे सिंगारिफके समान लाल रंगकी भस्म निकाल ले। एक मासा यह रस घी और शहदके साथ खाय और दूध, गुड़, घी, काला गन्ना, शक्कर, दाख, खजूर तथा महुएका पथ्य करे। यदि त्रिफलाके चूर्ण तथा शहदके साथ इसका सेवन करे तो पुराना पित्तरोग तथा निर्गुण्डीके रसमें खाय तो कठिन वातरोग नष्ट हो और शरीर फिरसे नवीन हो जाय। यदि अधावट किये हुए दूधके साथ इसे खाय तो बाँझ स्त्री भी दीर्घजीवी

सन्तान पाती है। यह कामदेव रस मनुष्योंकी सभी कामनायें पूर्ण करता है। इसकी कृपासे प्राणी बलवान् और सुन्दर होकर स्त्रियोंके साथ संभोग करता है ॥३५–४३॥

अनंगसुन्दर रस।

शुद्धसूतं समं गन्धं त्र्यहं कह्लारजैर्द्रवैः।
मर्दितं वालुकायन्त्रे यामं सम्पुटके पचेत् ॥ ४४ ॥
रक्तागस्त्यद्रवैर्भाव्यं दिनमेकं सिताम्बुजैः।
यथेष्टं भक्षयेच्चानु कामयेत्कामिनीशतम् ॥ ४५ ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक दोनों समभाग लेकर कज्जली करे। फिर इसे तीन दिन लाल कमलके रससे घोंटे और सम्पुटमें सम्पुटित करके वालुकायंत्रमें पाक करे। स्वांगशीतल होनेपर निकाल ले और लाल अगस्त तथा श्वेत कमलके रसमें दिनभरकी भावना दे। यदि बल देखकर उचित अनुपानमें इसका सेवन करे तो विषयी पुरुष सौ स्त्रियोंके साथ सम्भोग कर सकता है ॥४४॥४५॥

हेमसुन्दर रस

मृतसूतस्य पादांशं हेमभस्म प्रकल्पयेत्।
क्षीराज्यदधिसम्मिश्रं माषैकं कांस्यपात्रके ॥ ४६ ॥
लेहयेन्मासषटकन्तु जरामरणनाशनम्।
वागुजीचूर्णकर्षैकं धात्रीफलरसाप्लुतम्।
अनुपानं पिबेन्नित्यं स्याद्रसो हेमसुन्दरः ॥ ४७ ॥

रससिन्दूर १ भाग और स्वर्णभस्म चौथाई भाग लेकर एकमें खरल कर ले। यदि एक मासा यह रस दूध, घी तथा दहीके साथ कांसेकी कटेरीमें रखकर खाय तो छ महीनेमें बुढ़ौती और मौत तक दूर भाग जाती है। यह रस खानेके बाद नित्य सोमराजीका एक कर्ष चूर्ण आँवलाके रसमें मिलाकर खाय। इस रसका नाम है—हेमसुन्दर रस ॥४६–४७॥

अमृतार्णव रस

सूतभस्म चतुर्भागं लौहभस्म तथाऽष्टकम्।
अभ्रभस्म च षड्भागं गन्धकस्य च पञ्चमम् ॥ ४८ ॥

भावयेत्त्रिफलाक्वाथैस्तत्सर्वं भृङ्गजैर्द्रवैः।
शिग्रुवह्निकटुक्वाथैर्भावयेत्सप्तधा पृथक् ॥ ४९ ॥
सर्वतुल्या कणा योज्या गुडैर्मिश्रा पुरातनैः।
निष्कमात्रं सदा खादेज्जरामृत्युनिवारणम् ॥ ५० ॥
ब्रह्मायुः स्याच्चतुर्मासे रसोऽयममृतार्णवः।
कौरण्टकस्य पत्राणि गुडेन भक्षयेदनु ॥ ५१ ॥

रससिन्दूर ४ भाग, लौहभस्म ८ भाग, अभ्रकभस्म ६ भाग, शुद्ध गंधक ५ भाग ले और सबको एकमें पीस ले। फिर त्रिफलाके काढ़े, भाँगरेके रस, सहिंजन चीता एवं कुटकीके काढ़ेमें अलग-अलग सात बार भावना दे। इसके बाद सबके बराबर पिप्पलीका चूर्ण तथा पुराना गुड़ मिलाकर निष्क-निष्क (आधे-आधे तोले) की गोलियें बना ले। चार महीने इसको खानेसे बुढ़ापा तथा मौत दूर होती और वह मनुष्य ब्रह्माके समान दीर्घायु हो जाता है। यह रस खानेके बाद कुरण्ट (पीतझिण्टी) की पत्तियोंको पुराने गुड़में मिलाकर खाना चाहिये। यही इसका अनुपान है ॥ ४८—५१ ॥

बृहत्पूर्णचन्द्र रस

द्विकर्षं शुद्धसूतस्य गन्धकञ्च द्विकार्षिकम्।
लौहभस्म पलञ्चाभ्रं जारितञ्च पलांशकम् ॥ ५२ ॥
द्वितोलं रजतञ्चैव वङ्गभस्म द्विकार्षिकम्।
सुवर्णं तोलकञ्चैव ताम्रं कांस्यञ्च तत्समम् ॥ ५३ ॥
जातीफलञ्चेन्द्रपुष्पमेलाभृङ्गञ्च जीरकम्।
कर्पूरं वनिता मुस्तं कर्षं कर्षं पृथक् पृथक् ॥ ५४ ॥
सर्वं खल्लतले क्षिप्त्वा कन्यारसविमर्दितम्।
भावयित्वा वरातोयैः केवुकानां रसेन च ॥ ५५ ॥
एरण्डपत्रैरावेष्ट्य धान्ये रात्रिदिनोषितम्।
उद्धृत्य मर्दयित्वा तु वटिकां चणसम्मिताम् ॥ ५६ ॥
खादेच्च पर्णखण्डेन संयुक्तां व्याधिनाशिनीम्।
सर्वव्याधिविनाशाय काशिनाथेन भाषितः ॥ ५७ ॥

पूर्णचन्द्ररसो नाम सर्वरोगेषु योजयेत् ।
बल्यो रसायनो वृष्यो वाजीकरण उत्तमः ॥ ५८ ॥
अयमष्ठीलिकां हन्ति कासश्वासमरोचकम् ।
आमशूलं कटीशूलं हृच्छूलं पित्तशूलकम् ॥ ५९ ॥
अग्निमांद्यमजीर्णञ्च ग्रहणीं चिरजामपि ।
आमवातमम्लपित्तं भगन्दरमपि द्रुतम् ॥ ६० ॥
कामलां पाण्डुरोगञ्च प्रमेहं वातशोणितम् ।
नातः परतरः श्रेष्ठो विद्यते वाजिकर्मणि ॥ ६१ ॥
रसस्यास्य प्रसादेन नरो भवति निर्गदः ।
मेधाञ्च लभते वाग्मी तुष्टिपुष्टिसमन्वितः ॥ ६२ ॥
मदनस्य समां कान्तिं मदनस्य समं बलम् ।
गीयते मदनेनैव मदनस्य समं वपुः ॥ ६३ ॥
प्रियाञ्च मदनप्रायाः पश्यन्ति मदनाकुलाम् ।
स्त्रीणां तथाऽनपत्यानां दुर्बलानाञ्च देहिनाम् ॥ ६४ ॥
क्षीणानामल्पशुक्राणां वृद्धानां वाल्परेतसाम् ।
ओजस्तेजस्करश्चायं स्त्रीषु कामविवर्द्धनः ॥ ६५ ॥
अभ्यासेन निहन्ति मृत्युपलितं सर्वामयध्वंसकः
वृद्धानां मदनोदयोदयकरः प्रौढाङ्गनासङ्गमे ।
नित्यानन्दकरः सुखातिसुखदो भूपैः सदा सेव्यते
दृष्टः सिद्धफलो रसायनवरः श्रीपूर्णचन्द्रो रसः ॥ ६६ ॥

शुद्ध पारा २ कर्ष, शुद्धगंधक २ कर्ष, लौहभस्म १ पल, अभ्रकभस्म १ पल चाँदीभस्म २ तोला, बंगभस्म २ कर्ष, स्वर्णभस्म १ तोला, ताम्र और कांस्य-भस्म १-१ तोला, जायफल, लौंग, इलायची, दालचीनी, जीरा, कपूर, प्रियंगु-के फूल और मोथा, इनमेंसे प्रत्येक वस्तुका चूर्ण एक-एक कर्ष लेवें। फिर इन सबको खरलमें डालकर घीगुवारके रससे घोंटे। फिर केबुक तथा त्रिफलाके काढ़ेमें अलग-अलग भावना देकर गोला बना ले। इस गोलेको रेंड़के पत्तेमें लपेटकर २४ घंटे धान्यराशिमें दबाकर पड़ा रहने दे। फिर गोलेको निकालकर घोंटे और चनेके बराबर गोलियें बना ले। इस पूर्णचन्द्रनाम्नी वटीको पानके

पच्चेपर रखकर खाना चाहिए। सभी व्याधियोंको नष्ट करनेके लिए वैद्यवर काशीनाथने यह रस बतलाया था। सब रोगोंपर इस रसका उपयोग करना चाहिए। यह बलदायी, रसायन, वृष्य और उत्तम वाजीकरण है। यह रस अष्ठीलिका, कास, श्वास, अरुचि, आमशूल, कटिशूल, हृदयशूल, पित्तशूल, मन्दाग्नि, अजीर्ण, पुरानी ग्रहणी, आमवात, अम्लपित्त, भगन्दर, कामला, पाण्डु, प्रमेह तथा वातरक्त इन सब रोगोंको उखाड़ फेंकता है। वाजीकरण औषधियोंमें तो इससे बढ़कर और कोई है ही नहीं। इस रसकी कृपासे प्राणी नीरोग, बुद्धिमान्, वक्ता, तुष्टि और पुष्टिसम्पन्न हो जाता है। इससे पुरुषमें कामदेवके सदृश सौन्दर्य, बल, वपु (शरीर) और संगीतका चातुर्य आ जाता है। यह बाँझ स्त्रियोंको भी कामातुरा बना देता है। नित्य नियमके साथ इसका सेवन करनेसे यह मृत्यु, बालोंकी सफेदी और सभी रोगोंको नष्ट करता, प्रौढ़ा स्त्रियोंके संसर्गमें आये हुए वृद्ध पुरुषोंकी रतिशक्तिको उभाड़ता, नित्य आनन्द देता और महान् सुख प्रदान करता है। राजे इस रसको सदा उपयोगमें लाते हैं। यह श्रीपूर्णचन्द्र रस श्रेष्ठ रसायन है और बराबर लाभ पहुँचाता है ॥ ५२—६६ ॥

चन्द्रोदय रस

पलं मृदु स्वर्णदलं रसेन्द्रात्पलाष्टकं षोडश गन्धकस्य।
शोणैः सुकार्पासभवप्रसूनैः सर्वं विमर्द्याथ कुमारिकाद्भिः ॥६७॥
तत्काचकुम्भे निहितं सुगाढं मृत्कर्पटैस्तद्दिवसत्रयञ्च।
पचेत्क्रमाग्नौ सिकताख्ययन्त्रे ततो रसः पल्लवरागरम्यः ॥६८॥
संगृह्य चैतस्य पलं पलानि चत्वारि कर्पूररजस्तथैव।
जातीफलं सोषणमिन्द्रपुष्पं कस्तूरिकाया इह शाण एकः ॥६९॥
चन्द्रोदयोऽयं कथितोऽस्य वल्लो भुक्तोऽहिवल्लीदलमध्यवर्त्ती।
मदोद्धतानां प्रमदाशतानां गर्वाधिकत्वं श्लथयत्यवश्यम् ॥७०॥
शृतं घनीभूतमतीव दुग्धं गुरूणि मांसानि समण्डकानि।
माषान्नपिष्टानि भवन्ति पथ्यान्यानन्ददायीन्यवराणि चात्र ॥७१॥
रतिकाले रतान्ते वा सेवितोऽयं रसेश्वरः।
मानहानिं करोत्येष प्रमदानां सुनिश्चितः ॥ ७२ ॥

कृत्रिमं स्थावरञ्चैव जङ्गमञ्चैव यद्विषम् ।
न विकाराय भवति साधकेन्द्रस्य वत्सरात् ॥ ७३ ॥
यथा मृत्युञ्जयोऽभ्यासात् मृत्युञ्जयति देहिनाम् ।
तथाऽयं साधकेन्द्रस्य जरामरणनाशनः ॥ ७४ ॥
वलीपलितनाशनस्तनुभृतां वयःस्तम्भनः
समस्तगदखण्डनः प्रचुररोगपञ्चाननः ।
गृहे च रसराडयं भवति यस्य चन्द्रोदयः
स पञ्चशरदर्पितो मृगदृशां भवेद्वल्लभः ॥ ७५ ॥
इन्द्रपुष्पं लवङ्गं स्यात्कार्पासकुसुमद्रवैः ।
तन्त्रान्तरे प्रसिद्धोऽयं मकरध्वजनामतः ॥ ७६ ॥

सुवर्णका बहुत ही महीन और बहुत ही मुलायम पत्तर १ पल, शुद्ध पारा ८ पल और शुद्ध गंधक १६ पल लेकर कज्जली करे। फिर इसे पहले लाल कपासके पुष्परसमें और उसके बाद घीगुवारके रसमें घोंटकर कपड़मिट्टी की हुई एक मोटे दलवाली काँचकी बोतलमें भर दे। ऊपरसे फिर कपड़मिट्टी करके बोतलको बालुकायंत्रमें रखकर चूल्हेपर चढ़ा दे। तदनन्तर क्रमशः मृदु, मध्यम तथा तीक्ष्ण आँच देता हुआ तीन दिन (अर्थात् ७२ घंटे) तक पकावे। स्वांगशीतल होनेपर बोतलमें चिपकी हुई लाल रंगकी भस्म निकाल ले। यदि एक पल यह भस्म हो तो चार पल कपूरका चूर्ण, जायफल, मिर्च तथा लौंग इनमेंसे प्रत्येक वस्तुका चूर्ण एक-एक पल और कस्तूरी चार मासे लेकर सबको एकमें खरल कर ले। यही चन्द्रोदय रस है। डेढ़ रत्ती यह रस पानके पत्तेपर रखकर खाय तो वह पुरुष सैकड़ों मदमाती एवं उद्धत स्त्रियोंकी मस्ती उतार सकता है। इसमें घी, औटाकर गाढ़ा किया हुआ दूध, कोमल मांसका जूस, उड़दके बने पकवान, पीठी तथा अन्यान्य आनन्ददायक वस्तुयें पथ्य हैं। रतिकालमें या रति करनेके बाद इस रसका सेवन करनेवाला पुरुष स्त्रियोंका मदमर्दन करनेमें सर्वथा समर्थ होता है। जो प्राणी निरन्तर एक वर्षतक इस रसका सेवन कर लेता है, उसे कृत्रिम (बनावटी) स्थावर तथा जंगम विष कुछ भी विकार नहीं पहुँचा पाते। जैसे अभ्यास करनेपर मृत्युंजय रस मृत्युपर विजयी होता है, उसी तरह यह रस

भी अभ्यास करनेवाले प्राणीकी मृत्यु और बुढ़ापा दोनोंको मार भगाता है। उस प्राणीके शरीरमें न झुर्रियाँ पड़तीं और न केश ही श्वेत होते हैं। यह रस आयुको स्थिर रखता और बड़ीसे बड़ी व्याधियोंको दूर कर देता है। जिसके घरमें यह रसराज रहता और जो नित्य इसे उपयोगमें लाता है, वह सदा कामुक रहता हुआ मृगनयनी ललनाओंका वल्लभ (प्यारा) बना रहता है। इस रसको बनाते समय इन्द्रपुष्प शब्दसे लौंग और कार्पासप्रसून शब्दसे कपासके फूलका रस लेना चाहिए। ग्रंथान्तरोंमें यह रस 'मकरध्वज' नामसे विख्यात है ॥ ६७–७६ ॥

मकरध्वज रस

स्वर्णभागो च वङ्गञ्च मौक्तिकं कान्तलौहकम्।
जातीकोषफले रूप्यं कांस्यकं रससिन्दुरम् ॥ ७७ ॥
प्रवालं कस्तुरी चन्द्रमभ्रकञ्चैकभागिकम्।
स्वर्णसिन्दूरतो भागाश्चत्वारः कल्पयेद्बुधः ॥ ७८ ॥
नातः परतरः श्रेष्ठः सर्वरोगनिपूदनः।
सर्वलोकहितार्थाय शिवेन परिकीर्त्तितः ॥ ७९ ॥

स्वर्णभस्म २ भाग, वंगभस्म, मोतीभस्म, कान्तलौहभस्म, जायफल, जावित्री, चाँदीभस्म, कांस्यभस्म, रससिन्दूर, मूँगाभस्म, कस्तूरी, कपूर और अभ्रकभस्म, इनमेंसे प्रत्येक द्रव्य एक-एक भाग तथा स्वर्णसिन्दूर चार भाग लेकर इन सभी पदार्थोंको एक साथ घोंट ले। सब रोगोंको निवृत्त करनेके लिए इससे बढ़कर और कोई भी रस नहीं है। लोककल्याणके लिए स्वयं शंकरजीने इसे कहा है ॥ ७७–७९ ॥

वसन्ततिलक रस

हेम्नो भस्मकतोलकं घनयुगं लौहात् त्रयः पारदात्
चत्वारो नियतन्तु वङ्गयुगलं चैकीकृतं मर्दयेत्।
मुक्ताविद्रुमयो रसेन समता गोक्षूरवासेक्षुणा
पूर्वं वन्यकरीषकेण सुदृढं तत्तत्पचेत्सप्तधा ॥ ८० ॥

कस्तूरीघनसारमर्दितरसः पश्चात्सुसिद्धो भवेत्
कासश्वाससपित्तवातकफजित् पाण्डुक्षयादीन् हरेत् ।
शूलादिग्रहणीं विषादिहरणो मेहाँस्तथा विंशतिम्
हृद्रोगादिहरो ज्वरादिशमनो वृष्यो वयोवर्द्धनः
श्रेष्ठः पुष्टिकरो वसन्ततिलको मृत्युञ्जयेनोदितः ॥ ८१ ॥

स्वर्णभस्म १ तोला, अभ्रकभस्म २ तोला और लौहभस्म ३ तोला, पारद-भस्म (रससिन्दूर) ४ तोला, वंगभस्म २ तोला, मोतीभस्म २ तोला, प्रवाल-भस्म २ तोला, इन सभी द्रव्योंको एकत्रित करके खरल कर ले। फिर इसमें गोखरू, बासा (अडूसा) और ऊँखका रस डाल-डालकर विनुआ कण्डेकी आँच देता हुआ सात बार पकावे। फिर एक-एक तोले कपूर तथा कस्तूरी मिलाकर घोंट ले। इसका सेवन करनेसे कास, श्वास, पित्त, कफ, पाण्डु, क्षय, शूल, संग्रहणी, विष, बीसों प्रकारके प्रमेह, हृदयरोग एवं ज्वर आदि रोग दू हो जाते हैं। यह रस, वृष्य तथा वयोवर्द्धक है और उत्तम रीतिसे पुष्टि प्रदा करता है। महर्षि मृत्युंजयका कहा हुआ यह वसन्ततिलक रस है ॥८०॥८१

वसन्तकुसुमाकर रस

द्विभागं हाटकं चन्द्रं त्रयो वङ्गाहिकान्तकाः ।
चतुर्भागं शुद्धमभ्रं प्रवालं मौक्तिकं तथा ॥ ८२ ॥
भावयेद्गव्यदुग्धेन भावनेक्षुरसेन च ।
वासालाक्षारसोदीच्यरम्भाकन्दप्रसूनकैः ॥ ८३ ॥
शतपत्ररसेनैव मालत्याः कुङ्कुमोदकैः ।
पश्चान्मृगमदैर्भाव्यं सुगन्धिरससम्भवैः ॥ ८४ ॥
कुसुमाकरविख्यातो वसन्तपदपूर्वकः ।
गुञ्जाद्वयेन संसेव्यः सितामध्वाज्यसंयुतः ॥ ८५
मेहघ्नः कान्तिदश्चैव कामदः पुष्टिदस्तथा ।
वलीपलितहश्चैव स्मृतिभ्रंशं विनाशयेत् ॥ ८
पुष्टिदो वल्यमायुष्यः पुत्रप्रसवकारकः ॥ ८
प्रमेहान् विंशतिञ्चैव क्षयमेकादशं तथा ।
तथा सोमरुजं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा ॥

३ ॥
करे । फिर
और लौह-
गुण्डी, शमी,
तथा चीता,
इसे छायामें

स्वर्णभस्म २ भाग, चाँदीभस्म २ भाग, वंगभस्म, सीसाभस्म तथा कान्त-लौहभस्म ये तीनों चार-चार भाग लेकर इन सबको एकमें घोंट ले। फिर गायके दूध, ऊँखके रस, अडूसाके रस, लाख, सुगंधवाला, केलेकी जड़ और फूल, गुलाबके फूल, मालतीके फूल तथा केसरके रस अथवा क्राथमें भावना दे। अंत-में कस्तूरीकी भावना देकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। यही वसन्ततिलक रस है। यदि नित्य इसकी एक गोली शक्कर, घी और मधुमें मिलाकर खाय तो यह प्रमेह नष्ट करता और कान्ति, काम तथा पुष्टि प्रदान करता है। इससे शरीरकी झुर्रियें, वालोंकी सफेदी और स्मरणशक्तिकी कमी दूर हो जाती है। इसे खानेसे बल और वय (उम्र) बढ़ती, सुसन्तान मिलती, बीसों तरहके प्रमेह, ग्यारह प्रकारके क्षय एवं साध्य और असाध्य सोमरोग निवृत्त हो जाता है ॥ ८२-८८ ॥

क

म.

नीलकण्ठ रस

सूतकं गन्धकं लौहं विषं चित्रकपद्मकम्।
वराङ्गरेणुकामुस्तं ग्रन्थ्येलानागकेशरम् ॥ ८९ ॥
त्रिकटु त्रिफला चैव शुल्वभस्म तथैव च।
एतानि समभागानि द्विगुणो गुड उच्यते ॥ ९० ॥
सम्मर्द्य वटकं कृत्वा भक्षयेच्चणकोन्मितम्।
कासे श्वासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे ॥ ९१ ॥
हिक्कायां ग्रहणीदोषे शोथे पाण्ड्वामये तथा।
मूत्रकृच्छ्रे मूढगर्भे वातरोगे च दारुणे ॥ ९२ ॥
नीलकण्ठो रसो नाम ब्रह्मणा निर्मितः पुरा।
अनुपानविशेषेण सर्वरोगहरो भवेत् ॥ ९३ ॥

पारा, शुद्ध गन्धक, लौहभस्म, शुद्ध विष, चीता, पद्मकाष्ठ, दालचीनी, ोथा, पिप्पली, इलायची, नागकेसर, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, हर्रा, बहेड़ा, ार ताम्रभस्म, ये सभी द्रव्य समभाग ले और जितनी वजन इन उसका दूना पुराना गुड़ ले और सब चीजें एकमें पीसकर चने बना ले। इसे खानेसे कास, श्वास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, ्गी, शोथ, पाण्डुरोग, मूत्रकृच्छ्र, मूढगर्भ तथा कठिन वातरोग नष्ट

हो जाते हैं। प्राचीन कालमें स्वयं ब्रह्माजीने यह नीलकण्ठ रस बनाया था। अनुपानविशेषके साथ यदि सेवन करे तो इससे सभी रोग नष्ट हो जाते हैं॥ ८९–९३॥

महानीलकण्ठ रस

पलैकं नागभस्माथ भावयेत्तिमिपित्ततः।
तन्नागं सुमृतं स्वर्णं तोलैकं चापि मिश्रयेत्॥ ९४॥
द्विपलं भस्म सूतस्य त्रिपलं मृतमभ्रकम्।
त्रिपलं लौहभस्माथ सर्वमेकत्र कारयेत्॥ ९५॥
भावयेच्च पृथक् कन्या ब्राह्मी निर्गुण्डिका शमी।
मुण्डी शतावरी छिन्ना कोकिलाक्षस्य वीजकैः॥ ९६॥
मूषली वृद्धदारोऽग्निद्रवैरेभिर्भिषग्वरः।
ततः सञ्चूर्णयेत्सर्वं तुल्यमेकादशाभिधम्॥ ९७॥
वरात्र्योषाब्दवह्न्येलाजातीफललवङ्गकम्।
पूजयेद्बिल्वपत्राद्यैर्नीलकण्ठं महेश्वरम्। ९८॥
द्विगुञ्जं भक्षयेदस्य मृत्युञ्जयमनुस्मरन्।
क्षयमेकादशविधं ग्रहणीं रक्तपित्तकम्॥ ९९॥
विविधान्वातजान्रोगान् चत्वारिंशच्च पैत्तिकान्।
हन्ति सर्वामयानेव कामिनीनां शतं व्रजेत्॥ १००॥
एकत्रिंशतिरात्राद्धं परिहार्य्यं त्यजेदिह।
यथेष्टाहारचेष्टो हि कन्दर्पसदृशो नरः॥ १०१॥
मेधावी बलवान्प्राज्ञो वह्न्याशी भीमविक्रमः॥ १०२॥
पुत्रार्थिनी तथा नारी रम्यं पुत्रं प्रसूयते। [illegible]३॥
अस्य सूतस्य माहात्म्यं वेत्ति शम्भुर्न चापरः॥ १०[illegible]

नागभस्म १ पल लेकर तिमिनामक मछलीके पित्तसे भावित [illegible] करे। फिर उसमें स्वर्णभस्म १ तोला, रससिन्दूर १ तोला, अभ्रकभस्म ३ पल [illegible] और लौह-भस्म ३ पल मिलाकर मर्दन करे। तदनन्तर घीगुवार, ब्राह्मी, नि[illegible] मुण्डी, शमी, गोरखमुण्डी, शतावर, गिलोय, तालमखाना, मुसली, विधारा [illegible] तथा चीता, इनमेंसे प्रत्येक द्रव्यके रसमें अलग-अलग भावना दे। फिर [illegible] इसे छायामें

सुखा और चूर्ण करके रख ले। इस चूर्णमें सोंठ, मिर्च, पिप्पली, हर्रा, बहेड़ा, आँवला, मोथा, इलायची, चीता, जायफल तथा लौंगका चूर्ण समभाग मिलाकर दो-दो रत्तीकी गोलियें बना ले। तदनन्तर सर्वप्रथम भगवान नीलकण्ठ (शिव) का बिल्वपत्र-पुष्प आदि विविध उपचारोंसे पूजन करके और मृत्युंजय भगवानका स्मरण करता हुआ इसकी एक-एक गोली नित्य खाय। इससे ग्यारह प्रकारके क्षय, ग्रहणी, रक्तपित्त, विविध वातरोग, चालीस तरहके पित्त-रोग एवं सभी व्याधियाँ दूर हो जाती है। इसका सेवन करके मनुष्य सौ स्त्रियों-के साथ संभोग कर सकता है। हाँ, इसका उपयोग करते समय ग्यारह दिनों तक अपथ्य आहार-विहारसे पृथक् रहना चाहिये। उसके बाद जो इच्छा हो सो करे। इसके प्रभावसे मनुष्य बुद्धिमान्, बलवान्, विद्वान्, अधिक भोजन करनेवाला और भीमसेन सरीखा वीर बन जाता है। पुत्रप्राप्तिकी इच्छासे कोई स्त्री यदि इसका सेवन करे तो सुन्दर पुत्र प्रसव करती है। इस रसकी महिमाको भली भाँति शंकरजी ही जानते हैं—और कोई नहीं ॥ ९४—१०३ ॥

बृहत् शृङ्गाराभ्र

पारदं गन्धकञ्चैव टङ्कणं नागकेशरम्।
कर्पूरं जातिकोषञ्च लवङ्गं तेजपत्रकम् ॥ १०४ ॥
एतेषां कर्षभागानि सुवर्णं तत्समं भवेत्।
शुद्धकृष्णाभ्रचूर्णञ्च चतुष्कपिचुभागिकम् ॥ १०५ ॥
तालीशं घनकुष्ठञ्च मांसी पुष्पवराङ्गकम्।
एलाबीजं त्रिकटुकं त्रिफला करिपिप्पली ॥ १०६ ॥
एषां कर्षद्वयञ्चैव पिप्पलीक्वाथभावितम्।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं चोचं क्षौद्रसमायुतम् ॥ १०७ ॥
नानारोगप्रशमनं विशेषात् कासरोगनुत्।
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥ १०८ ॥
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च शिरःशूलं विशेषतः।
स्वरामयं क्षयं कुष्ठं श्लेष्माणं वातशोणितम् ॥ १०९ ॥
बृहच्छृङ्गाराभ्रनाम विष्णुना परिकीर्तितम्।
रक्तपित्तञ्च श्वासञ्च नाशयेन्नात्र संशयः ॥ ११० ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध सोहागा, नागकेसर, कपूर, जावित्री, लौंग, तेजपात, इनमेंसे प्रत्येक वस्तु एक-एक कर्ष, सुवर्णभस्म १ कर्ष, कृष्ण अभ्रकभस्म ४ कर्ष, तालीसपत्र, कूठ, जटामासी, लौंग, दालचीनी, इलायची, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, हर्रा, बहेड़ा, आँवला और गजपिप्पली, इन सबका चूर्ण दो-दो कर्ष लेकर सबको एकमें पीस ले। फिर पिप्पलीके काढ़ेमें भावना देकर गोलियें बना ले। दालचीनीके चूर्ण तथा मधुमें इसकी उपयुक्त मात्राका सेवन किया जाय तो इससे विविध रोग और विशेष करके खाँसी, वातज, पित्तज, श्लैष्मिक तथा सान्निपातिक सभी रोग, हृदयशूल, पार्श्वशूल, शिरःशूल, स्वरभंग, क्षय, कुष्ठ, कफज रोग, वातरक्त, रक्तपित्त एवं कासरोग अवश्य नष्ट हो जाते हैं। इस शृङ्गाराभ्र रसको स्वयं विष्णुभगवानने बताया था ॥ १०४—११० ॥

इति श्रीगोपालकृष्णभट्टविरचिते रसेन्द्रसारसंग्रहे आयुर्वेदाचार्य पं० नीलकण्ठमिश्रप्रणीता 'रसायनी' भाषाटीका समाप्ता।

नन्दनन्दन आनन्दकन्द ते कृपया प्रभो।
टीका सम्पूर्णतां जाता रसेन्द्रस्य 'रसायनी' ॥१॥
मोदन्तां शिशवोऽप्यत्र प्रहृष्यन्तु भिषग्वराः।
स्थितिं लभेत स्वान्तेषु विदुषां मे 'रसायनी' ॥२॥

श्रीकृष्णार्पणमस्तु।

मुद्रक—पं० रामनिधि त्रिपाठी शिवराम प्रेस, काशी।